उपवास कालमें एन्ड्र्यूज और मीराबहनके साथ

सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

५५

(२३ अप्रैल से १५ सितम्बर, १९३३)

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मन्त्रालय
भारत सरकार

दिसम्बर १९७३ (पौष १८९५)

निदेशक, प्रकाशन विभाग, नई दिल्ली-१ द्वारा प्रकाशित
और शान्तिलाल हरजीवन शाह, नवजीवन प्रेस, अहमदाबाद-१४ द्वारा मुद्रित

भूमिका

१२ मार्च, १९३० को गाधीजी ने सविनय अवज्ञा आन्दोलनका श्रीगणेश किया तो देशमे स्वदेश-प्रेम और नैतिक आदर्शवादकी भावनाका ज्वार आ गया। किन्तु वह धीरे-धीरे घटने लगा था। सितम्बरमे उनके उपवासके कारण पुन उसमे एक प्रचण्ड तरग उठती देखी गयी। पर उसके बाद उतारकी प्रक्रिया फिर तेज हो गई और इस खण्डमे — जो २३ अप्रैलसे शुरू होता है और १५ सितम्बर, १९३३ तक जाता है — हम गाधीजी को ऐसे उपायकी खोजमे व्यस्त पाते हैं जिससे जनताकी सद्बुद्धिको प्रेरित और उसकी सकल्प-शक्तिको दृढ किया जा सके। जनता इस समय दुहरी लडाई लड रही थी एक ओर तो वह अस्पृश्यताके खिलाफ एक धार्मिक आन्दोलन चला रही थी और दूसरी ओर विदेशी शासनके खिलाफ राजनीतिक सघर्ष। जाहिर है कि इस दुहरी लडाईके लिए ऊँचे और अटूट मनोबलकी आवश्यकता थी और गाधीजी उसके विषयमे चिंतित थे। हरिजन-सेवाके क्षेत्रमे काम करनेवाले सेवकोमे तो सचाई और नैतिक सदाचारकी छोटी-मोटी न्यूनता भी उन्हे असह्य मालूम होती थी, तथापि ऐसी घटनाएँ बढती ही जा रही थी। गाधीजी को इससे बहुत दु ख हुआ और यह मानकर कि कार्यकर्त्ताओकी इन दुर्बलताओका कारण उनकी अपनी अपूर्णता है (पृ० १३६), उन्होने २१ दिनका आत्मशुद्धिमूलक उपवास किया। उपवासके आरम्भमे ही जेलसे छोड दिये जानेपर उन्होने पहले तो सामूहिक सविनय अवज्ञा आन्दोलनको स्थगित कर दिया और बादमे उसे वापिस लेकर उसकी जगह वैयक्तिक सविनय अवज्ञा जारी करनेका विचार प्रगट किया और तदनुसार उसका आरम्भ १ अगस्तको साबरमती आश्रमसे रासकी ओर कूच करके किया तथा उसकी तैयारीके रूपमें इस यज्ञ-कार्यमे "जो मेरे लिए सबसे निकट है, सबसे प्रिय है" (पृ० ३१८), उस साबरमती आश्रमकी आहुति दी — उसे भग कर दिया। इसके बाद गिरफ्तारी और रिहाईका — "बिल्ली-चूहेके खेल" (पृ० ४४५)का जो अशोभन सिलसिला शुरू हुआ उससे विरक्त होकर गाधीजी ने निश्चय किया कि ४ अगस्तको दी गई एक वर्षकी कैदकी सजाकी शेष अवधिमे वे अब अपनी गिरफ्तारी नही देंगे, बल्कि, यदि सरकारने उन्हे मुक्त रहने दिया तो, "मैं यह समय हरिजन-सेवामे और यदि सम्भव हुआ तो ऐसे रचनात्मक कार्योमें लगानेकी कोशिश करूँगा जिन्हे मेरी सेहत गवारा कर सकेगी" (पृ० ४४६)।

उपवासका निर्णय गाधीजी ने ३० अप्रैलको सुबह-तडके लगभग अकस्मात् किया था — बल्कि यह कहना ज्यादा सही होगा कि निर्णय तो किसी लोकोत्तर शक्तिका था, उन्होने उसे स्वीकार किया था। "कुछ दिनोसे" उनके "अन्तरमे एक तूफान" उठ रहा था (पृ० ७४) और इस निर्णयके तीन दिन पूर्वसे उन्हे नीद नही आ रही थी (पृ० ७७)। उसके विषयमे लिखते हुए बादमे उन्होने कहा था, "जिस

रातको वह प्रेरणा हुई, उस रातको बडा हृदय-मथन होता रहा। चित्त व्याकुल था। मार्ग नही सूझता था। जिम्मेदारीका बोझा मुझे कुचले डालता था। . . . आवाज सुननेके बाद हृदयकी वेदना शान्त हो गई" (पृ० २६७)। चित्तकी इस व्याकुलताका ठीक कारण क्या था, इसके बारेमे गाधीजी स्पष्ट कुछ नही बता पाये। यह सही है कि नैतिक स्खलनके कुछ बहुत ही चौकानेवाले मामले उनकी निगाहमे आये थे और उन्होने यह स्वीकार भी किया कि "मेरे मनमे कोई सन्देह नही है कि भले ही उन मामलोने अनजाने मुझे उपवास करनेके लिए प्रेरित किया हो, फिर भी मै उनमे से किसी एक विशेष घटनाकी ओर उँगली उठाकर यह नही कह सकता कि पूरी तरहसे या मुख्य रूपसे इस घटनाने मुझे इस यज्ञकी प्रेरणा दी है" (पृ० १३८)। कारण शायद यह था कि अस्पृश्यता-निवारणके अभियानकी गति धीमी थी, वे उसे गति नही दे पा रहे थे और यह परिस्थिति, अपनी लाचारीका यह अहसास, उन्हे असह्य हो गया था। उपवासकी घोषणाके अगले दिन जवाहरलाल नेहरूको लिखते हुए उन्होने अपने मनका दुःख इस तरह प्रगट किया था, "सारे ससारमे" अस्पृश्यता-जैसी "बुरी चीज और कोई नही है। फिर भी मै धर्मको और इसलिए हिन्दुत्वको छोड नही सकता। हिन्दू-धर्ममे यदि मै निराश हो जाऊँ, तो मेरा जीवन मेरे लिए भार बन जायेगा। . . . यह छीन लिया जाये तो मेरे पास और रह ही क्या जाता है? लेकिन मै इसे छुआछूत और ऊँच-नीचकी मान्यताके साथ सहन नही कर सकता। सौभाग्यसे हिन्दू-धर्ममे इस बुराईका रामबाण इलाज भी है" (पृ० ९७)। गाधीजी ने उससे निपटनेके लिए उसी रामबाण इलाज — उपवास — का प्रयोग किया।

उपवास आरम्भ करनेकी तिथि और समयका निश्चय करनेके बाद गाधीजी अविलम्ब उसके विषयमे अपने निवेदनका मसविदा तैयार करने बैठ गये। यह निवेदन कुछ दिन बाद प्रकाशित हुआ था। इस निवेदनमे उन्होने स्पष्ट किया कि "यह उपवास किसी खास व्यक्तिके विरुद्ध नही है और हर उस व्यक्तिके विरुद्ध है जो इसके आनन्दमे भाग लेना चाहता है। . . . यह आत्मशुद्धिके लिए और साथियोकी शुद्धिके लिए, अधिक जागरूकता और सतर्कताके लिए हृदयसे की गई प्रार्थना है" (पृ० ७४-७५)। उन्होने समझ लिया था कि अस्पृश्यताकी बुराई कितनी बड़ी है और उसकी जडे कितनी गहरी है और इसलिए अस्पृश्यता-विरोधी अभियानकी सफलताके लिए किसी बाहरी सगठन और बाहरी शक्तिसे काम नही चलेगा, उसके लिए "आन्तरिक सम्पदा, आन्तरिक सगठन और आन्तरिक शक्ति, दूसरे शब्दोमे आत्मशुद्धि" की आवश्यकता होगी। "वह उपवास और प्रार्थनासे ही हो सकती है। शक्तिके अहकारसे हम परमेश्वरके पास नही पहुँच सकते, पर दुर्बल और असहायकी प्रार्थनासे पहुँच सकते है" (पृ० ७५)। गाधीजी के लिए हरिजन-सेवाका, अस्पृश्यता-निवारणका यह आन्दोलन भी, मन्दिर-प्रवेशके आन्दोलनकी ही तरह, एक धार्मिक आन्दोलन था — इसमे "सुधारकको बाह्य रूपसे अधिक आन्तरिक भावनामे आमूल परिवर्तन लानेकी बात सोचनी चाहिए। यदि आन्तरिक भावना बदल गई तो बाह्य रूप अपने-आप ठीक हो जायेगा" (पृ० ६५)। "धार्मिक आन्दोलनकी सफलता उसके प्रवर्तकोके बौद्धिक और भौतिक

साधनोपर नही, बल्कि आध्यात्मिक साधनोपर निर्भर होती है। और उपवास वह सुप्रसिद्ध पद्धति है जिससे इन साधनोकी अभिवृद्धि होती है" (पृ० ८५)। इसी विचारको और स्पष्ट करते हुए उन्होने कहा कि "मेरे विचारमे तो यरवदा-समझौते पर हस्ताक्षर करनेके वाद हरिजन-आन्दोलन प्रारम्भ करते समय ही मुझे इस तरहका उपवास करना चाहिए था", तव इसका रूप एक महत्कार्यके लिए आवश्यक योग्यताकी प्राप्तिकी तैयारीके हेतु किये गये यज्ञका होता, अव इतने दिनके वाद किये जानेके कारण यह एक शुद्धिकारक यज्ञ वन गया है। उन्होने स्वीकार किया कि "यह तर्क मुझे घटना घट चुकनेके उपरान्त सूझ रहा है। जव मुझे महसूस हुआ कि मुझे ईश्वरीय आज्ञा प्राप्त हुई है, तव मेरे पास ऐसा कोई तर्क नही था। आवाज आई और मै विवश हो गया" (पृ० १३७-३८)। जव वल्लभभाई, जिन्होने जेलमे १६ माहतक "मॉके स्नेह" (पृ० १६६, १७२)मे उनकी परिचर्या की थी, राजाजी और जनरल स्मट्स आदि ने उनसे अपना यह प्रस्तावित उपवास छोड देनेका अनुरोध किया तो उन्होने यही कहा कि जिस दुर्निवार शक्तिके सकेतपर उन्होने यह उपवास करनेका निश्चय किया है, वह उन्हे उनका अनुरोध स्वीकार करनेकी इजाजत नही देती। उपवास ईश्वर-प्रेरित था, इस दावेको दुहराते हुए उन्होने कहा कि "ज्यो-ज्यो समय वीतता गया, उसका अन्तर्नाद मेरे लिए अधिकाधिक स्पष्ट होता गया। मेरे जीवनकी अधेरीसे-अधेरी घडियोमे भी उसने मेरा हाथ नही छोडा। कितनी ही वार तो उसने मेरे ही सकल्पोके विरुद्ध मेरी रक्षा की और स्वतन्त्रताका लेश भी मुझमे शेप नही छोडा। मै जितना ही अधिक अपनेको उनकी शरणमे अर्पित करता गया, मैने उतना ही अधिक आनन्द पाया" (पृ० १२३)। उपवासका निर्णय करते ही गाधीजी को महसूस हुआ कि उनके मनसे एक वडा वोझ उतर गया है। उपवास आरम्भ करते हुए सी० एफ० एन्ड्रयूजको लिखे अपने पत्रमे उन्होने कहा, "मै ऐसी घटनाओके वीच शान्त खडा हूँ, या लगता है कि शान्त हूँ जो, यदि उपवास पास न आ रहा होता, तो मेरे टुकडे-टुकडे कर देती" (पृ० १५६)। उसी दिन दिये गये अपने सार्वजनिक वक्तव्यमे उन्होने कहा, "इस उपवासका चाहे जो मूल्य हो, पर यह निश्चय है कि यह मेरी रक्षा करेगा। . . . अगर मै यह उपवास न करता तो, वहुत सम्भव है, मै हरिजन-सेवा या किसी अन्य सेवाके लिए किसी कामका न रह जाता" (पृ० १६२)।

उपवासका प्रकृत उद्देश्य तो अपनी और अस्पृश्यताके कलुपसे हिन्दू-धर्मकी शुद्धि करना ही था (पृ० १४०), किन्तु इसके साथ ही वह शरीरके विपयमे अनासक्तिकी भावना विकसित करनेका साधन भी था। मीरावहनको उन्होने लिखा, "कन्धोपर चिन्ताका यह भार लिये फिरनेकी जडमे कही कोई मौलिक खरावी है। एक जीवन्त ईश्वरके अस्तित्वमें जीवन्त श्रद्धा रखनेका इससे मेल नही वैठता। जैसे-जैसे समय वीतता है, वैसे-वैसे मै रोम-रोममे उसका जीवन्त अस्तित्व अनुभव करता हूँ" (पृ० १९६)। लेकिन मीरावहन वहुत विचलित हो उठी थी, उनके "सबसे छोटे पुत्र और योग्य सहयोगी" (पृ० १२२) देवदासका भी यही हाल था और कुछ समयके

लिए तो वल्लभभाईके विनोदका निर्झर भी "सूख गया" (पृ० १३६)। गाधीजी के लिए यह परिस्थिति बहुत ही मर्मांतक रही होगी, किन्तु ईश्वरमे उनकी आस्थाने और 'गीता'की 'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन' की शिक्षाके उनके प्रगाढ अभ्यासने उन्हे टिकाये रखा।

यद्यपि यह उपवास गाधीजी और भगवानके बीचकी बात थी, किसी व्यक्ति या समुदाय-विशेषसे वे कोई अपेक्षा नही कर रहे थे, तथापि आश्रम तो उनकी अपनी सृष्टिके नाते उनके ही व्यक्तित्वका अश था और उन्होने कहा, "आश्रमसे मुझे बहुत बडी आशाएँ है" (पृ० ९०)। आश्रमसे, उसकी सारी कमियोके बावजूद, वे बहुत प्यार करते थे। उसकी कमियोसे वे बेखबर नही थे। आश्रमवासियोके पारस्परिक मनोमालिन्यका, और वहाँ जब-तब जो अत्यन्त चौकानेवाली घटनाएँ हो जाती थी, उनका उन्हे बहुत दु ख था। नारणदास गाधीको अपने एक पत्रमे उन्होने लिखा, इन घटनाओसे मै इतना दु खी हुआ कि "अब दु ख पहुँचाने लायक ज्यादा कुछ नही रहा" (पृ० १२९)। नारणदास स्वय भी महसूस कर रहे थे कि उनकी जिम्मेदारीका बोझ बहुत ज्यादा है और उन्होने उसके विषयमे गाधीजी को एक "हृदयद्रावक" पत्र (पृ० ९१) लिखा। लेकिन गाधीजी निराशा स्वीकार करनेके लिए तैयार नही थे। नारणदाससे उन्होने कहा, "आश्रमको छोडकर या बन्द करके बैठ जाना तो कायरता होगी" (पृ० ११५)। आश्रमके लिए उन्होने जिस नैतिक आदर्शकी कल्पना की थी, आश्रमवासियोको उस आदर्शतक उठानेमे उन्होने अनवरत कठिन परिश्रम किया था। इस अवसरपर भी उन्होने आश्रम-जीवनकी शुद्धिके लिए ब्यौरेवार सूचनाएँ भेजी और यह आशा प्रकट की कि आश्रमवासियोमे कुछ तो अवश्य ही इतनी योग्यता अर्जित कर चुके होगे कि आवश्यकता होनेपर अस्पृश्यता-निवारणके लिए सुयोग्य व्यक्तियो द्वारा अनिश्चितकालीन उपवास किये जानेकी जो योजना उनके मनमे आकार ग्रहण कर रही है, उसमे योग दे सके। (पृ० ९१, १४९, १५२)। उन्होने कहा कि मै आश्रमवासियोके प्रेमकी पात्रता और उन्हे आगे ले जानेकी शक्ति हासिल करनेके लिए जो प्रयत्न कर रहा हूँ, मेरा यह उपवास उसीका एक हिस्सा है। यदि मै इसमे विफल हो जाता हूँ "तो मै कोई आशा नही कर सकता" (पृ० ११५)।

आश्रमके प्रति अपने इस प्रगाढ स्नेहके बावजूद, जब राजनीतिक आवश्यकताओकी माँगके फलस्वरूप आश्रमके बलिदानका अवसर उपस्थित हुआ तो गाधीजी को उसमे कोई संकोच नही हुआ। उन्होने देखा कि व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा, जिसे कि सामूहिक आन्दोलनकी जगह लेनी थी, लम्बे कालतक चलेगी और उसमे लोगोको पहलेकी तुलनामे ज्यादा बडे बलिदान देने होगे। अत इस आन्दोलनके प्रणेताके नाते उन्होने महसूस किया कि ऐसी स्थितिमे महत्तम बलिदान तो उन्हे स्वय करना चाहिए और तदनुसार उन्होने आश्रम सरकारको सौप देनेका निश्चय किया। सरकारको अपने इस निश्चयकी सूचना देते हुए उन्होने लिखा, इसकी "रचनाके लिए मैने और दूसरे बहुत-से आश्रमवासियोने अटूट धीरज और अपार सावधानीसे अठारह सालतक मेहनत की है। आश्रमके एक-एक पशु और एक-एक पेड़का अपना इतिहास है और उससे

पवित्र सस्मरण जुडे हुए है। वे सभी एक विशाल कुटुम्बके सदस्य है। . . . इस कुटुम्ब और इसकी गतिविधियोको भग करनेका काम हममे आँसू बहाये बिना नही हो सकेगा" (पृ० ३१८)। आश्रमको भग करनेमे गाधीजी की अपेक्षा यह थी कि इससे आश्रमवासियोकी साधना और ध्येय-निष्ठा तीव्रतर बनेगी और प्रत्येक "आश्रमवासी एक चलता-फिरता आश्रम बन जायेगा" (पृ० ३२५)। गाधीजी ने आश्रम सरकारको सौपना तो चाहा था पर, सरकारने उसे स्वीकार नही किया और अन्तमे वह हरिजन-सेवक सघको सौप दिया गया।

जिन राजनीतिक परिस्थितियोके कारण गाधीजी को आश्रम भग करना पडा था वे तो उनकी अनासक्तिकी भावनाकी परीक्षा ले ही रही थीं, साथ ही अस्पृश्यता-निवारण आन्दोलनमे सम्बद्ध समस्याओका भी उनकी इस परीक्षामे कम योग नही था। जिस दिन उन्होने उपवासका आरम्भ किया, उसी दिन उन्हे एकाएक जेलसे रिहा कर दिया गया। उन्हींके शब्दोमे, "सत्यके एक शोधकके नाते और स्वाभिमानी मनुष्यके नाते मुझपर इस रिहाईसे बडा बोझ और तनाव आ पडा" (पृ० १६४)। फलत गाधीजीने सरकारको अपनी ओरसे यह आश्वासन दिया कि वे अपनी रिहाईका, सरकार जिसे अवाछित कह सके, ऐसा कोई उपयोग नहीं करेंगे। उन्होने कहा कि मै सविनय अवज्ञाको "आगे बढानेके लिए खुले या छिपे तौरपर एक भी कदम" नही बढाऊँगा (पृ० १६५-६६)। उन्होने काग्रेस-अध्यक्षको भी आन्दोलन छ हफ्तेके लिए स्थगित करनेकी सलाह दी। इन बातकी जरूरत उपवास करनेके लिए भी थी ही। अपने उपवासके विषयमे गाधीजी की इच्छा यह थी कि उसका रूप "२१ दिनकी अखण्ड प्रार्थना"का हो और वे अपने मनमे ऐसे कोई विचार आने ही नही देना चाहते थे जिनका सम्बन्ध हरिजन-सेवासे न हो (पृ० १६८)। बादमे उन्होने बताया कि यदि सविनय अवज्ञा जारी रहती तो गिरफ्तारियोकी, सत्याग्रहियोपर लाठियाँ बरसाने आदिकी खबरे उनके पास आती ही और उनके लिए यह सब शान्तिसे सुनना सम्भव नही होता (पृ०-२७६)। किन्तु गाधीजी के इस सद्भावपूर्ण कदमका सरकारपर कोई प्रभाव नही पडा। अध्यादेशोकी मददसे उसने जनताको डरा-धमकाकर चुप कर रखा था। इस भयावह परिस्थितिकी चर्चा करते हुए गाधीजी ने सी० एफ० एन्ड्रयूजको लिखा, "इस प्रकार देशमे एक प्रकारसे मौतका-सा सन्नाटा है जिसे मै, हालाँकि मै डॉक्टरोके आदेशसे लोगोके सम्पर्कमे दूर हूँ, अपने बिस्तर पर भी महसूस किये बिना नही रह पाता" (पृ० २०७)। इसलिए जब पूनामे काग्रेस-कार्यकर्त्ताओकी एक अनौपचारिक बैठकके बाद उन्होने सरकारके समक्ष ऐसा कोई प्रस्ताव रखनेके लिए "जो सरकार और जनता दोनोको स्वीकार होता" (पृ० ३२९), वाइसरायसे भेट की अनुमति चाही और उनका यह अनुरोध इस आधार पर अस्वीकार कर दिया गया कि "सविनय अवज्ञा आन्दोलन पूर्णत असवैधानिक है, उसके साथ कोई समझौता नही हो सकता और सरकार उसे बन्द करानेके लिए किसी तरहकी बातचीतमे कोई हिस्सा नही लेना चाहती" (पृ० २७८) तो, गाधीजी को लडाई जारी रखनेकी बात फिर सोचनी पडी। वे सरकारके समक्ष इतने सम्पूर्ण और

असम्मानजनक आत्मसमर्पणके लिए तो कदापि तैयार नहीं हो सकते थे: 'मैं मिट्टीमें मिल जाऊँगा, पर आत्मसमर्पण नहीं करूँगा" (पृ० २७६-७७)। उन्होंने कहा कि सत्याग्रह "उसमें भाग लेनेवालोंकी कमजोरीके कारण, . . . प्रतिपक्षीकी दिखाई देनेवाली विजयके कारण. छोड़ा नहीं जा सकता" (पृ० ३१०)। इसलिए उन्होंने १ अगस्तसे संघर्षको व्यक्तिगत सविनय अवज्ञाके नये रूपमें दुबारा शुरू करनेका निश्चय किया। सामूहिक संघर्षके वापिस लिये जानेका मतलब यही होता था कि वह विफल सिद्ध हुआ है: वह इस तथ्यकी स्वीकृति थी कि जनता "अध्यादेश राज्यकी लम्बी यातनाको अब और नहीं सह सकती" (पृ० ३१०-११)। किन्तु व्यक्तिगत सविनय अवज्ञाके विषयमें गांधीजी का दावा था कि उसमें विफलताकी गुंजाइश ही नहीं है: "सत्याग्रहमें व्यक्तिगत अवज्ञा अन्तिम चीज है . . . एक अजेय शक्ति है" (पृ० २९६)। वह उन्हीं व्यक्तियोंतक सीमित रहनी थी जो "अपने कार्यमें बड़े-से-बड़े खतरोंका, जिनमें बेहद गरीबी और चल व अचल सारी सम्पत्तिका नुकसान या शारीरिक यन्त्रणाएँ शामिल होंगी, सामना करनेको तैयार" रहेंगे। 'मुझे विश्वास है कि ये नर-नारी राष्ट्रीय भावनाका और पूर्ण स्वाधीनताके राष्ट्रके दृढ़ संकल्पका प्रतिनिधित्व करेंगे" (पृ० ३१२)। अतः सामूहिक सविनय अवज्ञाको वापिस लेने और उसकी जगह व्यक्तिगत सविनय अवज्ञाको चलानेकी गांधीजी की सलाह "निराशा या पराजयकी भावनाकी उपज नहीं" (पृ० ३१२) थी। जैसा कि उन्होंने इस निर्णयके बहुत पहले सी० एफ० एन्ड्रचूजको लिखे अपने एक पत्रमें कहा था, "महत्त्व संख्याका नहीं है . . . जबतक सत्यका एक भी प्रतिनिधि सचेष्ट है, सत्यकी अन्तिम विजय निश्चित है। भारतमें आज सत्यके कुछ प्रतिनिधि ऐसे हैं जो सत्यकी रक्षाके लिए कोई भी मूल्य चुकानेमें आगा-पीछा नहीं करेंगे" (पृ० २०७)।

गांधीजी को ३१ जुलाईको आधी रातके समय गिरफ्तार करके यरवदा जेल ले जाया गया। और वहाँ उनपर यह आदेश तामील किया गया कि वे पूना शहरकी म्युनिसिपल सीमाओंके भीतर ही रहें और सविनय अवज्ञाकी प्रवृत्तियोंमें कोई हिस्सा न लें। इस आदेशको माननेसे इनकार करनेपर उन्हें दुबारा गिरफ्तार किया गया और ४ अगस्तको एक सालकी कैदकी सजा दी गई। उनकी यह माँग कि उन्हें जेलमें रहते हुए हरिजन-सेवा करनेकी जैसी सुविधाएँ पहले भी दी जाती रही हैं वैसी इस बार भी दी जायें, इस आधारपर अस्वीकार कर दी गई कि इस बार वे पहले की तरह राज्यके कैदी नहीं बल्कि एक दंडित कैदी हैं। इसपर गांधीजी ने १६ अगस्तकी दोपहरसे अनिश्चितकालीन अनशन आरम्भ कर दिया। तारीख २३को जब उनकी शारीरिक हालत बहुत गम्भीर हो गई तब उन्हें बिना शर्त रिहा कर दिया गया और वे जेलसे सैसून अस्पताल भेज दिये गये। वहाँ कुछ समयतक वे जीवन और मृत्युके बीच झूलते रहे। उन्हें लगा कि वे अब अधिक नहीं टिक सकेंगे: "मृत्युसे अब लड़ नहीं सकूँगा" (पृ० ४१३)। और उन्होंने, उनके पास जो-कुछ भी था, सब लोगोंको बाँट दिया। सैसून अस्पतालसे मुक्त होनेपर वे विश्रामके लिए प्रेमलीला ठाकरसीके पूना-निवास पर्णकुटी ले जाये गये। पर्णकुटीमें अपनी रोग-शय्यासे

उस दिन वल्लभभाई पटेलके नाम लिखाये गये पत्रमे उन्होने कहा कि "यह सब स्वप्नवत् हो गया है" (पृ० ३८९)। वस्तुओ और घटनाओकी अवास्तविकताका जो अनुभव उनके मनपर इस समय छाया हुआ था, उससे मुक्त होनेमे और अपने नये कदमका निर्णय करनेमे उन्हे कुछ समय लगा। 'हरिजन' मे इस सम्बन्धमे उन्होने जो सक्षिप्त निवेदन दिया था उसमे उन्होने कहा, "मेरे इस लम्बे सार्वजनिक जीवनमे अनहोनी लगनेवाली कई घटनाएँ घट चुकी है, पर यह घटना तो सबसे अधिक अप्रत्याशित थी।" इसी वक्तव्यमे उन्होने आगे कहा, "मै नही जानता कि जेलके बाहर जीवनका उपयोग किस तरह करूँगा, पर इतना तो मै जरूर कहूँगा कि मै चाहे जेलके भीतर रहूँ चाहे बाहर, हरिजन-सेवा ही मेरे लिए प्रिय वस्तु रहेगी" (पृ० ३८५)। कुछ दिनोतक गाधीजी को ऐसा लगता रहा कि वे चारो ओर अधेरेसे घिरे हुए है और कर्त्तव्यका पथ कही साफ दिखाई नही पडता। अन्तमे प्रार्थनारत रहकर और पर्याप्त सोच-विचारके बाद वे इस निर्णयपर पहुँचे कि जबतक उनकी सजाकी अवधि पूरी नही हो जाती तबतक "मै आन्दोलनके रूपमे सत्याग्रह करके जेल नही जाऊँगा।" अपने ऊपर उन्होने यह बन्धन स्वेच्छासे ही लादा था, किन्तु था तो यह एक कडुवा घूँट ही (पृ० ४४५)।

गाधीजी की नीतियोके सही होनेके बारेमे दो विपरीत दिशाओसे सन्देह व्यक्त किया जाने लगा था। लिबरल नेता वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीका मत था कि गाधीजी की राजनीतिक कार्यपद्धतिमे देशका विश्वास उठता जा रहा है और लोगोके मनमे प्रस्तुत राजनीतिक समस्यासे निपटनेके "एक नये उत्तर"का उदय हो रहा है। उत्तर यह था कि सामूहिक अथवा व्यक्तिगत सत्याग्रहकी जगह एक ऐसी नई नीति अपनायी जानी चाहिए "जिसका उद्देश्य विधान, वित्त और प्रशासनमे सर्वत्र राष्ट्रका रचनात्मक कल्याण" हो। उन्होने गाधीजी से अनुरोध किया कि वे काग्रेससे हट जाये और उसे अपनी इच्छाके अनुसार उपयुक्त नये कार्यक्रमका विकास करने दे (परिशिष्ट–१३)। गाधीजी इस सलाहके विरुद्ध नही थे। अपने उत्तरमे उन्होने कहा, "मै खुशीसे काग्रेससे हट जाऊँगा और काग्रेसके बाहर सविनय अवज्ञा चलानेके काममे और हरिजन-कल्याण कार्यमे लग जाऊँगा।" लेकिन यह कैसे किया जाये, यह मेरी समझमे नही आता, "कर्त्तव्य-पालनको मैने सदैव सुन्दर और आनन्ददायक माना है। फिर कर्त्तव्य क्या है, यह जानना बहुत कठिन होता है" (पृ० ४०२)।

इसके खिलाफ, दूसरी दिशासे जवाहरलाल नेहरूका यह आग्रह था कि गाधीजी काग्रेसकी नीतियोको अभीष्ट परिवर्तनकी दृष्टिसे ज्यादा मूलगामी बनाये और सविनय अवज्ञाके सवालपर उनके तथा मा० श्री० अणेके वक्तव्योसे जो वैचारिक भ्रम पैदा हुआ प्रतीत होता है, उसे दूर करे (परिशिष्ट–१४)। गाधीजी का उत्तर उन दोनोके बीच स्नेह और आपसी समझके सम्बन्धोके अनुरूप परन्तु बिलकुल स्पष्ट और दृढ था। उन्होने जवाहरलालके इस विचारसे अपनी सहमति जाहिर की कि "निहित-स्वार्थोमे ठोस परिवर्तन किये बिना जनसाधारणकी दशामे कदापि सुधार नही हो सकता", यह भी स्वीकार किया कि भारतके राष्ट्रीय आन्दोलनको "अन्तर्राष्ट्रीय

प्रगतिशीलता" से जोड़नेकी आवश्यकता है, किन्तु उन्होंने यह भी स्पष्ट कहा कि "आदर्शोंके प्रतिपादनमें इस तरहकी सहमति होते हुए भी, हममें स्वभावगत मतभेद हैं। . . . इसलिए मैंने मुख्यतः साधनोंके संरक्षण और उनके अधिकाधिक उपयोगसे सरोकार रखा है" (पृ० ४४७)। उन्होंने अपने हालके निर्णयोंको इस दृष्टिसे उचित ठहराया और अन्तमें उन्होंने जवाहरलालको आश्वस्त किया कि "मुझमें पराजयका कोई भाव नहीं है और यह विश्वास कि हमारा देश तेजीसे अपने लक्ष्य की ओर बढ़ रहा है, मुझमें आज भी उतना ही ज्वलन्त है जितना कि १९२०में था . . ." (पृ० ४४९)।

क पत्र-लेखकको, जिसने उनका ध्यान अन्तर्जातीय भोज और अन्तर्जातीय विवाहके सवालोंपर उनके सन् १९२१के और १९३२के विचारोंकी असंगतियोंकी ओर खींचा था, जवाब देते हुए उन्होंने उसकी इस शंकाका यह उल्लेखनीय समाधान पेश किया: "मेरे लेख सदा सुसंगत ही प्रतीत हों, इसकी मुझे तनिक भी चिन्ता नहीं है। . . . प्रतिक्षण मैं सत्यरूपी नारायणकी आज्ञा माननेके लिए ही तैयार रहता हूँ। . . . एक ही विषयपर लिखे दो लेखोंमें से बादके लेखको चुनना ही अच्छा रहेगा" (पृ० ६१)।

अस्पृश्यता-निवारण आन्दोलनमें कर्त्तव्यका दायित्व मुख्यतः सवर्ण हिन्दुओंका ही था, किन्तु चूँकि उसका उद्देश्य समूचे हिन्दू-धर्मका शुद्धीकरण था, इसलिए उसमें हरिजनोंका योग भी आवश्यक था। अतः गांधीजी ने उन्हें सलाह दी कि वे भी अपनी गन्दी आदतें छोड़कर और अपने रहन-सहनमें स्वच्छताको अपनाकर इस महत् अनुष्ठान में अपना हिस्सा अदा करें (पृ० २९१)। "आप अपनेको नीच, अशक्त या अपंग न मानें" पर साथ ही "अपने दोषोंको पहाड़के समान बड़े मानें और उन्हें दूर करनेके लिए सतत् प्रयत्न करें" (पृ० ३८३)।

जो सनातनी अस्पृश्यताके पक्षमें यह कहते थे कि वे उसे प्रेम-भावसे मानते हैं, उनके आचरण और उनके स्वीकृत तत्त्वज्ञानके विरोधको उजागर करते हुए उन्होंने प्रेमके स्वरूपके विषयमें कहा: "प्रेम अगणित सूर्योंसे मिलकर बना है। एक छोटा-सा सूर्य जब छिपा नहीं रहता तब प्रेम क्यों छिपा रहने लगा? किसी माताको कहीं यह कहना पड़ता है कि मैं अपने बच्चेको चाहती हूँ? जिस बच्चेको बोलना नहीं आता, वह माताकी आँखोंको देखता है। जब आँखें मिल जाती हैं तब हम देखते हैं कि वे किसी अलौकिक चीजको देख रहे हैं" (पृ० १७८)।

पाठकोंको सूचना

हिन्दीकी जो सामग्री हमे गाधीजी के स्वाक्षरोमे मिली है, उसे अविकल रूपमे दिया गया है। किन्तु दूसरोके द्वारा सम्पादित उनके भाषण अथवा लेख आदिमे हिज्जोकी स्पष्ट भूले सुधार दी गई है।

अग्रेजी और गुजरातीसे अनुवाद करते समय भाषाको यथासम्भव मूलके निकट रखनेका प्रयत्न किया गया है। जो अनुवाद हमे प्राप्त हो सके हैं, हमने उनका उपयोग मूलसे मिलाने और सशोधन करनेके बाद किया है। नामोको सामान्य उच्चारणके अनुसार ही लिखनेकी नीतिका पालन किया गया है। जिन नामोके उच्चारणके बारेमे सशय था, उनको वैसे ही लिखा गया है जैसाकि गाधीजी ने अपने गुजराती लेखोमे लिखा है।

मूल सामग्रीके बीच चौकोर कोष्ठकोमे दिये गये अश सम्पादकीय है। गाधीजी ने किसी लेख, भाषण आदिका जो अश मूल रूपमे उद्धृत किया है, वह हाशिया छोडकर गहरी स्याहीमे छापा गया है, लेकिन यदि ऐसा कोई अश उन्होने अनूदित करके दिया है तो उसका हिन्दी-अनुवाद हाशिया छोडकर साधारण टाइपमे छापा गया है। भाषणोकी परोक्ष रिपोर्ट तथा वे शब्द जो गाधीजी के कहे हुए नही है, बिना हाशिया छोडे गहरी स्याही मे छापे गये है। भाषणो और भेटकी रिपोर्टोके उन अशोमे जो गाधीजी के नही है, कही-कही कुछ परिवर्तन किया गया है और कही-कही कुछ छोड भी दिया गया है।

शीर्षकको लेखन-तिथि दाये कोनेमे ऊपर दी गई है। जहाँ यह उपलब्ध नही है वहाँ अनुमानसे तिथि चौकोर कोष्ठकोमे दी गई है और आवश्यकता होनेपर उसका कारण स्पष्ट कर दिया गया है। जिन पत्रोमे केवल मास या वर्षका उल्लेख है, उन्हे आवश्यकतानुसार मास या वर्ष के अन्तमे रखा गया है। शीर्षकके अन्तमे साधन-सूत्रके साथ दी गई तिथि प्रकाशनकी है। गाधीजी की सम्पादकीय टिप्पणियाँ और लेख, जहाँ उनकी लेखन-तिथि उपलब्ध है अथवा जहाँ किसी निश्चित आधारपर उसका अनुमान किया जा सका है, वहाँ लेखन-तिथिके अनुसार और जहाँ ऐसा सम्भव नही हुआ है, वहाँ उनकी प्रकाशन-तिथिके अनुसार दिये गये है।

साधन-सूत्रोमे 'एस० एन०' सकेत साबरमती सग्रहालय अहमदाबादमे उपलब्ध सामग्रीका, 'जी० एन०' गाधी स्मारक निधि और सग्रहालय, नई दिल्लीमे उपलब्ध कागज-पत्रोका और 'सी० डब्ल्यू०' सम्पूर्ण गाधी वाड्मय (कलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गाधी) द्वारा सगृहीत पत्रोका सूचक है।

सामग्रीकी पृष्ठभूमि देनेके लिए मूलसे सम्बद्ध कुछ परिशिष्ट दिये गये है। अन्तमे साधन-सूत्रोकी सूची और इस खण्डसे सम्बन्धित कालकी तारीखवार घटनाएँ भी दी गई है।

आभार

इस खण्डकी सामग्रीके लिए हम निम्नलिखित सस्थाओ, व्यक्तियो, पुस्तकोके प्रकाशको तथा पत्र-पत्रिकाओके आभारी है

संस्थाएँ : सावरमती आश्रम सरक्षक तथा स्मारक न्यास और सग्रहालय, नवजीवन ट्रस्ट और गुजरात विद्यापीठ ग्रन्थालय, अहमदावाद, गाधी स्मारक निधि व सग्रहालय, हरिजन-सेवक सघ, नेहरू स्मारक सग्रहालय व पुस्तकालय, तथा राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली।

व्यक्ति : श्री एम० वी० एम० रमन, श्री भाऊ पानसे, वर्धा, श्रीमती प्रेमाबहन कटक, सासवड, श्रीमती वनमाला देसाई, श्री द० बा० कालेलकर, श्री परशुराम मेहरोत्रा, नई दिल्ली, श्री नारणदास गाधी, श्री छगनलाल जोशी, राजकोट, श्रीमती एफ० मेरी बार, श्रीमती मीराबहन, आस्ट्रिया, श्रीमती प्रेमलीला ठाकरसी, श्रीमती लीला आसर, श्रीमती तहमीना खम्भाता, श्रीमती मनुबहन मशरूवाला, श्री सुरेन्द्र मशरूवाला, बम्बई, श्री घनश्यामदास बिड़ला, श्रीमती शान्ता देवी, कलकत्ता; श्री आनन्द तो० हिंगोरानी, श्रीमती मेडेलिन रोलाँ, श्री अमृतलाल नानावटी, नई दिल्ली, श्रीमती गगाबहन वैद्य, बोचासण, श्री कनुभाई मशरूवाला, अकोला, श्री रामनारायण एन० पाठक, भावनगर, श्री छगनलाल गाधी, श्री हमीद कुरेशी, अहमदावाद, श्री भगवानजी पुरुषोत्तम पण्ड्या, वढवाण, श्रीमती शारदाबहन गो० चोखावाला, सूरत, श्रीमती सुशीला गाधी, फीनिक्स, डरबन, श्री नारायण देसाई, बारडोली, श्री वा० गो० देसाई, पूना।

पुस्तकें : 'बापुना पत्रो – ४ . मणिबहन पटेलने', 'बापुना पत्रो – २ सरदार वल्लभभाई पटेलने', 'लेटर्स ऑफ श्रीनिवास शास्त्री', 'ए बच ऑफ ओल्ड लेटर्स', 'बापूकी छायामे मेरे जीवनके सोलह वर्ष', 'द मैन्यूस्क्रिप्ट ऑफ महादेव देसाईज डायरी', महादेवभाईनी डायरी – ३', 'बापूना पत्रो – ५ कुमारी प्रेमाबहन कटकने', 'बापुना पत्रो – ९ : श्री नारणदास गाधीने', 'गाधी . १९१५–४८', 'गोसेवा', 'इडियन एनुअल रजिस्टर, १९३३', 'बापुनी प्रसादी', 'बापूज लेटर्स टु मीरा', 'दि ट्राइबल वर्ल्ड ऑफ वेरियर एल्विन', 'पाँचवे पुत्रको बापूके आशीर्वाद', 'माई डियर चाइल्ड', तथा 'पाचमा पुत्रने बापुना आशीर्वाद'।

पत्र-पत्रिकाएँ : 'अमृतबाजार पत्रिका', 'टाइम्स ऑफ इडिया', 'बॉम्बे क्रॉनिकल'. 'विश्व भारती न्यूज', 'हरिजन', 'हरिजन-बन्धु', 'हरिजन-सेवक', 'हिन्दुस्तान टाइम्स', 'ट्रिब्यून' और 'हिन्दू'।

अनुसन्धान और सन्दर्भ-सम्बन्धी सुविधाओके लिए अखिल भारतीय काग्रेस कमेटी पुस्तकालय, इडियन कौंसिल ऑफ वर्ल्ड अफेयर्स पुस्तकालय, सूचना और प्रसारण मन्त्रालयका अनुसन्धान और सन्दर्भ विभाग, नई दिल्ली तथा श्री प्यारेलाल नैयर, नई दिल्ली हमारे धन्यवादके पात्र है। कागज-पत्रोकी फोटो-नकल तैयार करनेमे सहायता देनेके लिए हम सूचना और प्रसारण मन्त्रालय, नई दिल्लीके फोटो-विभागके आभारी है।

विषय-सूची

१. उत्तर : पत्र-लेखकोंको[1]

मन्दिर-प्रवेशके विषयमें कुछ और[2]

इस विषयमे कुछ सन्देह नही है कि जो मूर्ति-पूजामे विश्वास नही करता उसे मन्दिर-प्रवेश-सम्बन्धी आन्दोलनमे भाग लेनेका अधिकार नही है। मन्दिरके नक्शेमे तुमने कुछ स्थानोपर निशान लगाये है। हरिजनोको उन स्थानोतक दर्शनके लिए प्रवेश देनेसे काम नही चल सकता। जो मर्यादाएँ अन्य हिन्दुओके लिए रखी जाये, वे ही हरिजनोके लिए भी रखी जानी चाहिए। और यदि जनता इसका विरोध करती हो तो फिलहाल यही अच्छा होगा कि हरिजन मन्दिरमे न जाये। यदि न्यासी मूर्तिकी शुद्धि करनेकी मॉग करे तो उन्हे वैसा करनेका अधिकार है। हरिजनोको प्रवेश देनेसे पहले उन्हे सर्वसामान्य मर्यादाओका ज्ञान अवश्य कराया जाना चाहिए। सक्षेपमे मेरा यह स्पष्ट मत है कि मन्दिर-प्रवेशके विषयमे जबरदस्तीको कोई स्थान नही है। जिस मन्दिरके विषयमे दर्शनार्थ जानेवाले लोगोके अधिकाशका विरोध हो वहाँ हरिजनोको प्रवेश देना अनुचित है। मन्दिरमे जानेवाले लोगोका मत इसके अनुकूल हो तो हरिजन अवश्य जाये। और कुछ भी क्यो न हो, मन्दिर-प्रवेशका अधिकार केवल उन्ही हरिजनोको है जो साधारण जनताके लिए निश्चित किये गये नियमोका पालन करते है।

सच्चा बहुमत[3]

जब मेरे सामने विधेयक रखा गया था मैने उसी समय बहुमत-सम्बन्धी अपनी कठिनाई व्यक्त की थी और मैने राजाजी से कहा था कि ५१ फीसदीकी बात ठीक नही। मैने उसमे सशोधन भी सुझाया था, क्योकि मेरा तो निश्चित मत है कि जबतक स्पष्ट बहुमत न हो तबतक यह महान सुधार, जिसकी हम तैयारी कर रहे है, सर्वव्यापी नही हो सकता। आप लोगोने देखा होगा कि इसी कारण मैने, एक भी विरोधी हो तो उसतककी भावनाका सम्मान रखनेकी पैरवी की है। क्योकि जिसे मै अधविश्वास समझता हूँ, सम्भव है कि वह मनुष्य उसे जीवन-मरणका सवाल मानता हो, उसे अपना मन्दिर इतना प्यारा हो कि वह उसे सर्वस्व माने और यदि उसे हरिजनोके साथ खडे रहकर दर्शन करना पडे तो सम्भव है, वह ईमानदारीसे ऐसा सोचता हो कि उसे दर्शनका फल नही मिलेगा। इसीलिए मैने सूचित किया

१. यह "डाककी पेटीसे" शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

२. एक सज्जनने मन्दिरका नक्शा बनाकर कुछ स्थानोंपर चिह्न लगाकर सुझाया था कि उक्त जगहोंतक हरिजनोंको प्रवेश देनेमें क्या हर्ज है? इसी सम्बन्धमें कुछ अन्य प्रश्न भी पूछे गये थे।

३. एन्ड्रयूजने मन्दिर-प्रवेश-सम्बन्धी विधेयकके लिए ६६ प्रतिशत बहुमतका प्रस्ताव रखा था। गांधीजी के मूल पत्रके लिए देखिए खण्ड ५४, पृ० ४१५-६।

है कि ऐसे व्यक्तिके लिए दर्शनका अलग समय रखा जाये और उसकी दृष्टिसे मन्दिरको शुद्ध कर लिया जाये।

मैंने इस के सिवाय और भी सुझाव दिय है, किन्तु इस समय मैं उनकी चर्चा नही करना चाहूँगा। जब विधेयक समितिके सामने आयेगा तब कोई भी सुधारक 'प्रतिशत' तथा अन्य बातोके सम्बन्धमे वाछनीय सशोधनोको स्वीकार करते हुए आगा-पीछा नही करेगा। अलबत्ता, सिद्धान्त तो वह किसी भी समय नही छोड सकेगा।

रोटी-बेटी व्यवहार[1]

उक्त दोनों विषयोके साथ अस्पृश्यताका कोई सम्बन्ध ही नही है। मैं किसीको अस्पृश्य नही मानता, किन्तु इसी कारण मैं जिसे अस्पृश्य नही मानता, उसके साथ मेरा भोजन करना अथवा उसके यहाँ बेटे या बेटीका सम्बन्ध जोडना कहाँका न्याय है? ये दोनो बाते तो अपनी व्यक्तिगत इच्छा और अधिकारकी बाते है। किन्तु किसी मनुष्यको उसके जन्मके कारण अस्पृश्य गिननेका किसीको अधिकार नही है। यह तो घोर अन्याय और जघन्य पाप है।

हरिजनोंको क्या पड़ी है?[2]

प्रश्न यह नहीं है कि वे क्या चाहते है। मुख्य बात यह है कि इन लोगोका हमारे ऊपर कितना कर्ज चढ़ चुका है। मुख्य बात यह है कि हमने मालवीयजी की अध्यक्षतामे बम्बईकी भरी सभामे[3] हिन्दू-ससारकी ओरसे इन लोगोको क्या वचन दिया था। हमने वचन दिया था कि हरिजनोको मन्दिरमे प्रवेश दिया जाये। हमने यह प्रतिज्ञा भी की थी कि यदि इसके लिए आवश्यकता हुई तो हिन्दू-समाज प्राणकी बाजी भी लगा देगा। क्या आपको महाभारतका यह वचन याद है — "यदि सत्यको तराजूके एक पलड़ेमे और दूसरे पलड़ेमे एक सहस्र यज्ञोको रखे, तो सत्यका पलडा भारी होगा।" हरिजनो और ईश्वरको दिये गये वचनका उल्लघन करना एक असह्य वस्तु है। इसके विचार-मात्रसे कँपकँपी आ जाती है। हम सनातनियोके साथ धीरजसे काम ले सकते हैं, उनसे प्रार्थना व आग्रह कर सकते है; किन्तु मन्दिर-प्रवेशकी बात नहीं छोड़ सकते।

आप कहते है कि हरिजनोको शिक्षा दे दे तो सब बाते अपने-आप हो जायेगी। नही, सवर्ण हिन्दुओको शिक्षित करना भी उतना ही जरूरी है। आज उनमे शिक्षाका प्रचार नही हो, ऐसा नही है। दु.खकी बात तो यह है कि उनमे उल्टी शिक्षाका प्रचार किया गया है। इस उल्टी शिक्षाने हमे उल्टा पाठ पढाया है। इस शिक्षाने

१. एक पत्र-लेखकने सुझाव दिया था कि अन्तर्जातीय भोजों और विवाहोंके द्वारा अस्पृश्यता मिटानेका प्रयत्न किया जाना चाहिए।

२. यह उत्तर पत्र-लेखक मोतीलाल रायको उनकी इस दलीलपर दिया गया था कि हरिजनोंको मन्दिर-प्रवेशकी परवाह नहीं है। गांधीजी के मूल पत्रके लिए देखिए खण्ड ५४, पृ० ४६९-७१।

३. जो २५ सितम्बर, १९३२ को हुई थी; देखिए खण्ड ५१, पृ० १४८-९।

हमे यह बताया है कि अधर्म धर्म है, पाखण्ड धर्म है, अधविश्वास ज्ञान है, असहिष्णुता ही दया है, स्वेच्छाचार ही सयम है और शास्त्रोका शुद्ध और सीधा अर्थ करनेके बदले खीचतान कर उसका उल्टा अर्थ निकालना ही शास्त्रार्थ है। पहले तो हमे इस उल्टी शिक्षामे सुधार करना पडेगा।

फिर वही बात[1]

क्या आप भूल गये कि आपने बम्बईमे हरिजनोको उनके बिना मॉगे वचन दिया था? यदि हरिजन न माँगे तो इससे क्या होता है। अनेक स्थानोपर बेचारे दरिद्र और दलित हरिजन न तो शालाकी मॉग करते है, न उनकी हिम्मत कुएँ माँगनेकी होती है और न वे अन्य किसी हककी बात उठाते है। क्या इसलिए हमारा यह कहना उचित है कि जबतक इन चीजोकी मॉग न उठे तबतक हम उन्हे इनमें से कुछ भी न दे। हम उनके कन्धोपर चढकर बैठे है। यदि हम वहाँसे उतर जाये तो यह भी पर्याप्त है। ये बेचारे इतने अधिक कुचले जा चुके है कि उनके कन्धोसे हमारे उतर जानेपर भी उन्हे वजनके उतर जानेका भान नही होगा। किन्तु इसका यह अर्थ नही है कि हम इस दलीलके बलपर उनपर सवार ही रहे। यह न्यायकी बात नही है।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, २३-४-१९३३

२. मेरे लिए चेतावनी

इसे लिखनेवालेका नाम मै देना नही चाहता,[2] पर उन्हे सभी जानते ह। वे देशके सच्चे सेवकोमे से एक है। उन्होने हरिजनोकी विशेष सेवा की है। इसलिए मै चाहता हूँ कि सभी इस पत्रको ध्यानसे पढे। मैने तो इसे दो बार पढा और इसपर विचार किया। उनकी चेतावनी उचित है, समयानुकूल है। उनकी आशका सही भी निकल सकती है।

यदि आशका सही सिद्ध हुई तो मुझे इसका कोई पछतावा नही होगा। मनुष्य सोचता कुछ है और ईश्वर कुछ दूसरा ही करता है। यदि ऐसा ही इस सम्बन्धमे भी हुआ तो यह कोई पहली बार नही होगा। ईश्वर सब-कुछ करते हुए भी अपने सिर किसी बातकी जिम्मेदारी नही लेता। लेता होता तो इसकी जिम्मेदारी मै

१. पत्र-लेखक, पी० एन० शकरनारायण अय्यरने कहा था कि हरिजन मन्दिरोंमें प्रवेशकी चिन्ता नही करते, इसलिए मैं तो केवल उन्हें शिक्षित बना रहा हूँ। गाधीजी के मूल पत्रके लिए देखिए, खण्ड ५४, पृ० ४६९-७१।

२. अपनी टिप्पणीसे पहले गाधीजी ने पत्रके जो उद्धरण दिये थे उनका अनुवाद यहाँ नहीं दिया गया है। पत्र-लेखकने कहा था कि गांधीजी के नामपर जो अस्पृश्यता-विरोधी आन्दोलन चलाया जा रहा है, वह वस्तुतः हिन्दू-समाजसे हरिजनोंके अलगावको और पक्का कर रहा है।

उसीपर डालता, और अपनी जिम्मेदारी बिलकुल भी न मानता। या फिर 'अन्त्यज' नामके बदले किसी अन्त्यज द्वारा सुझाया हुआ मीठा और उचित नाम 'हरिजन' पसन्द करनेकी ही जिम्मेदारी मानता। फिर भले ही 'अन्त्यजकी जय' के बदले 'हरिजनकी जय' कहा जाये।

सनातनियोका कहना है कि अन्त्यज आदिकालसे ही अलग गिने जाते रहे है और उन्हे अलग रखनेके लिए वे प्राण न्यौछावर कर देंगे। मै उन्हे हिन्दुओमे मिलाने और उनका अलग वर्गके रूपमे माना जाना बन्द करानेके लिए ईश्वरसे प्राण न्यौछावर करनेकी शक्ति माँग रहा हूँ, और ऐसी शक्ति पानेकी प्रार्थना करनेके लिए दूसरोको भी कह रहा हूँ। सनातनी भाई हरिजनोको अलग रखनेके लिए प्रयत्न कर रहे है और वे इसके परिणामोकी जिम्मेदारी भी लेनेको तैयार है। इसलिए, जिम्मेदारी किसकी होगी, यह प्रश्न ही नही उठता।

हरिजन गरीब और गुलाम रहे और वे सदा सवर्ण हिन्दुओके आश्रित, उनकी जूठन खानेवाले रहे, इससे अच्छा तो यही होगा कि वे शक्तिशाली बने और सवर्णोसे लडे। ऐसी लड़ाईके लिए तैयारी करनेमे न तो डॉ० अम्बेडकरको और न ही राववहादुर श्रीनिवासनको मेरी मददकी जरूरत है। समय अपना काम कर रहा है। समयने ही इन दोनोको और ऐसे ही अन्य भाइयोको तैयार किया है, और यदि सवर्ण हिन्दू अपना कर्त्तव्य नही निभाते तो वह उन-जैसे अन्य अनेक लोगोको तैयार करेगा।

जो चीज अपनी आँखोके सामने ही हो रही है, उसके विषयमे ऐसा मान लेनेसे कि वह है ही नही, वह समाप्त नही हो जाती। घरमे प्रविष्ट हुए सर्पके लिए, 'वह घरमे नही है' यह मान लेनेसे वह वहाँसे चला नही जाता। दुःखकी अवज्ञा करनेसे वह दूर नही होता। मै इस बारेमे अपनेको सच्चा वैद्य मानता हूँ। मैंने ठीकसे नाड़ी-परीक्षण किया है। रोग किस दवासे दूर होगा, यह भी बता दिया है। उसका उपयोग किया जाये तो रोगका नाश होगा ही, इस विषयमे भी शका नही है। लेकिन यदि रोगी इस दवाका उपयोग ही न करे तो बेचारा वैद्य क्या करे? बहुत हुआ, तो वह रोगीके घर धरना दे सकता है, उसके घर अनशन कर सकता है। और वैसा करनेकी तैयारी भी वैद्य कर ही रहा है। अनशन करनेके लिए योग्यता चाहिए। यह योग्यता ज्यो ही उसे मिलेगी उसे कोई रोक नही सकेगा।

रोग हरिजनोको नही है। और यदि कुछ है तो उसका कारण सवर्ण हिन्दू है। असल रोग तो सवर्ण हिन्दुओको है। लेकिन रोगी रोग होनेसे इनकार करता है; इलाज करनेवाले वैद्यको उसकी परीक्षाके लिए धमकाता है। फिर भी वैद्य शान्त नही बैठता। वह पुकार-पुकार कर कह रहा है कि घर जल रहा है।

लेकिन भाग्यमे लिखा कभी टल नही सकता, किसीका टला भी नही। हिन्दू-धर्मका नाश ही होना होगा तो कोई क्या करेगा? बुद्धि कर्मानुसारिणी होती है। कर्म अर्थात् भविष्य। जैसा भविष्य होगा वैसी ही बुद्धि सवर्ण हिन्दुओको सूझेगी। इसलिए इसमे उनका भी क्या दोष है?

अतः इस देशसेवकको मेरा सुझाव है कि वह व्याकुल न हो, अपना भोजन या निद्रा न खोए और एकाग्र होकर अपना कर्त्तव्य किये जाये। कदाचित् वह कहेगा,

और सच भी है कि 'आपको चेतावनी देना मेरा धर्म था, उस धर्मका मैंने पालन किया है, इसलिए मैं शान्त हूँ।' वह ऐसा कहे तो मुझे उसे सान्त्वना देना शेष नही रहता। उसने चेतावनी देकर अच्छा ही किया है। मैं अधिक सावधान रहूँगा। अपना रास्ता तो मैं अपने सामने प्रत्यक्ष देखता ही हूँ। उसे न छोडनेका ध्यान रखूँगा। इस सेवकका और मेरा आदर्श एक है। जैसे वह हरिजनोका कोई नया सम्प्रदाय नही देखना चाहता, वैसे ही मैं भी नही चाहता। मैं स्वप्नमे भी इस नये सम्प्रदायका आचार्य होना पसन्द नही करता। मैं हिन्दुओका, इसलिए हरिजनोका, और देशका, इसलिए हिन्दू, मुसलमान, सिख, पारसी, ईसाई, यहूदी इत्यादिका सच्चा सेवक बनना और वैसा होकर मरना चाहता हूँ।

लेकिन इस देशसेवककी चेतावनी जितनी मेरे लिए है उतनी ही सनातनियोके लिए भी है। क्या वे चेतेंगे?

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, २३-४-१९३३

३. काठियावाड़की हरिजन शालाएँ

काठियावाड हरिजन समितिके मन्त्री श्री मूलचन्द पारेखने 'हरिजनबन्धु' मे हरिजन शालाओके सम्बन्धमे कुछ शब्द लिखनेका सुझाव दिया था। उसपर मैंने उनसे उनके कार्यका विवरण माँगा। उन्होने यह विवरण भेजा है।[1]

अपनी राय मैं बता चुका हूँ। एक भी चालू शाला या आश्रम पैसेके अभावके कारण बन्द नही होना चाहिए। मुट्ठी-भर भी सेवक क्यो न हो उन्हे घरबार बेचकर और आवश्यक हो तो अपने-आपको बेचकर भी इन संस्थाओको चलाते रहना चाहिए। यदि हाथ तग रहे तो इसका सीधा-सीधा अर्थ यही होगा कि या तो काठियावाडियोकी हरिजन-सेवामे रुचि नही है या उन्हे अपने सेवकोमे विश्वास नही है। दोनोमे से जो भी कारण हो, उनमे रुचि या विश्वास पैदा करनेका यही तरीका है कि सेवक सब-कुछ अर्पित कर दे।

काठियावाडसे बाहर चन्दा इकट्ठा करनेकी बात सुनता हूँ। आफ्रिकातकका विचार किया गया है। ऐसा करना पडे तो यह शर्मकी बात मानी जायेगी। जो काठियावाडी बाहर रहते हैं, उन्हे ऐसे परोपकारी कामोका ध्यान रखना ही चाहिए और उन्हे बिना माँगे मदद करनी चाहिए। प्रत्येक धनी कठियावाड़ी अपने-आप

१. यहां नहीं दिया जा रहा है। काठियावाड हरिजन समिति प्रान्तके विभिन्न भागोंमें २३ हरिजन शालाओंका संचालन कर रही थी। इन शालाओंमें १६४८ छात्र शिक्षा पा रहे थे। धनाभावके कारण समितिने शालाएँ बन्द करनेका निर्णय किया था, पर गांधीजी की सलाहपर एक सार्वजनिक अपील जारी की गई और कोई ७,००० रुपये चन्देमें प्राप्त हुए। फिर भी इन शालाओंको एक वर्षतक चालू रखनेके लिए ३,००० रुपयोंकी आवश्यकता और थी।

अपनी कमाईका दसवाँ भाग, या जितना भी उसे ठीक लगे उतना भाग, ऐसे कामोंमें मददके लिए अलग रखें, तो काठियावाड़ हरिजन समिति-जैसी संस्थाओंका सहज निर्वाह हो सकता है।

न्यायकी बात तो यही है कि काठियावाड़-निवासियोंको ही ऐसी संस्थाओंके काममें रुचि लेकर उन्हें अपना लेना चाहिए। अब्बाससाहब-जैसे बुजुर्गको चन्दा इकट्ठा करनेमें मदद देनेके लिए तकलीफ देनी पड़े, यह बात हमारे लिए बहुत लज्जाजनक है। इसीलिए मैं यही आशा करता हूँ कि श्री मूलचन्द पारेखका निवेदन पढ़कर सभी सामर्थ्यानुसार बिना माँगे दान भेजकर ऐसी संस्थाओंकी रक्षा करेंगे।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, २३-४-१९३३

४. बहनोंसे एक शिकायत

कराचीसे एक हरिजनने अपनी टूटी-फूटी भाषामें एक पत्र लिखा है, जिसका सारांश यथासम्भव उसीकी भाषामें नीचे दे रहा हूँ :

> छूतछातनको बहनें बहुत मानती हैं। जूठा, गन्दा, बासी खाना दूरसे हरिजनोंको फेंककर देती हैं। वे मानती हैं कि भंगियोंको इसी तरह दिया जा सकता है। बेचारे भंगी भी उसे ले लेते हैं। बहनें अगर यह आदत छोड़ दें तो छुतआछूत नष्ट होनेमें बहुत समय नहीं लगेगा।

मैंने उस लम्बे पत्रका सार ही दिया है। यदि बहनें जूठा खाना देनेके बजाय अच्छा खाना देने लगेंगी तो इतनेसे ही अस्पृश्यता दूर नहीं हो जायेगी। लेकिन इतना सुधार हो तो इससे यह अवश्य समझा जायेगा कि बहनोंके हृदयमें कुछ दया और करुणा आ गई। बहनोंके विरुद्ध की गई यह शिकायत बिलकुल ठीक है। वे चाहें तो इतना सुधार फौरन कर सकती हैं। इसमें कोई पैसे खर्च करनेकी नहीं, केवल हृदय-परिवर्तनकी बात है। जिस बहनके हृदयमें हरि बसते हैं, वह तो आज ही हरिजनको अपना लेगी। देहरादूनके विद्यार्थियोंने भी ऐसा ही एक प्रश्न उठाया था। उसके जवाबमें मैंने जो लिखा था,[1] वही बहनोंके लिए भी कहा जा सकता है। बहनोंको अपने स्वादिष्ट भोजनमें कुछ कमी करना जरूरी है। इतना वे कर लें, तो एक धेला अधिक खर्च किये बिना भी हरिजनोंके लिए वे शुद्ध भोजन अलग रख सकती हैं। बचपनकी एक बात मुझे याद है। प्रायः मेरी माता घरपर आये हुए साधु-वैरागियोंको खाना खिलाकर ही खाती थीं। घरमें जो भोजन बनता था, वही उनके लिए वह पहलेसे निकाल कर रख छोड़ती थीं। उन्हें प्रेमपूर्वक परोसकर बादमें आप खाती थीं और अपनेको धन्य मानती थीं। इसी तरह बहनें अगर

१. देखिए खण्ड ५४, पृ० २८७-९।

हरिजनोका हिस्सा भी पहले निकाल कर रख दे और फिर भोजन परोसे, तो कितना अच्छा हो। ऐसा करनेसे हरिजन भिखारीके बजाय अतिथि अथवा कुटुम्बी बन जायेगा। इस प्रकार प्रेमपूर्वक भोजन देनेसे ही हरिजन स्वच्छ किये जा सकते है। इससे यह होगा कि दूसरे गर्वपूर्वक भगियोपर जूठन फेकनेके बजाय, बहने उनके हाथमे शुद्ध भोजन देने लगेगी। उनके हाथ साफ न होगे, तो उन्हे धो लेनेको कहेगी। उनके पास साफ कपडा न होगा, तो वे अपने पास से दे देगी। उन लोगोके लिए बर्तन भी खास रखेगी। या उनको सूखी, कच्ची वस्तुएँ देगी अथवा उनका वेतन बढा देगी। जब भगी भाई-बहनोमे स्वाभिमान जागृत हो जायेगा, तब वे दूसरोकी तरह खाना लेनेके बजाय वेतन लेना ही पसन्द करेगे। जबतक वह समय नही आता, तबतक के लिए तात्कालिक सुधार की ये तजवीजे मैंने बहनोके सामने रखी है।

हृदय-परिवर्तन होते ही, छुआछूतका भूत भागते ही, हरिजन हमसे नीचे नही, हमारे ही समान है, ऐसी भावना पैदा होते ही बहनोको आप-ही-आप कुछ सुधार सूझेगे। कोई व्यक्ति इसे विस्तृत रूपसे शुरू करे, इसकी राह देखनेकी जरूरत नही है। जिस बहनको इस सुधारकी आवश्यकता दिखाई दे वह इसे शुरू कर सकती है। खुद आरम्भ करके अपने पडोसियोसे भी वैसा ही करनेको कहना चाहिए।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, २३-४-१९३३

५. पत्र : एम० वी० एस० रामनको

यरवदा सेंट्रल जेल[१]
२३ अप्रैल, १९३३

प्रिय मित्र,

आपका पत्र और उसके साथ आपकी पुस्तिका भी मिली। हाथमे लिया हुआ काम ही मेरा पूरा समय ले लेता है और उसके सिवा किसी और चीजपर ध्यान देना मेरे लिए बहुत कठिन है। इसलिए यदि मै आपकी योजनापर कोई राय न दे सकूँ, तो आप कृपया मुझे क्षमा करे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्रीयुत एम० वी० एस० रामन
डायरेक्टर, यूनिवर्सल यू० यूनिफार्मिटी
३० कामाक्षीजोश्यर स्ट्रीट, कुम्भकोणम

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९६७८) से; सौजन्य · एम० वी० एस० रामन।

१. गांधीजी इसे यरवदा मन्दिर कहते थे। बादके शीर्षकोंमें इस स्थानका नाम नहीं दिया जा रहा है।

६. पत्र : बी०को[1]

२३ अप्रैल, १९३३

प्रिय . . .,

तुम्हारा १८ अप्रैलका पत्र मिला। मुझे उसपर कतई विश्वास नही होता। मैं जब तुम्हारा पत्र पढ रहा था तब नी०[2] मेरे पास ही थी। मैंने उससे पूछा कि जब वह आगसे खेल रही थी तो क्या, उसके खयालमे, तुम उससे अछूते थे। उसने बिलकुल साफ कहा कि 'नही'। मेरा यदि हजारो नही तो सैकड़ो नवयुवकोंसे तो परिचय रहा ही है। पर मैं ऐसे किसी भी नवयुवकको नही जानता जिसने पथ-भ्रष्ट होनेके बाद अपने-आपको धोखा न दिया हो। तुमने भी लगता है, वैसा ही किया है। क्योकि तुम्हारे पत्रसे मैं यह ध्वनि निकालता हूँ कि नी०के साथ रहते हुए तुम किसी भी क्षण किसी तरहकी पाशविक वासनासे प्रभावित नही हुए। किसी भी व्यक्तिके लिए, जबतक कि वह बिलकुल नपुसक या देवता न हो, यह असम्भव है, और मेरा खयाल है कि तुम इन दो मे से एक भी नही हो। यदि तुम सच्चे मनुष्य बनना चाहते हो, तो तुम्हे इस आत्म-प्रवचनासे मुक्त होना चाहिए। तुम बच्चे नही थे. और न नी० थी। जब वह अपने-आपको और ईश्वर द्वारा मानव प्राणियोंके लिए नियत की गई कामवासनाकी मर्यादाओको भूल गई थी, तब वह कोई माँ की भूमिका अदा नही कर रही थी।

इसलिए मैं तुम्हे पूरे जोरके साथ यही सलाह दूंगा कि यह सारी भावुकता छोड दो, व्यावहारिक मनुष्य बनो और अपने-आपको सचाईके साथ हरिजन-सेवामे लगा दो। अबतक तो तुम उसका केवल स्वाँग ही कर रहे थे।

हृदयसे तुम्हारा,

अंग्रेजीकी नकल (एम० एन० १९०३५) से।

१. नाम छोड दिया गया है।

२. एक अमरीकी महिला, जो बादमें कुछ समयके लिए आश्रममें रही थी। उसका नाम यहाँ और अगले शीर्षकोमें नहीं दिया जा रहा है।

७. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

२३ अप्रैल, १९३३

प्रिय सतीशबाबू,

आपका पोस्टकार्ड और पत्र मिला। दोनो एक ही दिन मिले। अपने तारके बारेमे आप मुझे अब क्या भूल-सुधार भेजेंगे[1]? मेरा खयाल है कि वह बात तो अब तक बिलकुल आई-गई हो चुकी है, और सत्यकी खातिर अब आवश्यकता भूल-सुधारकी नही — वह अनावश्यक है — बल्कि ऐसी मानसिक सतर्कता की है जो अपरीक्षित तथ्यो या लचर दलील या वैसे तथ्योपर आधारित कथनोसे सन्तुष्ट न हो। अस्पृश्यताका प्रसार मद्रासमे बगालसे बहुत ज्यादा है, यह बात तर्कसे पूर्णतया सिद्ध करना किसीके लिए सम्भव नही है। परन्तु हमारे उद्देश्यके लिए अर्थात्, उस सुधारकके लिए जो इस बुराईकी जडतक जाना चाहता है और केवल सत्यकी सेवा करना चाहता है, यह स्थापना पूर्णतया सिद्ध है कि अस्पृश्यता दक्षिणमे सबसे अधिक है। कारण कि वहाँ स्थिति यह नही है कि एक ओर सवर्ण हिन्दू और दूसरी ओर अस्पृश्य हैं, बल्कि यह है कि एक ओर ब्राह्मण और दूसरी ओर अब्राह्मण है। अब्राह्मणोमे सभी हिन्दू शामिल हैं और वे सभी अब्राह्मण निस्सन्देह अस्पृश्य माने जाते हैं — मताधिकार समिति या जनगणना आयुक्तकी परिभाषाके अनुसार शायद ऐसा न हो, पर हमारी परिभाषाके अनुसार वे निश्चित रूपसे अस्पृश्य माने जाते है। ब्राह्मणो और अब्राह्मणोके बीच खाने-पीने और मन्दिर जानेके मामलेमे अस्पृश्यता है। पर अस्पृश्यताके दर्जे हैं। निम्नतम स्थान 'अदर्शनीय'का है। 'अदर्शनीय' व्यक्तिको ब्राह्मणोकी आँखोके सामने तो आना नही चाहिए, उसकी आवाजतक उन्हे सुनाई नही पडनी चाहिए। दक्षिणमे मन्दिरोकी व्यवस्था उत्तर भारत-जैसी नही है। वहाँ सभी वर्गोके लिए रुकावटे हैं। वहाँ सचमुच किसके लिए कौन-कौनसी रुकावट रूढ है, यह मुझे भी मालूम नही है। पर वहाँ रुकावटे हैं, और आप और मैं उन रुकावटोको ही हटाना चाहते हैं। मैं अभी बगाल जनगणना रिपोर्टके अस्पृश्यता-सम्बन्धी अध्यायको पढने जा रहा हूँ, वह इस मसलेपर बहुत प्रकाश डालता है। पर आप मेरा आशय अब समझ गये होगे। आपके द्वारा किये जानेवाले किसी भी भूल-सुधारसे उद्देश्य पूरा नही होगा। परन्तु जो स्थिति है, उसे हमे अच्छी तरह समझ लेना चाहिए और मेरी आपको अब यही सलाह है कि 'दक्षिणको अपने मनसे बिलकुल निकाल दे, किसी तरहकी तुलना न करे।' जहाँ भी हम जाते है, स्थिति काफी खराब मिलती है। यदि हम मानसिक स्थितिकी दृष्टिसे विचार करे तो अपेक्षाकृत अधिक सवेदनशील नामशूद्र किसी हल्की अस्पृश्यताको भी कही अधिक महसूस करता है,

१. देखिए खण्ड ५४, पृ० १३०-१।

जबकि 'अदर्शनीय' माना जानेवाला अपेक्षाकृत कम संवेदनशील व्यक्ति अस्पृश्यताके कठोरतम रूपको भी उतना महसूस नही करता। इसलिए दक्षिण क्या करता है या क्या नही करता — इसका विचार किये बिना, आपका अपना काम निश्चित है। आपको बंगालमे प्रचलित अस्पृश्यतासे मुक्ति पानी है, फिर चाहे उसका असर हिन्दू आबादीके ५० प्रतिशत भागपर पडता हो, चाहे ५ प्रतिशत पर।

डॉ० पी० सी० राय और गुरुदेवके बारेमे आप जो कहते है, वह मै समझता हूँ।[१] मेरा यह खयाल है कि आप परिस्थितिका जितना अधिक अध्ययन करेगे उतना ही अधिक यह देखेगे, जैसाकि मैने देख लिया है, कि बगालका शिक्षित वर्ग यरवदा-समझौतेमे सुधार नही चाहता।[२] जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, यदि बगालके हरिजनो और अन्य सभी सम्बन्धित पक्षोको मनाया जा सके तो वे उसमे सुधार कर सकते है, अलबत्ता यह देखे कि उससे सयुक्त व्यवस्था तो कमजोर नही पडती। वे उसे गलत तरीकेसे कर रहे है, यह बात सच है और दुर्भाग्यपूर्ण है। यह बात भी उतनी ही दुर्भाग्यपूर्ण है कि जो-कुछ हुआ उसके लिए गैर-बगालियोको दोष दिया जा रहा है। बगालियोको बम्बईकी मीटिगमे पूरी सख्यामे आना चाहिए था। लेटिनमे कानूनके बारेमे एक बहुत ही सुन्दर नीति-वचन है, जिसका आशय है — "न्यायसाम्य सजगका हित-साधन करता है, सोये हुए का नही।" परन्तु जिस व्यक्तिको शिकायत होती है और जो पीडित और क्रुद्ध होता है, उससे आप कुछ कह नही सकते। इसीलिए मै बिलकुल मौन रहा हूँ। इस तरह लोगोमे अपने-आप विवेककी भावना पैदा होगी। इसलिए मै आपको भी बिलकुल मौन रहनेकी सलाह दूँगा। आप काफी कह चुके है और बगालके हरिजनोको यह वचन दे चुके है कि जहाँतक आपका सम्बन्ध है, आप समझौतेको एक पवित्र वस्तु मानते है, और उसे सभी पक्षोकी सर्वसम्मत स्वीकृतिके बिना बदला नही जा सकता। मेरी बातका आशय आपके सामने बिलकुल स्पष्ट हो गया न?

मै देख रहा हूँ कि 'हरिजन' की बिक्री आपके यहाँ इस समय गिर रही है। पर मुझे आशा है कि उसे घाटेमे नही चलाना पडेगा। यदि उसमे घाटा होने लगे तो प्रकाशन बन्द कर दे। यदि बगाल बगला 'हरिजन' नही चाहता, तो उसपर वह थोपा नही जा सकता। हिन्दी, गुजराती और अग्रेजी-सस्करणोकी बिक्री बराबर बढ रही है। अग्रेजी-सस्करण प्राय आरम्भसे ही स्वावलम्बी रहा है, और गुजराती

१. सतीश बाबूने कहा था कि डॉ० पी० सी० राय यद्यपि पहले पूना-समझौतेके पक्षमें थे पर अब वे उसके विरुद्ध हो गये हैं। गुरुदेवके बारेमें उनका कहना था कि मैंने उनसे यरवदा-समझौतेके सिलसिलेमें आयोजित एक सन्देश भेजनेको कहा था। पर रवीन्द्रनाथ ठाकुरने यह उत्तर दिया कि मैं परिस्थितिका एक उच्चतर स्तरसे सर्वेक्षण कर रहा हूँ और चालू राजनीतिसे अलग ही रहना चाहता हूँ।

२. दलित वर्गोंके नेताओं और शेष हिन्दू-समाजके नेताओंके बीच हुआ समझौता, जिसमें विधानसभाओंमें दलित वर्गोंके प्रतिनिधित्व और उनके कल्याणसे सम्बन्धित कई अन्य मुद्दे तय किये गये थे। समझौतेके पूरे मजमूनके लिए देखिए खण्ड ५१, परिशिष्ट २ और खण्ड ५४, पृ० १८० और २६८ भी।

व हिन्दी-संस्करण, आशा है, महीने-भरमे स्वावलम्वी हो जायेगे। क्या मैने आपको कभी बताया था कि [इसका] एक तमिल-संस्करण भी था, जिसे गणेशन प्रकाशित करते थे? वे बहुत ही उत्साही कार्यकर्त्ता है और उन्होने अपने-आपको पूर्णतया इस तरहके ध्येयोके लिए समर्पित कर दिया है।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एम० एन० १९०३६) से।

८. पत्र : पी० एस० रुद्रमणिको

२३ अप्रैल, १९३३

प्रिय रुद्रमणि,

तुम्हारे पत्रके लिए धन्यवाद। तुम्हारा सम्बन्ध हरिजनोके पुरोहित वर्गसे है, इसीलिए तुम्हारे बारेमे मुझे इतना बुरा लगा। मेरा मन यही कहता है कि तुमने नी०की उपेक्षा की है। तुम्हे उसे वहाँ नही ले जाना चाहिए था। जिस कामके लिए तुम उसे अपने गाँव ले गये थे उसमे उसे लगानेके लिए तुमने कुछ भी नही किया। और नी० जो कुछ कहती है यदि वह सच है, तो तुम कोई शारीरिक काम करनेको तैयार नही हो। मेरी बडी इच्छा है कि तुम हरिजनोके आदर्श पुरोहित बनो और उनके साथ तथा उनके लिए श्रम करो, और सवर्ण हिन्दू पुरोहितोमे पाई जानेवाली सभी कमजोरियो और बुराइयोसे बचो। मेरी बडी इच्छा है कि तुम अपने चरित्र और अपनी विद्याके बलपर कट्टर-से-कट्टर सवर्ण हिन्दुओसे भी आदर प्राप्त कर सको।

जहाँतक मै समझ सका हूँ, तुमने नी०के टिकटके दाम रामचन्द्रको नही लौटाये है। वह टिकट तुम्हे खुद खरीदना चाहिए था। पर तुमने उसमे बहुत विलम्ब कर दिया। और नी० मुझे यह भी बताती है कि उसका अपने केश कटवाना तुम्हे बहुत बुरा लगा। यदि एक बहन, जो कलतक मलिन जीवन बिता रही थी, अचानक सारी मलिनताको छोडने और त्यागका जीवन अपनानेका सकल्प करती है, तो तुम्हे निश्चय ही उसके सकल्पका स्वागत करना चाहिए था। वैसे भी किफायत और स्वच्छताकी दृष्टिसे केशोको हटाना आवश्यक है। हिन्दू होकर भी क्या तुम यह नही जानते कि सन्यासिनीकी हैसियतसे, हमारी धारणाके अनुसार तो वह वही हो गई है, वह केश और ऐसे अलकार नही रख सकती जो मनुष्यकी नीच प्रवृत्तियोको ललचाते है।

आखिरी बात, तुमने मुझे यह भी नही बताया कि उसके पूनाके टिकटके दाम दया करके एक पारसी सज्जनने दिये थे। कृपया मुझे उनका पूरा नाम और पता भेजो। यह समझनेकी कोशिश करो कि मैने यह पत्र तुम्हे डाँटने-फटकारनेकी नीयतसे नही लिखा है। ऐसा करनेका मुझे कोई अधिकार नही है। नी०के द्वारा ही मै तुम्हे जानता हूँ। परन्तु, क्योकि तुम्हे मै अपना आदमी भी समझता हूँ

और तुम्हारे साथ सहानुभूति रखता हूँ, इसीलिए यह सत्र मै इस आशा से लिख रहा हूँ कि भविष्यके लिए तुम इससे सावधान हो सकते हो। यदि अनजानेमे मुझसे तुम्हारे प्रति कोई अन्याय हो गया हो, तो कृपया मेरी भूल सुधार देना।

हृदयसे तुम्हारा,

श्रीयुत पी० एस० रुद्रमणि,
चितलदुर्ग

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१०३८)से।

९. पत्र : रामचन्द्रको

२३ अप्रैल, १९३३

प्रिय रामचन्द्र,

नी०के पत्रके साथ आपका पत्र भी मिला। दोनो पत्र एक ही डाकसे पहुँचे। इस तरह आप देखेगे कि मै आपकी उम्मीद कर रहा था[1]। चितलदुर्गमे उसकी प्रगति को मै बडी उत्सुकतासे देखता रहा हूँ। उसके जीवनमे अचानक क्रान्ति लानेमे मै सहायक रहा हूँ। अत· चितलदुर्गमे यदि मै उसे यूंही घुलने देता और उसकी उपस्थितिसे वहाँ हरिजनोको कोई लाभ न पहुँचता, तो मै अपनेको अपराधी महसूस करता। इसलिए उसे सीधे अपनी देखरेखमे रखनेके सिवा और कोई चारा नही है। मै जानता हूँ कि यह प्रयोग खतरेसे खाली नहीं है। मुझे नही मालूम, और मेरा खयाल है, उसे खुद भी मालूम नही है, कि उसके जीवनमे जो क्रान्ति आई है वह टिकेगी या नही। अतीतसे विच्छेद बहुत ही आकस्मिक है। पर मै ऐसे लोगोको जानता हूँ जिनके जीवनमे इस तरह अचानक कायाकल्प हुआ है। उसके पिछले पत्रो पर जब मैं दृष्टि डालता हूँ तो वहाँ मुझे उसके मनकी अदृश्य क्रियाका और उसके भीतर चल रहे सत् और असत्की शक्तियोके युद्धका संकेत मिलता है। हमे आशा करनी चाहिए कि सत्की शक्तियोकी असत्की शक्तियोपर विजय हो गई है।

कृपया मुझे बताइए कि उसकी वजहसे आपका हाथ कही बिलकुल खाली तो नही हो गया है। यदि ऐसा हो तो अपना हिसाब-किताब लिखना। चितलदुर्गके उसके टिकटके लिए आपने जो रुपये दिये थे, वे रुद्रमणिने आपको लौटाए या नही?

हृदयसे आपका,

श्रीयुत रामचन्द्र
दीन सेवा संघ
मलेश्वरम, बगलौर

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१०४२)से।

१. देखिए खण्ड ५४, पृ० ५२७-८।

१०. पत्र : भाऊ पानसेको

२३ अप्रैल, १९३३

चि० भाऊ,

गाँवोमे जो जानकारी मिलती रहे, मुझे लिखते रहना। गाँवके लोगोके साथ मिलकर उनके जैसा बनकर उनसे बाते करना। वे क्या करते है, क्या खाते है, काहे की खेती करते है, कौन-सी खाद इस्तेमाल करते है, मलके लिए गड्ढा कहाँ बनाते है, उसका उपयोग करते है या नही, पशु कितने है, कैसे है, फल के या दूसरे पेड है या नही, पानीका क्या प्रबन्ध है, आदि सारी जानकारी प्राप्त करना। बच्चोके साथ घुलना-मिलना चाहिए। मतलब यह है कि वे हमारे सम्बन्धी ही है ऐसा मानकर उनमे दिलचस्पी लेनी चाहिए। और जिस प्रकार सम्बन्धीसे सब-कुछ पूछ-पूछकर उसके सुख-दु ख मालूम करते हुए हम नही थकते, उसी तरह इनके विषयमें भी न थके। अद्वैत भावनाका पोषण और वृद्धि इसी प्रकार की जा सकती है।

स्वास्थ्य अच्छा होगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६७५६)से। सी० डब्ल्यू० ६७५६ से भी; सौजन्य. भाऊ पानसे।

११. पत्र : प्रागजी के० देसाईको

२३ अप्रैल, १९३३

चि० प्रागजी,

तुम्हारा पत्र बहुत राह देखनेके बाद मिला। तुम्हारे भाईके अच्छे हो जानेकी कामना करता हूँ।

पार्वतीने सम्बन्ध तोड ही दिया है। वह सन्देशा भेजती रहती है, किन्तु उसकी कुछ कीमत नही है। क्या उसने कभी किसी भी निमित्त पत्र लिखा है? पहलेकी बाते न करे। तुम्हे मेरा पत्र मिल गया होगा। अस्पृश्यताके बारेमे ही साफ-साफ बात करनी है तो मिल सकोगे, नही तो पत्रसे ही सन्तोष कर लेना। मेरी सलाह तो यही है कि पत्रसे ही सन्तोष करो।

मणिलालके बारेमें तुम्हारी शिकायतका जवाब मुझे अभी देना है। तुम्हारा पता ठीक हो जानेपर उसका जवाब दूंगा।

बापूके आशीर्वाद

श्री प्रागजी खण्डूभाई देसाई
मार्फत—डॉ० एन० डी० पटेल
सी व्यू बिल्डिंग, क्वीन्स रोड, बम्बई

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५०३४)से।

१२. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

२३ अप्रैल, १९३३

चि० प्रेमा,

दायाँ हाथ काफी थक गया है, इसलिए जो-कुछ शक्ति उसमें बाकी हो उसे 'हरिजन' के लेखोंके लिए सुरक्षित रखना चाहता हूँ। मेरा खयाल है कि पूरे आराम की जरूरत नहीं पड़ेगी।

बीचमें एक पत्र मैंने तुझे लिखा ही है।[1] इसलिए यह छोटा रहे तो हर्ज नहीं।

परचुरे शास्त्रीके, लिए मैं पुस्तकोंकी तलाश कर रहा हूँ।

मैत्री तकलीफ देगी। अगर उसे सुधारना है तो सहन करनेसे और प्रेमसे ही सुधरेगी। उसे माँ की कमी महसूस नहीं होनी चाहिए। मासिकधर्म के समय जो छूट रखनी उचित हो वह रखी जाये। कोई एक या अनेक लोग भी उसका दुरुपयोग करे तो उसके लिए आश्रम जिम्मेदार नहीं होगा। नींदके समयका कोई व्यक्ति दुरुपयोग कर सकता है, इस कारण हम वह समय काट नहीं सकते।

तू अपना धीरज टूटने न देना। सुधारक या सेवकका काम इसके बिना घड़ी-भर भी नहीं चलता, इसे हमेशा याद रखना, अपनी दीवारपर लिख रखना, उसका तावीज बनाकर पहन लेना।

वहाँसे मजूरी आ जायेगी तो नी० थोड़े ही दिनोंमें आश्रममें आयेगी। उसने खुल्लम-खुल्ला व्यभिचार किया है, कर्ज लिया है, असत्य बोला है। अब वह साध्वी-जैसी बनकर बैठी है। मुझे उसमें कृत्रिमता नहीं लगी। उसने अपने दोषोंका दर्शन किया, उसके बाद मैंने उससे जो कहा वही उसने किया है। यदि उसे अपने शुभ निश्चयपर स्थिर रहनेका मौका मिल सकता है, तो वह आश्रममें ही मिलेगा। और कहीं वह सूख जायेगी अथवा फिरसे स्वेच्छाचारमें फँस जायेगी। उसमें शक्ति बहुत है। वह बहुत बातें जानती है। वह महाभारत खूब जानती है। वह आये तो

१. देखिए खण्ड ५४, पृ० ४१३-१४।

उससे परिचय करना। दूसरी बहनोसे भी परिचय कराना। उसके भूतकालकी बात न करना। वह ऐसी है कि खुद ही करेगी। परन्तु उसकी बात करने-करानेमे दोष है। विषयका स्मरण हानिकर है। अपने विषयी भूतकालकी बात वह रसपूर्वक करे, तो जान लेना कि विषय उसमे से गया नही। उसे छोटी बहन समझकर प्रेमपूर्वक टोक देना। उसके जीवनके बारेमे मुझसे जो पूछना हो वह तू पूछ सकती है। उसे भेजनेका समय आये तब कदाचित् मुझे बहुत लिखनेका समय न मिले, इसलिए आज ही इतना लिख डाला। उसका लडका बहुत अच्छा है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३३८) से। सी० डब्ल्यू० ६७७८ से भी; सौजन्य प्रेमाबहन कटक।

१३. पत्र : नारायण म० देसाईको

२३ अप्रैल, १९३३

चि० नारायणराव उर्फ बाबलो,[1]

तूने जो सवाल पूछा है उसका जवाव तभी दे सकता हूँ जव तू मुझे यह लिखे कि प्रेमावहनने जव तुझसे कुछ कहा तव तूने उत्तर दिया, "मैं खेल नही रहा हूँ, चीटीको मरनेसे वचा रहा हूँ।" इस पत्रका मुझे ठीक जवाव देना। तूने और धीरूने[2] तो खूब कताई की है। तुम लोग वादमे थक तो नही गये थे? एक साथ कितने घंटे काता था?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९४८१)से।

१४. पत्र : हेमप्रभा दासगुप्तको

२३ अप्रैल, १९३३

प्रिय हेमप्रभा,

तुमारा खत मिला।

इतवारको खत लिखनेकी प्रतिज्ञा की उससे मुझे बहुत शाति मीली। जो कार्य करनेका रहता है उसके लिये समय निश्चित करनेसे वखतका और शक्तिका सग्रह होता है, शाति बढती है।

१. महादेव देसाईका पुत्र।
२. छगनलाल जोशीका पुत्र।

अरुणका सुनकर खुशी हुई। आजकल जो मैं सोच रहा हूँ और देख रहा हूं उस परसे मुझे लगता है कि अरुणको और तुमारे भातका त्याग करना चाहिये और दूध, दहि और रसदार फलपर और सालेड पर रहना चाहिए। चावल अनावश्यक वस्तु है।

प्रतिष्ठानमे जो तकलीफ आती है उस बारेमे लिखो। उसको दु.ख मत मानो। विपदो नैव विपद. सपदो नैव संपद. विपद्विस्मरण विष्णो. संपन्नारायणस्मृतिः' तुमको कोई आश्वासनकी आवश्यकता ही नहि है तो भी पिता बनकर बैठ गया हू इसलिए जी नहि रहता। तुमारा साथी, मित्र, सखा, पिता सब कुछ ईश्वर है। जिसको हम रामनामसे पहचानते हैं। कल कुछ ऐसा ही हुआ निंद आनेमें देर लगती थी रामनाम शरू कर दिया था एसी ही निंद आ गई।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १७००)से।

१५. भेंट : एसोसिएटेड प्रेसके प्रतिनिधिको[२]

२३ अप्रैल, १९३३

डॉ० अम्बेडकर[३] को हरिजन मित्रोसे कई पत्र इस आशयके मिले हैं कि पूना-समझौते[४] की 'पैनल' व्यवस्थामे परिवर्तन वाछनीय हैं। इसीलिए वे उस सुझावपर मेरे विचार जाननेके लिए यहाँ आये। जो विकल्प सुझाया गया है वह यह है कि जो हरिजन उम्मीदवार सयुक्त निर्वाचक-मडलोमे हरिजनोके निर्धारित न्यूनतम मत प्राप्त करनेमें सफल हो जायें, केवल उन्हे ही निर्वाचित घोषित किया जाये। इस योजना पर मैंने अभीतक विचार नही किया है, इसलिए मै उन्हे कोई उत्तर नही दे सकता था। मैंने उनसे केवल यही कहा कि वे पहले विभिन्न हरिजन दलो और इस विषयमे दिलचस्पी रखनेवाले अन्य लोगोसे मिल ले और उनके विचार मुझे बताएँ। परन्तु उन्होंने मुझसे कहा कि मैं इस सुझावपर स्वतन्त्र रूपसे विचार करूँ और अपनी राय उन्हे लन्दन भेजूं। मै ऐसा करनेकी कोशिश करूँगा।[५]

यह पूछनेपर कि डॉ० अम्बेडकर परिवर्तन क्यों चाहते हैं, गांधीजी ने कहा कि

१. देखिए खण्ड ४४, पृ० ३९७।

२. साधन-सूत्रके अनुसार डॉ० अम्बेडकरकी गांधीजी के साथ ४५ मिनट बातचीत हुई। सर्वश्री के० ओ० चित्रे, के० जी० शिन्दे और अन्य अब्राह्मण नेता भी मौजूद थे। डॉ० अम्बेडकरके साथ बातचीतकी विशेष रूपसे व्यवस्था की गई थी, क्योंकि वैसे गांधीजी रविवारको मुलाकातियोंसे नहीं मिलते थे।

३. दलित वर्गोंके नेता।

४. यरवदा-समझौता भी कहलाता है। देखिए पाद-टिप्पणी संख्या २, पृ० १०।

५. गांधीजी की रायके लिए देखिए "यरवदा-समझौता", २७-४-१९३३।

डॉ० अम्बेडकरका कहना है कि जहाँतक उनका सम्बन्ध है, वे 'पैनल' व्यवस्था से बिलकुल संतुष्ट हैं और पूना-समझौतेसे पीछे नहीं हटेंगे। पर उपरोक्त परिवर्तन करानेके लिए उनपर दबाव डाला जा रहा है।

'पैनल' व्यवस्थापर जब उनका विचार पूछा गया, तो गांधीजी ने कहा:

व्यक्तिगत रूपसे मेरी राय यह है कि हरिजन यदि सवर्ण हिन्दुओपर अविश्वास न करे, तो 'पैनल' व्यवस्था विलकुल निरापद है।

यदि अन्य लोग भी सहमत हो जायें, तो क्या आप इस परिवर्तनको स्वीकार करनेको तैयार हो जायेंगे?

मैं इस परिवर्तनको आसानीसे स्वीकार नही करूँगा। मैंने अभी इसपर विचार नही किया है। इस तरहके हर सुझावकी मैं केवल हरिजन दृष्टिकोणसे ही जाँच करूँगा, क्योंकि हरिजनो और सवर्ण हिन्दुओके हितोमे कोई टकराव हो सकता है, यह वात मेरे दिमागमे नही आती। मेरा यह दृढ विचार है कि जो चीज हरिजनोका वास्तविक हित सिद्ध करती है, उससे सवर्ण हिन्दुओका हित भी अवश्य सिद्ध होना चाहिए। मेरा यह विश्वास है कि मुझमे इस तरहके प्रश्नोकी हरिजन दृष्टिकोणसे जाँच करनेकी क्षमता है। इसलिए यदि दुर्भाग्यसे स्थिति ऐसी हो जाये कि मुझे अपनी रायके लिए एक भी समर्थक न मिले, तो भी अकेले खड़े होकर अपने विचारका प्रतिपादन करना मुझे वुरा नही लगेगा।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २४-४-१९३३

१६. पत्र : नारणदास गांधीको

२३/२४ अप्रैल, १९३३

चि० नारणदास,

ठीक हुआ जो तुम्हारा पोस्टकार्ड मिल गया। कल तुम्हे पत्र लिखा था वह मिला होगा। नर्मदा कल मिल गई है। वहुत भली लडकी लगी। वह तो काम करनेको तडप रही है। लक्ष्मीवहनके साथ फिर आनेके लिए कहा है।

डॉक्टर[1] कामका निकले तो वहुत अच्छा हो।

नी० अपने लडकेके साथ आ गई है। अभी तो जिस ढँगसे नियमोका पालन कर रही है वह आश्चर्यमे डाल देता है। यदि अभीतक तुमने अपना निर्णय न लिख भेजा हो और कोई निर्णय कर लिया हो तो मुझे तारसे सूचना देना। सवसे न पूछा हो तो पूछ लेना।

१. डॉ० हीरालाल शर्मा।

आश्रम नियमावली जिस-जिस भाषामें हो उनकी एक-एक प्रति भेज देना।

गोदावरी और पाण्डुरंग चौधरी किन परिस्थितियोंमें चले गये थे, इसका अनुमान हो तो लिखना। गोदावरीके बारेमें प्रेमाको ज्यादा जानकारी होगी।

२४ अप्रैल, १९३३

नी० के बारेमें हम सब चर्चा कर रहे थे, उसमें छगनलाल[1] हमसे सहमत नहीं था। इसलिए मैंने उससे अपना विचार लिख डालने और यदि नी०को आश्रममें रखना हो तो क्या करना चाहिए, यह भी लिखनेको कहा। अभी सब पत्र लिखनेके बाद उसकी राय पढ़ डाली है। उसको रखनेका निर्णय करें तो छगनलालकी जैसी राय है वैसी मर्यादा निर्धारित नहीं कर सकते। ऐसा करनेसे उसकी और आश्रमकी भलाई नहीं होगी। आश्रमकी मर्यादाका पालन करते हुए उसकी जिस शक्तिका उपयोग किया जा सकता हो उसे करना ही चाहिए। नये व्यक्तिको शायद एकाएक बाहर भी नहीं भेज सकते। लेकिन मैं हरिजन बालकोंका भार उसे अवश्य सौंपना चाहूँगा। उसने नई जिन्दगी शुरू की है। यह समझकर ही हम उसे रखें या फिर न रखें। किन्तु इस विषयमें खूब स्पष्ट रूपसे कह देना चाहता हूँ। यदि तुम अपनी राय भेज चुके होगे तो सारे सुझाव भेजूंगा ही। वह पापी है यह समझकर नहीं लेना है। फिलहाल इतना समझ लेना ही काफी है।

बापू

[पुनश्च :]

महादेवकी राय भी इसके साथ भेज रहा हूँ।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से।

१७. पत्र : रामानन्द चटर्जीको

२४ अप्रैल, १९३३

प्रिय रामानन्द बाबू,

आपको एक बार फिर कष्ट देना है। यरवदा-समझौतेकी 'पैनल' व्यवस्थाके लिए डॉ० अम्बेडकरका विकल्प[2] तो आपने देखा ही होगा। उनके सुझावपर यदि

१. छगनलाल जोशी।

२. देखिए पृ० १६।

सार्वजनिक रूपसे नही तो कम-से-कम मेरे व्यक्तिगत उपयोगके लिए ही अपनी राय दे।[1] मैं उसकी कद्र करूँगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्रीयुत रामानन्द चटर्जी
'मॉडर्न रिव्यू', चितपुर रोड
कलकत्ता

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ९५०३)से, सौजन्य शान्ता देवी। एस० एन० २१०४६ से भी।

१८. पत्र: अमृतलाल वी० ठक्करको

२४ अप्रैल, १९३३

प्रिय ठक्कर बापा,

यरवदा-समझौतेमें संशोधनके डॉ० अम्बेडकरके सुझावपर मैं 'हरिजन' के आगामी अंकमें विचार करनेवाला हूँ[2]। आपने वह जरूर देखा होगा और उसपर कुछ सोचा भी होगा। उसके बारेमें आपका क्या विचार है, कृपया मुझे बतायें। यह पत्र कृपया घनश्यामदास[3] को दिखा दें और उनकी राय भी मुझे भेजें, या आप दोनों अपनी संयुक्त राय भी भेज सकते हैं।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११२०) से। एस० एन० २१०५२ से भी।

१. रामानन्द चटर्जीने ३ मईके अपने पत्रमें लिखा था: "कलके अपने पत्रमें मुझे यह कहना चाहिए था कि यद्यपि मुझे डॉ० अम्बेडकरका सुझाव 'पैनल' व्यवस्थासे बेहतर लगता है, पर उनमें से कोई भी मुझे पसन्द नहीं है। संयुक्त निर्वाचक-मण्डल, जिसमें दलित वर्गोंके लिए उनकी संख्याके अनुपातमें सीटें आरक्षित हों, दोनोंसे बेहतर रहेगा।" (एस० एन० २११४९)। इससे पहले २ मईके अपने पत्रमें उन्होंने लिखा था: "इसपर अपनी राय व्यक्त करनेसे पहले मैं यह कहनेकी अनुमति चाहता हूँ, कि जिस तरह मैं साम्प्रदायिक निर्णयके विरुद्ध हूँ, उसी तरह पूना-समझौतेके भी विरुद्ध हूँ, क्योंकि उसमें भी उस निर्णयके हानिकारक तत्त्व हैं या वह उन्हें और बिगाड़ता है (एस० एन० २११४५)।

२. देखिए पृ० ३६-९।

३. घनश्यामदास बिड़ला।

१९. पत्र : सी० वाई० चिन्तामणिको

२४ अप्रैल, १९३३

प्रिय श्री चिन्तामणि,

यरवदा-समझौतेकी 'पैनल' व्यवस्थामे सुधारका डॉ० अम्बेडकरका सुझाव अब आपको मालूम ही है। मै चाहता हूँ, उनके द्वारा सुझाये गये विकल्पपर आप अपनी राय दे। यदि आपने 'लीडर'मे उसपर सार्वजनिक रूपसे विचार किया हो, तो कृपया इस पत्रका उत्तर देनेका कष्ट न करे। लेकिन यदि न किया हो, तो मैं आपकी रायकी कद्र करूँगा। 'हरिजन'के आगामी अकोमे मैं उस विकल्पपर सार्वजनिक रूपसे विचार करनेवाला हूँ।[1]

हृदयसे आपका,

[पुनश्च :]

यह पत्र मेरे नये टाइपिस्टका कारनामा है। इसलिए उसपर और मुझपर दयाभाव रखे। आशा है, आप अच्छे होगे।

अग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० २१०५१) से।

२०. एक पत्र

२४ अप्रैल, १९३३

प्रिय मित्र,

मेरी पुस्तक 'गाइड टु हैल्थ'[2] मे कुछ स्थानोपर सशोधन आवश्यक है। इसलिए मेरा कहना है कि अभी आप उसका अनुवाद न करे। यदि मै इस सस्करणको सुधार सका तो ऐसी पुस्तकका अनुवाद करनेके बजाय, जो कुछ महत्वपूर्ण प्रकरणोमे अच्छी मार्गदर्शिका नही है, उस सशोधित संस्करणका अनुवाद करना ही अच्छा होगा।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९०३७) से।

१. अपने २९ अप्रैलके पत्रमें श्री सी० वाई० चिन्तामणिने लिखा था: "सुझावके गुण-दोषोंपर किसी की जो भी राय हो, उद्देश्यसिद्धिकी दृष्टिसे मेरा दृढ मत है कि समझौतेपर दुबारा विचार न किया जाये" (एस० एन० २१०८३)।

२. मद्रासके एस० गणेशन द्वारा जुलाई, १९२१ में प्रकाशित। देखिए खण्ड १२, पा० टि० १, पृ० ४ भी।

२१. पत्र : मोहन और वनमाला परीखको

२४ अप्रैल, १९३३

चि० मोहन और वनमाला,

तुममें से बड़ा कौन है यह तो मैं भूल गया हूँ। वनमाला बड़ी हो तो अपना नाम बादमें लिखनेके लिए क्षमा करे। हम पश्चिमके नियम नहीं मानते। वहाँ तो लड़की छोटी हो तो भी उसका नाम लड़केसे पहले लिखते हैं। हम तो आयुकी मर्यादा मानते हैं।

मुझे लिखना तो था तुम दोनोंके स्वास्थ्यके बारेमें और लिख कुछ और ही दिया है। कोई बात नहीं। दोनों अपनी तबीयतका हाल लिखो।

वनमालाने अच्छा सूत काता है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५७८१)से। सी० डब्ल्यू० ३००४से भी; सौजन्य. वनमाला म० देसाई।

२२. पत्र : नारणदास गांधीको

२५ अप्रैल, १९३३

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारी भाषासे तुम्हारा दुःख टपक रहा है, यह मैं देख पा रहा हूँ। तुमने जवाब दिया है[1] सो मेरे लिए तो नहीं है। क्योंकि मुझे उसकी जरूरत न थी। किन्तु वह छगनलालके लिए है ऐसा मैं मान लेता हूँ।

तुम्हारी पवित्रता और तुम्हारी कार्यदक्षताके बारेमें मेरी राय बदली नहीं है। मेरी राय बदलेगी तो मैं तुम्हारे बारेमें आग्रह नहीं रख सकूँगा। जबतक मेरा विचार न बदले तबतक तुम्हें परेशान नहीं होना चाहिए। छगनलालकी शिकायतका तुमने जो जवाब दिया है, वह मुझे बिलकुल ठीक लगा है। तो भी मैं देखता हूँ कि तुम्हारी भाषामें क्रोध छिपा हुआ है। क्रोधका तो कारण ही नहीं है। छगनलालको जैसा लगा वैसा तुझे लिख दिया। उसमें द्वेष नहीं है। उसमें सत्य न देख पानेकी उसकी असमर्थता है। नी० -सम्बन्धी पत्रमें तुम यही बात देखोगे। उसके लिए छगनलालके मनमें द्वेष क्योंकर होगा। किन्तु वह उसके कलुषित जीवनसे डर गया और उस

१. सम्भवतः छगनलाल जोशी द्वारा की गई उनकी आलोचनाके बारेमें; देखिए खण्ड ५४, पृ० ४६१।

डरसे पीछा नही छुड़ा पाया। इसलिए ऐसे विचार लिख डाले। इस प्रकार यह उसकी विचार-शक्तिकी कमी है, उसके हृदयकी नही। कुछ भी हो, तुमको ऐसी बातोको बिना दुखी हुए समझ लेनेकी और उनमे जितना लेने लायक हो उतना ले लेनेकी शक्ति प्राप्त कर लेनी है। यह एक दिनमे प्राप्त नही हो जाती। प्रयत्न करते रहो, इतना ही काफी है।

बापू

[पुनश्च :]

प्रेमा या दूसरी लडकियाँ गलेमे हाथ डालकर चलती है, इसमे कोई दोष है या नही यह प्रत्यक्ष देखे बिना कहा नही जा सकता। यदि गँवारू ढँगसे ऐसा किया जाये तो शोभा नही देगा। मर्यादाका उल्लघन न हो तो उसमे कोई हानि भी नही। इस सम्बन्धमे मैने लक्ष्मीदासके पत्रमे लिखा है। तुमने पढा न हो तो पढ लेना। बादमे कुछ और पूछना हो तो पूछ लेना।

अभी शायद एक और व्यक्तिका बोझ तुमपर लादना पडेगा। मार्गरेट स्पीगलको तो तुम जानते हो न? उसने वहाँ रहकर हरिजन-कार्य किया था। वह शायद कल बम्बई पहुँची होगी। उसे रखोगे न? उसके बारेमे कुछ कहनेकी जरूरत नही। बहुत अच्छी महिला है। यहाँ पत्र लिखती रही है।

सोनीरामजीके २५०० रु० आ गये हो तो घनश्यामदासको भेज देना। २५ चरखोमे पाँच और जोड देना। उनकी कीमत डेढ रुपया मिलेगी।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३६२ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी।

२३. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

२५ अप्रैल, १९३३

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। तूने मेरे पत्रका बहुत गहरा अर्थ लगा लिया है।[1] ऐसा उसमे कुछ था नही। नारणदासके नाम मैने जो पत्र लिखा था उसमे तेरे बारेमे की गई शिकायतोका उल्लेख था। उसे ध्यानमे रखकर मैने लिखा था कि तेरे अनेक गुणोमे यदि दूसरोके दोषोको उदारतापूर्वक सहन करनेकी शक्ति भी आ जाये तो कितना अच्छा हो। मुझे नारणदासको यह लिखना पडा कि पत्र तुझे न दिखाये तो अच्छा हो। इससे मुझे दुःख हुआ और मैने उसे प्रगट भी किया। इसमे तुझे उलाहना देनेकी तो बात ही नही थी। मनुष्यके स्वभावको पलटनेकी भी हद होती है, इसलिए तुझे कुछ लिखना मुझे ठीक नही लगा।

१. देखिए खण्ड ५४, पृ० ३०९-१०।

इतना स्पष्टीकरण काफी हुआ न? अब तुझे वह पत्र देखना हो तो देख लेना।

तुझे एक मासकी छुट्टी लेनी चाहिए या नही, इसका निर्णय तू ही कर लेना। यह जरूर है कि नी०को वहाँ आना हो तब तू वहाँ रहे, यह मुझे अच्छा लगेगा। परन्तु जैसा नारणदास कहे वैसा करना।

तेरे गलेके बारेमे मुझे चिन्ता तो होती ही है। परन्तु क्या हो सकता है? वह बिगडेगा तो दोष जरूर तेरा ही निकालूँगा। तू पूर्ण मौनव्रत ले ले तो मुझे अच्छा लगेगा। इससे तेरा काम कम नही होगा। ट्रेपिस्ट साधु और साध्वियाँ मौनव्रत लेने पर भी सतत काम करते हैं। कच्चा शाक भले ही खा, परन्तु उसे पीसकर लेना चाहिए। कच्चा दूध और फल हो तो सागके बिना भी काम चल सकता है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३३९) से। सी० डब्ल्यू० ६७७९ से भी, सौजन्य : प्रेमाबहन कटक।

२४. पत्र : नानालाल के० जसानीको

२५ अप्रैल, १९३३

भाई नानालाल,

तुम्हारा पत्र मिला। भाई प्रभाशकरसे[1] कहना कि पूना जरूर आये। मेरा उससे कोई वैर तो नही है। मैने तो अपनी स्थिति बता दी। मै तो चाहता हूँ कि मैं उसपर विश्वास कर सकूँ। पर करूँ या न करूँ, उसको इसकी कोई बात नही सोचनी चाहिए। उसे चम्पा और रतिलालकी भलाईके विचारसे आना चाहिए। वह इससे ज्यादा मुझसे और क्या चाहता है? या तुम क्या सुझाव देते हो?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९६३२) से।

1. प्रभाशंकर पारेख, रतिलाल मेहताके श्वसुर।

२५. पत्र : वेरियर एल्विनको

२६ अप्रैल, १९३३

प्रिय वेरियर,

मैं हैरान था कि लम्बे अरसेसे तुम्हारा कोई पत्र क्यों नहीं आया। मुझे यह जानकर खुशी हुई कि शामराव अब पहलेसे बहुत अच्छा है और तुम दोनोंका एक उच्च कोटिके डॉक्टरने कायाकल्प कर दिया है। बेशक, मुझे यकीन है कि तुम मुझे अपने स्वास्थ्यके बारेमें सही रिपोर्ट देते रहोगे। अंत्र-व्रण और तिल्ली-वृद्धि कोरी कल्पनाएँ निकलीं, इसकी भी मुझे खुशी है। आशा है, तुम्हारे मोतीझारेने चेचकका रूप कदापि नहीं लिया होगा और वह अब अतीतकी बात हो चुका होगा। मुझे यह भी आशा है कि मेरी[1] तुम्हें सानन्द और प्रसन्न लगी होगी।

हम सबकी ओरसे तुम सबको प्यार।

हृदयसे तुम्हारा,
बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रेक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) (३), भाग-४, पृ० ३४३। एस० एन० १९०४६ भी।

२६. पत्र : एफ० मेरी बारको

२६ अप्रैल, १९३३

चि० मेरी,

मैं हैरान था कि आखिर तुम्हें क्या हो गया है जो आश्रमसे जानेके बाद तुम्हारा कोई समाचार ही नहीं मिला। इसलिए तुम्हारा पत्र पाकर मुझे खुशी हुई। मेरीया[2] पर रोगका इस तरह आक्रमण हुआ, इसका मुझे दुःख है। सचाई यह है कि उसे बहुत समयसे विश्राम नहीं मिला था। परन्तु आशा है कि वह अब विश्रामसे लाभ उठा रही होगी। उसे शक्तिदायक वायुसे कहीं अधिक जरूरत मानसिक और शारीरिक विश्राम की है। इसलिए उसे अपने शरीर और मन दोनोंको यथासम्भव अधिक-से-अधिक आराम देना चाहिए। एक नीम हकीमकी हैसियतसे मेरा उसके

१. मेरी गिलेट।
२. ऐने मेरी पीटर्सन।

लिए यह सुझाव है कि उसे वहुत ही कम भोजन लेना चाहिए और अपनेको यथासम्भव दूध और फलोतक सीमित रखना चाहिए और उनको काफी मात्रामे लेना चाहिए। सलादके रूपमे सब्जियाँ वह ले सकती है, पर उनकी उसे जरूरत नही है। यदि वह इन विलकुल सीधी-सादी हिदायतोका अक्षरश पालन करे, तो वह देखेगी कि इस परिवर्तनसे उसे अधिक-से-अधिक लाभ होगा। पुस्तक लिखनेकी वात उसे फिलहाल नही सोचनी चाहिए। अपनी शक्ति जव उसे पूरी तरह फिरसे प्राप्त हो जाये और मुलाकातके समय उसके चेहरेपर मुझे जो म्लान और चिन्ताग्रस्त भाव दिखा था वह जव जाता रहे, तो वह उस पुस्तकको लिखना शुरू कर सकती है। साथ ही मै यह भी वता दूं कि उसे चाय[1] और कॉफी, ये दो जहर, जो स्नायुओके लिए इतने खराव है, हरगिज नही लेने चाहिए। इनका एक घरेलू विकल्प मै सुझाता हूँ — गर्म पानी, कश्मीरका शहद और नीवूके रसकी कुछ वूंदे। यह उसके लिए दूध या कॉफी या कोकोका एक पूर्ण और प्रभावकारी विकल्प सिद्ध होगा।

तुम दोनोके लिए मै एक निराला मनोरजन सुझाता हूँ। तुम जव घूमने निकलो तो ज्यादा-से-ज्यादा हरिजनोका पता लगाओ और अपनी वात उन्हे समझाने और उनकी वात खुद समझनेकी कोशिश करके हिन्दीका अपना ज्ञान वढाओ। ठडसे वचनेका जो नुस्खा है उसे भी मत भूलना। खुली हवामे जितना हो सके उतना चलो-फिरो।

महादेवको तुम्हारा पत्र मिल गया था। हम सव अच्छी तरह है और तुम्हे अपना प्रेम भेजते है।

वापू

मार्फत — पोस्ट मास्टर
श्रीनगर

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६००१)से। सी० डब्ल्यू० ३३२६ से भी, सौजन्य : एफ० मेरी वार।

१. साधन-सूत्रमें 'घी' है।

२७. पत्र : मेसर्स दामोदर शान्तिराम गंड़े[1]को

२६ अप्रैल, १९३३

सज्जनो,

नासिकके वकील श्रीयुत पी० एच० गद्रे हरिजन कल्याणमें दिलचस्पी ले रहे हैं। हरिजनोंमें बाँटनेके लिए उन्हें महाराष्ट्र आदिके सन्तोंपर सस्ते मराठी साहित्यकी बड़ी जरूरत है। उन्होंने मुझे बताया है कि यदि मैं आपको लिखूं तो शायद आप उन्हें इस तरहके साहित्यका एक छोटा पार्सल उपहारके रूपमें भेज सकें। जिस तरहकी पुस्तकें श्रीयुत गद्रेको चाहिए उनमें से कुछ यदि आप कृपा करके उन्हें भेज सकें तो मैं आपका आभारी होऊँगा। [पुस्तकोंके] चुनावमें यदि कोई कठिनाई हो तो आप, मेरी राय है, श्रीयुत गद्रेसे पत्र-व्यवहार कर जो पुस्तकें उन्हें चाहिए, उनकी सूची उनसे माँग लें।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९०४४)से।

२८. पत्र : पी० एच० गद्रेको

२६ अप्रैल, १९३३

प्रिय गद्रे,

आपका पत्र मिला।[2] जो सामान आपको चाहिए उसकी ठीक-ठीक रकम कृपया मुझे बताइए और प्रयोजन भी स्पष्ट कीजिए, जिससे कि मैं लोगोंको नकदी और सामानके रूपमें दान देनेके लिए कह सकूं। क्या मैं यह समझूं कि सामान मिल जानेपर नगरपालिका निर्धारित सुधार अपने खर्चेपर करवा देगी?

आपका वह पत्र भी मिला जिसमें मुझे 'नारद भक्ति-स्तोत्र' के उद्धरण भेजे गये हैं। उनके लिए आपको धन्यवाद।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९०४९)से।

१. बम्बईके पुस्तक-विक्रेता।

२. २५ अप्रैलका (एस० एन० २१०५८)। इसमें श्री गद्रेने पाठशालाओं और हरिजनोंके पाखानोंके लिए लोहेकी चादरोंकी माँग की थी।

२९. पत्र : मोतीलाल रायको

२६ अप्रैल, १९३३

प्रिय मोती बाबू,

आपका पत्र मिला। आँखे दुखनेके कारण अपने पत्र-व्यवहारसे पार पानेमे आपको कितनी कठिनाई होती होगी, यह मै अच्छी तरह समझ सकता हूँ। इसलिए आपके सीमित शारीरिक साधनोपर मै कोई दबाव डालने नही जा रहा हूँ। इसलिए इस पत्रका कृपया उत्तर न दे। आपका अनुवाद जब मुझे मिलेगा मै उसे पढूँगा। पर अनुवादके बारेमे अभी मै आपसे कुछ नही कहूँगा। आपका लेखन हो सकता है कभी-कभी आन्तरिक एकलयतासे मेल न खाता हो, पर मै यह जानता हूँ कि वह अन्तमे उससे अक्षुण्ण ही रहेगी। इसलिए इस तरहकी चीजे यदि कोई मेरी दृष्टिमे लाये, तो भी मै उनकी चिन्ता नही करूँगा।

हृदयमे आपका,

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११०४४) से।

३०. पत्र : हरिभाऊ फाटकको

२६ अप्रैल, १९३३

प्रिय हरिभाऊ,

आपका पोस्टकार्ड मिला। मैंने पाँच चरखोंका आर्डर और दे दिया है।[1] वे सब बारडोलीमें विशेष रूपसे तैयार-किये जा रहे हैं। इसलिए सम्भव है, उनमे कुछ देर लग जाये।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९०४८) से।

१. देखिए पृ० २२।

३१. पत्र : एस० पोन्नम्मलको

२६ अप्रैल, १९३३

प्रिय पोन्नम्मल,

आपका पत्र मिला। श्रीयुत केलप्पनके लिए आपको किसी औपचारिक परिचय-पत्रकी आवश्यकता नहीं है। आप उन्हें बस यह पुर्जा देकर अपनी सारी कहानी सुना सकते हैं। मैं जानता हूँ कि वे आपकी सेवाओंका पूरा-पूरा सदुपयोग करेंगे और आपके कार्यमें यथासम्भव सहायता देंगे।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एम० एन० १९०५०) से।

३२. पत्र : पुरुषोत्तमदास ठाकुरदासको

२६ अप्रैल, १९३३

प्रिय सर पुरुषोत्तमदास,

यरवदा-समझौतेमें आपका सक्रिय सम्बन्ध रहा है, इसलिए यरवदा-समझौतेमें संशोधनके डॉ० अम्बेडकरके सुझावपर मैं आपकी राय जानना चाहूँगा।

आशा है, आप अच्छी तरह होंगे।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एन० एन० २१०६२) से।

३३. पत्र : हृदयनाथ कुंजरूको

२६ अप्रैल, १९३३

प्रिय हृदिजी,

डॉ० अम्बेडकरने यरवदा-समझौतेमें जिस संशोधनका सुझाव रखा है, पता नहीं आपने उसपर विचार किया है या नहीं। यदि किया हो तो कृपया अपनी रायसे मुझे सूचित करें।[1]

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१०६६) से।

१. अपने ६ मई, १९३३ के पत्रमें श्री कुंजरूने लिखा था: "डॉ० अम्बेडकरके सुझावके विषयमें मुझे तो स्पष्टतः ऐसा ही लगता है कि यदि उसे विचारके लिए स्वीकार किया जाये तो पूना-समझौतेके द्वारा जिस प्रश्नका निर्णय किया जा चुका है, वह सारा प्रश्न हमारे सामने दुबारा उपस्थित हो जायेगा। क्योंकि मैं मानता हूँ कि ऐसा करना एकदम अवांछनीय होगा, इसलिए मैंने उनके प्रस्तावपर उसके गुण-दोषकी दृष्टिसे कोई विचार ही नहीं किया" (एस० एन० २१२०३)।

३४. पत्र : जमनाबहन गांधीको

२६ अप्रैल, १९३३

चि० जमना,

तुम्हारा पत्र मुझे बहुत पसन्द आया। यदि हम कोई अन्याय होता देखे तो पतिको, पिताको या वह राजा ही क्यो न हो, आगाह करे और रोके। और यदि वह हमारी बात तत्काल न सुने तो हम उसे बार-बार आगाह करे। लेकिन यह तो भविष्यकी बात हुई।

मैं यह बात नही मानता कि जिन लडकियोपर सख्त नियन्त्रण रखा जाता है, उनमे वासना नही होती। बल्कि उल्टे ऐसी लडकियाँ आत्म-नियन्त्रण खो बैठती हैं और जब माँ-बापको वस्तुस्थितिका पता चलता है तो वे भी उसपर पर्दा डालते हैं। अत हमे कोई मध्यम-मार्ग खोजना चाहिए। हमे लडके-लडकियोको स्वतन्त्रता देनी चाहिए और साथ ही आत्म-नियन्त्रणकी शिक्षा भी। जहाँ सिर खुला रखनेका ही रिवाज है, वहाँ क्या केवल इसीके कारण वासनाएँ जाग्रत हो जाती हैं? भला मद्रास इलाकेमें क्या होता होगा, जहाँ लडकियाँ अपने बाल खुले और छूटे ही रखती हैं? वासनाओका उद्‌गम स्थान कही अपने बाहर थोड़े ही है। वह तो हमारे भीतर, हमारी आँखो ही मे है। और विकृत दृष्टिको तो हर कही अपवित्रता या विकार ही नजर आता है।

बहरहाल यह प्रौढ महिलाओका कर्त्तव्य है कि वे मिलकर बैठे और लडकियोकी समस्याओपर विचार-विनिमय कर उनके लिए हिदायतें तैयार करे और उन्हे लडकियोके समक्ष रखें, पुरुषोके सामने भी। मैंने ऊपर केवल अपना दृष्टिकोण पेश किया है ताकि तुम सब मिलकर इस समस्यापर विचार कर सको। मैं चाहता हूँ कि तुम सारी स्त्रियोको बुलाओ और इसपर चर्चा करो। क्या तुम पहल करोगी?

मैंने पुरुषोत्तमको लिखा है कि वह राजकोट न जाये। उसे और कुछ नही तो तुम्हारे लिए ही रुकना चाहिए।

बापू

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ८७७) से, सौजन्य : नारणदास गाधी।

३५. पत्र : पुरुषोत्तम गांधीको

२६ अप्रैल, १९३३

चि० पुरुषोत्तम,

अच्छा किया जो राजकोट चले गये। मुझे परिणाम लिखते रहना। मेरे पास दूध-सम्बन्धी वह किताब अभी हालमे आई है जिसको लेकर बहुत-से लोगोने बादमे लिखा है। उसके लेखकने गर्म पानीमे बैठनेपर बहुत जोर दिया है। और कभी-कभी फीकी छाछ ही पीनेकी सलाह दी है। किन्तु गौरीशकर ठीक ही कहता है। इस पुस्तकके बादकी किताबोमे सुधार हुए होगे।

भाऊ कैसा है, लिखना।

बापू

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९११) से; सौजन्य . नारणदास गाधी।

३६. पत्र : नारणदास गांधीको

२६ अप्रैल, १९३३

चि० नारणदास,

कल तुम्हे पत्र[1] लिखा था वह मिल गया होगा। उसमे डॉक्टर शर्माको दिखानेवाली अखबारकी कतरन रखना भूल गया था। इसके साथ भेज रहा हूँ। आजकल बाये हाथसे लिखना पड़ता है इसलिए कल जी-भर कर नही लिख सका। आशा है, आज जी-भर कर लिख पाऊँगा। मुझे लगा कि छगनलालकी आलोचनावाले तुम्हारे पत्रका उत्तर छगनलाल ही दे तो अच्छा है। इसलिए मैंने उससे आग्रह किया और उसने तुम्हारे पत्रका जवाब लिख दिया है। फिर और विचार करते हुए लगा कि मुझे यह जवाब तुम्हे भेजना चाहिए। इसलिए भेज रहा हूँ। उससे शायद तुम्हारे काममे सुधारकी आवश्यकता सिद्ध नही होती, किन्तु उसमे मै छगनलालकी निर्दोष बुद्धि देख पा रहा हूँ। किसी भी दिन मुझे छगनलालमे द्वेषभाव होनेका आभास नही मिला। किन्तु वह स्वभावसे ही शंकालु है। वह जल्दी सीधा-सादा अनुमान लगा नही पाता। किसी व्यक्तिके गुण परखनेमे उसे समय लगता है। और वह दोष

१. देखिए पृ० २१-२।

बढ़ा-चढ़ा कर देख लेता है। इस प्रकार दूसरोंको लगता है कि वह उदारतापूर्वक व्यवहार नहीं कर रहा है। परन्तु वह किसी तरह कृपणतासे काम लेना चाहता हो, ऐसी बात नहीं है। वह स्वभावसे कृपण हो, ऐसी बात भी नहीं है। किन्तु उसे न समझनेवाला सहज ही उसपर कृपणताका आरोप लगा सकता है। यदि यह बात तुम्हें समझा पाया होऊँ तो तुम्हारे जवाबमें जो क्रोध और असहिष्णुता भरी है वह नहीं होगी। आश्रमवासियोंको बाल-बच्चेदार होनेके बाद बच्चोंको ज्यादा शिक्षा देना सूझने लगता है, ऐसा आरोप तुम्हें शोभा नहीं देता। और असलमें वह सच भी नहीं है। नरहरि, छगनलाल या जो दूसरे उनकी आलोचनासे सहमत हैं वे सब स्वार्थी हैं, ऐसा मानना भयंकर है। वे भी आश्रमवासी हैं। भले व्यक्ति हैं। उन्हें भी आश्रमका हित प्रिय है। भले ही वे उतने कार्यकुशल न हों या नहीं हैं। किन्तु तुम्हें अधिक कार्यकुशल होनेका तनिक भी अभिमान या एहसासतक न होना चाहिए। दूसरेकी अयोग्यताका उल्लेख भी एक प्रकारकी छिपी आत्मप्रशंसा है। तुममें तो मैं यह भी नहीं चाहता। और सोचो कि आश्रममें किसीके यहाँ बालक पैदा हो, जरा बड़ा हो और उन्हें कुछ नई बात सूझे, तो इसमें हमें माँ-बाप होनेके नाते उनमें स्वार्थकी बू नहीं माननी चाहिए। यह तो मनुष्यमात्रके स्वभावकी बात है; यहाँ आलोचनाका स्थान नहीं है। आश्रमवासीसे इतनी ही आशा की जा सकती है कि वह जैसी अपने बच्चोंके बारेमें इच्छा करे वैसी ही दूसरोंके बच्चोंके लिए भी करे, और आश्रममें रहनेवाले बच्चों और अपने बच्चोंमें तनिक भी भेदभाव न करे। जिस हदतक यह बात आश्रममें नहीं है और नहीं होती उस हदतक हमारी त्रुटि है, ऐसा कह सकते हैं। लेकिन आश्रममें कोई ऐसा न कहे कि दोष दूसरेमें है, हममें नहीं। अपनी कमीका पूरा एहसास होना तो आत्मदर्शन-जैसी दुर्लभ बात है। और जो अपनी कमियाँ पूरी तरह देख सकता है और उन्हें दूर करनेका यथासम्भव प्रयत्न करता है, उसे आत्मदर्शन हस्तामलकवत है, ऐसा मैं मानता हूँ। इसलिए मैं यह जरूर चाहता हूँ कि यदि तुम्हें लगे कि ऐसे वचन कहना उचित न था और उन्हें प्रमाणित नहीं किया जा सकता तो तुम उन्हें वापस ले लो और साथियोंसे माफी माँग लो। किन्तु यदि तुम्हें उसमें कुछ भी अनुचित नहीं लगता तो मेरी खातिर उन्हें वापस लो यह मैं कभी नहीं चाहूँगा। क्योंकि यदि तुम्हें सचमुच ऐसा विश्वास हो कि इस आलोचनाके मूलमें उन लोगोंके यहाँ बच्चे हो जानेकी बात है, और समय बीतनेपर भी तुम्हारा यही अनुभव बना रहे, तो तबतक अपनी यह आलोचना तुम कायम रख सकते हो। हमारे यहाँ किसीको औपचारिकताके लिए तो माफी माँगनेकी जरूरत नहीं। ऐसी माफीसे किसीका भला नहीं होता। हमारे पास माफी माँगनेका अर्थ अपनी भूलकी ज्ञानपूर्वक स्वीकृति ही हो सकता है। अपने साथियोंके आक्षेप तो हमें सहन करने ही चाहिए। तुमपर आरोप लगानेवालोंको मैं माफी माँगनेका सुझाव नहीं देता, क्योंकि वे अपनी बातको सच मानते हैं। उनकी मान्यता बदल सकूँ तभी उन्हें माफी माँगनेका सुझाव दे सकता हूँ। यही नियम तुमपर भी लागू होता है।

छगनलालकी दूसरी शिकायत उसके थाली मँगानेपर की गई तुम्हारी आलोचनाके सम्बन्धमें है। हो सकता है, कोई मिलने आया हो जिसके लिए भोजन मँगवाना पडा हो। यह बात मुझे उचित लगती है। वक्त-बेवक्त कोई चला आये और उस समय अपने यहाँ रसोई चालू न हो तो वह और क्या करे। भोजनके समय ही कोई आया हो, फिर भी उसे रसोईमें ले जाना ठीक न हो, यह मैं समझ सकता हूँ। क्योंकि बात करनेके लिए यही समय हो यह भी हो सकता है। छगनलालके पास ये सब ठोस कारण थे या नहीं यह तो मैं नहीं जानता, किन्तु ऐसी बातोंके बारेमें तुमसे आलोचनाकी आशा नहीं करता। क्या उदारताकी कोई सीमा होती है? हमारे पास तो राजा बलि, युधिष्ठिर आदिकी उदारताके उदाहरण हैं। एकने तो उदारताके कारण अपना सर्वस्व खो दिया। युधिष्ठिरने राजा विराटको भाईके क्रोधसे बचानेके लिए अपना खून नहीं बहने दिया और अर्जुनके पहुँचनेसे पहले द्रौपदीसे अपना घाव साफ कराकर बैठ गया। हमारा यही आदर्श है कि बीते दिनोंमें जितने अच्छे काम हुए हैं उन्हें इस युगमें सहज भावसे करते जायें।

तुमने पुरुषोत्तम, कनु आदिका जो उल्लेख किया है, उसमें आक्षेप नहीं दिखाई दिया। किन्तु उसमें इस बातकी मौन स्वीकृति है कि आश्रमकी वस्तुस्थिति दूसरी हो नहीं सकती। महादेव छगनलाल द्वारा किये गये अर्थका समर्थन करता है और उसका कहना है कि पुरुषोत्तम,[1] कनु[2] इतिहास व भूगोलसे वंचित रहे हैं, इसका तुम्हें दुःख है। दुःख है या वस्तुस्थितिकी स्वीकृति, इसका तो जो अर्थ तुम करो वही सही मानना चाहिए। इसलिए सही स्थिति क्या है सो लिखना। लेकिन मेरी अपनी मान्यता यही है कि आजके जमानेमें किसी लडकेको इतिहास-भूगोलकी शिक्षा नहीं मिली तो उसका हमें दुःख नहीं होना चाहिए। मैं तो इतना भी मानता हूँ कि उन्हें जो-कुछ शिक्षा मिली है वह किसी दूसरी जगह नहीं मिल सकती थी। और उन्होंने हमारे ढंगसे इतिहास, भूगोलका शिक्षण भी पाया है। मुझे इसके बारेमें दुःख अवश्य है, परन्तु किसीसे शिकायत नहीं है। आश्रमके मूलमें जो कमियाँ हैं, उनका मुझे दुःख है। इससे बहुत ज्यादा सिखानेकी इच्छा थी, पर वह पूरी नहीं हो सकी, यह मैं समझता हूँ। लेकिन यह तो मेरी अपनी कमी ही मानी जायेगी न? मेरी कमी न मानें, यह अलग बात है। किन्तु जब सारा हिसाब लगाने बैठें और जमा-उधारका लेखा करने बैठें, तब कमीको कमी मानकर ही छुटकारा मिल सकता है। जिन्हें मैं आकर्षित कर सका, जिस काममें सफल हो सका उस प्रमाणमें आश्रम फूला-फला है। मैं स्वयं आश्रमकी अगणित कमियाँ गिना सकता हूँ। इसपर भी मुझे आश्रम बहुत प्रिय लगता है, क्योंकि उसे बनानेमें मुख्य हाथ मेरा है। यदि मुझमें अधिक योग्यता होती, आसपासकी परिस्थितियाँ अधिक अनुकूल होती तो आश्रम अधिक सुन्दर लगता। अभी तो कई बातोंके लिए वह सचमुच आलोचनाके योग्य है, पर तब आलोचनाके लिए कोई आधार नहीं रहता। किन्तु यह सब लिखकर मैं तुम्हें यह समझाना चाहता हूँ कि तुम दूसरोंकी त्रुटियाँ न देखो। दूसरे आलोचना

१ और २. नारणदास गांधीके पुत्र।

करे तो उनको जवाब न दो। उसमे जितना गलत लगे उतना बताकर जो सही हो उसे स्वीकार करनेके बाद उसपर यथाशक्ति अमल करो। ऐसा करनेसे तुम कई झंझटोसे बच जाओगे।

अब दो शब्द छगनलालके पत्रके सम्बन्धमे। जिस तरह पहला पत्र मुझे पसन्द नही आया था उसी तरह यह भी अच्छा नही लगा। सुधारनेकी माँग करूँ तो छगन लाल उसे तुरन्त सुधार डाले। लेकिन ऐसा करूँ तो पत्र जैसा है वैसा तुम नही देख सकोगे। और जैसा है वैसा होनेपर भी तुम्हे और मुझे वह प्रियजनका पत्र लगना चाहिए। ऐसा न हो तो हम यह सिद्ध न कर सकेगे कि हम एक विशाल कुटुम्बके सदस्य हैं। और छोटे-छोटे दोषोके कारण हम अपने मनसे एक-एक व्यक्तिको दूर करते जाये तो अन्तमे हम अकेले रह जायेगे। यह काम तो सिर्फ ईश्वर ही कर सकता है और किसीके पास ऐसा करनेकी शक्ति ही नही है। इसलिए मैंने कई बार यह कहा है कि हमे अपने-आपको मिटाकर शून्यवत रहना है। और ऐसा बननेमे जो आनन्द है वह और किसी चीजमे नही है। छगनलालके इस दूसरे पत्रमें मैं पग-पगपर दोष तो देख ही रहा हूँ।

छगनलालकी भाषामे अविवेक, नासमझी, असहिष्णुता, आदि भरी है। तुम्हारे क्रोध और आलोचनाको एक तरफ रखकर वह देख ही नही सका कि तुम्हारा उत्तर कितना अचूक है। जहाँ तुमने पूरा जवाब दिया है, वह वहाँ भी फिर सलाह देनें बैठ गया है।

मैंने छगनलालके बारेमे जो लिखा है, उसमे किसी प्रकारका संकोच नही बरता है। तुम्हे जागृत करनेकी आवश्यकता तो थी नही, यह मै जानता हूँ। मैंने उसे समझाया है। मैंने तुम्हे जो लिखा है वह भी उसने देखा था, फिर भी उसने यह सब लिखा है। मै यदि छगनलालको जानता न होता तो मुझे भी उसके उत्तरमे छिछोरापन लगता। ऐसा होते हुए भी मै चाहता हूँ कि तुम उसके हलकेपन पर ध्यान न दो। वह अनगढ है, यही समझो। ऐसी बेकारकी आलोचनाको भी तुम उदार भावसे पी जाओगे, इसी आशासे ऐसा पत्र तुम्हे भेजा है। ऐसा पत्र मेरी मार्फत आया है, इसलिए तुम सुरक्षित हो। और छगनलाल भी सुरक्षित है। ऐसा मैं मान लेता हूँ। यह आश्रमका सौभाग्य है कि हम एक-दूसरेके प्रति अपने मनमे रहनेवाले विरोधी विचारोको भी एक-दूसरेसे निर्भयतापूर्वक कहनेका प्रयत्न कर रहे हैं।

अब इस पत्रको छोडता हूँ। मै ही तुमपर बोझ लाद रहा हूँ। मैं जिसे स्वीकार नही करता ऐसी शिकायत भी तुम्हारे सामने रखनेमे मुझे सकोच नही होता। इस प्रकार तुम्हारा और आश्रमका समय खराब करता हूँ। किन्तु मुझे लगता है कि ऐसा करना आवश्यक था। अब काफी हुआ। इस पत्रका जवाब देनेकी कतई जरूरत नही। कई बाते तुम्हे समझानेके लिए लिखी हैं, तुम समझ गये हो तो उनका उत्तर एक-दो लकीरोमे दे देना। इस पत्रमे कई अच्छी बाते लिखी है। इसलिए दूसरोको पढनेके लिए जरूर देना। लेकिन यह न समझना कि किसीके साथ बैठकर उसपर विचार

करनेकी आवश्यकता है। तुम यथाशक्ति जो-कुछ कर सको, वह करते रहना। तुम्हारी इच्छाके अनुसार तुम्हारा अपना पत्र इसके साथ भेज रहा हूँ।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३६ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी।

३७. पत्र: गंगाबहन बी० झवेरीको

२६ अप्रैल, १९३३

चि० गंगाबहन झवेरी,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हें गौरीशंकरकी देख-रेखमें प्रयोग करना चाहिए। तुम्हारी तबीयत ठीक होनेमें बहुत समय लग रहा है। किसी जानकारकी सलाहके अनुसार चलते हुए प्रयोग करना तुम्हारे लिए उचित होगा। जरूरी नहीं कि गौरीशंकर ही हों; कोई अन्य व्यक्ति भी हो सकता है।

तुम पत्र न लिखो तो माफी नहीं मिल सकती। अनजानमें हुई भूलको माफ कर सकते हैं। परन्तु क्या लापरवाही या आलस्य माफ किया जा सकता है?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९५३) से।

३८. पत्र: मणिबहन पटेलको

२६ अप्रैल, १९३३

चि० मणि,

तेरा पत्र दो-तीन दिन पहले ही मिला। तू कितना ही लम्बा पत्र क्यों न लिखे वह हमें लम्बा नहीं लगेगा। इतनी ही बात है कि यहाँसे और वह भी मुझसे बहुत लम्बे पत्रोंकी आशा तू रखती हो तो मैं उसे पूरा नहीं कर सकता। पर तेरा वैसी आशा रखना, मैं पूरी तरह समझ सकता हूँ। हमें यहाँ जो विविधता, सुविधाएँ, और वैभव प्राप्त हैं, वे तुझे बेलगाँवमें तो मिल ही कैसे सकते हैं? इन सारी सुविधाओंका उपयोग केवल सेवाके लिए न किया जाता हो अथवा हम उसीके विचारसे इन सुविधाओंकी माँग न करते हों, तो हम अयोग्य सेवक और उससे भी अधिक अयोग्य बुजुर्ग साबित होंगे। सैकड़ों बच्चोंके माँ-बाप होनेका दावा करके बैठ जाना और हवामें उड़ते रहना जरा भी शोभनीय नहीं माना जा सकता। इसलिए हम आरामसे इस वैभव इत्यादिका उपयोग कर रहे हैं। इसकी ईर्ष्या तुझे, मृदुला या जिस

किसीको करनी हो पेट-भर करते रहना। मीराबहनके बारेमे तूने उलाहना दिया भी है और फिर वापिस भी ले लिया है। बापका धर्म क्या है, जिन बच्चोको जो चाहिए वह उन्हे दे या सब बच्चोको एक-जैसा देकर घोर अन्याय करे? और ससारके सामने या नासमझ बालकके सामने न्यायपरायण साबित होनेके प्रयत्नमे किसी के प्राण भी ले ले? तेरी बीमारी मिटानेके लिए तुझे बाजरेकी रोटी और मक्खन निकाली हुई छाछ देनी पडे तो क्या भारती[1] जैसी लडकीको शहद, मक्खन और गेहूँकी चपाती देनेकी जरूरत होते हुए भी बाजरेकी रोटी और छाछ ही दी जाये? बापका धर्म प्रत्येक बालकके श्रेयके लिए जितना आवश्यक हो उतना देना है। श्रेयको हानि न पहुँचे इस हदतक अधिक देनेकी भी उसे छूट है। परन्तु ऐसा करना उसका फर्ज नही है। यह सब ज्ञान क्या तुझे आज देनेकी आवश्यकता है। परन्तु मुझे तो ज्यो-त्यो कागज-भर देना है, इसलिए इतना अनावश्यक सयानापन दिखा रहा हूँ। हमपर तुझे जरा भी गुस्सा नही आया तो फिर जी क्यो जला रही थी? इतनी कम श्रद्धा क्यो रखी? और तूने निश्चयपूर्वक क्यो नही मान लिया कि हम दोनोमे से एकने तो पत्र जरूर लिखा ही होगा? मै अवश्य मानता हूँ कि लिखा जा सके तो हम दोनोको लिखना चाहिए। परन्तु जहाँ पत्र मिलनेके बारेमे ही अनिश्चय हो वहाँ इस तरह लिखनेका बहुत उत्साह नही रहता। किसी भी तरह एक तो पहुँचेगा ही, यह समझकर एक तो नियमित रूपमे लिखा ही जाता है और आगे भी लिखा जाता रहेगा, यह तुझे विश्वास रखना चाहिए। तेरे पत्रका ब्यौरेवार उत्तर देनेकी जिम्मेदारी तो सरदारने ही ली है। इसलिए तेरे सन्देशो वगैरहका जवाब वे ही पहुँचायेगे और ब्यौरेवार उत्तर भी वे ही देगे। कुछका जवाब देना तो मुझे अच्छा लगता है, परन्तु अपने इस लोभका मै सवरण कर लेता हूँ।

आनन्दीका ऑपरेशन तो पुरानी बात हो गई है। वह आश्रममे कभीकी चली गई है और मजेमे है। बीचमे उसे सर्दी और बुखार हो गया था। परन्तु वह तो क्षणिक ही था। . .[2] मिल गये। . के हाथ खम्भे-जैसे हो गये है। . . . उसे फूलकी तरह सम्भाल रहा है। वह पति है, मित्र है, शिक्षक है, सेवक भी है। उससे अधिक अच्छा पति विधाता भी नही ढूँढ सकता था, अभी तो ऐसा ही लगता है। . . . उसके योग्य है या नही, सो तो दैव जाने। परन्तु उसकी त्रुटियाँ मैंने स्वय शादी करानेसे पहले के सामने रख दी थी, और यह लिख दिया था कि वह सम्बन्ध करना न चाहे तो निस्सकोच सगाई तोड सकता है। परन्तु . . के मातहत तालीम पाया हुआ . . एक बार किये हुए निश्चयसे कैसे डिगे? . . . विवाहके अवसरपर सबने उसे अपने प्रेमसे नहलाया था। सबने कुछ-न-कुछ भेट दी थी। लम्बे समयतक उन लोगोको साज-सामान और कपडोपर कुछ भी खर्च करनेकी जरूरत नही रहेगी। इससे जितना सन्तोष मिले उतना ले लेना।

१. भारती साराभाई।
२. साधन-सूत्रमें छोड दिया गया है।

हमारे दारोगा अब मुझे मेरे बाड़ेमे ले जानेके लिए आकर खड़े हो गये है। अब ग्यारह बजेगे, इसलिए अपने पिजरेमे जा रहा हूँ। स्नान आदि करनेके बाद फिर १२ बजे मुझे हरिजन गृहमे ले जायेंगे।[1]

श्री मणिबहन पटेल
पी० आर० न० १०२४९
बेलगाँव सैंट्रल जेल
डा० हिंदालगा

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४ : मणिबहन पटेलने, पृ० १००-२

३९. यरवदा-समझौता

[२७ अप्रैल, १९३३][2]

यद्यपि बगालमे कुछ समयसे इस बातके लिए आन्दोलन हो रहा है कि यरवदा-समझौतेमे सशोधन किया जाये, तो भी मैंने इस विवादमे भाग लेनेकी जरूरत महसूस नही की, इसका कारण फिर चाहे इतना ही क्यो न रहा हो कि मैं बगालके अपने मित्रोको परेशान करना नही चाहता था। यह समझौता तबतक कायम रहेगा जब तक एक भी पक्ष इसमे फेरफार करनेके विरुद्ध है। साथ ही, अगर यह साबित किया जा सके कि अमुक परिवर्तन जरूरी है, तो उसका विरोध करना मूर्खता होगी। बगालमे क्या स्थिति है, इसका मुझे ठीक-ठीक पता नही है। इसलिए मुझे लगा कि जबतक बगालके इस विवादमे भाग लेना मेरे लिए नितान्त आवश्यक न हो जाये और इस विषयमे कोई निर्णय करनेके पूरे साधन मेरे पास न हों, तबतक इसमे भाग लेना मेरे लिए धृष्टता होगी। जिन हरिजन मित्रोने मुझसे मेरी राय माँगी उन्हे मैंने यह विश्वास दिला दिया कि उनके साथ सलाह किये बिना मै कुछ भी नही करूँगा, और कि अबतक अपनी राय बदलनेके लिए मुझे कोई कारण नजर नही आया है।

आम तौरपर मेरी हमेशा यह राय रही है कि यदि सीटे सुरक्षित रखनेका सिद्धान्त स्वीकार कर लिया गया है, थोपा नही गया है, तो उन सीटोकी सख्या कितनी हो — यह निश्चित करनेका अधिकार भी उस पक्षको ही होना चाहिए जिसके लिए सीटे सुरक्षित रखनी है। हरिजनोके विषयमे मेरी यह मान्यता है कि उनके लिए जितनी भी सीटे सुरक्षित रखी जाये थोड़ी हैं, खासकर इस हालतमे कि कसौटी सिर्फ अस्पृश्यता नही बल्कि पिछड़ापन भी है। यदि मेरा वश चले तो मैं अस्पृश्य निर्वाचकोकी सूचीमे सभी पिछडे वर्गोंके लोगोको शामिल कर लूँ और जो भी हिन्दू उसमे अपना नाम लिखाना चाहे उसे ऐसा करनेकी स्वतन्त्रता दे दूँ। यदि ऐसा हो

१. पत्रका शेष भाग वल्लभभाईने लिखा था।
२. बॉम्बे क्रॉनिकल, २३-५-१९३३ से; देखिए "पत्र: बी० आर० अम्बेडकरको", २७-४-१९३३ भी।

तो वातावरण तुरन्त शुद्ध हो जाये और कम-से-कम राजनीतिक क्षेत्रसे तो अस्पृश्यताका अन्त हो ही जाये। इसपर शायद सनातनी भी कोई आपत्ति नही करेगे। जहाँतक मुझे मालूम है, उन्होने धारासभाओमे हरिजनोके प्रतिनिधित्वपर कभी कोई आपत्ति नही की है। कोई अपनेको हरिजनोमे गिनाये तो इसपर भी उन्हे कोई आपत्ति नही होनी चाहिए। पर जो बात मैं कहना चाहता हूँ, यह उसकी केवल भूमिका है।

डॉ० अम्बेडकरने अचानक मुझसे जो मुलाकात की, उससे यरवदा-समझौतेपर विचार करना जरूरी हो गया है। अपने मित्रोके दबाव और उनकी माँगपर, उन्होने यह सुझाव[1] रखा है कि यरवदा-समझौतेकी 'पैनल' व्यवस्थाकी जगह सयुक्त निर्वाचक मण्डल द्वारा एक ही चुनाव कर दिया जाये, जिसमे शर्त यह रहे कि हरिजन उम्मीद-वारको हरिजनोके निर्धारित न्यूनतम मत प्राप्त करने होगे। डॉक्टर साहबसे मुला-कातके समय मैं उसपर अपनी कोई राय दे नही सकता था। इस प्रश्नपर तबतक मैने विचार ही नही किया था। मैने उनसे कहा कि पहले वे हरिजनोके विभिन्न दलो तथा इस प्रश्नमे दिलचस्पी रखनेवाले सवर्ण हिन्दुओकी राय ले ले, बादमे मेरी राय माँगे। उन्होने बताया कि यह वे करेगे। पर यह वायदा भी उन्होने मुझसे करा लिया कि उनके सुझावपर मैं स्वतन्त्र रूपसे विचार करूँगा और अपनी राय दूँगा। परन्तु यह प्रश्न इतना महत्त्वपूर्ण है कि इसपर निजी तौरपर विचार-विमर्श नही किया जा सकता। इसलिए मैं सार्वजनिक रूपसे अपनी राय व्यक्त करके ही अपना वायदा पूरा करना चाहता हूँ।

मेरे विचारमे इस नये प्रस्तावसे हरिजनोका कोई हित सिद्ध नही होता। चुनावकी 'पैनल' व्यवस्थापर मैने सिर्फ यही आपत्ति सुनी है कि वह अधिक खर्चीली है। 'पैनल'मे आनेके लिए हर स्थानपर चुनाव होगा, यह पहलेसे ही मान लिया गया है। अगर 'पैनल' चारके बजाय दो ही उम्मीदवारोका होता, तो ऐसा सम्भव था। हर स्थानके लिए चार उम्मीदवार चुनना जरूरी होनेसे प्रारम्भिक निर्वाचनकी ज्यादातर स्थानोपर आवश्यकता ही नही पड़ेगी। सिवाय उन जगहोके जहाँ हरिजनोके बहुत दल है और उनमे अत्यधिक मतभेद है, और कही एक जगहके लिए चारसे ज्यादा उम्मीदवार खड़े नही हो सकते। अभी कुछ समयतक तो सारी सुरक्षित सीटें भरनेके लिए काफी उम्मीदवार मिलना ही मुश्किल होगा, और अधिकाश स्थानोके लिए कोई मुकाबला नही होगा। हरिजन सस्थाओका यह कर्त्तव्य है कि वे अपने राजनीतिक जीवनके आरम्भ मे ही आपसी कटुता पैदा न होने दे, और सवर्ण हिन्दुओका यह कर्त्तव्य है कि वे हरिजनोमे फूट न डाले। मुझे आशा है कि हरिजनो और दूसरे हिन्दुओके हित कभी टकरायेगे नही। अगर वैसा हो भी, तो पहले तो 'पैनल' व्यवस्थामें इसका काफी प्रबन्ध है कि सही — हरिजनोकी दृष्टिसे सही — हरिजन उम्मीदवार चुना जाये। और जबतक हरिजनोमे आपसी कटु सघर्ष न हो, प्राथमिक चुनावकी कभी जरूरत ही नही पड़ेगी, बल्कि यह भी सम्भव है कि अन्तिम सयुक्त चुनावकी भी जरूरत न पड़े।

१. देखिए पृ० १५-६।

पर यह विकल्प वडा खतरनाक मालूम होता है। प्रथम चयन ही सामान्य होनेसे, उचित-अनुचितका विचार न करनेवाले राजनीतिक दल अपने हरिजन उम्मीदवार खडे करेंगे, और वडी आसानीसे हरिजनोमे फूट डालकर उम्मीदवारो और हरिजन निर्वाचकोका हौसला पस्त कर देंगे। जहाँतक मै समझा हूँ और जवतक सीटे सुरक्षित रखनेकी व्यवस्था कायम है, केवल ऐसे उम्मीदवारोके चुनावके लिए जो हरिजनोकी रायमे उनके विशेष हितोकी रक्षा करनेके लिए सवसे योग्य हो, 'पैनल' व्यवस्था ही सर्वश्रेष्ठ है। पर इस वैकल्पिक सुझावमे मुझे कलह और कटुताके वीज दिखाई देते हैं।

मैंने यह वात यद्यपि निर्णायक रूपमे लिखी है, तो भी ठीक तौरसे कोई मुझे समझा दे तो मै अपनी राय वदलनेको तैयार हूँ। मै समझता हूँ कि मैंने यह सिद्ध कर दिया है कि 'पैनल' व्यवस्था सभी अनावश्यक खर्चोको वचा सकती है। इसलिए अधिक खर्चकी दलील मुझे प्रभावित नही करती। मुझे यह पढ़कर आश्चर्य हुआ कि डॉक्टर अम्वेडकरने पत्र-प्रतिनिधियोसे एक भेंटमे कहा है कि उनके सुझावसे समझौतेके सारमे कोई फर्क नहीं पड़ता। मेरा यहाँ मतभेद है। 'पैनल' व्यवस्थाने सवर्ण हिन्दुओको हरिजन उम्मीदवारोके निर्वाचनमे, कुछ हदतक, अपना मत देनेका अवसर मिलता है। पर डॉक्टर अम्वेडकरके सुझावसे हो सकता है सवर्ण हिन्दुओंको इसका कुछ भी मौका न मिले। इस प्रकार हरिजन हिन्दुओ और सवर्ण हिन्दुओंके वीच एक दीवार खड़ी हो सकती है। इसी सकटको रोकनेके लिए मैंने अपनी सारी ताकत लगा दी थी, और अपने उस कार्यपर मुझे जरा भी पश्चात्ताप नहीं है। रविवारको मुलाकातमे मैंने डॉक्टर अम्वेडकरको अपनी कठिनाई वडी नम्रताके साथ वतला दी थी। जव मै इस कठिनाईपर विचार करता हूँ, तो मुझे यह अजेय मालूम होती है। कठिनाई यह है। प्रस्तावित व्यवस्थामे हरिजनोंके निर्धारित मत पानेवाले उम्मीदवारको सवर्ण हिन्दुओंके एक भी वोटकी जरूरत नही है, क्योंकि वह ऐसे उम्मीदवारको भी हरा सकेगा जिसे हरिजन और गैर-हरिजन सभी उम्मीदवारोमे सवसे ज्यादा मत मिले हैं, पर जिसके हरिजन मतोंकी सख्या निर्धारित संख्यासे एक भी कम है। इससे यरवदा-समझौता धूलमे मिल जायेगा।

वंगालके मित्रों और किसी भी अन्य व्यक्तिकी तरह, डॉक्टर अम्वेडकर भी यह कह सकते हैं कि यरवदा-समझौता मेरे अनशनके दवावके कारण हुआ था। मुझे इसपर कोई शर्म नही है। मेरे प्राण वचानेके लिए ही अगर उन्होंने समझौता स्वीकार किया, तो यह निश्चय ही उनका अपना विचार था। एक वातको निश्चित रूपसे स्वीकार कर लेनेके वाद उससे पीछे हटना उन्हें शोभा नही देता। अगर वह गलती थी, तो वे अपनी गलतीका उपयोग इसी तरह कर सकते हैं कि भविष्यमे फिर वैसी गलती न करे; किसीकी प्राणरक्षाके लिए, चाहे वह उनका कितना ही प्रिय स्वजन क्यो न हो, कर्त्तव्य-पथसे न हटे। मैंने अपने प्राणोंकी वाजी इसलिए नही लगायी थी कि किसीको कोई ऐसी वात स्वीकार करनेके लिए मजवूर करूँ जिसे वह असलमे अनुचित समझता हो। मैंने तो अपनी जान एक पवित्र और उत्तम उद्देश्यकी पूर्तिके

लिए ही खतरेमें डाली थी। इसलिए इस प्रश्नपर विचार करते समय मेरे अनशनको बहसमें नहीं घसीटना चाहिए, बल्कि सर्व-साधारणको शान्तिसे दलीलों द्वारा यह समझाना चाहिए कि यह समझौता नैतिक या सार्वजनिक हितकी दृष्टिसे बुरा है। यह सिद्ध कर दिया जाये तो समझौतेको बदलनेके प्रश्नपर गम्भीरतासे पुनर्विचार करनेके लिए काफी समय रहेगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २९-४-१९३३

४०. तार : नारणदास गांधीको

[२७][1] अप्रैल, १९३३

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती

तारसे खबर दो कि क्या मैं नी० और डॉक्टर स्पीगलको, जो पिछले साल वहाँ थे, भेज सकता हूँ।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से।

४१. पत्र : मीराबहनको

२७ अप्रैल, १९३३

चि० मीरा,

यह गुरुवारकी सुबह और प्रार्थनासे पहलेका समय है। तुम्हारा पत्र बा के पत्रके साथ कल मिला।

ज्योतिषपर एक पुस्तक तुम्हें भेजी जा रही है। इस महीनेके लिए एक नक्शा भी साथमें है। इसी पत्रके साथ तुम्हें डॉ० सांडर्स[2] का पत्र भी मिलेगा। सब बातोंको देखते हुए यह सन्तोषजनक है।

बा के लिए पत्र भी इसीके साथ है।

आश्रमके आचरणकी तुम जितनी चाहो चर्चा कर सकती हो। इससे मैं थकूंगा नहीं। इससे मुझे और सहायता ही मिलेगी। मेरा दृष्टिकोण इस तरह तुम ज्यादा अच्छी तरह समझ सकोगी। मेरी किसी बातको तुम तुरन्त न समझ सको या समझकर भी मुझसे सहमत न हो सको, तो इसीसे अपनेको तुम्हें यह दोष नहीं देना चाहिए कि

१. साधन-सूत्रमें "२८" है। किन्तु तारका मसविदा २७ तारीखको ही तैयार किया गया था; देखिए "पत्र : द० बा० कालेलकरको", पृ० ४६।

२. लन्दनके एक चिकित्सा-विशेषज्ञ, जिन्होंने १९०७ में मीराबहनके क्षय-रोगकी चिकित्सा की थी। देखिए खण्ड ५३, पृ० ५०६।

तुम्हारा मुझमे या मेरी बुद्धिमत्तामे विश्वास नही है। मै सर्वथा निर्दोष प्राणी नही हूँ। मेरी भूलोमे तुम्हे मुझसे सहमत भला क्यो होना चाहिए? वह तो अन्धश्रद्धा हुई। मुझपर श्रद्धा होनेसे तो तुममे यह क्षमता आनी चाहिए कि मेरी वास्तविक भूल तुम किसी भी अन्य दोषदर्शीसे कही जल्दी जान सको। तुम्हारी श्रद्धासे मै बस इतनी ही आशा करूँगा कि जब तुम मुझे मेरी गलतीका अहसास न करा सको तो तुम्हे यह सोचना चाहिए कि जिन मामलोमे मैने तुमसे अधिक सोचा और अनुभव किया है, उनमे मेरी दृष्टि सम्भव है तुमसे अधिक स्पष्ट हो। इससे तुम्हे मनकी शान्ति मिलेगी। इसलिए, तुम्हे अपनी शकाओको दबाकर और कुछ खास बातोपर मेरे विचारसे सहमत न होनेके कारण अपनेको पीडित करके अपनी विचारशक्ति निकम्मी नही कर देनी चाहिए। इसलिए, आश्रमकी चर्चा तुम्हे उस वक्ततक जारी रखनी चाहिए जबतक उसके बारेमे मेरे सारे आदर्श खूब अच्छी तरह तुम्हारी समझमे न आ जाये।

तुम्हे यह दलील देनेकी जरूरत नही थी कि दोनोमे से पुरुष अधिक पापी है। इस मुद्देपर मेरे जिन पुरुष मित्रोने अपनी राय जाहिर की है, उनमे से सबके नही तो अधिकाशके विपरीत मेरा यही मत रहा है। निश्चय ही मै तुम्हारी इस बातसे भी सहमत हूँ कि मनुष्य यदि पशुसे श्रेष्ठ है, तो उसकी श्रेष्ठता ब्रह्मचर्य-पालनकी उसकी शक्तिमे है। इसलिए आश्रमका यह आदर्श होना चाहिए, जो यदि सम्भव हो तो तुरन्त पूरा किया जाये।

इसलिए जहाँतक बुनियादी चीजका सम्बन्ध है, हम दोनो पूरी तरह सहमत है। दिक्कत या मतभेद वही आता है जहाँ हम उस आदर्शको पूरा करनेके उपाय खोजने लगते है।

मेरा यह विचार उत्तरोत्तर दृढ होता जाता है कि आश्रम वैसे ही चलता रहना चाहिए जैसे अभी चल रहा है, और नये लोगोकी भरती नियमित करनेकी व्यवस्थापकको काफी स्वतन्त्रता होनी चाहिए। हमारा जीवन दिन-प्रतिदिन पेचीदा नही सादा बनना चाहिए। आत्मसयममे हमारी उत्तरोत्तर प्रगति होनी चाहिए। मगर हमे अभीकी तरह ही एक सयुक्त परिवारके रूपमे रहना चाहिए।

मौजूदा गठन बाधा नही है। बाधा यह है कि हमारे यहाँ सच्चे पूर्ण ब्रह्मचारी बहुत थोडे है। सभी टूटे बर्तन थे, सभीको अपने-अपने विकारोको जीतना पडा। परन्तु मेरा मत है कि उनमे अधिकाश सच्चे साधक थे और है। इसलिए, हम अन्धोके अन्धे नेता है और ठोकर खाकर गिरते रहते है। सतत प्रयत्न द्वारा जब हममे से कुछ इस प्रयासमे कम-से-कम पैर जमा लेंगे, तब हमारी स्थिति अवश्य बेहतर हो जायेगी। इसलिए, समस्याका सार यह निकलता है कि हममे से प्रत्येक आदर्शतक पहुँचनेकी अधिक-से-अधिक चेष्टा करे। ब्रह्मचर्यकी मेरी व्याख्या याद रखो। उसका अर्थ एक या अनेक इन्द्रियोका दमन नही है, बल्कि उन सबपर पूर्ण विजय है। दोनो स्थितियोमे मौलिक भेद है। मै अपनी सारी इन्द्रियोको दबा तो आज भी सकता हूँ, परन्तु उन्हे जीतनेमे मुझे कल्प लग सकते है। विजयका अर्थ यह है कि वे स्वेच्छापूर्वक दासोकी तरह काम करे। मै एक सादे कष्ट-रहित ऑपरेशनसे कानके परदेमे छेद करवाके

श्रवणेन्द्रियका दमन कर सकता हूँ। पर यह बेकार है। मुझे कानको ऐसी शिक्षा देनी चाहिए कि वह गपशप, गन्दी चर्चा और निन्दा सुननेसे इनकार कर दे, दिव्य संगीतके लिए खुला रहे और हजारो मीलसे आनेवाली सहायताकी पुकारको भी सुन ले। कहते है, सन्त रामदासने ऐसा ही किया था। तो जननेन्द्रियको किस काममे लिया जाये? हमारे पास जो महती सृजनात्मक शक्ति है, उसमे अपने-जैसी हाड-माँसकी मूर्त्तियाँ पैदा करनेके बजाय, हम पूर्ण जीवनके लिए — यानी आत्माके लिए रचनात्मक कार्यकी सृष्टि करे। हमे पाशविक आवेगपर लगाम लगाकर उसे दिव्य आवेग बना देना होगा। यहाँ तुम 'गीता' के दूसरे अध्यायका ६४वाँ श्लोक पढ लो। भगवद्गीताका मूल स्वर 'युद्धसे भागना नही, बल्कि अनासक्त होकर उसका मुकाबला करना' है। इसलिए तुम्हे, मुझे और हम सभीको सब तरहके नर-नारियोके बीच अडिग खडे रहना है। शारीरिक एकान्त है ही नही, कुछ लोगोको थोडे समयके लिए वह मिल जाये, वह बात अलग है। आश्रम जहाँ है बिल्कुल ठीक है, परन्तु हमें और अधिक विकासके लिए फैल जाना होगा। लेकिन वह विकास अपने समयपर कुदरती तौरपर होगा।

हम सबकी ओरसे प्यार।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ६२६९) से, सौजन्य मीराबहन।

४२. पत्र: हैरी वोमैनको

२७ अप्रैल, १९३३

प्रिय मित्र,

आपके लम्बे पत्रके लिए धन्यवाद।[1]

मिस मेयो जब भारतमें थीं तो मुझसे एक बार मिली थी। उनकी पुस्तक मैंने पढी है। उसपर मैंने एक समीक्षा भी लिखी थी जिसने उस समय काफी लोगोका ध्यान आकर्षित किया था। मेरा यह पक्का विश्वास है कि वह पुस्तक अर्धसत्यो, वक्रोक्तियो और ऐसे अनुमानोसे भरी है जो छिटपुट तथ्योसे, उन्हे एक सार्वदेशिक परिस्थिति मानकर, निकाले गये है।

हृदयसे आपका,

हैरी वोमैन महोदय,
बीट्रिस, नेबरास्का (यू एस ए)

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १९०५५) से। बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल न० ८०० (४०) (३), भाग ४, पृ० ३७९ से भी।

१. १२ मार्च, १९३३ का (एस० एन० १९००९)। अपने इस पत्रमें लेखकने कैथरीन मेयोकी पुस्तक **मदर इंडिया** के खिलाफ नाराजी प्रकट की थी। उसने लिखा था: "... कृपया लिखिए कि इस निन्दनीय पुस्तकमें मिस मेयो जो-कुछ कह रही है, वह सत्य है या उसके पीछे केवल पुस्तककी बिक्रीसे होनेवाली आयके लोभकी ही प्रेरणा है ...।"

४३. पत्र : युवान प्रिवाको

२७ अप्रैल, १९३३

प्रिय भक्ति,

तुम्हारा पत्र पाकर मुझे खुशी हुई। तुम इसे एक लम्बा पत्र मानती हो, पर हमारे लिए यह बहुत ही छोटा है। मै देख रहा हूँ कि अपने सुखमे तुम [दोनो] एक हो। अपने ह्रासमे भी तुम एक हो। तुमने मुझे बताया है कि तुम दोनोको एक साथ 'फ्लू' हुआ था। तुम्हारा-जैसा विचित्र जोड़ा कोई और देखनेका मुझे कभी सौभाग्य नही मिला। ऐसे दम्पत्ति हमे फारसी कवितामे तो पढनेको मिलते है, पर हाड-मॉसके नही मिलते। ईश्वर तुम्हे सदा अभिन्न रखे।

हॉ, मै यह जानता हूँ कि यूरोपमे तुम लोग, आर्थिक और आत्मिक रूपसे, बडी कठिन घडीमे से गुजर रहे हो। परन्तु 'बाइबिल'की इस उक्तिपर मेरा अक्षरश विश्वास है कि "जबतक सोडोम और गोमारामे एक भी भला आदमी है, ईश्वर उन्हे नष्ट नही करेगा।" मै यह जानता हूँ कि यूरोप महाद्वीपके सभी भागोमे सच्चे स्त्री-पुरुष है। इसलिए मुझे यह लगता है कि अन्तमे सब शुभ होगा।

मेरी पुस्तिका 'गाइड टू हेल्थ'की एक प्रति तुम्हे मिल गई, इसकी मुझे खुशी है। यह एक तुच्छ अनुवाद है, और कुछ अध्याय ऐसे है जिन्हे मै फिरसे लिखना चाहूँगा। यदि मुझे समय और अनुमति मिली तो मैं अवश्य ऐसा करूँगा।

प्राकृतिक चिकित्सामे कुहनेके समयसे बहुत प्रगति हो चुकी है, और नये परीक्षणोके परिणामोको मै इसमे शामिल करना चाहूँगा। हम सब अच्छी तरह है और तुम्हे और आनन्द[1] को अपना प्रेम भेजते है। मीराका मुझे हर सप्ताह समाचार मिलता है और जवाबमे मै भी उसे लिखता हूँ। हर सप्ताह मुझे पत्र लिखनेके लिए वह अन्य मित्रोसे पत्र-व्यवहार और भेटके सुखका त्याग करती है। तुम्हारा प्रेम मै निश्चय ही उसतक पहुँचा दूंगा। एक पत्र उसके पास आज ही जानेवाला है।

हृदयसे तुम्हारा,
बापू

[पुनश्च]

महादेव १९ मईको रिहा होनेवाले है और तुम्हे अपना प्रेम भेजते है।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २३३६) से।

१. युवान प्रिवाके पति एडमण्ड प्रिवा।

४४. पत्र : च० राजगोपालाचारीको

२७ अप्रैल, १९३३

प्रिय चि० रा०,

मैं चाहता हूँ कि रगीन चार्टमे आप उन-उन जातियो और उप-जातियोकी आवादीके अक देते। चार्टको प्रकाशित करनेकी क्योकि कोई वहुत जल्दी नही है, इसलिए मैं चाहूँगा कि आप वह सूचना मुझे दे। मैं खुद वह मालूम कर सकता था, पर आपके अपने अक मुझे ज्ञात नही है। मैं जो मालूम करूँ हो सकता है वे विलकुल वही न हो।

अपने पत्रमे आपने नरसिंहन[1] या पापाके[2] वारेमे कुछ नही लिखा। देवदाससे कल मुलाकात होनेकी आशा है।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत च० राजगोपालाचारी

अग्रेजीकी फोटो-नकल (एम० एन० १९०५२) से।

४५. पत्र : जी० आर० खॉको

२७ अप्रैल, १९३३

प्रिय मित्र,

आपका पत्र[3] सलग्न पत्रो-सहित मिला। इस पत्रके साथ मैं आपको एक पत्र अपने पुत्रके नाम भेज रहा हूँ। मैं मीधे उसे भी लिख चुका हूँ। अपने पुत्रके नाम मेरे पत्रमे आप देखेंगे कि मैंने उससे आपका परिचय मैसर्स सोरावजी ऐंड पाठेरसे

१ और २. राजगोपालाचारीके पुत्र व पुत्री।

३. २५ अप्रैल, १९३३ का। उसमें लिखा था: "यदि आप अपने पुत्र श्री मणिलालको पत्र लिखने और उनके द्वारा मेरे स्वर्गीय पिताकी वसीयतपर कानूनी राय प्राप्त करनेकी कृपा करें तो मैं आपका आभारी होऊँगा। श्री गॉडफ्रेके नाम पत्रसे आप यह समझ जायेंगे कि जिस प्रश्नपर राय लेनी है वह यह है कि किसी मुसलमान द्वारा की गई वसीयत यदि शरीयतके खिलाफ हो, तो क्या वह डर्वनके सर्वोच्च न्यायालयमें वैध मानी जा सकती है। शरीयतके मुताबिक इस मामलेमें वारिस दो बेटे और एक विधवा हैं। वारिसकी हैसियतसे हम इस वसीयतके खिलाफ अपना विरोध पेश कर चुके हैं। शरीयतके मुताबिक यह वसीयत अवैध है, पर चैरिटी जागीरके एक तिहाई भागकी अधिकारी होगी, क्योंकि वसीयत करनेवाला शरीयतके मुताबिक इतना वसीयत द्वारा दे सकता है" (एस० एन० १९०३९)।

करानेको कहा है। इसीलिए मैं आपको अलगसे परिचय-पत्र नही भेज रहा हूँ। पुत्रके नाम अपने पत्रमे मैंने सेठ उमर झवेरीका भी उल्लेख कर दिया है।

हृदयसे आपका,

श्री जी० आर० खाँ
एच० एच० आगाखाँका बँगला
नेसबिट रोड, मजगाँव, बम्बई

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९०५४) से।

४६. पत्र : हरकिशनदासको

२७ अप्रैल, १९३३

प्रिय हरकिशनदास,

श्रीयुत शास्त्री, जिन्हे कार्यालयने आशुलिपि-सहायकके रूपमे मेरे पास भेजा था, इस महीनेके अन्ततक यहाँसे चले जायेंगे। एडवोकेट भुलाभाईके पुत्रसे मुझे उनका टाइपिस्ट मिल गया है, इसलिए मैं शास्त्रीको दो-तीन दिन पहले ही छुट्टी दे रहा हूँ, जिससे कि वे बम्बईमे अपने कुछ छोटे-मोटे काम निपटा सके। परन्तु आप उन्हे उनका पूरे महीनेका ही वेतन देनेकी कृपा करे।

श्रीयुत धीरूभाईने अभीतक मुझे यह नही बताया है कि अपना टाइपिस्ट उन्होने किन शर्तोपर भेजा है। इसलिए नये आशुलिपिकको जिन शर्तोपर काम करना है वे मैं आपको बादमे लिखूंगा। निस्सन्देह, किसी भी हालतमे बोर्डको उसपर शास्त्रीसे अधिक खर्च करना नही होगा, पर मुझे आशा है कि उसपर कम ही खर्च आयेगा।

शास्त्री मेरे पाससे केवल इसलिए जा रहे है कि उन्हे अपने वृद्ध पिता और पारिवारिक मामलोकी देखभाल करनी है। कई सालसे वे वहाँ नही गये हैं। पिछले दिनों उनके बहनोईका भी देहान्त हो गया है। लेकिन यदि चारेक महीनोमे उन्हे कोई बेहतर काम नही मिला तो वे खुशीसे वापस आ जायेंगे। उनकी जरूरते सौ रुपयेसे निश्चय ही बहुत ज्यादा है, पर वे यह जानते हैं कि इस समय तो सौ रुपये भी एक खासी रकम है। यह केवल मैं आपकी जानकारीके लिए ही लिख रहा हूँ।

किसी भी कारण यदि चार महीने बाद या उससे पहले ही मैं इस टाइपिस्टको नही रख सका और यदि शास्त्री आनेको स्वतन्त्र हुए, तो स्वाभाविक रूपसे मैं उन्हे फिरसे रख लूंगा। उनसे मुझे पूर्ण सन्तोष मिला है।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९०५६) से।

४७. पत्र : जे० डी० जेनकिन्सको

२७ अप्रैल, १९३३

प्रिय मित्र,

जीन्सकी पुस्तक "द स्टार्स इन देयर कोर्सेज' की टिप्पणियोंसे युक्त इस प्रतिके लिए धन्यवाद। इसपर मैं एक नजर पहले डाल चुका हूँ। पर आपकी भेजी यह पुस्तक मेरे लिए निस्सन्देह अमूल्य है। मैंने देखा है कि इसमें जहाँ-तहाँ हाशियेपर पेंसिलसे पंक्तियाँ लिखी हैं। पृष्ठ १५२ पर जो अंश आपने चिह्नित किया है, उसका मुझपर पहले-पहल जब मैंने पुस्तक पढ़ी, अच्छा प्रभाव पड़ा था।

इस पत्रको समाप्त करते-करते क्षण-भरको जब मैं पुस्तकको अलग रखने लगा तो मैंने देखा कि यह प्रति आपके अपने संग्रहकी है। इस जानकारीके बाद तो यह पुस्तक मेरे लिए और भी अमूल्य हो गई है।

हृदयसे आपका,

जे० डी० जेनकिन्स महोदय
हेमर्टन हाउस
२३, काहून रोड,
पूना

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एम० एन० १९०५७) से।

४८. पत्र : मु० रा० जयकरको

२७ अप्रैल, १९३३

प्रिय श्री जयकर,

यरवदा-समझौतेकी 'पैनल' व्यवस्थामें सुधारके डॉ० अम्बेडकरके सुझावपर मेरी जो राय[1] है, वह मैं इस पत्रके साथ भेज रहा हूँ। आशा है, आप मेरी इस बातसे सहमत होंगे कि डॉ० अम्बेडकरका सुझाव 'पैनल' व्यवस्थाका कोई विकल्प नहीं है, और संयुक्त निर्वाचक-मण्डलकी आड़में यह एक प्रभावी पृथक् निर्वाचक-मण्डलकी स्थापना करता है। यह सुझाव, मेरे विचारमें, स्वर्गीय मौलाना मुहम्मद अलीके फार्मूलेकी सभी खराब बातोंकी नकल करता है और उसकी सभी राहत देनेवाली बातोंको छोड़ देता है। मेरे विचारसे, हरिजनोंके मनमें जबतक सन्देह है, और अपने प्रति सवर्ण हिन्दुओंके व्यवहारके बारेमें सन्देहके उनके पास पर्याप्त कारण है, तबतक उम्मीदवारोंके चुनावमें

१. देखिए "यरवदा-समझौता", पृ० ३६-९।

सबसे पहले राय देनेका उन्हे पूर्ण अधिकार है। और इसके लिए, मेरे विचारमे, 'पैनल' व्यवस्थासे अच्छी कोई चीज नही हो सकती।

हृदयसे आपका,

सलग्न :
एक प्रति डॉ० सप्रूके लिए भी।

अग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० २१०७२)से।

४९. पत्र : बी० आर० अम्बेडकरको

२७ अप्रैल, १९३३

प्रिय डॉ० अम्बेडकर,

अपने वायदेके मुताविक आपके सुझावपर मैं अपनी राय इस पत्रके साथ भेज रहा हूँ। इस विषयकी मैंने सार्वजनिक रूपसे[1] चर्चा की, आशा है, आप इसका कोई खयाल नही करेंगे। मैंने सोचा कि आपके द्वारा उठाया गया सवाल इतना महत्त्वपूर्ण है कि यदि मैं इसपर विचार करूँ तो वह मुझे सार्वजनिक रूपसे ही करना चाहिए।

हृदयसे आपका,

अग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० २१०७४)से।

५०. पत्र : द० बा० कालेलकरको

२७ अप्रैल, १९३३

चि० काका,

फिर चन्द्रशंकर[2] से वही बात मालूम हुई। तुम्हारी पढ़ाई भी बन्द है यह मुझे बहुत अच्छा लगा है। पढना, बात करना और लिखना वन्द कर दे। इस बातपर डॉक्टर पोर्टरने खूब जोर दिया है और मुझे उनकी बातमे काफी सार लगा है।

नी० यही है, यह तो तुम्हे मालूम ही होगा। आज एक जर्मन महिला, डॉक्टर स्पीगल आ गई है। दोनोको आश्रम भेजनेकी अनुमति मॉगी है। आज आश्रम तार[3] भेजा है। चन्द्रशकर ही तुम्हे जर्मन महिलाके बारेमे बतायेगा और नी० के बारेमे भी।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९४७६)से, सौजन्य : द० बा० कालेलकर।

१. देखिए यरवदा-समझौता, पृ० ३६-९।
२. चन्द्रशंकर प्राणशंकर शुक्ल, हरिजनबन्धु के सम्पादक।
३. देखिए पृ० ३९।

५१. पत्र : प्रेमलीला ठाकरसीको

२७ अप्रैल, १९३३

प्रिय बहन,

तुम्हारा पत्र अभी मिला है। नी० और उसका लडका मेरे साथ खाना खा रहे हैं इसलिए तुम्हारे यहाँ पहुँचनेमे देर लगेगी। उसके लिए मुझे माफ करना। उनके साथ डॉ० स्पीगलको भी भेज रहा हूँ। तुम्हारे पत्रमे मैं बहुत प्रसन्न हुआ हूँ। मेरे साथ इसी तरह स्पष्ट व्यवहार रख सको तो मुझे सकोच नही होगा। मैं भिक्षुक ठहरा, इसलिए एक ओर मेरी भिक्षाकी कोई सीमा नही। दूसरी ओर, अमर्यादित भीख माँगते हुए दाताकी इच्छाको पूर्ण मान देनेकी इच्छा भी रहती है। इसीलिए जहाँ मैं भीखके लिए झोली फैलाता हूँ वहाँ दाताको निर्भय कर देनेका प्रयत्न भी करता हूँ।

भाई नायरको फिलहाल भारत सेवक समाजमे भेज रहा हूँ। उनसे मालूम करवाया है, वे रख सके तो वही रखूँगा। क्योकि वहाँसे मोटरको आना ही पडता है, एक चक्कर बढे तो उससे कोई आपत्ति नही होगी, ऐसा मेरा विचार है। यदि कठिनाई हुई तो तुम्हारे सुझावका उपयोग अवश्य करूँगा।

आमोके बारेमे मुझे कुछ मालूम नही था। मैं ज्यादातर आम नही लेता। मेरा आधार तो पपीता है। सरदारको पूछकर खबर दूंगा कि कैसे थे। लेकिन चाहता हूँ कि तुम ऐसी छोटी-छोटी बातोकी चिन्ता न करो। स्वादकी ऐसी चिन्ता किसीको भी नही है। जो-कुछ मिलता है, वह ईश्वरका उपकार मानकर खा लेते हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४८२९) से, सौजन्य प्रेमलीला ठाकरसी।

५२. पत्र : नारणदास गांधीको

२७ अप्रैल, १९३३

चि० नारणदास,

बडी डाक कल मिली। कल तुम्हे लम्बा पत्र लिखवाया था सो मिल गया होगा। बडी डाकके साथ भेजा गया तुम्हारा पत्र मुझे बहुत अच्छा लगा है। उसमे तुमने भाषामे मर्यादाका अच्छी तरह पालन किया है। कही-कही थोडा अधैर्य देख सकते हैं। किन्तु वह नहीके बराबर है। तुम्हारा जवाब अचूक है। मुझे तो उसकी जरूरत भी न थी। किन्तु तुमने लिख भेजा है इसलिए छगनलालको सन्तुष्ट

करनेमे मुझे उससे सहायता मिलेगी। अब मुझे उसकी शिकायत भी तुम्हे लिख भेजनेकी जरूरत नही रहेगी। मै अपने ढँगसे उससे झगडा करता रहूँगा और उसका अज्ञान दूर करनेका प्रयत्न करता रहूँगा। बेकार ही तुम्हारा समय नही लूँगा। बहुत ले लिया है।

भाई राजभोज[1] का पत्र तुमने पढ लिया होगा। मुझे पत्र बहुत अच्छा लगा है। उसने लिखा है कि रामजीके[2] प्रति उदारतासे काम लेनेके बदले हमने बुद्धिबलसे ज्यादा काम लिया है। तुमने उसका सुझाव मान लिया है, इससे काम ठीक हो गया हे। इसमे उसकी भूल हो सकती है। किन्तु हमारी भूल भी हो सकती है। हमने पूरी तरहसे उचित व्यवहार किया है, ऐसा किसी तटस्थ हरिजनके सामने सिद्ध करनेकी योग्यता हममे होनी चाहिए। मै किसीके दोष बतानेके लिए यह नही लिख रहा हूँ, सिर्फ यह बतानेके लिए लिख रहा हूँ कि हमारा व्यवहार कैसा होना चाहिए। सभी तथ्य जाने विना मै दोष कैसे निकाल सकता हूँ। राजभोजको मै जो पत्र[3] लिख रहा हूँ सो देखना। उसने प्रार्थनाका समय बदलनेका सुझाव दिया है। वह भी विचार करने लायक है। उसका कहना है कि सभी उठनेवालोको शौचके लिए समय मिलना चाहिए। इसके लिए उसने २० मिनटके बदले ४५ मिनटकी मॉंग की है। उसने यह लिखा है:

> शौचके विना प्रार्थनामे एकाग्र चित्तसे बैठ पानेकी सम्भावना कम है। लोगोको नीद ज्यादा सताती है। ४.४५ पर प्रार्थना करनेसे आलस्य, अस्वस्थता और शौच न कर पाना तीनो बाते दूर हो जायेगी।

यह बात पहले भी उठाई गई है। पर राजभोजने उसे कुछ नये ढँगसे पेश किया है। फिर वह विचारशील मनुष्य लगता है। वह नया आया है, प्रयत्नशील है और मै देखता हूँ कि उसमे परखनेकी शक्ति भी है और विवेक-शक्ति भी है। इसलिए पहले तो उसके साथ अच्छी तरह बात कर लेना। और उसमे कुछ सार दिखाई दे तो फेर-फार कर लेना। ४.२० का आग्रह तो मैने ही किया था। और अब भी करता हूँ। परन्तु अनुभवका आग्रह सर्वोपरि मानना चाहिए। इतने सारे व्यक्तियोको पहले शौचादिकी आवश्यकता हो तो ४५ मिनटका समय होना चाहिए। जिसे आवश्यकता न हो वह ४५ मिनटमे जो चाहे करे। यदि यह परिवर्तन करनेका निर्णय करो तो मै प्रार्थना-सम्बन्धी कई सुझाव दूंगा। सबसे पहली बात तो यह है कि तुम राजभोजके साथ अच्छी तरह बात कर लेना।

उसकी दूसरी बात यह है:

> नये आये भाइयोकी महीनेमे कम-से-कम दो बार सभा होनी चाहिए। इनमे सेवा किस प्रकार करनी है, भोजन किस प्रकार परोसना है, 'मगल

१. पी० एन० राजभोज, एक हरिजन नेता।

२. आश्रमका एक हरिजन कतैया।

३. देखिए "पत्र: पी० एन० राजभोजको", २७-४-१९३३।

प्रभात' मे क्या लिखा है, मौनका रहस्य क्या है, आदिके बारेमें चर्चा की जाये। मैंने कई बार देखा है कि परोसनेवाला भोजन परोसनेमे विवेक और शान्तिसे काम नही लेता, उतावलीमे दूध और शाक जमीनपर गिरा देता है। जरूरतसे ज्यादा परोस देता है, कई बार कम भी। धोनेवाला इतनी ज्यादा जल्दीमे रहता है कि धीरे खानेवालोका ध्यान नही करता, इसलिए उनपर पानीके छींटे उडते रहते हैं। इस विभागके अध्यक्षका कर्त्तव्य है कि वह समय-समयपर समझाता रहे।

जल्दीके कारण हिन्दी वाक्यके बदले उसका गुजराती अनुवाद लिखवा दिया है। किन्तु उसके वाक्यका शब्दश अनुवाद किया है। राजभोजने जो शिकायत की है वह उस समय तो बराबर मौजूद थी ही जब मै वहाँ भोजन करता था। मेरा विचार था कि अब इसके लिए ज्यादा कारण नही रहा होगा। किन्तु ऐसा नही है। इसके कारणका अन्दाज मै सहज ही लगा सकता हूँ। समय-समयपर आदमियोको बदल दिया जाता है। बदलना आवश्यक भी है। किन्तु उतनी ही आवश्यक उन लोगोकी देखरेख भी है। मैंने कम या ज्यादा शाक देते हुए देखा है। परोसनेवालेका अधैर्य भी देखा है। रोटी आदि ऐसे फेंकते देखा है मानो मनुष्यको परोस ही न रहे हो। दूध भी नीचे गिराते हुए देखा है। और जब काफी सख्यामें लोग अलग-अलग जगह भोजन कर रहे हो तब धोनेका काम शुरू करते भी देखा है।

इस विषयम जाँच करना और जो हो सके सो करना। . . .[1] का पत्र मुझे मिला है और मैंने उसका जवाब दिया है। जितना सोचा था उतनी जल्दी वह ठिकाने नही लग सकेगा। फिर . .[2] के बारेमे परेशान है, इसीसे मैंने लिखा है कि ये सब अपने-आप आश्रम छोडनेको तैयार हुए हैं। अभी भी आश्रमके नियमोका पालन करके रहना हो तो रह सकते है। मैंने तो यह सलाह भी दी है कि . . . को तो आश्रममें आकर रहना चाहिए। तुम उसके साथ बात करना। पूरा इलाज उसके अपने हाथमे है। वह आये तो मै स्वय निश्चिंत हो जाऊँगा। किन्तु अपनी जिम्मेदारी अच्छी तरह समझकर ही आये, यह मै जरूर चाहता हूँ।

मै नी० के बारेमे तुम्हारे उत्तरकी प्रतीक्षा उत्सुकतापूर्वक कर रहा हूँ। यदि उसे आश्रममे जाना ही हो तो मै अब उसे यहाँ ज्यादा समय रोकना नही चाहता। इस पत्रके पहुँचनेतक तुमने जवाब न लिखा हो तो तारसे खबर देना।

नरहरिने पत्र लिखा है, ऐसा तुमने लिखा है। किन्तु इस डाकके साथ पत्र मिला नही। क्या अलगसे डाकमें डाला था? या वह लिखना चाहता था, किन्तु लिख नही पाया?

१ व २. नाम छोड दिये गये हैं।

इसके बाद आजकी डाक मिली, उसमे नरहरिका पत्र मिल गया है। नी० और डॉक्टर मार्गरेट स्पीगलके बारेमे तार[1] दे रहा हूँ।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३६४ से भी, सौजन्य नारणदास गांधी।

५३. पत्र : नरहरि द्वा० परीखको

[२७][2] अप्रैल, १९३३

चि० नरहरि,

मोहनको क्या हो गया है? उसके हाथोमे क्या कष्ट है? खराब हो जानेका डॉक्टरने क्या कारण बताया है? मुझे उसके बारेमे पहले तनिक भी चिन्ता नही हुई थी, साधारण ज्वरको कारण माना था। किन्तु अब सोचमे पड गया हूँ। हाथमे क्या तकलीफ है, यह अच्छी तरह समझ लेना चाहता हूँ।

मैंने नारणदासको लिखा गया तुम्हारा पत्र पढ लिया है। तुम्हारे कई सुझाव मुझे पसन्द आये है। नारणदासके साथ बात कर लेना। सभा कर लेना ठीक हुआ। किन्तु जिनसे अमल कराना है, बात अच्छी तरह उनकी समझमे आ जानी चाहिए। मैं चाहता हूँ कि यदि सम्भव हो तो तुम्हारे हृदय एक हो जाये। देखता हूँ, अभी ऐसा नही है। पूरा प्रयत्न करना। निराश होकर प्रयत्न छोड़ न देना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९०५९) से।

५४. पत्र : पांडुरंग नाथूजी राजभोजको

२७ अप्रैल, १९३३

भाई राजभोज,

तुम्हारा पत्र मुझे बहुत ही अच्छा लगा है। मैंने आज उस बारेमें नारणदासको लिखा है[3] उनके साथ सब बातकी छानबीन करो और पीछे मुझको लिखो। यदि रामजीके साथ उदारतासे वर्तन नही हुआ है तो मुझको अवश्य कष्ट पहुँचेगा। मथुरादासको अच्छी तरहसे पहचान लो। मथुरादासमे उदारताकी मात्रा बहुत ही है। उसके दिलमे छूतछात तनीक भी नही है। यह सब होते हुए भी रामजीके साथके

१. देखिए पृ० ३९।
२. नरहरि परीखके नारणदास गांधीको लिखे पत्रसे; देखिए पिछला शीर्षक।
३. देखिए पृ० ४७-५०।

वर्तनमे अगर कुछ भी कमी रही है तो भूल अवश्य दुरस्त हो जायगी। मथुरादास[1] सज्जन है, त्यागी है, और समजदार है। अपनी भूलोको देखनेकी उनमे काफी शक्ति है उनके साथ भी दिल खोलके बात करो।

अब रा०[2]का अनुभव मैं दे दूं। उनको आश्रमम लानेमें बहुत-सा मेरा हाथ है। मुझको रा० और गगाबहन बहुत प्रिय है रा०ने आश्रममे से काफी कमाई की है। जहाँ तक मै जानता हूँ उनको पेट भरके पैसे दिये गये है। मैंने हमेशा यह कह रखा है कि रा० के जैसे भाइओको देनेमे किसी प्रकारकी कजूसीका व्यवहार नही करो, परतु रा० लोभी है, क्रोधी है, वहमी भी है। एक बात जब उसके दिलमे घुस जाती है निकालना बहुत कठिन हो जाता है। लक्ष्मीदास[3] हरिजन बन गया है ऐसा समजो। उनकी लडकी आनदीको किसीने पूछा तुम कौन है उसने उत्तर दिया, "मै हरिजन वाला हूँ।" यह थोडे दिनोकी ही बात है। मै जानता हूँ कि रा० ने लक्ष्मीदासको बहुत सताया। यह कोई रा० के दोष बतानेके लिये मै नही लिखता हूँ। मुझको तो रा० बिलकुल पुत्रवत है। लेकिन क्योकि तुमने आश्रमके श्रेयमे इतना रस लिया है और तुमको मैंने सरल पाये है इसलिए सब बात तुमको कहता हू जिससे सच्चे निर्णयपर आ सकते है और मुझको दोर[4] सकते हैं।

तुम्हारे कई प्रश्नोके उत्तर[5] मैंने "हरिजन" [सेवक] में दिये हैं, वह देखा होगा। अब बाकीके प्रश्नोका उत्तर देता हूँ। आत्मोन्नति सतत परिश्रमसे ही सुलभ हो सकती है। परिश्रमको मदद देनेके लिए आध्यात्मिक ग्रथोका अध्ययन अच्छा है। मै उसे आवश्यक नही मानता हू। क्योकि आत्मोन्नति हृदयपर निर्भर है, बुद्धिपर नही। प्राचीन कालमे लोग बिल्कुल निरक्षर थे। उस कालमे किसीकी आत्मोन्नति नही होती थी, ऐसा कोई मानते नही है। हमारे सैकडो सत हो गये वे सब विद्वान नही थे। जीसस, मुहम्मद आदि निरक्षर थे। इसका यह अर्थ कभी न किया जाय कि अध्ययनका मैं विरोध करना चाहता हू। लेकिन आजकल अध्ययनको जो स्थान दिया जाता है वह योग्यतासे अधिक है। इस कारण जब अध्ययनके बारेमें मुझको प्रश्न किये जाते है तब मै अपने ख्यालको बता देता हू।

मालवीजी महाराज और डॉ० मुजे मत्रोपदेश इ० का काम कर देते है उसका मतलब तो मेरे ख्यालसे वही है जो आर्यसमाजीके है। लेकिन अस्पृश्यताकी जड हिंदु ससार इतनी जान गई है कि मत्रोपदेश ही करनेसे हमारा निपटारा नही होता है। वह मत्रोपदेश करे, दिलसे चाहे वह करे, लेकिन हिदु जनताको कौन मना सकेगा। अबतक यहाँतक हम नही पहुँच सके है जिससे अमुक क्रिया करनेका प्रभाव जनता पर पड जाय। आर्यसमाजमे जो शुद्धिकी क्रिया करते है उसमे भी बहुत बडा फरक नही होता है, थोडा सा अवश्य होता है। अब तो हम देख रहे है कि हिन्दुस्तानके

१. मथुरादास पी० आसर।
२ नाम छोड दिया गया है।
३. लक्ष्मीदास पी० आसर।
४. अर्थात्, मेरा मार्ग-दर्शन कर सकते है।
५. देखिए खण्ड ५४, पृ० ४९७-९।

ख्रिस्तीओमे भी अस्पृश्यताका जहर फैल गया है। ईश्वरकी कृपा होगी तो इसी व्यापक जहरको हम कठिन परिश्रम और कठिनतर तपश्चर्यासे दूर करेंगे। जो यज्ञका आरभ सप्टेंबर मासमे हुआ वह समाप्त नही हुआ, चल रहा है। समाप्त तभी हो सकता है जब अस्पृश्यता नष्ट हो जायेगी, और कोई जन्मसे न स्पृश्य माना जायगा न कोई अस्पृश्य माना जायगा, न कोई उच्च न कोई नीच माना जायगा।

ठक्कर बापा और काका साहेबके पत्र आते रहते है वह अच्छा है। जो प्रश्न दिलमे उठे वह बिना सकोच पूछते रहो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ७८५)से।

५५. 'आर्य' क्यों नहीं?

एक भाई लिखते हैं :

> आपने अछूतोंका नया नाम 'हरिजन' रखा है। उनका नाम कुछ भी रख दिया जाये, वे अलग ही प्रतीत होंगे। अतः मेरी प्रार्थना है कि उन्हे आर्य ही कहा जाये, ताकि वे विशाल आर्य-जातिसे भिन्न प्रतीत न हों। गुरु नानकदेवजीने 'शिष्य' (सिख) नाम रखा। आज सिख अलग गिने जाने लगे। इसी तरह हरिजन भी अलग गिने जाने लगेंगे। इसलिए यदि आप उचित समझें, तो हरिजनके स्थानपर उनका नाम आर्य रख दें।

यह भाई शायद 'हरिजन' नामकी उत्पत्ति नही जानते। 'हरिजन सेवक'का प्रथम अक पढकर 'हरिजन'का तात्पर्य जान ले, उनसे मेरी यह प्रार्थना है। हरिजन नाम एक अछूत भाईने ही पसन्द किया और मैंने उसे अपनाया। हरिजन नाम अलगपन दूर करनेकी दृष्टिसे नही रखा गया है। अलगपन आज मौजूद है और उनका अलग नाम भी है। अस्पृश्य, अछूत आदि नाम घृणावाचक है। अस्पृश्यता हम मिटाना चाहते हैं, इसलिए अस्पृश्य नामसे पुकारना ठीक नही। लेकिन जहाँतक अस्पृश्य अलग माने जाते हैं, वहाँतक तो उन्हे पहचाननेका नाम अलग रहेगा ही। इस प्रकार एक अलग नामकी आवश्यकता साबित होनेपर नाम क्या रखा जाये, यही प्रश्न रह जाता है। मेरी दृष्टिमे 'हरिजन'से सुन्दर और उपयुक्त नाम हमे नही मिल सकता। आर्य नाम ठीक नही, क्योंकि वह नाम एक सम्प्रदायका माना जाता है। सर्वसाधारण नाम तो हिन्दू है ही। दुख तो यह है कि अस्पृश्य कहे जानेवालोंकी अलग पहचान आज तो जरूरी है। सरकारी दफ्तरोमे उनकी अलग फेहरिस्त है। हर जगह उनका अलगपन मौजूद है। हमे ईश्वरसे प्रार्थना करनी चाहिए कि हरिजनोंका यह अलगपन दूर हो जाये, जिससे हम सभी हरिके 'जन' बननेके लायक हो जाये। एक मित्रने ठीक ही कहा है कि आज तो सवर्ण हिन्दू, हिन्दूधर्मके अरिके जन बन बैठे है।

हरिजन सेवक, २८-४-१९३३

५६. एक नवयुवकके पाँच प्रश्न

एक नवयुवक निम्नलिखित पाँच प्रश्न पूछते है·

१. जबकि हमारा यह दावा है कि हिन्दू-धर्ममें कोई अछूत या अस्पृश्य कही जानेवाली जाति नहीं है, तो फिर हम इन शब्दोंको लेकर व्यर्थ क्यों लड़ें?

२. जबकि हमारा यह कहना है कि वर्ण कर्मणा होता है, तो हम कथित अस्पृश्योंके कर्मको ही पहले क्यो न सुधारे? जब उनके कर्म ही पतित हैं तो उच्च वर्णके लोगोंसे अछूतोंकी तरफसे लड़नेसे क्या फायदा?

३. अस्पृश्योके साथ रोटी-बेटीका व्यवहार करनेसे भी जब अछूतोद्धार हो सकता है, तो वह भी हम क्यों न करे?

४. क्या अस्पृश्योके मन्दिर-प्रवेशका प्रश्न उनके लिए अलग मन्दिर स्थापित करके नही दूर किया जा सकता है?

५. क्या मन्दिर-प्रवेश बिलोके पास हो जानेसे रूढिवादी अस्पृश्योंको मन्दिरोमें जानेकी आज्ञा दे देंगे?

वह नवयुवक कहते हैं

मैं ब्राह्मण हूँ। मेरे घरमें जाति-भेदका जरा-सा भी विचार नही है। परन्तु मेरे हृदयमें यह शंकाएँ अक्सर पैदा हुआ करती हैं। आशा है, आप मेरी शंकाओका समाधान करनेमें सफल होगे।

मैं सफल हूँगा या नही इसका मुझे पता नहीं। लेकिन उस नवयुवकको तथा ऐसे ही दूसरोको सन्तुष्ट करनेकी चेष्टा करता हूँ। सफलता तो भगवानके हाथमें है।

१ सुधारकोका दावा है, सनातनियोका नही, कि जिसे अस्पृश्य कह सके, ऐसी कोई जाति नही है। दुर्भाग्यवश सवर्ण हिन्दुओने कई हिन्दू जातियोको अलबत्ता अस्पृश्य मान रखा है। और आज वे जातियाँ सरकारी दफ्तरोमे भी अस्पृश्य नामसे लिखी जाती हैं। इसलिए जबतक सनातनी भाइयोको हम न समझा सके, तबतक इस जाति-जनित अस्पृश्यताको दूर करनेके लिए लडना सुधारकोका धर्म हो जाता है।

२ वर्ण कर्मणा ही है या कैसे, यह प्रश्न यहाँ नही है। इसलिए उसे मैं छोड देता हूँ। इस विषयमे जो मेरा अभिप्राय जानना चाहे वे 'हरिजन सेवक' का पिछला अक[1] देख ले। रही बात अस्पृश्य कहे जानेवालोके कर्मकी। इनके कर्मके सुधारका अर्थ यदि कर्म-त्याग है, तो यह बात अनावश्यक ही नही, हानिकर भी है, क्योकि ये लोग जो कर्म करते हैं, वे सब-के-सब लोकोपकारक हैं। धोबी, हजाम, चमार, डोम,

१. देखिए खण्ड ५४, पृ० ४९७-९।

मेहतर, ये लोग प्रजाके सच्चे सेवक है। अगर ये अपना कर्म छोड दे, तो प्रजाका ही नाश हो जाये। इन कर्मोको नीच और ऐसे कर्म करनेवालोको अस्पृश्य माननेमे सवर्ण हिन्दुओने गलती की, पाप किया, ऐसा सुधारक मानते है। सुधारककी धारणा है कि मेहतर और डोमका कर्म पवित्र है। सवर्णोका कर्त्तव्य है कि इन कर्मोमे यथासम्भव सुधार करे। माता मलादि उठाती और साफ करती है। डॉक्टर हाड-मास और चमडा काटता है। लेकिन माता और डॉक्टर अपना कर्म सफाईके साथ करते है और कर्म करनेके बाद स्वच्छ हो जाते है। कर्म करनेके समय वे अस्पृश्य बन जाते है। ठीक इसी तरह अपने मेहतरादिके प्रति भी हमे ऐसा ही बरताव करना चाहिए। जैसे माता एव डॉक्टर जन्मसे अस्पृश्य नही है, इसी तरह मेहतरादि जन्मना अस्पृश्य नही है — कर्म करनेके समय अस्पृश्य भले ही हो। हम जब मेहतरादिको अपने ही समान मानेगे, तब उन्हे अपनेसे अलग नही रखेगे, बल्कि उन्हे प्रेमसे अपनायेगे, और उनके कर्म तथा उनकी स्थितिमे सुधार करेगे। आज हम उनका बहिष्कार करके उनपर अत्याचार करते है, हिसा करते है, समाजके प्रति द्रोह करते है और हिन्दू-धर्मके मूल सिद्धान्तोका निरादर करते है। इसलिए मेहतरादि हरिजनोकी तरफसे प्रयत्न करना हमारा परम कर्त्तव्य हो जाता है।

३ रोटी-बेटी व्यवहारसे किसीका उद्धार हो सकता है, ऐसा मै नही मानता। रोटी-बेटी व्यवहार तो एक स्वतन्त्र प्रश्न है। उसका न तो वर्णसे सम्बन्ध है, न अस्पृश्यतासे ही। रोटी-बेटी व्यवहारकी तो स्वतन्त्र मर्यादा है, ऐसा मेरा अभिप्राय है। कुछ भी हो, हम आज जो अस्पृश्यता-निवारण करते है, उसमे रोटी-बेटी व्यवहारको स्थान नही दिया गया है।

४ जब हम अस्पृश्यता-निवारणको धर्म समझते है, तब हरिजनोके लिए अलग मन्दिर क्यो बनवाये। सर्व-सामान्य मन्दिरोमे दर्शन करनेका उन्हे भी उतना ही अधिकार है, जितना कि दूसरोको।

५. बिल पास होनेसे ही रूढिवादी हरिजनोको मन्दिरोमे प्रवेश करने देगे, ऐसा तो किसीने कभी नही कहा। लेकिन मौजूदा कानूनी हालत ऐसी है कि रूढिवादियोमे से एक हिन्दूकी रोक-टोकसे भी कोई सार्वजनिक मन्दिर हरिजनोके लिए नही खुल सकता। बिल पास होनेसे यह बाधा अवश्य दूर हो सकती है।

हरिजन सेवक, २८-४-१९३३

५७. पत्र : अमृतलाल वी० ठक्करको

२८ अप्रैल, १९३३

प्रिय ठक्कर बापा,

मुझे आर्थिक सहायताके लिए हरिजन छात्रोंके कई प्रार्थनापत्र मिले हैं। परन्तु जिस शिक्षाबोर्डकी स्थापनाका मैंने सुझाव रखा है, उसके बिना मैं अपनेको किंकर्त्तव्य-विमूढ पाता हूँ। क्या आप उसे यथासम्भव शीघ्रातिशीघ्र स्थापित करने और उसकी नियुक्ति, विधान और नियमोंकी घोषणा करनेकी कृपा करेंगे?

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एम० एन० १९०५९) से।

५८. पत्र : टी० टाइटसको

२८ अप्रैल, १९३३

प्रिय टाइटस,

मुझे याद नहीं आता कि आपके किसी पत्रका मैंने उत्तर न दिया हो। इसलिए आप अपने प्रश्न फिर लिखें, मैं उनका खुशीसे उत्तर दूंगा। वैसे मैं अपनी फाइलमें भी खोजूंगा, और यदि मुझे कोई पत्र मिल गया तो आपके पिछले प्रश्नोंकी नकलकी बाट देखे बिना ही आपको अपना उत्तर भेज दूंगा।

'ऐलोपैथिक' और 'होम्योपैथिक' के बारेमें मेरी बात आप समझ नहीं पाये हैं। व्यक्तिगत रूपसे मैं ऐलोपैथीसे होम्योपैथीको ही अधिक पसन्द करता हूँ। पर उसकी प्रभावकारिताका मुझे कोई निजी अनुभव नहीं है, और यह बात मैं आपको बता चुका हूँ। यदि आपमें आत्मविश्वास हो और आप होम्योपैथिक औषधियोंके अनुशीलनके लिए अपने दैनिक कार्यसे सचमुच समय निकाल सके, तो जहांतक मेरा सवाल है, आपका उन्हें आजमाना मुझे बुरा नहीं लगेगा। इस विषयपर आप नारणदासके साथ विचार-विमर्श कर सकते हैं। और यदि आपकी दिलचस्पी बीमारियोंके सरल उपचारमें हो, तो मैं चाहूँगा कि आप डॉ० शर्माकी पद्धतिको समझें। उन्हें अपनी पद्धतिमें बहुत विश्वास है और यदि उनके प्रयोग आश्रममें सफल रहते हैं, तो वह एक बड़ा लाभ होगा।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एम० एन० १९०६०) से।

५९. पत्र : ए० एस० चौधरीको[1]

२८ अप्रैल, १९३३

प्रिय बहन,

आपका पत्र मिला। आपने जो-कुछ छिटपुट सूचनाओंवाला पत्र मुझे भेजा है, उसके आधारपर मेरे लिए कुछ-भी कहना बहुत कठिन है। इसलिए मेरी सलाह आपको यह है कि आप वर्धाके सेठ जाजूजी से मिलें और उनकी सिफारिश प्राप्त करें। तब आपके कागजात मुझे केन्द्रीय बोर्डको भेजने होंगे और वह आपके प्रार्थनापत्र पर विचार करेगा। सेठ जाजूजी को आप अपने बारेमें जितनी भी सूचना दे सकें, दे दें।

हृदयसे आपका,

श्रीमती ए० एस० चौधरी
नवी बस्ती, नागपुर

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९०६१) से।

६०. पत्र : रामचन्द्रको

२८ अप्रैल, १९३३

प्रिय रामचन्द्र,

आपका इसी २५ तारीखका पत्र मिला।

आप मुझसे ऐसा काम करनेके लिए कह रहे हैं जो मैं अभी नहीं कर सकता। इसलिए मेरा कहना यह है कि आप 'हरिजन' के पृष्ठोंको ध्यानसे पढ़ें। उनसे, मेरा खयाल है, आप 'हिन्दू-धर्मके सुधार' के मेरे विचारको समझ जायेंगे। मेरा सदा ठोस कार्यक्रममें विश्वास रहा है, और वह अस्पृश्यता-सम्बन्धी महान कार्यके रूपमें हमारे पास है। यदि हम हिन्दू-धर्मकी सारी बुराईकी इस जड़को मिटा सकें, तो बाकी सब तो अप्रत्याशित रूपसे सहज और सरल हो जायेगा। हममें से बहुत लोग जैसे ही यह महसूस करने लगेंगे कि हमें अपनी सारी शक्ति इसी एक सुधारपर केन्द्रित करनी है, सुधारका कार्य तेजीसे आगे बढ़ने लगेगा। आदर्श मन्दिरके आपके प्रश्नपर मैंने किस ढँगसे विचार किया है,[2] यह अब आप देख सकेंगे।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९०६२) से।

१. सम्भवतः उनके २५-४-१९३३ के पत्र (एस० एन० २१०६१) के उत्तरमें, जिसमें उन्होंने दिल्लीमें उच्च शिक्षा प्राप्त करनेको अनुदानके लिए प्रार्थना की थी।

२. देखिए पृ० ६२-४।

६१. पत्र : डंकन ग्रीनलीसको

२८ अप्रैल, १९३३

तुम्हारा पत्र मिला।

जो-कुछ तुमने कहा है, उसे मैं समझता हूँ और सराहता हूँ। मनपर पड़े प्रभावोंकी तुम्हारी रिपोर्टकी मैं उत्सुकतासे बाट देखूँगा। वह जितनी भी हो सके आलोचनात्मक और विस्तृत होनी चाहिए। जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, तुम्हारे वहाँ रहनेपर समय की कोई सीमा नही है। वस्तुत मुझे तुमसे जो काम लेना है, वह चाहे मेरे सीधे निर्देशनमे हो या मेरे सहयोगसे, उसके लिए तुम वहाँ जितना ज्यादा रहोगे उतना ही अच्छा रहेगा।

मदनपल्ली तुम शायद न जाओ, इसकी मुझे परवाह नही। अपनी जरूरते घटाकर जब तुमने बिल्कुल सादगी अपना ली है, तो अपने मनपसन्द कामकी तुम्हे कोई कमी नही हो सकती।

भगवानजी[1] के साथ तुम हरिजन घरोमे गये, यह जानकर मुझे खुशी हुई। मैंने [उनके] बहुत घर देखे है। इसलिए [उनका] कैसा भी विवरण मुझे अब विचलित नही करता। मुझे मालूम है कि मेरे सामने भगीरथ कार्य है। पर मेरे पास एक बहाना भी है, क्योकि मैं ईश्वरके लिए उसके अनेक साधनोमे से एक हूँ। अत मेरा कार्य यही है कि मैं अपनेको एक उपयुक्त यन्त्रके रूपमे रखूँ, जो प्रतिक्षण उसका आदेश पूरा करनेको तैयार हो। डॉ० शर्माका विचार सदा मेरा विचार रहा है और इसलिए मैंने बहुत साल पहले, अपने यहाँ आनेके[2] साल-भरके अन्दर ही, लक्ष्मी[3] की जिम्मेदारी ले ली थी। जितने भी हरिजन मुझे मिल सके, सबको मैं शिक्षा दे रहा हूँ। उनमे से कई जीवनमे अच्छी तरह जम भी गये है। पर यह भी एक बड़ा कार्य है। चाहे उनके माँ-बापोने ही उन्हे सौपा हो, पर उन्हे रखना कितना कठिन है। इसलिए कई बार जो अनपेक्षित परिणाम निकलते है, उनपर मुझे कतई आश्चर्य नही होता। जैसाकि तुमने बिलकुल ठीक ही कहा है, यह सब सवर्ण हिन्दुओके पापके कारण है।

बेशक, गन्दे लड़कोको ढूँढना ही काफी नही है। वे या उनके माँ-बाप इससे बेहतर स्थितिसे परिचित ही नही है। और जिनमे सफाई और स्वास्थ्य-विज्ञानकी कुछ धारणा है भी, उनके पास स्वास्थ्यके नियमोके पालनकी सुविधाएँ नही है। डॉ० शर्माके वहाँ होनेके समय तुम वही हो, इसकी मुझे खुशी है। मैं चाहूँगा कि तुम

१. भगवानजी पु० पण्ड्या।

२. अक्टूबर, १९२० में, देखिए खण्ड १८, पृ० ३५१।

३. दूधाभाई दाफड़ाकी पुत्री।

उन्हे और उनके सन्देशको समझ लो। यदि उसमे सार है तो सेवा करनेवाली सार्वजनिक सस्थाओके लिए वह वरदान होगा। प्राकृतिक तरीकोका मै कट्टर विश्वासी रहा हूँ और उनका प्रशिक्षण लेनेका कोई भी मौका मैने कभी खोया नही है। मै जो-कुछ जानता हूँ वह पुस्तकोसे चुना हुआ है। मै उन्हे पूरा कभी नही पढ पाया, पर मैने स्वयपर और अपने साथियोपर भरपूर प्रयोग किये है और उन तरीकोसे बहुत लाभ उठाया है। मेरी सदा यह इच्छा रही है कि कोई ऐसा व्यक्ति मिले जो मेरे विचारका हो और गरीबोके हितके लिए इस पद्धतिको विकसित करे। डॉ० शर्मा ऐसे ही व्यक्ति बताये गये है और इसीलिए वे आश्रममे है। इसलिए मै चाहूँगा कि तुम उनसे इस पद्धतिका जहाँतक किया जा सके, अध्ययन करो।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१०७८)से।

६२. पत्र : नारणदास गांधीको

२८ अप्रैल, १९३३

चि० नारणदास,

अभी लम्बा पत्र लिखनेके लिए समय नहीं है। तुम्हारा पोस्टकार्ड मिल गया है। नी० के लडकेकी आयु पाँच वर्षसे ज्यादा है। शरारती है। शरारत न करे तो अपना काम स्वय कर सकता है। और यदि बालक है इस कारणसे तुम्हे सकोच हो रहा हो तो सकोचका कोई कारण नहीं। मुझे तो यही आशा है कि दोनो माँ-बेटे वहाँ बिलकुल ठीक निभा पायेगे। इसलिए यदि नी०के पूर्व पापोके कारण तुम्हे सकोच हो तो उसे लेनेमे कोई बुराई न समझना। तुम्हारे पोस्टकार्डका वल्लभभाईने तो यही अर्थ लगाया है कि तुम्हे उसे लेनेसे कोई इनकार नहीं है, तुमने सिर्फ चेतावनी देनेके विचारसे लिखा है। मैने तुम्हारे पोस्टकार्डका अर्थ 'न' ही लगाया है। चाहे जो हो, मेरा कर्त्तव्य तो सावधान रहना है। इसलिए मेरे कलके तार[1] का साफ जवाब नही आया तो मै इस पत्रके उत्तरकी राह देखूँगा। जवाब तारसे देना। साथके सभी पत्र पढकर दे देना।

बापू

[पुनश्च.]

इसके साथ कुसुम, परचुरे, डकन और टाइटसके लिए पत्र है।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३६५ से भी, सौजन्य : नारणदास गांधी।

१. देखिए पृ० ३९।

६३. टिप्पणियाँ

मुरदार मास खाना

श्रीयुत हीरालाल शाहने विभिन्न सूत्रोसे ऐसे उद्धरण एकत्रित किये है जो मुरदार मास — मरे हुए पशुका मास — खानेकी निन्दा करते है और यह दिखाते है कि मुरदार मास खाना लोगोकी दृष्टिमे कितना घृणित रहा है।

पहला उद्धरण उन्होने 'भावप्रकाश' खण्ड २ के श्लोक ८८ का दिया है

> स्वयमृतस्य चावल्यमतीसारकर गुरु।
>
> अपने-आप मरे पशुका माम शरीरको दुर्वल करनेवाला, भारी और दस्तावर होता है।

कौटिल्यसे उन्होने बहुत-से नियम मविस्तार उद्धृत करके मुझे भेजे है, जिनमे से मै निम्नलिखित दे रहा हूँ

> जो पशु बूचडखानेके बाहर मारे गये हो और जो पशु अचानक मर गये हो उनका मास नही बेचा जायेगा।

'आईन-ए-अकबरी' से श्रीयुत शाहने कई ऐमे उद्धरण भेजे है जिनमे हिन्दुओके दस विभाग किये गये है। अन्तिम विभाग नीची जातिके मुरदार माम खानेवाले लोगोका कहा गया है, जो चाण्डाल कहलाते थे।

अन्य उद्धरण जेम्स फोर्बेमकी पुस्तक, 'ओरिएण्टल मेमोइर्स' के है। उनमे से मै निम्नलिखित दे रहा हूँ

> ब्राह्मणोकी धार्मिक श्रेणीमे मै अब नीचे चाण्डालो या पैरिया लोगोकी जातिपर आता हूँ। ये लोग इतने अधम माने जाते है कि इन्हे सबमे निकृष्ट कामोमे लगाया गया है। इन्हे इतना घृणित समझा जाता है कि कोई और जाति इन्हे छूती नही है, और जो हिन्दू घोर अपराध करते है उन्हे बहिष्कृत कर इस जातिमे रख दिया जाता है, और यह सजा मत्युदण्डसे भी बुरी मानी जाती है।

पूलिया लोगोका वर्णन करते हुए लेखक कहता है

> लगातार गरीबी और दु खपर-दु ख सहते रहनेसे इन दुखियारोका मानव-रूप बिलकुल बिगड गया है और ये देखनेमे घिनौने और जगली लगते है। पूलिया यद्यपि तिरस्कृत और उत्पीडित है, फिर भी पूरे भारतमे पैरिया कहलानेवाली एक जाति है जो उनसे भी नीच और अभागी है। यदि किसी पूलियाका अचानक पैरियासे स्पर्श हो जाये, तो उसे उस अशुद्धिसे मुक्त होनेके लिए कई तरहके अनुष्ठान और स्नानादि करने पडते है। वे उनके साथ

भोजन भी नहीं करते, यद्यपि उनके जिह्वालोलुप भोजोमे केवल यही अन्तर है कि जहाँ पूलिया गोमांसको छोड बाकी सभी तरहका मास खा लेते है, और कभी-कभी मुरदार मास भी खा लेते हैं, वहाँ पैरिया न केवल मरे हुए ढोर, बल्कि गोमास और हर तरहका मुरदार मास भी खा लेते है।

विरोधाभास?

एक भाई मेरे लेखोंको बडे उत्साहसे पढते हैं। उन्हें अन्तर्जातीय सहभोज और अन्तर्जातीय विवाहपर मेरे हालके लेखो और कुछ वर्ष पहलेके लेखोमे सगति दिखाई नही देती।

६ अक्तूबर, १९२१के 'यग इडिया' मे 'हिन्दू-धर्म' पर मेरा एक लेख[1] निकला था। उसका उद्धरण उक्त भाईने दिया है। वही उद्धरण मैं, उनके छोडे हुए अशोको छोडकर, यहाँ दे रहा हूँ

> इसलिए, अन्तर्जातीय सहभोज और अन्तर्जातीय विवाहसे यद्यपि वर्णाश्रम धर्मको कोई आघात नहीं पहुँचता, तो भी हिन्दू-धर्म विभिन्न वर्णोके सहभोज और विवाहको बहुत आग्रहपूर्वक निरुत्साहित करता है। हिन्दू-धर्म आत्मसंयमके सर्वोच्च शिखरपर पहुँच गया था। निस्सन्देह यह आत्माकी मुक्तिके लिए त्याग और तपस्याका धर्म है। . . . एक विशेष वर्गमें से ही वधू चुनकर हिन्दू बहुत आत्म-संयमका परिचय देता है। . . . शीघ्रातिशीघ्र आत्मोन्नतिके लिए अन्तर्जातीय विवाह तथा अन्तर्जातीय सहभोजका निषेध आवश्यक है।

गत वर्ष ४ नवम्बरको दिये गये मेरे वक्तव्य[2] का भी, जो समाचारपत्रोमे प्रकाशित हो चुका है, उन्होने उद्धरण दिया है। उनके छोड़े हुए अशोको छोडकर, मैं वह उद्धरण भी यहाँ दे रहा हूँ:

> अन्तर्जातीय सहभोज और अन्तर्जातीय विवाहपर जो प्रतिबन्ध हैं, वह हिन्दू-धर्मका अंग नहीं है। यह एक सामाजिक प्रथा है जो शायद हिन्दू-धर्ममें उसके ह्रास-कालके समय घुस आई थी। . . . आज ये दोनों निषेध हिन्दू समाजको शक्तिहीन बना रहे हैं, और इनपर जोर रहनेसे जनसाधारणका ध्यान उन मूल तत्त्वोंपर से हट गया है जो जीवनके विकासके लिए आवश्यक हैं। . . . सहभोज और विवाह-सम्बन्धी प्रतिबन्ध हिन्दू-समाजको कुंठित कर रहे हैं।

इन उद्धरणोको निष्पक्ष भावसे पढते हुए, खासकर यदि इन्हे इनके सन्दर्भमे पढा जाये तो, मुझे दोनो वक्तव्योमे कोई विरोध नही लगता। १९२१के वक्तव्यमे, हिन्दू-धर्मपर लिखते हुए मैंने अत्यन्त सक्षेपमे उसकी रूपरेखा रखी थी। गत ४ नवम्बरको असख्य जातियों और जातिगत प्रतिबन्धोपर मुझे विचार करना था।

१. देखिए खण्ड २१, पृ० ३५६-६१।
२. देखिए खण्ड ५१, पृ० ३६१-५।

१९२१मे आश्रमका रहन-सहन बिलकुल आज जैसा ही था। इसलिए मेरे आचार-व्यवहारमे कोई अन्तर नही आया है। मै अब भी मानता हूँ कि अन्तर्जातीय सहभोज और अन्तर्जातीय विवाहके सम्बन्धमे अपने-आपपर लगाया गया प्रतिबन्ध आत्मसयमका कार्य है। १९२१का लेख यदि मुझे आज लिखना पडे, तो शायद मै उसमे केवल एक ही शब्द बदलूँ। 'निषेध' शब्दके बजाय मै पुन वही लिखूँ जो उसी लेखमे कुछ पक्तियाँ पहले लिखा गया है और कहूँ, 'अन्तर्जातीय सहभोज और अन्तर्जातीय विवाह पर स्वेच्छासे लगाया गया प्रतिबन्ध शीघ्रातिशीघ्र आत्मोन्नतिके लिए आवश्यक है।'

गत ४ नवम्बरका लेख मेरे सामने होते हुए भी, मै कहता हूँ कि अन्तर्जातीय सहभोज और अन्तर्जातीय विवाह बन्धुत्वके प्रचार और अस्पृश्यता-निवारणके लिए कतई आवश्यक नही है। साथ ही इसमे सन्देह नही कि ऊपरसे थोपे गये प्रतिबन्धसे किसी भी समाजका विकास रुक जायेगा और इन प्रतिबन्धोको वर्ण-धर्म अथवा जात-पाँतसे जोडनेसे आत्माकी मुक्तिमे निश्चय ही विघ्न पडेगा और वर्ण इस तरह धर्मके लिए भारस्वरूप हो जायेगा। पर इतना सब-कुछ कहते हुए भी, अपने इस उत्साही पाठकको तथा मेरे लेखोमे दिलचस्पी लेनेवाले दूसरे लोगोको मै यह बता देना चाहता हूँ कि मेरे लेख सदा सुसगत ही प्रतीत हो, इसकी मुझे तनिक भी चिन्ता नही है। सत्यकी खोजमे मैने कई विचार त्याग दिये है और कई नई बाते सीखी है। वृद्ध हो जानेपर भी मुझे ऐसा नही लगता कि मेरा आन्तरिक विकास रुक गया है या देहके नाशके बाद मेरा विकास रुक जायेगा। प्रतिक्षण मै सत्यरूपी नारायणकी आज्ञा माननेके लिए ही तैयार रहता हूँ। इसलिए मेरे किन्ही भी दो लेखोमे यदि किसीको कोई असगति लगे और उसका मेरी विवेकशीलतामे विश्वास हो, तो उसके लिए एक ही विषयपर लिखे दो लेखोमे से बादके लेखको चुनना ही अच्छा रहेगा।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, २९-४-१९३३

६४. कुछ और दान

सेठ घनश्यामदास बिडलाने मुझे लिखा है कि उन्हे लाला कमलापतसे ३,००० रुपये और सेठ रामेश्वरप्रसाद बागलासे २,००० रुपयेका दान मिला है। दोनो ही सज्जन कानपुरके है। ये रकमे डेविड-योजना या आम शिक्षा-कार्यके लिए काममे लाई जा सकती है, शर्त केवल यही है कि ये उस प्रान्तके हरिजनोके लिए खर्च होनी चाहिए।

रगूनके सेठ सोनीराम पोद्दारसे २,५०० रुपयेकी रकम मिली है, जो हरिजनोमे शिक्षा-कार्यके लिए मेरी इच्छानुसार खर्च होनी है। यह रकम भी डेविड योजना या हरिजनोमे आम शिक्षा-कार्यके लिए मिल सकती है, फिर वह चाहे भारतके किसी भी भागमे क्यो न हो।

इस तरह योग्य हरिजनोके लिए छात्रवृत्तियोकी, कम-से-कम अभी तो, कोई कमी है नही। सेठ घनश्यामदास एक विशेष शिक्षाबोर्डकी स्थापना कर रहे है जो छात्र-वृत्तियो, विशेषत डेविड-योजनाके अन्तर्गत आनेवाली छात्रवृत्तियो, के लिए हरिजन उम्मीदवारोकी जाँच और उनका चुनाव करेगा।

यूरोपसे उन्ही मित्रने जिनका पत्र मैने एक महीने पहले 'हरिजन' मे प्रकाशित किया था, ८ पौड भेजे है। नोटोके साथ जो पत्र है उसमे वे कहते है·

> ईस्टरकी अपनी प्रेमपूर्ण कामनाओके साथ मै ८ पौड भेज रहा हूँ। यह रकम मैने हरिजनोके लिए आपको ईस्टरपर भेजनेको बचाई थी। मै इसे सीधे दिल्ली नही भेज रहा, क्योकि यह इस लायक नही है। बल्कि मैं यह चाहूँगा कि आप इसे जिस तरह ठीक समझे काममे लाये। इतनी तुच्छ रकम आपको भेजनेका मै शायद ही साहस करता, पर आप जानते है कि मैने यह रकम उस पवित्र ध्येयके लिए, जिसे मै अब अपना ध्येय बना चुका हूँ, हार्दिक प्रार्थनाओ और प्रेमके साथ बचाई है। आप अब यह जान लीजिए कि मेरी सारी प्रार्थनाओ और तपस्याओका उद्देश्य आपको सहायता देनेकी कोशिश करना है, और आपको जिन कठिनाइयो और निराशाओका सामना करना पड रहा है उन सबको मै खूब अच्छी तरह महसूस कर सकता हूँ। पिछले सोमवारको १८ मार्चका 'हरिजन' पाकर मै एक ऐसी भावनासे अभिभूत हो गया जिसे मैं समझा नही सकता। मैने वह अक आदिसे अन्ततक पढा है और मैं उसके लिए आपका आभारी हूँ। अपने बचपनके रामजी मन्दिरके सम्बन्धमे आपने जो-कुछ कहा है वह बहुत ही सुन्दर है। उस भावनासे मै स्वय भली भाँति परिचित हूँ। वह मनुष्यको जीवनमे बराबर सहारा देती रहती है।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, २९-४-१९३३

६५. आदर्श मन्दिर

हरिजन मन्दिर-प्रवेश आन्दोलनके साथ-साथ मन्दिरोके सुधारकी माँग न होती, यह सम्भव ही न था। आजका हिन्दू-मन्दिर अन्धविश्वासका अड्डा है, दूसरे "भगवान के घर" भी कमोवेश इसी तरह है। उस दिन मैने एक अमेरिकी मित्रका पत्र प्रकाशित किया था,[1] जिसमे उन्होने मुझे नम्रतासे यह समझानेकी कोशिश की थी कि मन्दिर-प्रवेश आन्दोलनसे मुझे कोई सरोकार नही रखना चाहिए। इस्लामके निष्ठावान अनुयायी एक मित्रका मेरे साथ लम्बा पत्र-व्यवहार चला, जिसमे अपने ढँगसे उन्होने भी वही कोशिश की जो अमेरिकी मित्रने अपने ढगसे की थी। निस्सन्देह, जो-कुछ उन्होने कहा उसमे काफी सार है। पर मै उनके इस निष्कर्षसे सहमत नही हो सका हूँ कि मन्दिरोके दुरुपयोगका इलाज उनके विनाशमे है।

१. देखिए खण्ड ५४, पृ० ५४-६।

ज्यादातर लोग मन्दिरोके विनाशमे नही, सुधारमे विश्वास रखते है। अभी उस दिन मैंने राजकोटमे एक आदर्श मन्दिर बनानेकी एक उत्साही योजनाका जिक्र किया था।[१] कई पत्र-लेखकोने मेरी आलोचना इस बातके लिए की है कि मैं मन्दिर-सुधारकी आवश्यकतापर जोर दिये बिना हरिजनोके मन्दिर-प्रवेशका प्रतिपादन कर रहा हूँ। निस्सन्देह, मन्दिर-सुधार आवश्यक है। पर इसमे भी सतर्कताकी आवश्यकता है। कुछ लोगोका यह खयाल है कि नये मन्दिर सभी मौजूदा मन्दिरोकी जगह ले सकते है। मै इस विचारसे सहमत नही हूँ। सभी मन्दिर एक-जैसे कभी नही होगे। मनुष्यकी विभिन्न आवश्यकताओके अनुसार उनमे सदा भिन्नता रहेगी, जैसीकि अतीतमे रही है। सुधारकको बाह्य रूपसे अधिक आन्तरिक भावनामे आमूल परिवर्तन लानेकी बात सोचनी चाहिए। यदि आन्तरिक भावना बदल गई तो बाह्य रूप अपने-आप ठीक हो जायेगा। यदि वह नही बदलती है तो बाह्य रूपमे चाहे कितना भी आमूल परिवर्तन हो जाये, वह चूनेसे पुती समाधि-जैसा ही होगा। मकबरा कितना भी सुन्दर हो, मकबरा ही रहेगा, मस्जिद तो बनेगा नही, जबकि पवित्र हुई भूमि का खाली टुकडा भी भगवानका सच्चा मन्दिर बन सकता है।

इसलिए पहला प्रश्न पुजारीका है। मेरी दृष्टिमे आदर्श पुजारी ईश्वरका भक्त होना चाहिए। वह जनताका सच्चा सेवक हो। जो लोग उससे पूजा करवायें उनका पथप्रदर्शक, मित्र और दार्शनिक बननेकी उसमे योग्यता हो। वह पूरे समयके लिए नियुक्त हो और उसकी व्यक्तिगत जरूरतें और जिम्मेदारियाँ यथासम्भव कम-से-कम हो।

उसे शास्त्रोका ज्ञान होना चाहिए। उसे केवल अपने लोगोके कल्याणकी ही चिन्ता रहनी चाहिए। मैने जो चित्र खीचा है वह काल्पनिक नही है। यह लगभग सजीव है। यह बचपनकी स्मृतिपर आधारित है। जिस पुजारीकी मुझे याद आ रही है उसका राजा और जन-साधारण सभी आदर करते थे। जरूरत पडनेपर वे परामर्श और पथ-प्रदर्शनके लिए उसके पास पहुँचते थे।

शंकालु व्यक्ति यदि यह कहे कि आजकल इस तरहका पुजारी मिलना मुश्किल है, तो उसकी बात कुछ हदतक सही होगी। परन्तु मै सुधारकसे कहूँगा कि जबतक उसे अपना पुजारी न मिल जाये, वह अपना आदर्श मन्दिर बनाना स्थगित रखे।

इस बीच, जो गुण वह अपनी कल्पनाके पुजारीमे चाहता है, वे उसे अपने-आपमे विकसित करने चाहिए। मौजूदा मन्दिरोके पुजारियोसे उसे उनकी अपेक्षा रखनी चाहिए। दूसरे शब्दोमे, अपने सौजन्यपूर्ण और निर्दोष आचरणसे उसे अपने आसपासके परिवेशको समयकी आवश्यकतासे अनुप्राणित करना चाहिए, और यह आस्था रखनी चाहिए कि उसके अपने निर्दोष आचरणसे पूरित उसका विचार अधिक-से-अधिक शक्तिशाली डाइनेमो से भी ज्यादा ताकतसे काम करेगा। एक ही दिनमे मुझे उसका परिणाम देखनेको उतावला नही होना चाहिए। विचारमे आवश्यक शक्ति पैदा होनेके लिए आचरणके कई वर्ष आवश्यक हो सकते है। एक बडे सुधारमे वर्षो या पीढियोका क्या महत्त्व है?

१. देखिए पृ० ७३-४ भी।

आदर्श मन्दिरके मेरे विचारको पाठक अब शायद समझ सकेगा। इमारती नक्शा और विवरण तो मैं उसके आगे रख नही सकता। उसका अभी समय नही आया है। परन्तु इससे मुझे निराशा नही होती, और निस्सन्देह सुधारकको भी नही होनी चाहिए। वह अपने भावी मन्दिरके लिए स्थान चुन सकता है। वह, जितना भी सम्भव हो, विस्तृत होना चाहिए। वह गाँव या नगरके बीचोबीच ही हो, यह आवश्यक नही है। वह ऐसी जगह होना चाहिए जहाँ हरिजन और अन्य गरीब लोग आसानीसे पहुँच सके, पर उसके आसपासका वातावरण गन्दा नही होना चाहिए। यदि सम्भव हो तो वह अपने इर्दगिर्दकी जगहोसे ऊँचाईपर होना चाहिए। हर हालतमे मैं खास मन्दिरकी चौकी यथासम्भव ऊँची रखवाना चाहूँगा। उस स्थानपर दैनिक उपासनाके लिए मैं अपना भूखण्ड चुन लूँगा। उसके गिर्द एक विद्यालय, एक औषधालय, एक पुस्तकालय, जिसमे धार्मिक और अन्य पुस्तके रहेगी, बन जायेगा। विद्यालय सभा और विचार-विमर्शके हॉल का भी काम दे सकता है। मैं एक धर्मशाला या अतिथि-शाला भी चाहूँगा जो मन्दिर से सम्बद्ध होगी। इनमे-से प्रत्येक एक पृथक् सस्था होगी, पर मन्दिरके अधीन होगी। इनका निर्माण, धन और परिस्थितियोके अनुसार, एक साथ भी हो सकता है और एक-एक करके भी हो सकता है। इमारते पक्की हो भी सकती है और नही भी। यदि श्रम स्वेच्छासे किया जाये, जैसाकि अच्छी तरह किया जा सकता है, तो गारे और भूसे से तुरन्त काम शुरू हो सकता है। मन्दिर अभी न बने, पर यदि स्थान मिल जाये, मन्दिरके लिए भूखण्ड चुन लिया जाये और वहाँ पहली प्रार्थना हो जाये, तो समझ लो नीव रखी गई। क्योकि 'भागवत' मे कहा गया है, जहाँ लोग एकत्रित होकर हृदयसे भगवानका नाम लेते है, वहाँ भगवान वास करते है, वही उनका मन्दिर है। इमारत, देवता, प्रतिष्ठा यह पुजारीका कार्य है। वह जब मिल जायेगा तो अपना काम शुरू करेगा। परन्तु मन्दिर पहली प्रार्थनासे ही अस्तित्वमे आ जाता है। और यदि वह प्रार्थना सच्चे नर-नारियो द्वारा की गई हो तो उस मन्दिरकी निरन्तर प्रगति सुनिश्चित है।

इतना भावी मन्दिरके बारेमे हुआ। पाठक यदि राजकोट-योजनाको पढेंगे तो देखेंगे कि मेरे आदर्श मन्दिरका बाह्य रूप उस योजनाके मन्दिरसे मुख्यतया मिलता है। वस्तुतः मेरे विचार या राजकोट-योजनामे नया कुछ नहीं है। जो-जो संस्थाएँ मैंने सुझाई है प्राचीन कालके गाँवके मन्दिरोके साथ वे प्रायः सब थी।

परन्तु हमे मौजूदा मन्दिरोका भी कुछ करना चाहिए। यदि उपासक इस चीजपर जोर दे कि पुजारी मेरे बताये आदर्शके अनुरूप हो, तो वे मन्दिर आज वस्तुतः भगवानके घर बन सकते है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २९-४-१९३३

६६. मनुष्य रचित – १

बगाल जनगणना रिपोर्ट, भाग-१ मे दलित वर्गोके बारेमे जो अश है, वह एक रोशनी डालनेवाला दस्तावेज है। फिलहाल मैं उसका केवल दूसरा और तीसरा अनुच्छेद नीचे उद्धृत कर रहा हूँ, और अभी एक-दो सप्ताह पाठकका ध्यान मैं रिपोर्टके इसी अशपर रखना चाहता हूँ।

'दलित वर्ग' नामका अर्थ

'दलित वर्ग' नाम अपेक्षाकृत हालका गढ़ा हुआ है और अनेक दृष्टिसे दुर्भाग्यपूर्ण है। यह बंगालमें आम तौरपर प्रचलित किसी वास्तविक देसी नामका अनुवाद नहीं है और न यह किसी ऐसे वर्गका ही बोधक है जिसके सदस्योंकी ठीक-ठीक व्याख्या की जा सके। यह एक ऐसा पारिभाषिक शब्द है जो स्वयं अनिश्चित है। यूरोपीय देशोंमें यह आबादीके ऐसे अंशके लिए प्रयुक्त होता है जो चिरकालसे दरिद्र है, और यह एक आर्थिक स्थितिका द्योतक है। नृतत्त्वशास्त्रकी दृष्टिसे, मनोवैज्ञानिक अर्थमें, यह ऐसी मनःस्थितिका बोध करानेके लिए प्रयुक्त किया जा सकता है जो आदिवासी लोगोंमें तब पैदा होती है जब वे किसी ऐसे आधिपत्य जमानेवाले समाजके सम्पर्कमें आते हैं जो जनजातिके परम्परागत मान्य नियमोंसे सर्वथा भिन्न और उनकी उपेक्षा करनेवाले सिद्धान्तोंपर आधारित हो। इस मनःस्थितिको विश्वसनीय ढंगसे उन तत्त्वोंमें से कम-से-कम एक बताया गया है जिनके कारण मेलेनेशिया उजाड़ हो गया। और इसका एक आकर्षक प्रतिरूप श्री जॉर्ज बर्नार्ड शॉकी रचना "बैक टू मैथुसेलाह" के उस 'उत्साहभंग' में मिलता है जिसके कारण द्वीपपर आनेवाले लोग प्राचीन सभ्यताके सम्पर्कमें आनेपर तुरन्त मर जाते हैं। परन्तु, भारतमें यह शब्द विभिन्न भागोंके आबादीके बिलकुल ऐसे स्तरके लिए तो प्रयुक्त नहीं होता, पर आम तौरपर समाजके उन सदस्योंका बोध करानेके लिए प्रयुक्त होता है जो समाजकी आम रायमें तुच्छ, नीच, बहिष्कृत समझे जाते हैं, या जो किसी भी तरहसे स्वच्छ या उच्च जातियोंके लोगोंके साथ सामाजिक और धार्मिक संसर्गके अयोग्य माने जाते हैं। यह एक ऐसी समस्याका बोधक है जो केवल हिन्दू-समाजमें ही मिलती है, अर्थात् उन हिन्दू समूहोंकी समस्या जो अपने जन्मके कारण सामाजिक सम्मान या उन आध्यात्मिक सुविधाओंसे वंचित हैं और कैसी भी वैयक्तिक श्रेष्ठतासे उन्हें कदापि प्राप्त नहीं कर सकते जो उच्च जातियोंमें जनमे सभी लोगोंका, उनकी वैयक्तिक श्रेष्ठताका विचार किये बिना, समान रूपसे जन्माधिकार है।

दलित वर्गोंका मापदण्ड

परन्तु कोई ऐसा सन्तोषजनक मापदण्ड ढूँढ़ना जिससे दलित वर्गोंकी पह-चान की जा सके, किसी भी तरह आसान काम नहीं है। समस्या स्वयं तत्त्वतः क्योंकि सामाजिक और धार्मिक है, इसलिए विभिन्न अवसरोंपर जो मापदण्ड सुझाये गये हैं वे खुद सामाजिक व्यवहार या सामाजिक पूर्वोदाहरणपर आधारित हैं। १९०१ की जनगणनामें बंगालकी जातियाँ, एक विस्तृत वर्गीकरणके आधार पर, सात समूहोंमें विभाजित की गई थी। पहला समूह केवल ब्राह्मणोंका था, क्योंकि जाति-सोपानमें वे अन्य सभी जातियोंसे ऊपर माने जाते हैं। दूसरे समूहमें वे जातियाँ रखी गई थीं जिनकी प्रतिष्ठा कभी संदिग्ध नहीं रही है और जो या तो द्विज हैं या अन्य सभी शूद्र जातियोंसे श्रेष्ठ मानी जाती रही हैं। तीसरे समूहमें तथाकथित नवशाखा, अर्थात् नौ शाखाएँ थी। इस समय निश्चय ही उनमें नौसे अधिक समूह शामिल हैं, पर उन सबकी विशेषता यह है कि वे जल दे सकते हैं और उसके पीनेसे उच्च जातियोंमें अशौच नहीं होता। इस तीसरे समूहसे नीचे चौथे समूहमें, पदच्युत ब्राह्मणों-सहित, स्वच्छ जातियाँ थीं। पाँचवें मे चौथे समूहसे नीचेकी जातियाँ थीं जिनका जल आम तौरपर स्वीकार नहीं किया जाता है। छठेमें निचली जातियाँ थीं जो गोमांस, सूअरका मांस और मुर्गीके मांससे परहेज करती हैं। सातवें समहमें वे जातियाँ आती थीं जो निषिद्ध आहार खाती हैं और जो भंगी आदिका सबसे निकृष्ट काम करती हैं। १९११ मे भारतके जनगणना आयुक्तने प्रान्तीय सुपरिटेंडेंटोंको यह आदेश दिया कि वे रिपोर्टमें हिन्दू लिखी गई ऐसी जातियों और जनजातियोंकी गणना करें जो कुछ प्रतिमानोंके अनुरूप नहीं हैं या कुछ निर्योग्यताओंकी शिकार हैं, जिससे कि "पाठक स्वयं अपने निष्कर्ष निकाल सकें।" उनसे, केवल बहुत ही छोटी जातियोंको छोड़कर, ऐसी सभी जातियोंकी सूची तैयार करनेको कहा गया जो जातिके रूपमे :

१. ब्राह्मणोंकी श्रेष्ठता स्वीकार नहीं करतीं;

२. ब्राह्मण या अन्य मान्य हिन्दू गुरुसे मन्त्र नहीं लेतीं;

३. वेदोंको प्रमाण नहीं मानतीं;

४. बड़े-बड़े हिन्दू देवताओंकी पूजा नहीं करतीं;

५. अच्छे ब्राह्मणोंको पारिवारिक पुरोहितके रूपमें नहीं रखतीं;

६. ब्राह्मणको पुरोहित ही नहीं रखतीं;

७. हिन्दू मन्दिरके भीतरी भागमें जा नहीं सकतीं;

८. (क) अपने स्पर्शसे, (ख) एक निर्धारित दूरीमे अपनी उपस्थितिसे अशौच पैदा कर देती हैं;

९. अपने मुर्दोको गाड़ती है; या

१०. गोमांस खाती है और गायका आदर नहीं करती।

इस पूछताछका उद्देश्य, यदि सम्भव हो तो, वह सामग्री प्रस्तुत करना था जिससे "हिन्दू कौन है?" इस कठिन प्रश्नका उत्तर दिया जा सके। १९१६ तक कम-से-कम बंगालमें 'दलित वर्ग' नामको कोई नहीं जानता था। परन्तु १९१६ में बंगाल सरकारसे दलित वर्गोंकी सूची तैयार करनेको कहा गया और उसने एक सूची पेश की जिसमें कुछ जरायमपेशा जनजातियाँ और आदिवासी शामिल थे, और वे कुल मिलाकर ३१ समूह होते थे। इस सूचीका उपयोग शिक्षा आयुक्तने भारतमें शिक्षाकी प्रगतिपर १९१२–१७ की अपनी पंचवर्षीय रिपोर्टके लिखनेमें किया। इस तरह शुरू किया गया यह नाम कायम रहा और कलकत्ता विश्वविद्यालय आयोग (१९१७–१९) और १९२१ की जनगणना रिपोर्ट, दोनोमें दलित वर्गोंकी सूचियाँ शामिल की गईं। परन्तु इन अन्तिम उदाहरणोमें से किसीमें भी कोई ऐसा स्पष्ट मापदण्ड नहीं रखा गया जो यह बताये कि ये समूह किस आधारपर उनमें शामिल किये गये है। भारतीय वैधानिक आयोगने, कोई सुनिश्चित मापदण्ड दिये बिना ही, इनके लिए कहा कि ये "हिन्दू धार्मिक और सामाजिक व्यवस्थाके भीतर मानी जानेवाली सबसे निचली जातियाँ हैं। . . . इनकी मुख्य विशेषता यह है कि रूढिवादी हिन्दू-धर्मके विश्वासोके अनुसार, य हिन्दू व्यवस्थाके भीतर होते हुए भी अस्पृश्य हैं, अर्थात्, ये अपने स्पर्शसे अन्य सभी हिन्दुओंके लिए अशौच पैदा करती हैं और भोजन तथा जलको दूषित कर देती हैं। किसी भी सामान्य हिन्दू मन्दिरके भीतरी भागमें इनका प्रवेश निषिद्ध हे (यद्यपि यह बात कुछ ऐसी जातियोके बारेमें भी सही है जिन्हे 'अस्पृश्य' जातियाँ नहीं कहा जाता हे)। ये न केवल हिन्दू सामाजिक और धार्मिक व्यवस्थामें सबसे नीचे है, बल्कि, थोड़े-से व्यक्तियोको छोड़कर, आर्थिक स्तरमें भी सबसे नीचे हैं ओर आम तौरपर बिलकुल अशिक्षित हैं। गाँवोमें इन्हे सामान्यतः एक पृथक् क्षेत्रमें अलग रखा जाता है, और ये प्रायः ऐसी चीजें खाती हैं जिन्हे हिन्दू-समाजका कोई भी अंग छूता नहीं है।"

बादमें मताधिकार समितिने, सरल मापदण्ड निर्धारित करनेको बाध्य होनेपर, १९११ की जनगणना रिपोर्टमें दी गई ७वी और ८वीं विशिष्टताएँ [मापदण्डके रूपमें] स्वीकार कर लीं। बंगालके लिए दलित वर्ग संघकी ओरसे ये विशिष्टताएँ इस प्रकार विस्तारसे रखी गई हैं:

(क) ऐसी जातियाँ जिनके हाथका जल तीन उच्च जातियों या नवशाखाओ (अर्थात् सवर्ण हिन्दुओ) तकको स्वीकार नहीं होता है, और रसोईघर या जल व पका हुआ भोजन रखनेके स्थानमें जिनकी उपस्थितिसे वह, उनकी धारणाके अनुसार, दूषित हो जाता है;

(ख) ऐसी जातियाँ जिन्हें किसी सार्वजनिक मन्दिरमें जानेकी अनुमति नहीं है और जिनकी वहाँ उपस्थितिसे पूजाके पदार्थ अपवित्र हो जाते हैं;

(ग) ऐसी जातियाँ जिन्हें सवर्ण हिन्दुओं द्वारा संचालित किसी होटल या भोजनालयके भोजन-कक्षमें घुसने या भोजन करनेकी अनुमति नहीं है;

(घ) ऐसी जातियाँ जिनके सामाजिक-धार्मिक संस्कार श्रोत्रिय ब्राह्मण (अर्थात् पुरोहित) सम्पन्न नहीं कराते, जबकि सवर्ण हिन्दुओंके घरोंमें इस तरहके संस्कार वही सम्पन्न कराते हैं; और

(ङ) ऐसी जातियाँ जिनकी सेवा श्रोत्रिय नापित (अर्थात् नाई) नहीं करता, जबकि हिन्दुओंके विविध सामाजिक-धार्मिक संस्कारोंमें उसकी सेवाएँ आवश्यक होती हैं।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २९-४-१९३३

६७. पत्र : बहरामजी खम्भाताको

२९ अप्रैल, १९३३

भाई खम्भाता,

तुम्हारा पत्र मिला। अब तो तुम ठीक होगे। दूधपर ही रहो तो अच्छा है। फलोंका रस जरूर ले सकते हो। यदि ग्वाला अपना दुधारू पशु तुम्हारे घर लाकर सामने दुह दे, तो वगैर गर्म किया हुआ ताजा दूध लेना अच्छा होगा। मुझे खबर देते रहना।

उस एक रुपयेकी चिन्ता किसलिए? उसे लिखनेकी भूल चन्द्रशंकरने की है; परन्तु उसका विचार भी नहीं करना। उन ५०० रुपयोंका तो नाम भी नहीं लिया है न? एक रुपयेकी बातपर अगर कोई कहे कि खम्भाता अब कंजूस या भिखारी हो गया है तो कोई हानि नहीं। क्या यही ठीक नहीं है?

बापूके आशीर्वाद

डॉ० बहरामजी खंभाता
केकुश्रू कॉटेज
लॉर्डविक पार्क, महाबलेश्वर

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६०४) से। सी० डब्ल्यू० ४३९४ से भी; सौजन्य : तहमीना खम्भाता।

६८. पत्र : नारणदास गांधीको

२९ अप्रैल, १९३३

चि० नारणदास,

तुम्हारा पोस्टकार्ड मिला। मणिलालके बिलके बारेमे देवदाससे पूछूंगा। पण्डितजी और लक्ष्मीबहन मिलकर गये है। नर्मदा भी थी। अमीनाके बारेमे सुनकर दु ख हुआ। अमीनाको पत्र लिखूंगा। वह पत्र पढना और तुम्हे ठीक लगे तो उसे दे देना। आज नही लिख पाया तो जब फुरसत मिलेगी तब लिखूंगा। इस बीच जैसे तुम्हे ठीक लगे वैसे काम चलाना। रमाबहनके बारेमे भी बताया। उसे भी लिखनेका[1] विचार तो है ही। जितना प्रेम दे सको उतना देना। किन्तु मनुष्यके प्रेमकी भी मर्यादा होती है, क्योकि प्रेम कब मोहका रूप धारण कर लेगा, इसका हमे कहाँ पता चलता है। इसलिए हमारा प्रेम धर्मके विरुद्ध नही होना चाहिए, फिर चाहे उसका रूप निर्दयता दिखाई दे। अभी मैं [2] के प्रति निर्दयतासे काम लेता हूँ, यह ऊपरसे देखनेवाला मान ले तो मै उसका दोष नही मानूंगा। . [3]को तो शायद मेरी कठोरता ही दिखाई देती होगी। पर मै क्या करूँ? कर्त्तव्यने मुझे लाचार बना दिया है। जैसा मेरे बारेमे है वैसा ही तुम्हारे बारेमे है। इसलिए निर्दयताका आरोप लगनेपर भी, मेरी डाँटकी सम्भावना होते हुए भी, तुम्हे जो धर्म लगे उसीका पालन करना।

नी०के बारेमें तुम्हारा पत्र कल मिला। उसमे वल्लभभाईका अर्थ सही निकला इसलिए उसे वहाँ भेजनेकी तैयारी कर रहा हूँ। शायद सोमवारको भेज सकूंगा, ऐसा मानकर किसी व्यक्तिको छोटी बैलगाडीके साथ साबरमती स्टेशन भेज देना। शायद डॉ० मार्गरेट स्पीगल भी साथ ही हो। इस महिलाके बारेमे तुम्हारी राय भले ही नही मिली, फिर भी मै मान लूंगा। जिस छोटी गाडीका गुजरात मेलके साथ समय मिलता है उसमें वे [अहमदाबाद] स्टेशन से बैठ जायेगी। इस बातका ध्यान रखना कि दोनोको हरिजन-सेवाके लिए तैयार करना। उन्हे या जिस किसी यूरोपीयको हम ले उसे सविनय अवज्ञासे कोई सम्बन्ध न रखने दे। इस नियमका पालन करना है। इन दोनो बहनोके बारेमे तो मै सरकारको खास तौरपर लिख रहा हूँ। इन दोनो बहनोको, और जो भी व्यक्ति आये उसे, आश्रमके नियमोका कडा पालन करना है और तुम्हे उनसे पालन करवाना है। जो कोई नियमोका पालन न करे अथवा तुम्हारे लिए कष्टदायी हो, उसे आश्रममे रखनेका मेरा कतई कोई इरादा नही है। ऐसा हो तो मुझे फौरन लिखना। दोनोकी खुराक सादी ही है। ज्वार-बाजरा पचेगा या नही, इस सम्बन्धमे मुझे शक ही है। दोनोको काफी मात्रामे फल

१. देखिए पृ० ८१।

२ और ३. साधन-सूत्रमें नाम नहीं दिये गये है।

और दूध देना पडेगा। नही तो शरीरका निर्वाह नही होगा। आजकल नी० दूध और घी नही लेती। नौ इंच व्यासकी मोटे गेहूँकी दो बार सिकी हुई कड़ी रोटी दोनो बहने बडे शौकसे विना घी मक्खनके खाती हैं। और उसे बिना किसी चीजके ही खाती है। नी० अभी दूध-घी नही लेती। उसकी खुराक है — ऐसी रोटी, पपीता, नारगी और ककडी, टमाटर, गोभी, गाजर आदि कच्ची सब्जी। किन्तु वहाँ आवश्यकता दिखाई दी तो वह दूध लेगी। उसका बालक तीन रतल दूध लेता है। वह भी खाखरा[1] खाता है और फल लेता है। बहुत समझानेपर थोड़ा कच्चा शाक ले लेता है। मिठाईका बिलकुल शौकीन नही है। कच्चा दूध बहुत स्वादसे पीता है। हर वस्तु अलग-अलग खाता है। मुझे आशा है कि कोई भी इस बालकको चाय या कॉफी मिठाई या ऐसी कोई चीज देकर बिगाडेगा नही। उसके उत्साहकी कोई सीमा नही है। उसके जैसे ही शरारती बच्चे हमारे पास आश्रममे है। परन्तु वह माँ से चिपका रहनेवाला लडका नही है। मुझे लगता है कि वह किसीके साथ भी रह सकता है। कोई भी भाई या बहन उसे झूठा स्नेह दिखाकर खाने न खानेके लिए लालच न दे, यह बहुत वाछनीय है। बाकी होना तो वही है जो उसके और हमारे भाग्यमे लिखा है। नी०को बहुत ज्यादा आशाके साथ वहाँ भेज रहा हूँ। उसे तीन या चार महीनेसे लडकीकी तरह मानता हूँ। उसके बहुत-से पत्र सँभालकर रखे हैं। उसने ससारसे कोई बात छिपाई नही है। जो-जो व्यक्ति उसके पाशमे फँसे थे उन सबके नाम भूल जानेकी मैने उसे सलाह दी है। किन्तु वह अपना एक भी दोष या विचारतक छिपाना नही चाहती। ऐसा उसने मुझे भरोसा दिलाया है और आरम्भमे मेरा विश्वास प्राप्त कर लिया है। उसकी जमानत देनेकी शक्ति मुझमे नहीं है। किन्तु मै स्वय उसपर पूर्ण विश्वास करके उससे व्यवहार कर रहा हूँ। उसे यथा-शक्ति काम देते रहना। उसमे बहुत शक्ति है। वह बहुत चंचल है। पर उसका इरादा शुभ है। यदि वह शून्यताका मन्त्र साध सकी तो बहुत-कुछ कर सकेगी। यदि उसे अपनी शक्तिका या अपने शुभ इरादेका या कामका गर्व होगा तो वह गिरेगी। अभी तो वह जितना श्रम कर सके उतना काम उसे देते रहना। ऐसा प्रबन्ध करना कि जल्दी ही हिन्दी सीख ले। उसकी ग्रहण-शक्ति अच्छी है। थोडी हिन्दी आती भी है।

मार्गरेट दूसरी तरहकी महिला है। वह ३५ वर्षकी है और कह सकते हैं कि उसके चरित्रका गठन हो चुका है। वह विदुषी है। उसकी स्मरण-शक्ति अच्छी है। किन्तु वह मदबुद्धि और जिद्दी है। उसका हृदय शुद्ध है और मुझे लगता है कि उसने पवित्र जीवन व्यतीत किया है। आश्रमसे उसे बहुत प्रेम है। किन्तु उसे बात करनेका तनिक भी ढग नही है। जबसे यहाँ आई है तबसे हर वक्त आश्रमकी ही बाते करती रहती है। जब जर्मनीमे यहूदियोके विरुद्ध आन्दोलन शुरू हुआ तब सहज ही इधर चली आई। मै नी० को जान-बूझकर बहुत उत्साहके साथ वहाँ भेज रहा हूँ। मार्गरेटको उत्साहसे नही भेज रहा हूँ। पर उसका तिरस्कार भी नहीं किया

१. खूब सिकी हुई करारी रोटी, जो गुजरातमें खाई जाती है।

जा सकता। सिर्फ आश्रममें रहनेकी खातिर आई है। उसे क्या कहा जा सकता है? जितना शरीरसे कर सकेगी उतना काम तो करेगी ही। कुछ वर्षोतक शिक्षिका रही है, इसलिए उसे अंग्रेजी पढानेका काम तो फौरन दे सकते हो। वह पढाना भी चाहती है। शिक्षिकाके तौरपर भी नी०में पढानेकी शक्ति ज्यादा है। किन्तु वह वहाँ प्रायश्चित्त करने आ रही है। इसलिए फौरन उससे काम लें या नही इस सम्बन्धमें मुझे शंका है। लेकिन तुम चाहो तो उससे यह काम ले सकते हो।

इससे ज्यादा सुझाव देनेकी आवश्यकता नही दिखाई देती।

कुसुम[1] के बारेमें पूरी तरह घबरा गया हूँ। इसके अलावा अब अंतड़ियोंके क्षयकी बात कही है। मुझे तो इन बुद्धुओंपर विश्वास नहीं है। यहाँ बैठा-बैठा तुम्हारा या कुसुमका मार्गदर्शन नही कर सकता। अभी तो हर तरहसे कुसुमके रक्षक तुम ही हो। काशी कोई निर्णय नही कर सकती। मुझे भय है कि कुसुम अपने लिए स्वयं निर्णय करने लायक नही रही। सम्बन्धी होनेके नाते तुम्ही उसके पिता हो। आश्रमवासी होनेके नाते तुमपर जिम्मेदारी है ही। मुझे तो लगता है कि आश्रमके आदर्श तथा व्यावहारिक दृष्टिसे भी कुसुमको कहीं ले जानेकी जरूरत नहीं, वहीं बैठे-बैठे जो-कुछ हो सके वह करो। कुसुम और काशीके साथ बात करनेपर तुम्हारा मन जो फैसला करे निडर होकर वही करना। मैं यहाँसे इतना ही बता सकता हूँ। तलवलकरसे कहना कि उसको अब इलाजके लिए किसी दूसरे डॉक्टरकी सलाह लेनी चाहिए। हरिभाई[2] और कानूगाके साथ बात करे, और फिर तीनोंकी जो भी राय हो उसके अनुसार इलाज करे। यदि डॉ० तलवलकर ऐसा करनेके लिए तैयार न हो तो उसकी अनुमति लेकर इन दोनों डॉक्टरोंसे सलाह करना और वे जैसा कहें वैसा इलाज करना। डॉ० शर्माके बारेमें अनुभव हो जानेके कारण यदि तुम्हारा उससे इलाज करवानेका इरादा हो और यदि डॉक्टर शर्मा हिम्मत करे तो कुसुमको उसके हाथोंमें सौंप दो। यदि वह हिम्मत करे तो जबतक उसके इलाजमें फायदा न हो तबतक वह आश्रमसे हिले नहीं। मैंने पहले जो राय दी है वह व्यावहारिक है। दूसरी सलाह व्यावहारिक नही है परन्तु मेरी प्रकृतिके अनुकूल है। तुम्हें मालूम ही होगा कि मनु मरणोन्मुख थी और मैंने डॉक्टरोंकी परवाह न कर उसे उस वक्त 'आइस डॉक्टरके'[3] हाथमें सौंप दिया था। और बहुत-से लोगोंका भी इसी तरह व्यवहार-विरुद्ध उपचार किया है। इसलिए मुझे ऐसा करनेमें किसी प्रकारका संकोच नही होता। किन्तु मैं यहाँ हूँ इसलिए मेरी रायको पूरी तरह बेकार ही मानना चाहिए। तुम्हें स्वतन्त्र रूपसे निर्णय करना चाहिए। तुम जो निर्णय करोगे मैं उसे ही मान लूँगा। जैसा डॉक्टर तलवलकर कहे वैसा ही करनेका और जीवन-मरण उसीके हाथमें सौंप देनेका निर्णय तुम करो, तो भी मुझे कोई आपत्ति नही है। डॉ० तलवलकरकी सज्जनताके विषयमें तो मुझे कोई सन्देह है ही नहीं। उसकी देखभालके बारेमें भी शंका नही है।

१. ब्रजलाल गांधीकी पुत्री।

२. डॉ० हरिभाई देसाई।

३. डॉ० एम० एस० केलकर।

अपने उपचारसे वह मुझे मोह नही सका। और दूसरे डॉक्टर उसकी तरह इलाज नही करते। किन्तु अन्तमे सब बात कॉचके ककण-जैसी कायाकी है न! उसकी डोरी किसी डॉक्टरके हाथमे नही है। उसकी डोरी तो उसी ईश्वरके हाथमे है, इसलिए हम आखिरकार डॉक्टरी इलाजको सिर्फ प्रयत्न ही मानें तो भी कोई हानि नही है। फिर हम हर सप्ताह यह गाते ही है·

पूछा लुकमाँसे जिया तू कितने रोज,
दस्ते हसरत मलके बोला चंद रोज।

और मुसलमान लोग मानते है कि लुकमान-जैसा हकीम इस ससारमे दूसरा हुआ ही नही। उस बेचारेको हार माननी पडी तो फिर तलवलकर आदिकी बात ही क्या है?

इतना अश कुसुमके लिए कदापि नही है। सिर्फ तुम्हारे विचार करनेके लिए है। काशी आदिको भी मालूम होगा तो बेकार ही डर जायेगी। और यह बिना मौतके मरने-जैसा हो जायेगा। तुम जरा भी नही घबराओगे, इस विश्वासके साथ डरा देनेवाला पत्र लिख दिया है।

पश्चिमकी इन बहनोंको शायद ही कोई पत्र लिखता हो। डॉक्टर स्पीगल अपनी मॉको पोस्टकार्ड लिखेगी। नी०को तो कही पत्र नही लिखना चाहिए। किन्तु इसके बारेमे तुम देख लेना।

बापू

[पुनश्च.]

डॉ० शर्मा, केशु[1], पारनेरकरके पत्र साथ है।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३६७ से भी, सौजन्य: नारणदास गाधी।

६९. एक पवित्र क्रिया

हरिजनोके जिस सेवकके अनुभव मैं समय-समयपर दिया करता हूँ उसीका लिखा यह रसपूर्ण किन्तु हृदयद्रावक वर्णन नीचे दे रहा हूँ।[2]

ज्यादा लिखकर इस विवरणको बिगाडूँगा नही। बहुत पुरानी कुटेवके कारण सम्भव है, किसीको यह पढकर घिन भी आ जाये। वैद्यक-ग्रन्थोमे ऐसे वर्णन भरे पडे है। इसे सीखे बिना शरीर-विज्ञान नही आ सकता। फिर मैंने इसे जो एक पवित्र क्रिया कहा है, इससे किसीके मनको चोट न पहुँचनी चाहिए। अपने-आपमे भले ही यह क्रिया गन्दी लगे, जैसे मलकी सफाई लगती है, पर जिस तरह मलकी

१. केशव गांधी, मगनलाल गांधीके पुत्र।
२. यहाँ नहीं दिया जा रहा है। पत्र-लेखकने चमड़ा कमानेकी क्रियाका वर्णन किया था।

सफाई शुद्धिके विचारसे की जाती है उसी तरह समाजको शुद्ध, पवित्र बनानेके लिए यह क्रिया है। भोले शहरी जानते नही कि ऐसी सैकडो क्रियाएँ, जिनका हम तिरस्कार करते है, ये सेवक करते है। यदि ये उन्हे न करे तो हम एक क्षण भी जीवित न रह सके।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, ३०-४-१९३३

७०. आदर्श मन्दिर

श्रीमती विजयलक्ष्मी पण्डित जब हरिजन-सेवाके लिए काठियावाड गई थी, तब राजकोटमे एक आदर्श मन्दिर बनानेकी चर्चा चल रही थी। इसका उल्लेख मै पहले कर चुका हूँ। वहाँके नामी वकील श्री परशुराम गोपाल मसूरकरने इस योजनामे प्रमुख भाग लिया है। उन्हीके दस्तखतसे योजनाके सम्बन्धमे एक निवेदन-पत्र निकला है। उसकी नीचे लिखी बाते ध्यान देने योग्य है:[1]

निवेदन-पत्रमे लिखा है कि अस्पृश्यता माननेवाले कई सज्जनोने भी यह योजना पसन्द की है और उन्होने आर्थिक सहायता देना भी स्वीकार किया है।

इस योजनाके लिए श्री मसूरकर धन्यवादके पात्र है। मुझे आशा है कि योजना सिर्फ कागजपर ही न लिखी रहेगी, बल्कि वह कार्यरूपमें परिणत हो जायेगी।

जबतक इसके लिए पर्याप्त व्यक्ति तैयार न हो जाये तबतक कार्यका आरम्भ न किया जाये, यह ठीक नही है। मेरे विचारमे आदर्श मन्दिरका आदर्श पुजारी होना चाहिए। आदर्श मन्दिर ईंट-चूनेका नही होता। आदर्श पुजारीके होनेसे मिट्टी और घासकी कुटिया भी शोभा देने लगती है और वहाँ जाकर श्रद्धालु भक्तोको शान्ति मिलती है। जहाँ आदर्श पुजारी नही होता, वहाँ सगमरमरकी मीनाकारीसे जड़ा हुआ मन्दिर भी खण्डहरके समान सूना लग सकता है। बहुत-से प्रख्यात खण्डहर आज भारतमे पड़े है। मैसूरमे कई प्राचीन स्थान पड़े है, जो किसी समय विशाल मन्दिर थे। कार्ला, अजन्ता और धारापुरीकी गुफाएँ कभी मन्दिर ही तो थी। पुजारीके अभावमे उन मन्दिरोसे भगवान लोप हो गये। और आज बहुधा यात्रियोके बदले कला-रसिक ही कला-निरीक्षणके लिए वहाँ जाते है। मुझे आशा है कि राजकोटके भावी मन्दिरके लिए कोई धार्मिक पुजारी मिल जायेगा।

पर ऐसा पुजारी तुरन्त मिले या न मिले, मन्दिरको प्रारम्भ करनेकी योजनापर तो आजसे ही अमल किया जा सकता है। पहला काम, खुले मैदानमे एक विस्तृत

१. यहाँ नहीं दी गई हैं। निवेदन-पत्र में बिना किसी भेदभावके सभी जातिके लोगोंको मन्दिरमें आनेका अधिकार देने तथा उसमें किसी तरहकी चमक-दमक या सोने-चाँदीकी सजावटकी मनाहीकी बात कही गई थी। उसमें यह भी कहा गया गया था कि मन्दिरका पुजारी अस्पृश्यतामें विश्वास न रखता हो और मन्दिरका उद्देश्य प्रौढ़ोंके लिए रात्रिशाला, पुस्तकालय, धर्मार्थ औषधालय, तथा धार्मिक शाला, आदि सुविधाओंके विशेष प्रबन्ध द्वारा हरिजनोंकी सेवा करना है।

स्थान चुननेका है। अगर भूमि वस्तीसे कुछ दूर हो, तो मै उसे अधिक पसन्द करूँगा। मन्दिरके लिए अच्छी भूमि पसन्द कर लेनेपर, उसके आसपास योजनामे वताई हुई अन्य सस्थाएँ स्थापित की जा सकती है। आदर्श मन्दिरके कार्यकर्त्ता अगर मन्दिरके चौकमे वैठकर नित्य भगवानका नाम ले, तो मेरे विचारमे तो मन्दिरकी स्थापना हो गई, क्योकि 'भागवत' के अनुसार जहाँ पाँच जने प्रेमसे मिलकर भगवानका नाम स्मरण करते है वही भगवान वसते है, और जहाँ भगवानका वास है वही मन्दिर है।

राजकोटकी योजना चाहे सफल हो या न हो, सफल जल्दी हो या देरसे हो, पर इसमे सन्देह नही कि योजना उत्तम है। थोडे-वहुत अशोमे सभी उसके अनुसार कार्य कर सकते है। जहाँ पुजारी और भक्त अनुकूल है, वहाँ चलनेवाले मन्दिर जीवित दशामे है। आज वहुत-से मन्दिर नि सत्व है उनके आसपास अन्य सस्थाएँ कायम की जा सकती है। गाँवोमे जैसे मन्दिरोका मैने सुझाव दिया है वैसे नये मन्दिरोकी स्थापना हो सकती है। जान पडता है कि प्राचीन मन्दिरोकी प्रतिष्ठा भी इसी भाँति की गई थी। हर मन्दिर भक्तकी मूर्तिमान कल्पना है। जिसकी जैसी श्रद्धा हुई वैसा ही मन्दिर वनाया गया। मद्रासके कितने ही मन्दिरोका इतिहास आज भी मिल सकता है। उन मन्दिरोके अलग-अलग 'आगम' है जिनमें मन्दिरोकी रचना, मूर्तिका आकार-प्रकार, पूजाकी विधि, शुद्धिके नियम आदि दिये गये है। ये ग्रन्थ या पुस्तिकाएँ ईश्वर-प्रणीत है, ऐसी हिन्दू संसारकी श्रद्धा है।

[गुजरातीसे]
हरिजनवन्धु, ३०-४-१९३३

७१. वक्तव्य : उपवासपर[1]

[३० अप्रैल, १९३३][2]

कुछ दिनोंसे मेरे अन्तरमे एक तूफान उठ रहा है। मैं उसके विरुद्ध संघर्ष करता रहा हूँ। 'हरिजन-दिवस' की पूर्व-संध्याको वह आवाज हठ पकड़ गई और कहने लगी : "तुम यह क्यो नही करते?" मैंने प्रतिरोध किया। पर प्रतिरोध वेकार था और इसलिए ८ मई सोमवारकी दोपहरसे २९ मई सोमवारकी दोपहरतक इक्कीस दिनका शर्तहीन और अटल उपवास करनेका संकल्प कर लिया गया।

जव मै विलकुल हालके अतीतपर दृष्टि डालता हूँ तो वहुत-से ऐसे कारण मिलते हैं जिन्होने इस उपवासको उकसाया होगा। वे कारण इतने पवित्र हैं कि वताये नही जा सकते। पर वे सव महान हरिजन ध्येयसे जुड़े है। यह उपवास किसी खास व्यक्तिके विरुद्ध नही है, और हर उस व्यक्तिके विरुद्ध है जो इसके आनन्दमें

१. "शुद्धिके लिए उपवास" शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।
२. *बॉम्बे क्रॉनिकल*, १-५-१९३३ से अ० भा० कां० कमेटी फाइल नं० ४२९ से भी।

भाग लेना चाहता है, यद्यपि फिलहाल उसे उपवास नही करना है। लेकिन, खास तौरपर यह मेरे अपने विरुद्ध है। यह आत्मशुद्धिके लिए हृदयसे की गई एक प्रार्थना है और तथा भी अधिक जागरूकता और सतर्कताके लिए सगठित करती है। परन्तु किसी भी ऐसे व्यक्तिको जो इस शीघ्र उठाये जानेवाले कदमको सराहता है, मेरे साथ उपवास नही करना है। इस तरहका कोई भी उपवास अपने-आपको और मुझे यन्त्रणा देना होगा।

फिर भी यह उपवास इस तरहके बहुत-से उपवासोकी, जो मुझसे अधिक पवित्र और योग्य व्यक्तियो द्वारा शुरू किये जाने है, तैयारी होना चाहिए। पिछले सितम्बरसे अबतक, इन सब महीनोमे, मैने पत्रो और साहित्यका अध्ययन किया है, विद्वान और अबोध, हरिजन और गैर-हरिजन स्त्री-पुरुषोके साथ लम्बी बहसे की है। यह बुराई जितनी मैने सोची थी उससे बहुत ज्यादा बडी है। यह हरिजनोको धन, बाह्य सगठन और राजनीतिक शक्ति देनेसे भी दूर नही होगी, यद्यपि ये तीनो चीजे आवश्यक है। परन्तु, कारगर होनेके लिए, ये आन्तरिक सम्पदा, आन्तरिक सगठन और आन्तरिक शक्ति, दूसरे शब्दोमे आत्मशुद्धि, के बाद या कम-से-कम साथ होनी चाहिए। वह उपवास और प्रार्थनासे ही हो सकती है। शक्तिके अहकारसे हम सत्यरूपी परमेश्वरके पास पहुँच नही सकते, पर दुर्बल और असहायकी विनम्रतासे पहुँच सकते है।

किन्तु केवल शारीरिक उपवास, यदि उसके पीछे सकल्प न हो तो, कुछ नही है। उसमे आन्तरिक उपवासकी सच्ची स्वीकृति होनी चाहिए, सत्य और केवल सत्यको ही व्यक्त करनेकी अदम्य उत्कण्ठा होनी चाहिए। अत सत्यके ध्येयके लिए उपवास करनेका विशेषाधिकार केवल उन्हे है जिन्होने उसके लिए काम किया है, जिनमे विरोधियोतकके लिए प्रेम है, जो पाशविक आवेशसे मुक्त है और जिन्होने पार्थिव धन-वैभव और महत्त्वाकाक्षाका त्याग कर दिया है। इसलिए जिस उपवासकी मैने पूर्व-सूचना दी है उसे पूर्व-तैयारी और अनुशासनके बिना कोई शुरू नही कर सकता।

शीघ्र ही आरम्भ होनेवाले इस उपवासके बारेमे कोई गलतफहमी नही रहनी चाहिए। मरनेकी मुझे कोई इच्छा नही है। इस ध्येयके लिए मै जीवित रहना चाहता हूँ, यद्यपि मुझे आशा है कि मै इसके लिए उतना ही मरनेको भी तैयार हूँ। परन्तु मुझे अपनेमे और अपने साथी कार्यकर्त्ताओमे और भी अधिक शुद्धि, और भी अधिक लगन और समर्पणकी जरूरत है। मुझे ऐसे कार्यकर्त्ता, जिनकी विशुद्धता असदिग्ध हो, और भी अधिक चाहिए। भ्रष्टताके दिल दहलानेवाले मामले मेरी नजरमे आये है। मै चाहूँगा कि मेरा उपवास इस तरहके लोगोके लिए इस बातकी पुरजोर अपील सिद्ध हो कि वे इस ध्येयको उसके अपने हालपर छोड दे।

मै जानता हूँ कि मेरे बहुत-से सनातनी मित्रो और अन्य लोगोके खयालमे यह आन्दोलन एक गहरी राजनीतिक चाल है। मेरी बडी इच्छा है कि यह उपवास उन्हे यह विश्वास दिला दे कि यह विशुद्ध धार्मिक आन्दोलन है।

यदि ईश्वरको इस शरीरसे और सेवा लेनी होगी तो पार्थिव भोजनके अभावमे भी वह इसे कायम रखेगा। वह मुझे आध्यात्मिक भोजन भेजेगा। परन्तु ईश्वर अपना काम सासारिक कारिन्दोके जरिए करता है। इसलिए अस्पृश्यता-निवारणकी अनिवार्य आवश्यकतामे विश्वास रखनेवाला हर व्यक्ति सवर्ण हिन्दुओकी ओरसे हरिजनोको दिये गये वचनको सम्यक् और पूर्णतया पूरा करनेके लिए अपनी योग्यताके अनुसार अधिकसे-अधिक काम करेगा, और इस प्रकार मुझे वह भोजन देगा जिसकी मुझे जरूरत है।

साथी कार्यकर्त्ताओको इस आनेवाले उपवाससे घबराना नही चाहिए। इससे तो उन्हे अपनेको और सशक्त अनुभव करना चाहिए। उन्हे अपनी कामकी जगहसे हटना नही चाहिए। जिन कार्यकर्त्ताओने अत्यावश्यक आरामके लिए अस्थायी रूपसे कार्यसे अवकाश लिया है, या जो बीमार है और इलाज करवा रहे है, वे अपनी जगहोपर काम करनेवाले स्वस्थ कार्यकर्त्ताओकी तरह ही अपना कर्त्तव्य पूरा कर रहे है। आन्दोलनसे सम्बन्धित मामलोपर परामर्श जबतक आवश्यक न हो जाये, तबतक किसीको भी यहाँ मेरे पास आना नही चाहिए।

मित्रोसे यह प्रार्थना करना, मुझे आशा है, आवश्यक नही है कि वे मुझसे इस आनेवाले उपवासको स्थगित करने, छोडने या इसमे किसी तरहका कोई परिवर्तन करनेका आग्रह नही करेगे। वे मेरी इस बातपर विश्वास करे कि यह उपवास, जैसा कि मैने ऊपर बताया है, शब्दश·, स्वय आया है। इसलिए, भारत और ससार-भरके मित्रोसे मेरा यह कहना है कि वे मेरे साथ ईश्वरसे यह प्रार्थना करे कि मै इस अग्नि-परीक्षामे पूरा उतरूँ, और मै चाहे जिन्दा रहूँ या मर जाऊँ, पर जिस ध्येयके लिए उपवास किया जाना है वह फूले-फले।

अपने सनातनी मित्रोसे मै यह कहना चाहूँगा कि वे यह प्रार्थना करे कि इस उपवासका मेरे लिए चाहे कुछ भी परिणाम हो, पर सत्यपर जो स्वर्णिम आवरण पड़ा है वह हट जाये।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ६-५-१९३३

७२. चर्चा : वल्लभभाई पटेलसे[1]

३० अप्रैल, १९३३

कुछ समयसे मेरे भीतर यह द्वन्द्व चलता रहा है कि उपवास २१ दिनका हो या ४० दिनका। क्या कोई अपने मनके सारे विचार किसीसे कहता है? या कह सकता है? तीन दिन हुए मेरी नीद ही उड गई। मुझे नीद न आये, यह वडी असामान्य वात है। लेकिन इन तीन दिनोमे मुझे लगातार घटोतक नीद नही आती थी। रातमें दो वजे उठकर काम करने लगता, फिर भी प्रात काल लिखवाते समय नीदका छोटा-मोटा झोकातक नही आता था। यहांतक कि आलस्य दूर करनेके लिए अपने हाथ-पांव फैलाने तककी इच्छा नही होती थी। मानो, इन तीन दिनोमे किसी महा-प्रलयकी तैयारी होती रही हो। यह कहना कठिन है कि मेरे मनमे यह व्याकुलता कवसे चल रही थी। किन्तु अनेक वार, अनेक अवसरोपर, अनशनका विचार मनमे आता और मै उसे अपने मनसे दूर करनेकी कोशिश करता रहता। रातको जव मै सोनेके लिए गया तव इसका कोई आभास नही था कि आज कुछ होनेवाला है। किन्तु रातको ११ वजे नीद खुल गई, आकाशमे तारे देखता रहा और रामनाम रटता रहा। पर मनमे वार-वार यही विचार आ रहा था कि इतना व्याकुल है तो उपवास क्यो नही करता? कर। यह मन्थन काफी देरतक चलता रहा। साढे वारह वजे बिल्कुल स्पष्ट आवाज आई . तुझे उपवास करना ही होगा। वस, निर्णय हो गया। वादमें जव यह निश्चय हुआ कि २१ दिनका करना होगा तव इस निष्कर्षपर पहुँचनेमे मुझे विल्कुल भी वक्त नही लगा कि कैदी होनेके कारण मुझे अपना यह उपवास आठ दिनके वाद आरम्भ करना चाहिए। हरिजन-सेवाकार्य इसके विना अशक्य है, इतना न करूँ तो हरिजन-कार्यमें घुन लग जायेगा और उसका नाश हो जायेगा। वस, मै उठा और तुरन्त अपना निवेदन लिखने लगा।[2] जिस समय तुम प्रार्थनाके लिए आये उस समय मैंने अपने इस निवेदनका अन्तिम वाक्य पूरा किया था।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, ७-५-१९३३

१. "ए अनेर्ड् अग्निहोत्र" से उद्धृत।
२. देखिए पृ० ७४-६।

७३. तार: सचिव, गृह-विभाग, भारत सरकारको

३० अप्रैल, १९३३

सचिव
गृह-विभाग
शिमला

ऐसे कारणोंमे जिनका सरकारसे कोई सम्बन्ध नही है और केवल हरिजन आन्दोलनसे ही सम्बन्ध है, और अर्धरात्रिके लगभग प्राप्त अन्तर्यामीके अलंघनीय आह्वानका पालन करनेको, मुझे इक्कीस दिनका शर्त-रहित और अटल उपवास करना है। वह आगामी ८ मईकी दोपहरसे शुरू होगा और २९ मईकी दोपहरतक चलेगा, जिसमे मैं केवल जल, सोडा और नमक ही लूंगा। यदि मैं बन्दी न होता और मुझे यह फिक्र न होती कि उपवासके दिनोंकी व्यवस्थाके लिए स्थानीय अधिकारियोको आवश्यक आदेश प्राप्त करनेका अवसर देना चाहिए और सरकारको सभी सम्भव उलझनोसे बचाना चाहिए, तो उपवास एकदम शुरू हो सकता था।

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट आई, जी. पी. फाइल स० २०-एक्स

७४. तार: सतीशचन्द्र दासगुप्तको

१ मई, १९३३

सतीश दासगुप्त
१५ कॉलेज स्क्वायर, कलकत्ता

आप और हेमप्रभा कार्यक्रम निर्विघ्न जारी रखे। उपवासमे ईश्वर मेरा साथी रहेगा।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल स० ८०० (४०) (३), भाग ४, पृ० ३८७

७५. तार : उर्मिला देवीको

१ मई, १९३३

उर्मिला देवी
२४ रमेश मित्तर रोड, भवानीपुर
कलकत्ता

जल्दी ही शुरू होनेवाले उपवासकी तुम्हे चिन्ता नही करनी चाहिए। पत्र क्यो नही लिखा?

बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल स० ८०० (४०) (३), भाग ४, पृ० ३८९

७६. तार : सेठ जमनालाल बजाजको

१ मई, १९३३

सेठ जमनालालजी
शैल आश्रम, अल्मोडा

जल्दी ही शुरू होनेवाले उपवासके कारण तुम्हारे कार्यक्रम और विश्राममे विघ्न नही पडना चाहिए। आशा है, स्वास्थ्य सुधर रहा होगा।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल स० ८०० (४०) (३), भाग ४, पृ० ३९१

७७. पत्र : रावजीभाई पटेलको

१ मई, १९३३

चि० रावजीभाई,

जो लोग व्रत लेनेके बाद अपनेको दुर्बल मानकर ही बैठे रहते हैं, उनके लिए भी सजाके तौरपर सोमवारसे उपवास शुरू करूँगा। उनकी निन्दा करनेके लिए नहीं बल्कि उनकी मदद करनेके लिए।

लक्ष्मीबहनने तुम्हारे विरुद्ध शिकायत की है कि तुम आश्रमकी निन्दा करते हो। इसमें कोई गलतफहमी होनी चाहिए।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९०००) से।

७८. पत्र : लीलावती आसरको

१ मई, १९३३

चि० लीलावती,

तुम्हारा पत्र मिला। उपवाससे दुःख माननेके बजाय, मनमें उत्साहका अनुभव करना। आश्रममें जो-कुछ भी करो यदि उसमें नारणदासकी अनुमति हो तो फिर चाहे कोई भी आलोचना करे उससे डरनेकी कुछ बात नहीं है। आलोचना सुनना ही नहीं। अनिच्छापूर्वक सुननी भी पड़े तो नारणदाससे कह देना; इसीसे तुम्हारा रोष दूर हो जायेगा। उपवासके दौरान जो दोष तुममें हों उन्हें निकाल देना। सभीको अपने दोष दूर करनेके प्रयत्नमें बल मिले, इसलिए उपवास किया जा रहा है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९५७३) से। सी० डब्ल्यू० ६५४५ से भी; सौजन्य : लीलावती आसर।

७९. पत्र : रमाबहन जोशीको

१ मई, १९३३

चि० रमा,

तुम्हारा पत्र मिला। डॉ० शर्माके उपचारसे हानि होती दिखाई दे तो उसे छोड देना है।

धीरूके बारेमे समझ गया।

पण्डितजी और लक्ष्मीबहनसे हुई बातसे देखता हूँ कि उनकी मान्यताके अनुसार तुम्हारा स्वभाव मिलनसार नही है। सरलता कम है और अभिमान काफी है। तुम्हे नारणदासको सताने और हो सके तो उसका अपमान करनेमे मजा आता है। यह भाषा मेरी है। उनके कहनेसे मुझे यही लगा है। इनमे जो बाते सच है, उन्हे दूर कर डालो। हड्डीका जो रोग है, सो तो सहन कर सकते है, किन्तु यह सहन नही कर सकते। हड्डीके रोगके लिए दूसरे डॉक्टरका इलाज चाहिए। परन्तु मनके रोगके लिए तो हम स्वय ही डॉक्टर है। अर्थात्, हाथ कगनको आरसी क्या। आगामी उपवासका यह परिणाम मै जरूर चाहता हूँ कि आश्रमकी सारी बुराइयाँ दूर हो जाये।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५३५०) से।

८०. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

१ मई, १९३३

चि० प्रेमा,

मेरा उपवास सब आश्रमवासियोके लिए होगा। अत तेरे लिए भी होगा, यह जानकर तू अपने सारे रोगोको निकाल फेकना।

तेरे प्रश्न[1] तेरे पास होगे, यह मानकर उनके उत्तर ही सक्षेपमे दे रहा हूँ। मेरे पास आज समयकी बडी कमी है।

१. प्रश्न इस प्रकार थे : (१) यदि अपनेसे बडी, बराबरीकी या अपनेसे छोटी कोई बहन शोर करती हो या अशिष्ट व्यवहार करती हो, समझानेपर मानती न हो और दूसरोंपर इसका खराब असर पडता हो, समय नष्ट होता हो और काम बिगडता हो तो हमें क्या करना चाहिए? (२) यदि अपने कर्तव्यका पालन करते हुए कोई व्यक्ति अपनी निजी जरूरतके कारण आश्रमके नियम अथवा अनुशासनको

(१) बड़े या छोटे कोई भी हों, उन्हें नम्रतापूर्वक न समझाया जा सके, तब मौन धारण करके हृदयसे उनके लिए प्रार्थना की जाये। ऐसा करनेसे अधीरता मिट जायेगी।

(२) यहाँ जरूरतकी व्याख्या जाननी चाहिए। जब मैं श्लोकका पाठ करवा रहा होऊँ, उस समय मुझे कोई साँप दिख जाये और उसे पकड़ना जरूरी हो, तो मुझे श्लोक-पाठके नियमको भंग करना चाहिए। इसी तरह अगर मुझे पाखानेकी सख्त हाजत मालूम हो तो भी चाहिए कि मैं उस क्रमको [थोड़ी देरके लिए] तोड़ दूँ। लेकिन प्यास लग आये तो इस जरूरतको दबाकर मुझे श्लोक बुलवाना जारी रखना चाहिए। तुझे गलेमें कुछ हो जाये तो भी तू श्लोक चालू रखे, यह शायद मूर्खतासे भी कुछ अधिक बुरा कहा जायेगा।

(३) सत्यकी खोजमें जो लोकाचार रुकावट डाले उसे तोड़ा जाये।

(४) यदि तुझे मेरे प्रति अनन्य श्रद्धा हो तो तुझे मान लेना चाहिए कि जिसे तू अन्तःप्रेरणा मानती है उसमें भूल होनेकी सम्भावना है। परन्तु अन्तःप्रेरणा श्रद्धामें भी आगे जानेवाली प्रत्यक्ष वस्तु जान पड़े, तो कुछ भी संकट झेलकर उसीके अनुसार किया जाये।

(५) इसका एकांगी उत्तर हो ही नहीं सकता।

(६) यह प्रश्न समझमें नहीं आता।

(७) स्वयं किसीको बार-बार झूठा या आलसी पाया हो तो आगे भी उसके वैसा होनेका सन्देह तो सत्यार्थीको भी होगा। परन्तु सत्यार्थी सन्देह होनेपर भी आलसी या झूठेपर प्रेम रखेगा और उसे अवसर देता रहेगा।

तोड़े तो दूसरोंपर उसका क्या असर होगा? (३) सत्याग्रहके मार्गका अनुसरण करते हुए लोकाचारका पालन कहाँतक किया जाये? (४) आपके जैसे महात्मा और मेरे बीच किसी बातपर मतभेद हो और मुझे अपना मत अन्तःप्रेरणासे सत्य जान पड़ता हो और उसे कार्यान्वित करते हुए आपकी संस्थाके आचार-धर्मका उल्लंघन होता तो सत्याग्रहीके नाते मेरा क्या धर्म होगा? (५) संस्थाके कारण व्यक्ति प्रिय लगना चाहिए या व्यक्तिके कारण संस्था? (६) किसीके प्रति हमारे मनमें बुरे विचार हैं, इसे जाननेकी कसौटी क्या है? (७) यदि कोई व्यक्ति अनेक बार झूठा, आलसी और स्वार्थी पाया गया हो तो स्वभावतः जब भी उसकी शिकायत की जायेगी हमें उसके विषयमें सन्देह होगा। यह बात सत्याग्रहीके लिए ठीक होगी या नहीं? (८) सादे जीवनकी सीमाएँ क्या हैं? अपनी साड़ीपर कसीदाकारी करना, फैशनेबल ब्लाउज पहनना, हाथ या गलेमें फूलोंकी माला पहनना, सुन्दर चप्पलें पहनना, आदि बातोंमें कलारसिकता मानी जाये या आश्रमके सिद्धान्तोंका उल्लंघन? (९) आश्रममें कोई किसी दूसरे व्यक्तिकी टीका करे और स्वयं उसी दोषका आचरण करे, ऐसी स्थितिमें यदि जिस व्यक्तिकी टीका की गई है वह पहले व्यक्तिको उलाहना दे या उसके दोष बताये तो क्या उसका वह आचरण निन्द्य या हिंसक माना जायेगा? (१०) आश्रममें आनेवाले लोग अपने मनमें भिन्न-भिन्न उद्देश्य लेकर आते हैं, अतः क्या हमें उनके जीवनको अलग-अलग ढंगसे देखना चाहिए?

(८) इसमें सबके लिए कोई एक नियम नहीं हो सकता। प्रत्येकके मनपर निर्भर है। परन्तु कलाके बहाने सादगीका त्याग नहीं किया जा सकता।

(९) एक-दूसरेको जवाब देना निन्द्य है। 'तू भी ऐसा ही है', यह कहनेमें हीनता है।

(१०) यह वस्तु अहिंसाके गर्भमें ही निहित है।

यह मानकर कि तेरे पास अपने प्रश्नोंकी नकल रखनेका समय न रहा हो, प्रश्न मैं साथमें भेज रहा हूँ।

दो बहनों[1] को भेज रहा हूँ। संकोच तो बहुत है, परन्तु भेजनेका धर्म समझकर भेज रहा हूँ। आशा है, वे तेरा काम बढ़ायेंगी नहीं, बल्कि तेरे काममें मददगार ही होंगी। उनके लिए हिन्दी सीखनेकी सुविधा कर देना।

मैं जरूर यह चाहता हूँ कि सुशीला[2] अपनी इस बारकी छुट्टी आश्रममें बिताये। तुम दोनोंको इससे आराम मिल सकता है। उद्यमका परिवर्तन ही आराम है, यह अंग्रेजी कहावत जानती है न? इसमें काफी सत्य है। इसे लिखते-लिखते मनमें उठ आनेवाला खयाल ही समझना। सुशीलाने कोई खास कार्यक्रम बना रखा हो तो मेरी इच्छाकी खातिर उसे रद्द करनेकी बिलकुल जरूरत नहीं है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३४२) से। सी० डब्ल्यू० ६७८१ से भी, सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक।

८१. पत्र : जमनाबहन गांधीको

१ मई, १९३३

चि० जमना,

तुम्हारे सुन्दर पत्रने मुझे निश्चिन्त कर दिया है। नारणदासको तुम्हारा प्रमाणपत्र मिल गया इसलिए अब मुझे दूसरेकी आवश्यकता ही नहीं। किन्तु प्रमाण-पत्र कौन दे सकता है, यह मालूम है न? जिसे खुद खाना बनाना न आता हो वह रसोइयेको क्या प्रमाणपत्र दे सकता है? इस दृष्टिसे जाँच करते हुए तुममें योग, समता और एकाग्रता नारणदाससे ज्यादा होनी चाहिए। यदि ऐसा हो तो मुझे एकके बदले दो स्थितप्रज्ञ मिल गये। ऐसा ही है क्या?

डॉक्टर पुरुषोत्तम चला गया तो क्या मैंने डॉक्टर शर्माको नहीं भेजा? उसने तुम्हें काफी रंगीन कर दिया लगता है।[3] इस इलाजसे फायदा न हो पर नुकसान भी

१. मार्गरेट स्पीगल और नी०, देखिए पृ० ६९-७१ भी।
२. सुशीला पै।
३ शायद रंगीन बोतलोंमें भरे पानीको धूपमें रखकर उससे इलाज किया जाता था।

है, तो नही होता। श्रद्धापूर्वक करते जाना। भोजनमे जो फेरफारका सुझाव दिया वह करके देखो। यदि परिणाम अच्छा नही होगा तो वही छुडवा देगा। केशुको जीत सको तो जीतना।

बापू

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८७८) से; सौजन्य . नारणदास गाधी।

८२. भेंट : पत्र-प्रतिनिधियोंको[१]

१ मई, १९३३

प्रतिनिधियोंका लगभग पहला ही प्रश्न यह था कि क्या किसी भी परिस्थितिमें उनके लिए अपना उपवास छोड़ना सम्भव हो सकता है। गांधीजी ने जवाब दिया:

जहाँतक मनुष्यके लिए सम्भव है, मै यह कह सकता हूँ कि मेरे उपवास छोडनेकी कोई सम्भावना नही है।

इसके बाद उनसे उनके वक्तव्यके बारेमें और प्रश्न किये गये। यह पूछनेपर कि उनके वक्तव्यमें "भ्रष्टताके दिल दहलानेवाले मामलों" का जो उल्लेख है, क्या वे उसपर प्रकाश डाल सकते हैं, गांधीजी ने कहा कि ऐसा करना उनके लिए सम्भव नहीं है। पर उन्हें किसी खास व्यक्तिसे कोई शिकायत नहीं है। और यदि है भी तो वह अपने-आपसे ही है। गांधीजी ने आगे कहा:

उस रात मै जब सोनेके लिए बिस्तरपर गया तो मेरे मनमे रत्ती-भर भी यह भाव नही था कि मै इस तरहका कोई कदम उठाऊँगा। इस फैसलेके लिए किसी भी एक घटनाको जिम्मेदार नही ठहराया जा सकता। पर, निस्सन्देह, यह काफी लम्बे अरसेमे घटी बहुत-सारी घटनाओके इकट्ठा हो जानेका परिणाम है। पहले मै उनकी तरफसे अन्धा था, यह बात नहीं है। वे मेरे मनपर अपना मूक और अचेतन प्रभाव डाल रही थी।

एक और प्रश्नका उत्तर देते हुए गांधीजी ने कहा:

मुझे ऐसा लगता है कि मेरा यह उपवास इस तरहके बहुत से उपवासोका मात्र अग्रदूत है, और यदि मै इसमे बच जाता हूँ तो मै एक और उपवास शुरू करनेका आह्वान अनुभव कर सकता हूँ।[२]

१. साधन-सूत्रमें बताया गया था: "गांधीजी पत्रकारोंसे जेलकी उसी कोठरीमें मिले जहाँ पिछले कुछ दिनोंसे उनका दफ्तर बना हुआ था। आमका पेड़ वहाँ बढ़ती हुई गर्मीसे कोई खास बचाव नहीं कर पाता है।"

२. अगला अनुच्छेद हरिजनबन्धु, ७-५-१९३३ से लिया गया है, जिसमें लिखा था कि गाधीजी एक हरिजन द्वारा पूछे गये प्रश्नोंका उत्तर दे रहे थे।

इन पूरे इक्कीस दिनोंमें मैं रामरस[1] पीऊँगा। यदि वह मुझे जीवित नहीं रखता है, तो मोसम्बीका रस ही कैसे सहायता कर सकेगा? अस्पृश्यताके रावणको जो नष्ट करना चाहता है, उसे जब-तब रामरस लेते ही रहना चाहिए। यदि राममें मेरी भक्ति सच्ची है – और निश्चय ही है – तो वह मेरे शरीरको नष्ट नहीं होने देगा, क्योंकि मेरी अभी भी यह इच्छा है कि वह इस शरीरको, जो उसके लिए समर्पित है, कायम रखे। परन्तु आप हरिजनोंको एक बात याद रखनी चाहिए। मैंने जो अचूक इलाज अपनाया है वह आपको भी अपनाना चाहिए। यह बात समझ लीजिए कि आपके लिए भी कोई और रास्ता नहीं है। 'स्पृश्य' हिन्दुओंको जो उनकी इच्छा हो कहने और करने दीजिए। आपको अपनी ओरसे अपनी देह और आत्माको निर्मल करना है और सच्चे हरिजन बनना है।

आपका और मेरा रक्षक ईश्वर है।[2] मुझे अपना रक्षक मानना ईश्वरनिन्दा होगी। मैंने आपसे कहा था कि ईश्वर-प्रेम जीवनको बल प्रदान करता है। पर आप अगर इजाजत दें तो मैं यह कहना चाहूँगा कि शरीर नष्ट भी हो जाये, तो क्या है। क्या मृत व्यक्ति काम नहीं करते रहते हैं?

गांधीजी ने आगे कहा :

इस समय जन-साधारणके लिए यह समझना आवश्यक है कि सितम्बरके उपवास और इस आनेवाले उपवासमें बहुत ही महत्त्वपूर्ण अन्तर है। सितम्बरका उपवास शर्त-सहित था, वह एक खास उद्देश्यके लिए किया गया था। परन्तु यह किसी ठोस उद्देश्यके लिए कतई नहीं है।

अतः यह उपवास कभी भी किया जा सकता है और यह उस ढंगका है जैसा कि हिन्दू-धर्ममें आम है। जब भी कोई महान सुधार और पुनरुत्थान हो रहा होता है, तो लोग पवित्रताके लिए और अपने प्रयोजनको तेजीसे आगे बढ़ानेके लिए उपवास करते हैं। इस तरहका उपवास सर्वत्र अपने-आपमें एक अच्छी चीज माना जाता है। अपना औचित्य यह आप है, और इससे अधिक किसी गुणका यह दावा भी नहीं करता। जिस कशमकशमें मैं रहा हूँ उसके बिना भी मैं इसे कर सकता था। पर शायद मुझमें साहस नहीं था।

भारी जिम्मेदारीने अपने भारसे मुझे दबा रखा था। इसलिए कई बार प्रेरणा मिलनेपर भी मैं उसका प्रतिरोध करता रहा। धार्मिक आन्दोलनकी सफलता उसके प्रवर्तकोंके बौद्धिक और भौतिक साधनोंपर नहीं, बल्कि केवल आध्यात्मिक साधनों पर निर्भर होती है, और उपवास वह सुप्रसिद्ध पद्धति है जिससे इन साधनोंकी वृद्धि होती है। हर उपवास अभीष्ट परिणाम पैदा नहीं करता।

१. यह बात एक हरिजनके इस सुझावके उत्तरमें कही गई थी कि उपवासके दिनोंमें गांधीजी को रोज मोसम्बीका रस पीते रहना चाहिए।

२. यह एक हरिजनके इस कथनके सन्दर्भमें कहा गया था कि गांधीजी की मृत्युसे हरिजनोंका कोई रक्षक नहीं रहेगा।

अपने वक्तव्यमें मैंने कुछ शर्तें रखी हैं। मेरे वक्तव्यमें यह दावा किया गया है, और धार्मिक आन्दोलन जिन्होंने चलाये हैं उनका भी यह दावा रहा है कि बौद्धिक, भौतिक और अन्य चीजें आध्यात्मिक पूंजीकी अनुगामी है, वे कभी भी उससे स्वतन्त्र नहीं होनी चाहिए।

यह पूछनेपर कि क्या उन्हें इस २१ दिनके उपवासमें बचनेकी आशा है, गांधीजी ने पुनः विश्वास दिलाते हुए कहा :

अरे, दस वर्ष पहले २१ दिनका उपवास करके भी मैं बच गया था।[1] मुझसे भी दुर्बल लोगोंने इससे लम्बे उपवास किये हैं और वे जीवित रहे हैं। आध्यात्मिक शक्तिमें बड़ी-बड़ी सम्भावनाएँ हैं।

इसपर गांधीजी को यह बात याद दिलाई गई कि सितम्बरके उपवासमें छः दिनके अनशनमें ही आपके शरीरका लगभग ढेर हो गया था। परन्तु उन्होंने विनम्रतासे उत्तर दिया :

चमत्कारोंका युग अभी समाप्त नहीं हुआ है।

इस अग्नि-परीक्षामें पूरा उतरनेकी अपनी क्षमताके बारेमें वे बहुत ही आशावान थे। यह पूछनेपर कि यदि सरकारने उन्हें रिहा कर दिया तो क्या वे पूनामें रहेंगे, गांधीजी ने जवाब दिया कि उनके लिए यह कहना बहुत ही कठिन है, क्योंकि रिहाईकी उन्हें आशा नहीं है।

यह सुझानेपर कि संयुक्त प्रवर समितिकी बैठकके समय किया गया उनका यह उपवास राजनैतिक उद्देश्योंसे प्रेरित समझा जाएगा, गांधीजी ने जवाब दिया कि उपवासका संकल्प उन्होंने स्वेच्छासे नहीं किया है। यह उनकी योजनामें नहीं था। यह उनकी अपनी सूझ नहीं है। उस रात भी उन्होंने इसका प्रतिरोध करनेकी कोशिश की, पर वे कर नहीं सके। फैसला करनेसे पहले तीन दिन वे ठीक से सो नहीं सके थे। उन्हें क्या हो रहा है, यह उन्हें पता नहीं था। निश्चय ही वह अजीर्ण नहीं था। लेकिन शनिवारकी रातको जब उन्होंने फैसला कर लिया, तो उन्हें अच्छी नींद आ गई।[2]

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २-५-१९३३, *हरिजनबन्धु*, ७-५-१९३३ से भी।

1. सितम्बर-अक्टूबर १९२४ में; देखिए खण्ड २५।
2. टाइम्स ऑफ इंडिया के प्रतिनिधिसे बातचीतके लिए देखिए परिशिष्ट १।

८३. तार : मीराबहनको[1]

[२ मई, १९३३][2]

बा से कहना कि उसके पिताने उसपर एक ऐसा साथी थोपा है कि कोई और स्त्री होती तो उसके भारसे मर गई होती। उसका प्रेम मेरे लिए अमूल्य है। उसे अन्ततक साहसी रहना चाहिए। तुमसे मुझे उसके सिवा कुछ नहीं कहना है कि ईश्वरने तुम्हें मुझे दिया, उसके लिए मैं उसका कृतज्ञ हूँ। मुझे ईश्वरने जो यह सबसे नया काम सौंपा है, उसपर बराबर प्रसन्न रहकर तुम्हें अपनेको बहादुर सिद्ध करना चाहिए।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२७१) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९७३७ में भी।

८४. तार : नारणदास गांधीको

२ मई, १९३३

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती

नी०, आशा है, पहुँच गई होगी। परशुराम बच्चों सहित अगली गाड़ीसे ही चल दे और मुझसे मिले। उसे पूनाका किराया और चार रुपये और दे देना। उपवाससे किसीको भी चिन्तित नहीं होना चाहिए, बल्कि आत्मशुद्धि, और ज्यादा त्याग और समर्पणके लिए शक्ति ग्रहण करनी चाहिए।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू/१) से, एस० एन० २११३२) से भी।

१. उनके २ मई, १९३३ के तारके उत्तरमें। उसमें लिखा था : "उपवासकी खबर आज ही मिली। बा मेरे द्वारा यह कहलाना चाहती हैं कि उन्हें गहरा धक्का लगा है, इस फैसलेको वे बहुत ही गलत समझती हैं, पर आपने जब किसी औरकी बात नहीं सुनी तो आप उनकी भी नहीं सुनेंगे। वे अपनी हार्दिक कामनाएँ भेजती हैं। मैं स्तम्भित रह गई हूँ। परन्तु जानती हूँ कि यह ईश्वरकी आवाज है, इसलिए वेदनाके बीच भी मैं प्रसन्न हूँ। हार्दिक कामनाएँ और प्रेम। लिख रही हूँ।"

२. एस० एन० २१११० से, मूल प्रतिपर पहुँचकी तारीख ४ मई, १९३३ दर्ज है।

८५. तार : घनश्यामदास बिड़लाको

[२ मई, १९३३][1]

घनश्यामदास बिड़ला
ग्वालियर

तुम्हारा तार[2] पाकर प्रसन्नता हुई। मेरी पुरजोर सलाह है कि तुम इलाजके लिए कलकत्ते चले जाओ। ठक्कर यदि आवश्यक समझें तो उन्हें आने दो।

बापू

अंग्रेजी प्रति (सी० डब्ल्यू० ७९३६) से; सौजन्य : घनश्यामदास बिड़ला। एस० एन० २११२३ से भी।

८६. पत्र : नारणदास गांधीको

१/२ मई, १९३३

चि० नारणदास,

तुम्हारा एक पत्र आज भी मिला है। भाई डंकनके पत्रके साथ मिला है। डंकनको भी अनुमति प्राप्त कर लेनी चाहिए थी, परन्तु उसे इसकी खबर कैसे हो सकती थी। अच्छा यही है कि जो नये-नये आये हों उनको तथा पुराने लोगोंको दे सकनेके लिए नियमोंकी ब्यौरेवार सूची रहे। नियम गुजरातीमें लिख डालो तो यहींसे अंग्रेजी अनुवाद करके भेज दूंगा या डंकन खुद ही यह काम कर ले। वह कुशल तो है ही।

१. एस० एन० २११२३ से। मूल प्रतिपर पहुँचकी तारीख ३ मई, १९३३ दर्ज है।

२. घनश्यामदास बिड़लाके दिल्लीसे भेजे गये २ मईके तारके उत्तरमें। उसमें लिखा था: "समाचार अभी अभी मिला। मुझे पूर्ण विश्वास है कि ईश्वरकी कृपासे आप इस अग्नि-परीक्षाको निश्चय ही सफलतापूर्वक पार कर जायेंगे। मैं आपको यकीन दिलाता हूँ कि सितम्बरके उपवासके बाद सब तरफ आश्चर्यजनक जागृति आ गई है, जिससे आपको अत्यन्त सन्तोष मिलना चाहिए था। फिर भी मुझे लगता है कि इस उपवाससे केवल विशुद्ध कल्याण ही होना है, यद्यपि व्यक्तिगत रूपसे मुझे थोड़ी घबराहट जरूर है। आशा है, यदि कोई विशेष सूचना हुई तो आप मुझे लिखेंगे। कलकत्तेका कार्यक्रम रद करने और लगभग ८ तक पूना पहुँचनेकी सोच रहा हूँ। ठक्कर बापा यहाँ हैं।"

इतने सारे लोग एक आदमीके पीछे पड जाये, यह तो बहुत खराब बात मानी जायेगी। तुमने इस सम्बन्धमे कह ही दिया है इसलिए ज्यादा नही लिखता। तो भी डंकनको लिखा पत्र देखना। उसका सार सबको सुनाना।

टाइटसकी रिपोर्ट पढ ली है। उसके सुझाव मुझे पसन्द आये है। उसका पूरा हिसाब भी तुम्हारी देखरेखमे अलग रहे तो सचमुच अच्छा रहेगा।

उसे कोई सहायक दिया जाना चाहिए।

दूध ले जानेके लिए एक खच्चर या टट्टू ले लिया जाये तो कोई बुराई नही। मुझे तो लगता है कि मोटरमे ही लाना पडेगा।

उसने दो मशीने लेनेको कहा है, वह भी मुझे ठीक लगता है।

बीजका व्यापार तो मेरी समझमे ही नही आया था। इसलिए उसका सुझाव मुझे अच्छा लगा है।

क्या अब गोमूत्रका उपयोग किया जाता है? दूधके लिए जो गाडी बनानेको कहा है वह तो अवश्य बननी चाहिए। इन सबपर विचार कर लेना और जो-कुछ करने लायक हो उसपर अमल करना। जेकीबहनके लडके नही आयेंगे। वे वहाँ पढ रहे है। महालक्ष्मीका पोस्टकार्ड आज आया है। उसने लिखा है कि वह स्वयं दो महीनेके अन्दर छूट जायेगी, उसके बाद प्रबन्ध करेगी।

इतना लिखनेके बाद ही हाथ थक गया है इसलिए अब बाकी सब संक्षेपमे निबटाना होगा।

पण्डितजी और लक्ष्मीबहनके साथ लम्बी बात हुई। उसमे जो काम न हो रहा हो तो तुरन्त करना। यदि आम तौरपर रोटी कच्ची ही रहती हो तो बेकरी बन्द कर देनी चाहिए। उसमे काम करनेवालोको बदलना नही चाहिए। भट्ठीमे से आँच निकलती हो तो उसमे कुछ कमी है। आंच निकलनी तो नही चाहिए। आलू या कद्दूका उपयोग तरकारीके रूपमे बन्द कर देना चाहिए। और उन्हे रोटीके बदले ले।

आवश्यक सब्जी आश्रममे घाटा उठाकर भी पैदा करनी ही चाहिए। टमाटर और कुछ अन्य सब्जियाँ बारह महीने उगानी चाहिए। आखिरमे उसमे कोई घाटा नही होगा। बीमारोंके सिवा और किसीके लिए भी बाजारसे सब्जी नही आनी चाहिए। मै कच्चे दूध और गेहूंको पूर्ण खुराक मानता हूँ। और कुछ भी न हो तो गुजारा चलेगा। सभी चीजे रोज मिलनी ही चाहिए, यह कोई पक्की बात नही हो सकती। कभी-कभी सिर्फ दूध भी काफी है और कभी-कभी सिर्फ रोटी ही। फिर किसी-किसी दिन एक ही पदार्थ लेना शरीर और आत्माके आरोग्यकी दृष्टिसे आवश्यक है। मै इनके लिए दिन तय नही करूँगा। जैसी स्थिति हो वैसा कर ले। जिस दिन दूध काफी ज्यादा पडा हो उस दिन दूध ही परोसकर रसोई बन्द रखे। जिस दिन आलू आदि ज्यादा पडे हो, उस दिन रोटी बन्द कर दे।

मै तो जिस दिन सब्जी न हो उस दिन पेडसे इमली तोडकर उसे नमकके साथ मिलाकर चटनीकी तरह परोस दूं। रोज इमली खानेसे नुकसान हो सकता है।

कभी-कभी खानेसे फायदा ही होता है। किन्तु स्वादके लिए कोई उसका एक टुकड़ा भी न तोड़े।

प्रार्थनाके सम्बन्धमें तुम्हारी राय मिल जानेपर ज्यादा लिखूँगा।

रसोईमें व्यक्ति अपने-अपने भोजनके हिसाबसे बैठें तो अच्छा है। भात खानेवाले एक पंक्तिमें, साधारण खुराक खानेवाले दूसरी पंक्तिमें और मेहमानोंको पहले ही पूछ ले तो चलेगा। जितनी चीजें बनी हों उन्हें खानेके समय पास रख दे। जो पसन्द आयें वे दे दे। मैं जानता हूँ, यह कुछ अटपटा है।

आठ तारीखसे मेरा २१ दिनका उपवास शुरू होगा। यह बात पत्रके वहाँ पहुँचनेतक पुरानी हो चुकी होगी। इसमें कोई दुःखी न हो, बल्कि सब अधिक जागृत हो जायें।

आश्रमसे मुझे बहुत बड़ी आशाएँ हैं। आश्रममें बहुत बुराइयाँ हैं। उनको दूर कर ही देना चाहिए। यह उपवास सिर्फ साथियोंके लिए होगा, इसलिए उसमें आश्रम तो आ ही गया। हमें जितनी तपश्चर्या करनेकी जरूरत है उतनी आश्रममें हो तो मैं नाच उठूँ और जान लूँ कि समय आनेपर सभी नदीके तटपर योगारूढ़ होकर अनशन करेंगे। यह उपवास दूसरे ऐसे उपवासोंकी तैयारी ही है।

इतना सब करें

प्रार्थनामें आकर या तो लीन हो जायें या न आयें अर्थात्, जो शरीर-मात्र वहाँ लायें और मन दूसरी जगह रखे वह सत्य-भंग करता है। ऐसा करनेसे तो यही अच्छा है कि उसे जो करना है करे या ज्यादा अच्छा है कि वह व्यक्ति आश्रम छोड़ दे। कोई किसीकी निन्दा पीठ पीछे न करे। मनमें विकार उदित हो तो दूसरोंको नहीं तो तुम्हें बता दे या चिट्ठी लिखे। विकारोंको वशमें न कर सके तो आश्रमसे चले जाये। जिन्हें आश्रमके सभी नियम पसन्द न हों उन्हें आश्रम छोड़ ही देना चाहिए। इस शुद्धिकालमें एक मर्यादा निर्धारित की जा सकती हो तो कर देनी चाहिए। बीमारीका जो इलाज आश्रममें हो सके उससे ही सन्तोष करें। इतना न किया जा सके तो ज्यादा-से-ज्यादा यही करें कि बीमार आश्रमकी दूसरी शाखाओंमें चला जाये।

कोई किसी कामसे जी न चुराये, किसी चीजकी चोरी न करे, कुछ छिपाये नहीं। जो-कुछ खानेको मिले उसीसे सन्तोष करे। जो-कुछ खाये उसे औषधिके रूपमें। इतना याद रखें कि दाल, भात या कद किसीकी आवश्यकता नहीं है। मसाले, चीनी, मिठाई अनावश्यक हैं। गेहूँ, ज्वार या बाजरा और कच्चा दूध सम्पूर्ण खुराक है। उसके साथ समय-समयपर कोई सब्जी अथवा कोई फल मिलता रहे तो काफी है।

एक-दूसरेसे द्वेष या बुराईको पाप समझना चाहिए। सभी लोग हरिजनोंकी कुछ सेवा करें। संक्षेपमें, इसी आशासे यह उपवास करूँगा कि उसके दौरान आश्रम सभी आध्यात्मिक रोगोंसे मुक्त हो जायेगा। यदि आश्रम इतना न कर सके तो किसी औरसे मुझे कुछ भी आशा करनेका अधिकार नहीं है। यह सबको पढ़ाना। नी० और मार्गरेटको भेजनेका निर्णय किया है। यदि कल तुम्हारे पत्रमें इसके विरुद्ध कुछ हुआ तो देखूँगा। इन बहनोंको जो कपड़े या बर्तन जरूरी हों, वे दे देना। उनके

लिए पाखानेकी सुविधाका भी खयाल रखना। भोजनके लिए जो विशेष प्रबन्ध करना पड़ेगा उसके अतिरिक्त और कुछ विशेष करनेकी जरूरत नहीं। बाकी सब बातें लिख चुका हूँ। लड़का, बच्चोंमें मिल जायेगा। बुरी आदतें न सीखे इतना ही काफी है।

जमनाने ही तुम्हें प्रमाणपत्र दिया है, इसलिए मैं सोचता हूँ कि तुम चिन्ता नहीं करोगे। किसीको यहाँ दौड़ने न देना।

बापू

[पुनश्च]

इकनकी दोनों बहनोंका इतिहास बनाना और इन सम्बन्धमें उनसे जैसी मददकी आवश्यकता हो वैसी लेना।

२ मई, १९३३

इतना तो कल लिखा था, लेकिन कामकी धमाचौकड़ीमें भेज नहीं सका। नी० पहुंच गई होगी। तुम्हारी डाक कल भी मिली थी। इसे प्रार्थनासे पहले शुरू किया है। सवा बजेसे उठा हुआ हूं।

तुम्हारा पत्र हृदयद्रावक है। मेरी निर्दयताकी सीमा नहीं। आज तार[1] भेजा है सो मिला होगा। परशुरामको लौटती डाकसे रवाना कर देनेकी बात है। उसे रवाना कर दिया होगा। लड़कोंको भी बुलाया है। उसे पूनाके लिए गाड़ीका किराया और चार रुपये देनेके लिए लिखा है। ऐसे लोगोंको अपने पास रखनेकी कोई जरूरत नहीं, क्योंकि उन्हें सुधारना हमारी शक्तिसे बाहर है। मेरे समक्ष ऐसे व्यक्तिसे शायद कुछ काम भी लिया जा सके। परन्तु वह किसी कामका नहीं है। ऐसा ही कोई और व्यक्ति हो तो उसे भी छुट्टी दे दो। पूरी सफाई कर सकते हो। फिलहाल जो ज्ञानपूर्वक नियमोंका पालन करते हैं वही रहें। मुझे तो यही आशा है कि जो वहां पूर्णतया योग्य बन जायेंगे वे अवसर आनेपर अनशन करने बैठेंगे. ऐसा समय पास आता दिखाई दे रहा है। यह उपवास इसी प्रकारका है। गन्दगी दूर करना इस उपवासका आरम्भ है। सबसे पहले यह गन्दगी आश्रम ही नहीं दूर करेगा तो कौन करेगा? नमकके पीछे दौड़-धूप करनेमें यह ज्यादा कठिन है। किन्तु जो अपनेको बलिदान करनेकी योग्यता प्राप्त करनेको उत्सुक हैं वे ही वहां रहें।

वहाँ जो पुराने परिवार हैं वे इसमें सहयोग देनेके लिए तैयार न हों तो उनके लिए तुम्हें विचार कर लेना होगा। नये परिवारोंको लेना बन्द कर सकते हो। जो हैं उनमें से सिर्फ कुछ सीखनेकी खातिर आये हुए लोगोंको, यदि वे निराधार न हों तो, छुट्टी दे सकते हो। जो निराधार हैं इसलिए आश्रममें रह रहे हैं, उनको रहने दें। यहाँ बैठे-बैठे जो विचार मनमें आते हैं उनमें से इन्हें भी समझना। करना वही जो तुम्हारा मन माने, जिसे तुम समझ सको और जितनी तुममें शक्ति हो। मैंने तो तुम्हें छूट दे ही दी है। आगामी २१ दिनोंमें तुमपर व्यवस्थाका असह्य बोझ नहीं

१. देखिए पृ० ८७।

होना चाहिए। किसीको खुश करनेकी आवश्यकता नहीं होनी चाहिए। जो पुराने परिवार वहाँ रहते हैं और जो इससे साथ न दे सकें उन्हें अलग खाना पकानेकी छूट दे देना। सोच-समझकर उनका वेतन बाँध दिया हो तो उसके अनुसार काम चलायें और उसीमें से खर्च करें। और ज्यादा खर्च करें तो अगले वेतनसे काटें। जो विभाग अब चलाना ही है और उसके लिए पूरा समय काम करनेको कोई व्यक्ति न मिले तो नौकर रखकर काम चलायें अथवा उनका काम उतना कम कर दें। मुझे लगता है कि ऐसा करनेकी जरूरत न ही होनी चाहिए। किन्तु इस सम्बन्धमें मैं निर्णय नहीं कर सकता। सबको बैठाकर सारी बातपर विचार कर लेना। इसमें जोर-जबर्दस्तीकी तनिक भी गन्ध न आनी चाहिए। आश्रमकी स्थापनाके मूलमें ही इस तरह अपने-आपको मिटा देनेकी बात रही है। मैंने कितनी बार समझाया है यह कितने लोगोंको याद होगा। इसलिए मैंने कोई नई बात नहीं कही है। जो सहमत हों उन्हें समझाना चाहिए कि सब-कुछ त्यागकर बैठनेकी तैयारी होते हुए भी हमें अनन्त कालतक काम करना है यह जानकर उन्हें अपने-अपने काममें लीन रहना है। जिस तरह यमका बुलावा आना है यह जानते हुए भी हम उसका विचार किये बिना काम करते जाते हैं वैसा ही यहाँ भी है। यहाँ सिर्फ इतना ही ज्यादा है कि हमारी तैयारी इच्छापूर्वककी जानी चाहिए।

इकन मेहमान है इसलिए उसे छूट है। किन्तु उसका अर्थ मेरे साथ स्वतन्त्र रूपसे व्यवहार तो नहीं है। तिलकम दुखी मनुष्य है उसपर भी हरिजन है और अन्य दृष्टियोंसे योग्य है। मुझे तो दोनों व्यक्ति बहुत योग्य प्रतीत हुए हैं। तुम्हारा अनुभव ऐसा न हो तो लिखना।

. . .[1] के सम्बन्धमें मैं उलझनमें पड़ गया हूँ। मुझे उसका उद्यम पसन्द नहीं है। उसमें उसकी प्रतिज्ञाका भंग तो है ही। उसे जो पूँजी चाहिए वह चाहे तुमसे ले तो भी इसे निजी उधार ही मानना चाहिए न? यह शोभा नहीं देता। वह अपने काममें सफल होगा ही, ऐसा सोचना सही नहीं है। उसमें विनम्रता भरी दिखाई नहीं देती। यदि विनम्रता आ गई हो तो उसे चाहे जिस भी जगह नौकरी करनी चाहिए। अम्बालालभाई[2] उसे फिटरकी नौकरी तो दे ही देंगे। हमारे यहाँ जो सामान है उसे इस्तेमाल करनेवाला कोई न हो तो रणछोड़भाई या अम्बालालभाई उसे अपने कारखानेमें ले सकते हैं। यदि खरीदें नहीं तब भी रख तो सकते ही हैं। किन्तु ऐसा सोचना शायद मेरी भूल हो। यह सिर्फ तुम्हारी जानकारी-भरके लिए है। तुम सब उठाकर फेंक सकते हो। तुम . . . को ज्यादा समझ पाये हो और मोह दूर हो जानेके कारण मैंने उससे अन्याय किया हो यह सम्भव है। किन्तु मैं जो लिख रहा हूँ यदि वह सही हो तो . . . पूरे कुटुम्बका भरण-पोषण करने लायक शायद तुरन्त न कमा पाये। यदि ऐसा हो तो खर्चके लिए जितने पैसे कम होते हैं उतने आश्रमको देने चाहिए। उसे भटकने नहीं दिया जा सकता। मैं तो सिर्फ कर्तव्यका

१. नाम नहीं दिया जा रहा है।

२. अम्बालाल साराभाई।

विचार कर रहा हूँ। इस कुटुम्बका अर्थ क्या है? . .[1] ही है न? . . नही है इसलिए उसे त्याग दूं ऐसा नही है। किन्तु उनसे ज्यादा-से-ज्यादा सहन करनेको जरूर कहूँगा।

क्या मैं जोगीके बारेमे भूल ही गया था? कभी-कभी मृत्युके किनारे पहुँचे हुए व्यक्तिकी ऐसी स्थिति हो जाती है।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३६९ से भी, सौजन्य नारणदास गाधी।

८७. पत्र : रवीन्द्रनाथ ठाकुरको

२ मई, १९३३

प्रिय गुरुदेव,

अभी रातके १४५ वजे है और मुझे आपका और कुछ अन्य मित्रोका खयाल आ रहा है। यदि आपका हृदय सकल्पित उपवासका अनुमोदन करता हो तो मैं फिर आपका आशीर्वाद चाहूँगा।[2]

सप्रेम और सादर,

आपका,

मो० क० गांधी

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४६३८) से।

८८. पत्र : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको

२ मई, १९३३

प्रिय वन्धु,

आगामी यज्ञके[3] लिए क्या मैं आपके आशीर्वादकी याचना कर सकता हूँ? इस समय रात्रिके २ वजे है। अन्य चीजोके अलावा, याचनाका यह पत्र लिखनेके

१. नाम नहीं दिया जा रहा है।

२. रवीन्द्रनाथ ठाकुरने अपने उत्तरमें लिखा था : "अपनी वर्तमान प्रतिज्ञाको आपका नितान्त आवश्यक मानना गलत भी हो सकता है। और जब हम इसकी घातक परिणतिके जबर्दस्त खतरेको देखते है, तो यह सोचकर काँप उठते हैं कि हो सकता है, इस भारी गलतीको सुधारनेका कभी मौका ही न मिले। मैं आपसे यह विनती किये बिना नहीं रह सकता कि आप ईश्वरीय व्यवस्थाको आत्म-यन्त्रणाकी इस तरहकी चुनौती न दें और जीवनके वरदानको, उसकी समस्त सम्भावनाओं-सहित, स्वीकार करें और अन्तिम क्षण तक उसे पूर्णताके आदर्शपर ले जानेका प्रयत्न करें जैसाकि मनुष्यके लिए उचित है। हो सकता है, मेरी ये आशकाएँ अज्ञान-जनित भीरुताका परिणाम हों।" (महात्मा, भाग-३, पृ० २४७-८)।

३. प्रस्तावित २१ दिनका उपवास।

लिए भी मैंने विस्तर छोडा है। आप सच्चे बन्धु है, इसलिए मै यह जानता हूँ कि यदि आप इस उपवाससे सहमत न हुए तो केवल मुझे खुश करनेके लिए मेरी प्रार्थना स्वीकार नही करेगे[1]।

आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
लेटर्स ऑफ श्रीनिवास शास्त्री, पृ० २५२

८९. पत्र: मदनमोहन मालवीयको

२ मई, १९३३

भाई साहेब,

रात्रीके दो वज रहे है। मेरे आगामी यज्ञको यदि आप आशीर्वाद भेज सकते हैं तो भेज दिजीये। वचपनसे मातापिताके पास पाया वही करनेकी कुछ चेष्ठा कर रहा हुँ। माताने प्राय आधा आयु उपवासोमे व्यतीत किया। क्या करू? हरिजन सेवा वुद्धि वलसे नहि हो पाती।[2]

आपका कनिष्ट भ्राता,
मोहनदास

पत्र (सी० डब्ल्यू० ९६६८) से।

१. श्रीनिवास शास्त्रीके उत्तरके लिए देखिए परिशिष्ट २।

२. मदनमोहन मालवीयने इसके उत्तरमें यह तार भेजा था: "आपको भगवानका आशीर्वाद प्राप्त है। जैसाकि मैंने उपवासके आरम्भिक दिनके अपने सार्वजनिक भाषणमें कहा है, मुझे इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है कि अपने इस निर्णयमें आप भगवानके आदेशसे ही प्रेरित हुए हैं। मैं निरन्तर यह प्रार्थना करता रहा हूँ कि वह आपको यह व्रत सफलतापूर्वक पूरा करनेकी शक्ति दे और मेरा विश्वास है कि वह आपको ऐसी शक्ति अवश्य देगा। आप बिलकुल 'अनन्यभाव' हो जायें। अपने मनसे उसके सिवा, जो कि हमारा एकमात्र सहारा और शरण है, अन्य सब विचारोंको दूर कर दीजिए। जपके अथवा द्वादशाक्षर मन्त्रके साथ-साथ दिनमें कुछ समय प्रत्येक श्वास-प्रश्वासके साथ 'सोऽहम' का अभ्यास कीजिए। इससे प्राणधारणामें सहायता मिलेगी। कुछ महान तपस्वी आपकी ओर बहुत स्नेह और चिन्ताकी दृष्टिसे निहार रहे है और लाखों देशवासी आपके लिए प्रार्थना कर रहे हैं। अपने आसपासके वायुमण्डलको यहाँ-वहाँकी बातचीतके द्वारा विक्षुब्ध न होने दीजिए। जहाँतक सम्भव हो केवल उस वासुदेवकी चर्चा होने दीजिए जिसका निवास प्राणीमात्रके हृदयमें है। उसकी यह आज्ञा और उसका यह वचन याद रखिए कि मच्चित्तः सर्वदुर्गाणि मत्प्रसादात् तरिष्यसि। ज्योंही स्वास्थ्य अनुकूल होगा आपसे भेंट करूँगा।" (हिन्दू, ११-५-१९३३)

९०. पत्र : राधा गांधीको[1]

रात १–४ बजेके बीच, २ मई, १९३३

मेरे उपवासकी बात सुनकर कोई न घबराये। इसीमें आश्रमकी शक्ति है और इसीमें धर्मकी रक्षा है। उपवास हिन्दू-धर्मके मूलमें है। इस महान हरिजन-यज्ञमें मेरे-जैसे हजारों बलिदान हो जायें तो भी मुझे आश्चर्य नहीं होगा। अब मैं न भी लिख सकूँ तो भी यह समझ लेना कि मुझे हर वक्त तुम लोगोंका ध्यान बना हुआ है।

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९५३५)से, सौजन्य छगनलाल जोशी।

९१. पत्र : नानीबहन बी० झवेरीको

रात १–४ बजेके बीच, २ मई, १९३३

जीवन और मृत्युमें न्यूनाधिक कोई नहीं है। जो-कुछ होगा उसमें भला ही होगा। तू अधिक जागृत हो जा।

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९५३६)से, सौजन्य . छगनलाल जोशी।

९२. पत्र : कुसुमबहन देसाईको

रात १–४ बजेके बीच, २ मई, १९३३

उपवास समाप्त कर पाया तो फिर पत्र लिखने लगूंगा। उपवासकी बातसे घबराना मत। जीवन-मरण ईश्वरके हाथमें है। मुझसे मेरे इस शरीरके माध्यमसे उसे और काम नहीं लेना होगा तो वह नहीं लेगा और शरीर मिट जायेगा। ग्यारहवाँ अध्याय समझमें आया है? भगवान किस प्रकार मनुष्यको चबाकर चूर्ण कर देता है। एक दिन हम सबका वैसा ही हाल होगा। हरिजनोंके लिए मेरा भी वही हाल होता है तो ठीक ही है।

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९५३७)से, सौजन्य छगनलाल जोशी।

१. मगनलाल गांधीकी पुत्री, दीपकदत्त चौधरीकी पत्नी।

९३. पत्र : रामजीको

रात १–४ बजे के बीच, २ मई, १९३३

पत्रोका सार पढकर वहुत दुःख हुआ। उसमे लिखी बात मानने लायक नही है। मेरी इतने वर्षोंकी मेहनतका यह फल? इसमे पूरा या आधा भी सच हो तो यह दुःख है कि मथुरादा[1] या नारणदास[2] जैसे लोग भी एक कौडीके नही है और यदि सब आरोप झूठ हो तो दु ख यह है कि रामजी इतनी सेवाके बाद भी कोमल नही हुआ। किन्तु तुम्हारे हृदयमे कोमलता नही आई तो इसमे दोष तुम्हारा नही मेरा है। मैने भी तो उसी जातिमे जन्म लिया है न, जिसने हरिजनोको कुचला। जो मै खाते-पीते नही कर सका वही मेरा उपवास करे।

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९५३८)से, सौजन्य . छगनलाल जोशी।

९४. पत्र : प्रभुदास गांधीको

रात १–४ बजेके बीच, २ मई, १९३३

स०[2]से सगाई पक्की है तो शादी जरूर कर लेना। उपवासके दौरान विवाह कर लो तब भी ठीक होगा। तुम्हे तो शादी करके सेवा ही करनी है। शादीके बाद जितने सयमका पालन कर सको, करना। मुझे लिखते रहना। मै मर भी जाऊँ तो दुखी नही होना। 'मै' तो नही मरूँगा, शरीर नही रहा तो क्या?

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९५४०)से, सौजन्य छगनलाल जोशी।

९५. पत्र : जमनादास गांधीको

रात १–४ बजेके बीच, २ मई, १९३३

मेरे उपवासका मर्म तुमने पूरी तरह समझ लिया होगा। अपना काम निश्चित होकर करते रहना। माताजी और पिताजी से कहना, मुझे आशीर्वाद भेजे।

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९५४१)से, सौजन्य · छगनलाल जोशी।

१. मथुरादास पी० आसर।
२. नाम छोड दिया गया है।

९६. पत्र : नी०को

२ मई, १९३३

ईश्वर करे इस उपवाससे तुम्हे शक्ति प्राप्त हो। बुरा विचार यदि मनमे आये तो उसे भी ना[रणदास]को सौंप दो। लेकिन यदि तुम अपने-आपको सत्य और उसके कार्यमे, जैसाकि ना[रणदास] तुम्हे बताये, लीन कर दो, तो वह आयेगा ही नही।

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९७६७)से, सौजन्य छगनलाल जोशी।

९७. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

२ मई, १९३३

प्रिय जवाहरलाल,

जब मै आनेवाले उपवाससे जूझ रहा था, तब मानो तुम सशरीर मेरे सामने थे। पर कोई लाभ नही हुआ। काश, मै यह अनुभव कर सकता कि तुमने उपवासकी नितान्त आवश्यकता समझ ली है। हरिजन आन्दोलन निरे बौद्धिक प्रयत्नके लिए बहुत बडा काम है। सारे ससारमे इतनी बुरी चीज और कोई नही है। फिर भी मै धर्मको और इसलिए हिन्दुत्वको छोड नही सकता। हिन्दू-धर्मसे यदि मै निराश हो जाऊँ, तो मेरा जीवन मेरे लिए भार बन जायेगा। हिन्दुत्वके द्वारा मै ईसाई, इस्लाम और कई दूसरे धर्मोंमे प्रेम करता हूँ। यह छीन लिया जाये तो मेरे पास रह ही क्या जाता है? लेकिन मै इसे छुआछूत और ऊँच-नीचकी मान्यताके रहते सहन नही कर सकता। सौभाग्यसे हिन्दू-धर्ममे इस बुराईका रामबाण इलाज भी है। मैने उसी इलाजका प्रयोग किया है। सम्भव हो तो मै तुम्हे यह महसूस कराना चाहता हूँ कि यदि मै उपवासके बाद बच रहूँ तो अच्छा ही है, और यदि जीवित रहनेकी कोशिशके बावजूद यह शरीर नष्ट हो जाता है तो भी क्या बुराई है? आखिर यह है ही क्या—एक झटकेसे टूट जानेवाली चिमनीसे भी अधिक नाशवान। कॉचके उस गोलेको फिर भी दस हजार वर्षतक ज्यो-का-त्यो रखा जा सकता है, परन्तु इस शरीरको एक मिनटके लिए भी हम जैसे-का-तैसा नही रख सकते। मृत्युसे निश्चय ही सारे प्रयत्नोका अन्त नही हो जाता। ठीक ढँगसे सामना किया जाये तो मृत्यु उदात्त प्रयत्नका आरम्भ भी हो सकती है। परन्तु, यह सत्य तुम्हे स्वय अन्त प्रेरणासे दिखाई न देता हो तो मै दलीलोसे तुम्हे कायल करना नही चाहता। मै

जानता हूँ कि तुम्हारी स्वीकृति मेरे साथ न भी हुई तो भी अग्निपरीक्षाके इस पूरे दौरमें तुम्हारा बहुमूल्य स्नेह तो मेरे साथ रहेगा ही।

तुम्हारा पत्र मिल गया था, जिसका उत्तर, मैंने सोचा था, फुरसतसे दूँगा। परन्तु ईश्वरकी इच्छा और ही कुछ थी। कृष्णासे मेरी बातें हुई थी। मेरा खयाल है कि सरूपके काठियावाड़के कामके बारेमें मैंने तुम्हें लिखा था। कमलाने तो मुझे अपना पतातक नहीं भेजा। बहुत दिनोंसे उसका कोई पत्र नहीं आया है। जब तुम उससे मिलो, तो उसे और इन्दुको मेरा प्यार देना। कमलाको उपवासकी चिन्ता नहीं करनी चाहिए। हो सके तो मुझे तार[1] देना।

हम सबकी ओरसे प्यार।

बापू

[अंग्रेजीसे]
ए बंच ऑफ ओल्ड लैटर्स, पृ० ११०-१।

९८. पत्र : गंगाबहन वैद्यको

२ मई, १९३३

चि० गंगाबहन,

आज तुम्हें लम्बा पत्र नहीं लिख सकता। तुम्हारे पत्रका उत्तर देनेकी आवश्यकता नहीं है। उपवासकी खबर सुनकर खुश हुई होगी। तुम्हारी बारी भी आयेगी। अभी देर है। यह उपवास पहले किये गये उपवासोंसे अलग है। बुराइयाँ दूर करनेके लिए या शुद्धिके लिए हमारे पूर्वज चलते-फिरते ऐसे उपवास किया करते थे। बिलकुल वैसा ही यह भी है। और लोग एकके-बाद-एक उपवास करने आगे आते जायें तो मैं उन्हें उपवास करने दूँगा, अभी तो मनमें यही विचार है। इस समय तुम मुझसे मिलने जरूर आ सकती हो। जब इच्छा हो आ जाना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ८८०३)से; सौजन्य : गंगाबहन वैद्य।

१. जवाहरलाल नेहरूने ५ मईके अपने तारमें लिखा था: "आपका पत्र मिला। जो बातें मेरी समझमें ही नहीं आतीं, उनके बारेमें मैं क्या कह सकता हूँ? ऐसा लगता है कि एक अजनबी देशमें मैं अपनी राह भूल गया हूँ। परिचित मार्ग-चिह्न केवल आप ही हैं। मैं अँधेरेमें अपना रास्ता टटोलनेकी कोशिश करता हूँ, पर लड़खड़ा जाता हूँ। कुछ भी हो, मेरी प्रीति और भावनाएँ आपके साथ होंगी।" (गांधी-नेहरू कागजात, १९३३)। जवाहरलाल नेहरूके उसी तारीखके पत्रके लिए देखिए परिशिष्ट ३।

९९. पत्र : शारदा चि० शाहको

२ मई, १९३३

चि० शारदा,

तेरा पत्र मिला। तू वहुत समझदार है इसलिए उपवासकी खवर पढकर खुश हुई होगी। यदि कोई व्यक्ति धर्मका काम करे तो उससे खुशी होती है न? यह तेरी शुद्धिके लिए भी है, ऐसा मानना।

बापूके आशीर्वाद

मूल गजराती (सी० डब्ल्यू० ९९६६) से, सौजन्य शारदावहन गो० चोखावाला।

१००. पत्र : पांडुरंग नाथूजी राजभोजको

२ मई, १९३३

भाई राजभोज,

मेरे उपवाससे तुमारे गभराहटमें नहि पडना। वही रहो और ज्ञानमय सेवाके लिये तैयार होलो। मैं झिंदा रहा तो इसी शरीरसे ओर सेवा करनेका प्रयत्न करूँगा, मर गया तो भी भगवानकी दया ही समझुगा। देह पडनेसे मेरी सेवा खतम नहि होगी। हरिजन सेवा सत्रका जो आरभ हुआ है वह कभी वध नहिं हो सकता है। अनशन करते हुए हजारो सवर्ण हिंदुका प्राण त्याग हो जाय तो भी मैं उसे अधिक नहि समझुंगा। मै तो शायद ही लिख सकुँ। तुमारे लिखते रहना।

वापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ७८०)से।

१०१. पत्र : हीरालाल शर्माको

२ मई, १९३३

भाई हीरालाल शर्मा,

तुम्हारा हिन्दी-पत्र पाकर मुझको बहुत ही आनन्द हुआ। हिन्दीमें यह पहिला पत्र और ऐसे स्वच्छ अक्षर आश्चर्यजनक बात है। हिन्दी भी अच्छी ही है। यह कैसे? मैंने पत्र और प्रेसक्रिप्सन सब ध्यानसे पढ लिये हैं।

प्राकृतिक चिकित्सासे गाधी कुटुम्ब अनभिज्ञ नही है। यह तो विनयकी भाषा हुई। उनका विश्वास कम है लेकिन यह भी सबके लिये नहीं कहा जा सकता है। वे और दूसरे भी बेचारे क्या करे? जो कुछ प्राकृतिक चिकित्साका ज्ञान और प्रेम हो सकता था वह मेरी ही वजहसे। लेकिन मेरा ज्ञान इतना अधूरा कि जिससे जल्द रोगोंमें निकम्मा बन जाता हूँ। कभी व्यवस्थित तौरपर इस शास्त्रका अभ्यास करनेका मुझको समय ही नही मिला। मेरे शौखकी यह वस्तु होनेके कारण थोड़ा बहुत मैं जान सका हूँ। मेरे अधूरापनके कारण हमेशा प्राकृतिक चिकित्सा विशारदको मैं ढूंढ़ रहा हूँ। ऐसे उपचारक एक भक्त और बड़ा सज्जन हनमन्तराय था। अपने उपचारोका बलि होकर यह मर गया। उसका ज्ञान कम था। उसकी श्रद्धा अपूर्व थी। पीछे आया था गोपालराव। वह एक अस्पताल रखकर राजमन्द्रीमें बैठ गया है। उसी पर विश्वास करके मैंने एक मूर्ख प्रयोग किया। उसका वर्णन मैंने अखबारमे भी दिया था।[1] गोपालरावके परिचयसे मुझको निराशा पैदा हुई। गोपालराव श्रद्धालु है लेकिन उसका ज्ञान बहुत अधूरा है और दुख यह है कि अपने अधूरापनका उसको पूरा ख्याल नही है। अब तुम मिल गये हो। मैं तो चाहता हूँ कि मुझे मत छोडो। आश्रममे और भी रहो नम्रतापूर्वक अपने ज्ञानकी मर्यादाको पहचान लो। आश्रमके लोगोंका विश्वास सम्पादन करो और पीछे ऐसे उपचारके लिए जगतको निमन्त्रण भेजो। अगर आश्रम शीघ्र लौट जानेकी आवश्यकता नहीं है तो कमसे-कम थोडे दर्दिओको तो अच्छे करके जाओ। अगर आश्रम तुमको अच्छा लगे और नारायणदासजी को तुम अच्छे लगो तो आश्रममे अवश्य रह जाओ। प्राकृतिक चिकित्साका तुम्हारा ज्ञान पूरा हो अथवा अपूर्ण हो उसकी मुझे दरकार नही है। मुझे दरकार है सत्यकी, जहाँ तक हम जा सकें वही तक जाकर संतुष्ट रहे तो कोई हानि नही हो सकती। मगर पत्नी भी आश्रमके नियमोंका पालन करनेको तैयार है तो कोई कारण नही है वह भी आश्रममे आकर क्यों नहीं रहे। तुम्हारी धर्मपत्नीको मैं खत लिखता हूँ। इसीके साथ रखूंगा।

१. देखिए खण्ड ४१।

भगवानजीके साथ हरिजनोके पास गया सो अच्छा हुआ। यदि सम्भव है तो आश्रम छोडनेके पहिले ही और जितना जल्दी हो सके इतना जल्दी मेरे पास आ जाओ। तब हरिजनोमे आरोग्यके बारेमे क्या करना चाहिए उस बारेमे हम कुछ वार्तालाप कर ले। इतवार छोडकर जब दिल चाहे तब आ सकते हो। दोपहरको मिलनेका हो सकता है।

आश्रममे खुराकके बारेमे तुम्हारी सूचनाकी प्रतीक्षा करूँगा। आरोग्यकी दृष्टिसे आश्रमकी खुराकको मै सम्पूर्ण बनाना चाहता हूँ। हरिजन बालकोको आश्रममे रखनेका इरादा तो हमेशा रहा ही है लेकिन ऐसे बालक बहुत नही मिल सकते है। आश्रममे जो लोग अपना रोग छिपाते है उनको सलाह दे दो कि वे उसे प्रगट कर दे और जो अपने विकारोको शात नही कर सकते है वे भाग जाये।

कुसुमके बारेमे मै सोच रहा हूँ क्या किया जाय। रमा बहनके बारेमे तो अगर उनके रोगका निदानके बारेमे और चिकित्साके बारेमे तुमको कुछ भी शका नही है तो वही उपचार किये जाय जो तुम्हे पसद हो। इसी तरह जमनाबहनके लिए। आमीना[1] से अगर भात और दूसरे स्टार्चके पदार्थ और तम्बाकू छोडवा दोगे तो बहुत अच्छा होगा। प्रातःकाल दातोपर तमाकू घिसती है। बम्बईके अखबारोमे जो तुम्हारे आनेका उल्लेख था उस बारेमे जो तुमने किया वह अच्छा ही हुआ और योग्य हुआ।

बापूके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० ३९-४१

१०२. पत्र : रैहाना तैयबजीको

२ मई, १९३३

भली बेटी,

दूसरे फाकेके लिये तुमने नया भजन तो दिया है लेकिन वह तो नही गाया जा सकता है। तुमको तो मालूम हे कि जबतक ऐसे भजन ठीक नही गाये जाये मेरे दिलपर असर नही करने। मै तो वही[2] फिर गाऊँगा। अच्छा अब अब्बाजानकी अम्माजानकी और तुम सब लडकियोकी दुआ भेजो।

बापू

मूल उर्दूसे, सौजन्य राष्ट्रीय अभिलेखागार। पत्रकी फोटो-नकल एस० एन० ९६५७ से भी।

१. अमीना जी० कुरेशी।

२. "उठ जाग मुसाफिर भोर भई" से प्रारम्भ होनेवाला भजन।

१०३. पत्र : अमतुस्सलामको

[२ मई, १९३३ या उसके पश्चात्][१]

बेटी अमतुस्सलाम,

तुम्हारा खत मिला। तुम्हारे फाकाकी बात सुनकर घबराहटमें नहीं पड़ना। अब मैं खत नहीं लिख सकूँगा। लेकिन मेरा दिल तो तुम्हारे साथ ही रहेगा। मुझको लिखा करो। खुदा तुमको अच्छी करे। तुम्हारे हाथसे बहुत सेवा लेनी है। लेकिन सब हाल खुदा बेहतर जानता है। वह जो करेगा सो अच्छा ही होगा।

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० २८३) से।

१०४. पत्र : के० नटराजनको

३ मई, १९३३

प्रिय श्री नटराजन,

आपके पत्रके लिए धन्यवाद।

उपवास एक ऐसा आह्वान था जिसका मैं प्रतिरोध नहीं कर सकता था भौतिक कारणोंपर अत्यधिक जोर न देनेकी आपकी चेतावनी मुझे याद है।[२] अमेरिका रवाना होनेसे पहले, जहाँ मुझे आशा है, आपको भारी सफलता मिलेगी, कृपया कामकोटिके साथ यहाँ आयें। कामकोटि आपके साथ रहते हैं, इसकी मुझे खुशी है। यह हर तरहसे अच्छा रहेगा।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत के० नटराजन
कामाक्षी हाउस
बान्द्रा, बम्बई

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १९०७३) से।

१. २ मईको लिखे गये अन्य पत्रों और इस पत्रकी विषयवस्तुकी समानतासे जान पड़ता है कि यह पत्र २ और ८ मईके बीच लिखा गया होगा।

२. के० नटराजनने बम्बईकी सभामें कहा था कि अस्पृश्यता-निवारणमें रत कार्यकर्ता हरिजनोंको अपने घर बुलायें और उनसे सम्मानपूर्वक मिलें-जुलें तो हरिजन-कार्यके लिए चंदा देने या इकट्ठा करनेकी अपेक्षा उसके ज्यादा लाभकारी परिणाम होंगे। उन्होंने यह बात मदनमोहन मालवीयकी इस घोषणाके बाद कही थी कि अस्पृश्यता-निवारण कार्यके लिए पच्चीस लाखकी निधि इकट्ठी की जायेगी।

१०५. पत्र : जे० डी० जेनकिन्सको[1]

३ मई, १९३३

प्रिय श्री जेनकिन्स,

आपके पत्रके लिए धन्यवाद।

आपने जिस कदमकी सलाह दी है वह मैं क्यों उठा नहीं सकता, यह समझानेके लिए राजनैतिक बहसकी जरूरत है और राजनैतिक बहसमें मैं कैदी होनेके कारण पड नही सकता। इसलिए कृपया मुझे क्षमा करें।

आशा है, मेरा पिछला पत्र आपको मिल गया होगा।[2]

जो पुस्तक आपने मुझे भेजी है उसके लिए धन्यवाद।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १९०७४) से।

१०६. पत्र : पी० आर० लेलेको

३ मई, १९३३

प्रिय लेले,

आपके पोस्टकार्ड और शुभ कामनाओंके लिए धन्यवाद। मैं जानता हूँ कि आप इस दानवके विरुद्ध अभियानमें तन-मनसे अपनेको झोंक देंगे।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत पी० आर० लेले
बाडेकर बिल्डिंग, बम्बई–४

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९०७५) से।

१. श्री जेनकिन्सके दिनांक ३० अप्रैल, १९३३ के पत्र (एस० एन० २१०८८) के उत्तरमें, जिसमें उनसे अपील की गई थी कि वे सविनय अवज्ञा आन्दोलन छोड दें और सरकारको सहयोग दें।

२. देखिए पृ० ४५।

१०७. पत्र : महावीर गिरिको

३ मई, १९३३

चि० महावीर,

तुम्हारा पत्र मिला; बहुत खुशी हुई। इसी तरह लिखते रहो तो अच्छा है।

सामानके बारेमे जॉच-पडताल कर रहा हूँ। वह क्यो नही मिला, सो समझ नही आता। आज ही आश्रम पत्र लिख रहा हूँ।

तुम ईमानदारीसे काम करोगे तो जरूर प्रगति करोगे।

दूध-घी नही मिलता तो क्या तुम सब दूध-घीके बिना ही काम चलाते हो? भोजनमे क्या ले रहे हो?

धर्मकुमार कुछ करता है? क्या वह बहुत शरारत करता है?

बा काम करती है यह तो बहुत अच्छी बात है।

नियमोका पालन करोगे तो सुखी रहोगे।

मैत्री और दुर्गाके पत्र आते होगे। मुझे तो मिलते रहते है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६२३९) से।

१०८. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

३ मई, १९३३

चि० प्रेमा,

तेरा हृदयद्रावक पत्र मिला। तुझे मै किस प्रकार सन्तोष दूं? तुझे जाने देना मेरे लिए बहुत कठिन है। मैने तो तुझपर आशाका मेरु बॉधा है। परन्तु जिसका श्रेय आश्रममे रहनेसे सिद्ध न हो उसके आश्रममे रहनेका आग्रह करूँ, तो मै स्वार्थी बनता हूँ और आश्रमका पतन होता है। आश्रममे रहनेवाले सभी लोगोके अधिक-से-अधिक श्रेयका सूचक और उसे साधनेका स्थान आश्रम है। इसलिए तेरा श्रेय और आश्रमका श्रेय परस्पर विरोधी हो ही नही सकते। परन्तु तुझे मेरी यह बात सही न लगे तो तुझे भाग जाना चाहिए, इसमे मुझे बिलकुल शका नही है। अगर अभीतक तेरे उपवास चल रहे हो तो मेरा अनुरोध है कि अब छोड़ दे। तू जो निर्णय करेगी उसे मै स्वीकार करूँगा। अन्तिम निर्णय मै नही करूँगा, वह तो तुझे करना है।

जैसे मैंने नारणदासपर बहुत बडी जिम्मेदारी लादी है, वैसे ही नारणदासने तुझपर लादी है। नारणदास तो टूटा नही। तू टूट गई तो मुझे दुख होगा। तेरे टूटनेमे मेरा भी पूरा भाग जरूर माना जायेगा। नारणदास क्या करे?

तू रहनेका निर्णय करे तब भी अपने ऊपरका बोझ तू अवश्य कम कर लेना। शक्तिसे अधिक भार लेना ही अधर्म है, उसमे अभिमान भी है। जितना दोष शक्तिसे अधिक खानेमे है, उससे ज्यादा दोष शक्तिसे अधिक भार लेनेमे है। यह फर्क जरूर है सौमे से निन्यानवे आदमी शक्तिसे अधिक खाते हैं। सौमे से साढे निन्यानवे शक्तिसे कम ही बोझ उठाते हैं। इसलिए हमे सदा इस बातका पता नही रहता कि कब अधिक बोझ उठाया और कब कम। इतनेपर भी परिणाम तो वही होता है जो मैंने बताया। मैं अधिक खाऊँ तो उसका परिणाम मुझीको भुगतना पडेगा। मैं शक्तिसे अधिक हरिजन-कार्य अपने सिर ले लूं तो उसका परिणाम चार करोड हरिजनोको तो भुगतना पडे ही, शायद सारी दुनियाको भी भुगतना पडे।

ईश्वर तुझे शान्ति प्रदान करे और सही रास्ता दिखाये।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३४३) से। सी० डब्ल्यू० ६७८२ से भी, सौजन्य प्रेमाबहन कटक।

१०९. पत्र : नारणदास गांधीको

३ मई, १९३३

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। कल डाकका जो बडा लिफाफा भेजा है, वह फौरन मिल गया हो तो अच्छा है।

प्रेमाको पत्र लिखा है, उसे देख लेना। यहाँ उसके बारेमे ज्यादा नही लिखता।

अभी तो मैं, कलके पत्रमे जिन परिवर्तनोका सुझाव दिया था[1] उनपर विचार कर रहा हूँ। पण्डितजी से उनकी चर्चा की है। आश्रममे उपवासकी शृंखला चलानेकी शक्ति या योग्यता है या नही, इस विचारको एक ओर छोडकर भी मेरी कलकी राय बदली नही है। तुमपर जो बोझ है, वह कम होना ही चाहिए। ऐसा न हो सका तो जितनी तैयारीकी हम आशा करते है उतनी भी नही हो सकेगी। इसलिए नये व्यक्तियोको लेना बन्द करे और जिनसे नियमोका पालन न हो सके उन नये व्यक्तियोसे आश्रम छोडनेका अनुरोध करे और अगर वे आश्रमवासी पुराने हैं तो अलग रसोई करे। अलग रसोई मुझे तनिक भी प्रिय नही है। किन्तु देखता हूँ कि जितने पुराने कुटुम्ब हैं उन्हे निभाये बिना छुटकारा नही है।

केशुके बारेमे भी जो विचार लिखा है उसीपर कायम हूँ। यदि पिताके रूपमे तुम अपनी गाँठसे पैसा देकर मदद करना अपना धर्म समझो तो करो, परन्तु इसे

१. देखिए पृ० ८८-९३।

आश्रमके पैसेमे नही गिना जा सकता। ऐसा मेरा विचार है। फिर मुझे यह भी लगता है कि तुम्हारे पास जो पैसा है उसे एक ही कामके लिए अमानतकी तरह माना जा सकता है, और वह काम है माता-पिताकी मदद। उनके चले जानेपर वह सब आश्रमको अर्पित माना जायेगा। उसपर न जमनाका न पुरुषोत्तम आदिका ही अधिकार हो सकता है। यदि यह सकल्प आजतक न किया हो तो इस शुद्धि-कालके आरम्भमे कर ही डालना चाहिए। उसके लिए तुम्हे जमनाके साथ सलाह कर लेनी चाहिए। पुरुषोत्तमसे पूछना भी उचित लगे तो उससे भी पूछ लो। किन्तु सबसे पहली बात तो यही है कि खुद तुम्हारा यही विचार बने। तुम्हारा किसी भी सम्बन्धीको निजी सहायता देनेकी स्थितिमे होना आश्रमके लिए, तुम्हारे लिए और जिसकी मदद करोगे उसके लिए हानिकर है। तुम्हारे सिवा मुझे आश्रममे कोई ऐसा व्यक्ति नही दिखाई देता जिसमे दूसरे सभी गुण आवश्यक मात्रामे हो। तुम्हारे पास धन होते हुए भी तुमने उसका दुरुपयोग नहीं किया और तुम उससे अलिप्त रह पाये हो। इससे तुम्हारी सूक्ष्म न्यायदर्शिता और तटस्थता सिद्ध होती है। किन्तु यदि भगवान स्वय परिग्रह करने लगे तो वह भी गिरेगा। अपरिग्रह और अस्तेय व्रत देखनेमे छोटे लगते हैं। किन्तु ये दूसरे तीन व्रतोके समान ही कठिन है। मुझे तो पूरे [पातजलि]-योगदर्शनकी रचना ही विस्मित करती है। उसका अन्तिम भाग मेरी समझमे नही आता। किन्तु हो सकता है कि उसका एक-एक सूत्र काफी अनु-भवके आधारपर रचा गया हो। यदि भगवान ने मेरे लिए दूसरा काम तय न कर दिया होता तो हिन्दू-धर्मकी ऐसी पुस्तके मुझे जबानी याद होती। किन्तु मेरे लिए क्या ज्यादा अच्छा होता, कौन जाने? यह विचार करना भी नास्तिकता है। मुझे जो-कुछ सम्पदा ईश्वरने दी है उसीसे मुझे पूर्ण सन्तोष कर लेना चाहिए। किन्तु यह तो विषयान्तर हुआ। आश्रमकी मददसे अलग कारखाना बनानेमे आज केशुकी भलाई कदापि नही है।

कुसुमका क्या करे? उसे अपने पास किस तरह बुला सकता हूँ? उसे जाना ही हो तो वह अलमोडा चली जाये। मै अपनी राय लिख चुका हूँ। उसीपर दृढ हूँ। डॉ० स्पीगल शायद वहाँ आये। उसे परख रहा हूँ। बहुत सरल है, पर राग-द्वेषसे भरी हुई। तो भी जबतक वह नियमोका पालन करे तबतक उसे रखना ही चाहिए। सफल हो गई तो अच्छा ही होगा। मेरे उपवास करनेमे इन दोनो बहनोका हाथ अवश्य है। और उसमे भी शायद नी० का हिस्सा ज्यादा। किन्तु यह सब तो मेरी कल्पना है। ईश्वर या राक्षसकी कृतिकी पूरी पहचान किसे हो सकती है। घटित घटनाका अनुमान मात्र दे रहा हूँ।

परशुरामके आज ही यहाँ पहुँच जानेकी आशा कर रहा हूँ।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३७० से भी, सौजन्य . नारणदास गाधी।

११०. भेंट : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको

३ मई, १९३३

मैं इस उपवासकी अत्यन्त प्रसन्न मनसे प्रतीक्षा कर रहा हूँ और यह आवश्यक है, यह मेरा पक्का विश्वास है।

यह पूछनेपर कि उनके खयालमें उनके सहयोगियोको उपवासके दौरान क्या करना चाहिए, गाधीजी ने कहा :

उन्हे केवल अस्पृश्यताके विरुद्ध यथासम्भव अधिक-से-अधिक सौम्य ढँगसे अभियान चलाना चाहिए, जिससे कि सनातनियोका हृदय जीता जा सके।

यह पूछनेपर कि उपवासके दौरान डॉक्टरी व अन्य सहायताके लिए क्या वे स्वयं अपनी व्यवस्था कर रहे हैं, उन्होने कहा कि सब-कुछ अधिकारियोंपर निर्भर है। उन्हे यदि रिहा कर दिया गया तो वे क्या व्यवस्था करेगे, उन्होने इस बारेमें भी कुछ नही सोचा था।

[अग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ४-५-१९३३

१११. तार : डॉ० मु० अ० अन्सारीको[१]

[४ मई, १९३३][२]

डॉ० अन्सारी
दिल्ली

आप धार्मिक व्यक्ति हैं। मैं जब यह कहता हूँ कि यह उपवास मेरी इच्छासे नही है, तो मैं चाहता हूँ कि आप मुझपर विश्वास करे। यह ईश्वरका अलघनीय आदेश है। इसलिए वही मेरा अदृश्य डॉक्टरी

१ उनके तारके उत्तरमें। उसमें लिखा था : "एक पुराना मित्र, साथी कार्यकर्त्ता और चिकित्सक होनेके नाते मुझे आपके इस गम्भीर निर्णयसे गहरा धक्का लगा है। वक्तव्य पढ लेनेके बाद भी, नैतिक प्रश्नपर आपसे मेरा मतभेद बरकरार है। पर इस विषयमें सबसे अच्छे निर्णायक आप ही हो सकते हैं। मैं आपसे अपना सकल्प छोड़नेके लिए तो नहीं कहता, पर यह जरूर समझता हूँ कि आप इस तनावको सहनेके योग्य नहीं हैं। आपके वक्तव्यमें मरना न चाहनेकी आपकी इच्छाका उल्लेख है। उसके निहितार्थके आधारपर ही मैं आपसे यह वचन चाहता हूँ कि डॉक्टरी उपचार यदि कभी भी आपके जीवनको खतरेमें समझे, तो आप तभी अपना उपवास तोड़ देंगे।"

२. महादेवभाईनी डायरी, भाग-३ पृ० २८४ से।

परिचारक होगा। और यदि उसकी परिचर्या ही मुझे नही बचाती है, तो आप जैसा अच्छा चिकित्सक और पैगम्बरकी आडे वक्तमे सहायता करनेवालोंका वशज[1] ही क्या कर सकेगा? सप्रेम।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० २११२८ ए) से।

११२. पत्र: मीराबहनको

४ मई, १९३३

चि० मीरा,

तो तुम्हें मुझे वह प्रेमपूर्ण तार[2] भेजनेकी अनुमति मिल गई। मैंने तो प्रयत्न भी नहीं किया। मैंने सोचा कि तुम्हारे पास शान्तिदायक सन्देश भेजनेके लिए विशेष अनुमति लेनेकी अपेक्षा, यह अच्छा है कि तुम चुपचाप कष्ट सह लो। बादमे, मुझे आशा है, तुम्हें और कुछ दूसरे लोगोको रोज सन्देश भेजनेकी अनुमति मिल जायेगी।

इस कार्यकी पवित्र आवश्यकता तुमने समझ ली है। बाकी प्रतिक्रिया शानदार रही। उसके साहससे मुझे बहुत बल मिला है।

तुम्हारा पत्र मेरे सामने है। यद्यपि यह इस कदमकी तुम्हें कुछ भी जानकारी होनेसे पहले लिखा गया था, फिर भी इसमे मुझे एक शोकपूर्ण मन स्थिति दिखाई देती है। तुम्हें उसपर विजय पानी है। किसी जीते-जागते ईश्वरमे यदि तुम्हारी जीती-जागती श्रद्धा है, तो तुम्हें महसूस होगा कि तुम्हारी रक्षाके लिए वह सदा तुम्हारे पास है। जबतक वह स्थिति नही हो जाती तबतक हाड-मांसवाले किसी व्यक्तिमे श्रद्धा होनेसे भी कोई लाभ नहीं। वह तो किसी अविश्वसनीय व्यक्तिपर भरोसा रखने-जैसा है। तुम्हें पहले इसपर स्पष्ट विचार कर लेना चाहिए और फिर हृदयका बुद्धिसे सहयोग होना चाहिए।

जब मौका आये तो तुम निश्चय ही तन-मन और प्राणसे इस आन्दोलनमे कूद पड़ना। मै तुम्हे ईसाई कहता हूँ, पर तुम इतनी हिन्दू हो कि हरिजनोकी पूरी तरह सेवा करनेका अधिकार रखती हो। तुम्हे इस विषयमे कोई चिन्ता नही करनी चाहिए।

काश मेरे पास इतना समय होता कि मै तुम्हे नी० और मार्गरेट स्पीगलके बारेमे कुछ बता सकता। पर मुझे अपने समय और शक्ति, दोनोकी बचत करनी है। यह स्वाभाविक है कि आश्रमकी शुद्धि करनी होगी। मैंने अपने सुझाव[3] नारणदासको भेज दिये हैं।

१. अन्सारी लोग शेख होते है। इन्होंने पैगम्बरकी मक्कासे उनके भागनेके बाद मदद की थी।

२. देखिए पाद-टिप्पणी १, पृ० ८७।

३. देखिए पृ० ८८-९३ और १०५-६।

बा से कह दो कि मेरे बारेमे कतई चिन्ता न करे। वह, मै और हम सब ईश्वरके हाथोमे है। हम जीते रहे तो भी अच्छा और मर जाये तो भी अच्छा। हम मरनेके लिए ही पैदा होते है और फिर पैदा होनेके लिए ही मरते है। यह सब पुराना तर्क है। फिर भी इसे हृदयगम कर लेनेकी आवश्यकता है। चाहे कोई भी कारण हो, पर हम जन्मकी तरह मृत्युका स्वागत नही करते। हमे स्वय अपनी इन्द्रियोके इस साक्ष्यपर भरोसा नही होता कि आत्माके बिना शरीरसे कोई आसक्ति रखी ही नही जा सकती और इस बातका कोई भी प्रमाण नही है कि आत्मा शरीरके साथ नष्ट हो जाती है।

अब और अधिक नही। मुलाकाती अन्दर आ गये है।

आशा है, ज्योतिपकी किताब तुम्हे मिल गई होगी।

स्नेह।

बापू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२७०) मे, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९७३६ मे भी।

११३. पत्र : मनु गांधीको

४ मई, १९३३

चि० मनुडी,

अच्छा हुआ कि तूने पाठशाला छोड दी। तू तो मौतके मुंहसे बची है, इसलिए तेरी स्मरणशक्ति जाती रही। मुझे तुझे पढानेकी कोई जरूरत नही है। तू अच्छी बने, मन पवित्र रहे और शरीर स्वस्थ रहे, इतना ही काफी है।

मेरे उपवासको लेकर कोई चिन्ता न करे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५२१) से, सौजन्य मनुबहन मशरूवाला।

११४. पत्र : बहरामजी खम्भाताको

[४ मई, १९३३][1]

भाई श्री खम्भाता,

मेरे उपवासका सूत्रधार ईश्वर है, इसलिए कोई उसे लेकर चिन्ता न करे। यदि वहाँ गायका प्रबन्ध हो सके तो अपने सामने थन बुलवाकर साफ बर्तनमें दुहा हुआ दूध पीना बहुत अच्छा होगा। दूध और फलके रसके अतिरिक्त और कुछ न लेना। तुम्हें और तहमीनाको आशीर्वाद।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६०५) से।

११५. पत्र : बलीबहन एम० अडालजाको

४ मई, १९३३

चि० बली,

तुम्हारा पत्र मिला। यह तो सिर्फ इतना जाहिर करनेके लिए लिख रहा हूँ कि मैं तुम्हें भूल नहीं सकता। तनिक भी फुरसत नहीं है। कुमीको बम्बई पत्र लिखा है। तू बहादुर है; बहादुर रहना। तू स्वस्थ हो जायेगी। फिलहाल मनुके विवाहकी बात नहीं हो सकती।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ५०५६) से; सौजन्य : सुरेन्द्र मशरूवाला।

१. डाकको मुहरसे।

११६. एक हरिजनके प्रश्न

१. हरिजनोंमें जो विविध जातियाँ विद्यमान हैं, उन्हे एक करनेके लिए क्या करना चाहिए?

२. बड़े-बड़े शहरोमें जहाँ सीवरेज लगता जाता है, वहाँ हरिजन भाइयोकी जीविकापर आघात होता जाता है। ऐसी स्थितिमें वे क्या करें?

३. किसी-किसी कस्वेमें विवाहादिके अवसरपर हरिजनोको सवर्ण हिन्दू सवारीपर नहीं चढ़ने देते। सवर्ण हिन्दुओको क्या करना चाहिए, वह तो आपने लिखा है, पर हरिजन ऐसी अवस्थामें क्या करे, सो कृपा कर लिखियेगा।

ऊपरके ये तीन प्रश्न एक हरिजन भाईने भेजे हैं। प्रश्न तीनो ही कठिन हैं।

जवतक सवर्णोमे सैकडो विविध जातियाँ मौजूद हैं, तवतक हरिजनोमे जो अनेक जातियाँ हैं, उनका मिटना वहुत ही मुश्किल है। हाँ, इतना मही है कि अगर हरिजनोमे महाजागृति पैदा हो जाये, तो वे एकदम आगे वढ जाये। ऐसा समय मै तो देखना चाहता हूँ और ऐसा ममय आनेपर हरिजन वस्तुत मवर्ण हिन्दुओसे आगे वढ जायेगे। लेकिन यहाँ तो प्रश्न वर्तमान स्थितिका है।

मौजूदा हालतमे इतना ही कहा जा सकता है कि हरिजनोमे जो उच्च जातियाँ मानी जाती हैं, उन्हे नीच मानी जानेवाली जातियोसे मिलनेकी चेष्टा करनी चाहिए। जैसे, महारको चाहिए कि वह माँगमे मिले, उसके साथ रोटी-बेटी व्यवहार रखने लगे। इस तरह माँगके साथ मिलनेवाले महारको निर्भय रहना चाहिए और जो भी मुसीवत आये उसे वर्दाश्त करना चाहिए।

दूसरा प्रश्न सार्वजनिक है। इस 'सधि-युग' मे कई धन्धे छूट जायँगे और कई नये पैदा होगे। यह तो हमेशा होता रहा है। सीवरेजका सवाल देहातोमे तो पैदा ही नही हो सकता। शहरोमे ही सीवरेज हो सकता है। शहरोमे भगी भाइयोकी सख्या देखनेमें आती है। मेरा विश्वास है कि जहाँ सीवरेज आता है, वहाँ भगियोके लिए कुछ-न-कुछ नौकरी निकल आती है। वेकार भगियोको काममें लगानेका म्युनिसिपैलिटीका कर्त्तव्य हो जाता है। मेरी सलाह यह भी है, कि भगियोको वुननेका अथवा ऐसा ही कोई दूसरा धन्धा सीख लेना चाहिए। गुजरातमे मैने देखा है कि भगियोने भगीका काम वन्द होनेपर वुनाईका काम ले लिया है। इस प्रश्नके सम्बन्धमे सवके लिए कोई एक मार्ग नही हो सकता। यह तो व्यक्तिपर निर्भर करता है।

तीसरा प्रश्न वहुत कठिन है। प्रश्नके भीतर ही यह मान्यता है कि हरिजन विलकुल पराधीन और भयभीत हैं। ऐसी स्थितिमे तो यही कहा जा सकता है कि वे पुलिसकी मदद ले। डॉक्टर अम्वेडकरने मुझसे कहा है कि पुलिस भी सवर्ण

हिन्दुओंमे से होनेके कारण सहायता नही देती, और सम्भव भी यही है। इसलिए इतना ही कहा जा सकता है कि जहाँ पुलिस विरुद्ध अथवा तटस्थ हो और सवर्णोंमे से भी जहाँ कोई अपना मददगार न निकले, साथ ही हरिजनोमे काफी शक्ति पैदा न हुई हो, वहाँ तो सब्र रखना ही ठीक है। आश्वासन इतना ही दिया जा सकता है कि प्रत्येक व्यक्ति और समाजके लिए ऐसा समय आ जाता है जब उसके सामने सिवा सब्रके और कोई चारा नहीं रहता। ऐसा न हो तो मनुष्य नास्तिक बन जाये, ईश्वरको भूल जाये। इसलिए जब हरिजनको किसी कष्टसे मुक्ति पानेका उपयुक्त अहिंसक उपाय न सूझे, तब वह हरिकी सहायता माँगे।

हरिजन-सेवक, ५-५-१९३३

११७. तार: नारणदास गांधीको

५ मई, १९३३

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती

शर्माका बयान बिलकुल सन्तोषजनक है। उपवासके दौरान उन्हें आश्रममें ठहरनेकी सलाह देता हूँ। आशा है कि प्रेमाका उपवास पूरा हो गया होगा। नी० की हालत लिखो।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८२७२ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी।

११८. पत्र: ई० ई० डॉयलको

५ मई, १९३३

प्रिय कर्नल डॉयल,

यदि आप आज अनुमति दे सकते हों, तो मैं श्रीमती गांधी, श्रीमती मीराबहन (स्लेड, साबरमती), श्रीमती मणिबहन पटेल (बेलगाँव), श्रीमती वसुमतीबहन पण्डित (थाना), श्रीयुत प्यारेलाल[1] (नासिक) और श्रीयुत सुरेन्द्रजी (बीसापुर)को रोज पत्र लिखना और उनसे रोज पत्र पाना चाहता हूँ। नितम्बरके उपवासके दौरान ऐसा

१. प्यारेलाल नैयर।

ही होता था। मैंने अभीतक अपनेको रोक रखा है। लेकिन मैं जानता हूँ कि सोमवार जैसे-जैसे करीब आता जा रहा है, मित्र कितने उत्सुक हो रहे होंगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल सं० १०, १९३३

११९. पत्र : च० राजगोपालाचारीको[1]

५ मई, १९३३

प्रिय च० रा०,

तुम मुझे अपने प्राणसे भी ज्यादा प्यारे हो। मैंने कल तुम्हें और शंकरलालको बहुत मर्माहत[2] किया। मेरा यह कहना निरर्थक है कि 'मुझे क्षमा करो।' तुम्हारी क्षमा तो मुझे माँगनेसे पहले ही प्राप्त है। लेकिन अब मैं वह काम अवश्य करूँगा जिसका मैंने मूर्खकी तरह विरोध किया। यदि सरकार अनुमति दे दे तो मैं तत्काल या जब आप चाहें किसी भी डॉक्टरसे परीक्षा करवा लूँगा। मेरा खयाल है कि परीक्षाका परिणाम प्रकाशित नहीं किया जाना चाहिए, क्योंकि इसका राजनैतिक उपयोग किये जानेकी आशंका है। मैं यह भी कह देना चाहता हूँ कि डॉक्टरी जाँच हो तो भी इसका उपवासके शुरू होनेपर कोई असर नहीं पड़नेवाला है।

अधिक मिलनेपर। इतना तो मनको विकारके उस बोझसे हल्का करनेके लिए लिखा है जो कल मनमें आ गया था।

तुम्हें व शंकरलालको प्यार।

बापू[3]

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १३-५-१९३३

१. यह "स्पार्क्स फ्रॉम द सेक्रेड फायर–२" (महादेव देसाईसे एक और भेंट) शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।

२. च० राजगोपालाचारीसे बातचीतके लिए देखिए परिशिष्ट–४।

३. *हरिजन* में प्रकाशित रिपोर्टके अनुसार "दूसरे दिन च० राजगोपालाचारी हँसते हुए आये और बोले 'क्षमा-याचनाका तो कोई कारण ही नहीं है, नाराजी आपकी अपेक्षा हम लोगोंके व्यवहारमें ज्यादा थी और अब हम लोगोंने डॉक्टरी परीक्षा न करानेका निर्णय ही ले लिया है'।"

१२०. पत्र : जमनाबहन गांधीको

५ मई, १९३३

चि० जमना,

मेरा पत्र पानेके लिए तुम्हारी उतावली मुझे बहुत अच्छी लगती है। प्रभुकी इच्छा हुई तो उपवासके बाद तुम्हे सन्तुष्ट करूँगा। लगातार डॉक्टरका इलाज करके बीमारी दूर कर लो। मेरे उपवासके कारण उसे नि शेष करनेका दुगुना प्रयत्न करना। मै जिऊँ या मरूँ तुम्हे तो अभी और भी सेवा करनी ही है। पुरुषोत्तमके पत्र मिलते रहते होगे।

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ८८०) से, सौजन्य : नारणदास गाधी।

१२१. पत्र : नारणदास गांधीको

[५ मई, १९३३][1]

चि० नारणदास,

कल तुम्हे पत्र लिख ही नही पाया। छगनलालसे सम्बन्धित टीकाके बारेमे तुम्हारा कहना समझ गया। जवाब तो मेरी इच्छाके अनुसार ही लिखकर भेजे है, फिर भी पत्रके कई वाक्य मनको अखरे। उनमे ताना था और क्रोध था। किन्तु तुम्हे या किसी औरको मै क्या सीख दे सकता हूँ? मुझे क्या अधिकार है? कल राजाजी-जैसे प्रियजनके साथ बात करते हुए मै धैर्य खो बैठा और उनके तथा शकर लालके सामने क्रोधित हो उठा। अब देखता हूँ कि बात कितनी मामूली थी। मेरी ही मूर्खता थी। उन्होने जो कहा, जो सुझाव दिये, वे मुझसे स्नेह होनेके कारण। मेरी भलाईके सिवा उनके मनमे कोई दूसरा विचार न था। यदि उनके ऊपर मै क्रोध करता हूँ और फिर भी छगनलालके विवेकहीन आरोपोसे तुम्हे क्रोध आनेपर मैं तुमसे कुछ कहूँ, तो उसका असर तुमपर किस प्रकार हो सकता है? मुझमे [क्रोध का] यह साँप सोया पडा है और छेडनेसे तुरन्त जाग उठता है, यह कल सिद्ध हो गया है। इसीलिए तुम मेरे कहनेपर भी अपने वचनोमे क्रोध नही देख पाये हो।[2] मैंने कहा है इसलिए क्रोध होगा, ऐसा तुमने श्रद्धापूर्वक मान लिया है। यह तुम्हारी भक्तिको शोभा देता है। किन्तु इससे मेरी अयोग्यता भी सिद्ध होती है। मै हार

१. बापुना पत्रो–९ : श्री नारणदास गांधीने, भाग–२ से। इस पत्रमें च० राजगोपालाचारी व शंकरलालसे ४ मई, १९३३ की गांधीजी की बातचीतके जिक्रसे भी।

२. देखिए पृ० ११२।

नही मानूँगा। साथियोकी भक्तिके योग्य होनेका प्रयत्न करूँगा। आगामी यज्ञ इस प्रयत्नका भाग है। मेरे लिए भी यह यज्ञ बहुत आवश्यक है, यह बात मुझे कदम-कदमपर दिखाई दे रही है। आश्रमकी अपूर्णता मेरी अपूर्णताका ही हू-ब-हू चित्र है, यह मैं कभी भूल नही पाया हूँ। आश्रमको आगे न बढा सका तो यह जीवन व्यर्थ ही समझो। आश्रमको छोडकर या बन्द करके बैठ जाना तो कायरता होगी। आश्रमका विकास करते जानेकी कला साधनी होगी। यह शक्ति मैं इस यज्ञ द्वारा प्राप्त करनेकी आशा किए हूँ। यह हो जाये तो दूसरी बातोकी आशा की जा सकती है। यह न हो तो मैं कोई आशा नही कर सकता। यह यज्ञ इसलिए करना है। इसमे तुम पूरी तरहसे भाग लेना। तुम्हे अभी उपवास नही करना है, उसकी योग्यता प्राप्त करनी है। सो तुम प्राप्त कर रहे हो। जहाँ-जहाँ तुम्हे अपनी अपूर्णता दिखाई दे वहाँ उसपर हमला करके उसे दूर करो। मेरी चिन्ता न करना। यदि वहाँकी खबर मुझे रोज मिलती रहेगी तो उसमे मनको बहुत शान्ति मिलेगी। उन दिनो यही मेरा भोजन होगा।

ऐसा लगता है कि डंकन और शर्मा कुछ कहना चाहते हैं। उनके साथ बात करना।

मार्गरेट स्पीगल शायद सोमवारको आश्रमके लिए रवाना होगी। अच्छी महिला है। किन्तु समझती कम है। हठ बहुत है। उसके पास पर्याप्त खादी नही है। उसे जितनी खादीकी जरूरत हो उतनी देना। पोशाक कैसी पहने यह प्रश्न खडा होगा। अभी साडी ही पहनती है। उसे जल्दी खादी पहननेका आग्रह न हो तो तुम भी न करना। मुझे तो नी० की पोशाक प्रिय है। मैंने ही उसे वह पोशाक सुझाई थी। उसे सिलाई अच्छी आती है। वह मन लगाये तो बहुत-कुछ कर सकती है।

मार्गरेटको वह पोशाक पसन्द नही आई। फिलहाल चाहे तो किसी बहनकी मोटी साडी पहनकर देखे। मोटी साडीके नीचे पेटीकोट-जैसी किसी चीजकी जरूरत नही है। मोटी साडीके नीचे मेरी तरह चड्डी भी पहने तो काफी है। या मीराबहनकी तरह स्कर्ट, चोली और मोटी ओढनी काममे लाये। मीराबहनने खादीकी ठीक बचत की है। स्कर्ट सम्पूर्ण पोशाक तो नही ही है। उसके नीचे चड्डी पहननी ही चाहिए। अब तुम मार्गरेटका मार्गदर्शन कर सकोगे।

उसके पास थोडा-सा पैसा था, सो मैंने ले लिया है। एक जजीर थी वह भी ले ली है। यह सब मैंने 'हरिजन' शास्त्री[1] को सौप दिया है। यदि वह आई तो उसी गाडीसे आयेगी जिससे नी० आई थी। रामजी जाये तो जाने देना। रहता हो तो अच्छी तरह रहे। बालोके बारेमे कुसुमसे तनिक भी आग्रह न करना। लाभ तभी होगा जब ठीक समझ कर कटायेगी।

शान्ति अब ठीक होगी।

बापू

१. आर० वी० शास्त्री, *हरिजन* के सम्पादक।

[पुनश्च :]

परशुराम कल आ पहुँचा है। उसके बोलनेमे कोई ढग नही है। मै उससे बात कर रहा हूँ। कुछ लिखने लायक हुआ तो लिखूंगा।

आज शर्मा आदिके बारेमे तार भेज रहा हूँ। नी० के बारेमे जो अनुभव हो, लिखना।

हिन्दी पढानेके लिए क्या विचार किया है? वहाँ हिन्दी पढानेका प्रबन्ध होना ही चाहिए। नी० को हिन्दी सिखानी चाहिए।

जमनाबहन, डॉ० शर्मा, नी० (२) और शान्तिके पत्र साथ है।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३७१ से भी; सौजन्य · नारणदास गाधी।

१२२. पत्र : हीरालाल शर्माको

५ मई, १९३३

भाई शर्मा,

तुमारा खत मिला है। आज तार दे रहा हू।

मेरी सलाह यह है कि उपवास दरम्यान आश्रममे ही रहो और आलस्य निकालो। उसे निकालनेका औषध उद्यम ही है। आश्रममे उद्यम जितना चाहिये इतना मिल सकता है।

आश्रमकी जो बाते देखनेमे आवे उसे नारणदाससे कहो।

तुमारे उपवासका[1] मैंने सुना था। ठीक ही था। ऐसी बातोमे मत्रीकी सम्मति लेनेकी शिस्त है।

नैसर्गिक उपचारपर तो मेरे विश्वास चालीस वर्षका है। मेरा मतलब यह था कि तुम्हारी आश्रममे सफलता होनेसे तुमारे उपचारोपर मेरा विश्वास जमेगा। आश्रमके लिए पेम्फ्लेंट अवश्य लिखो।

बापूके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० ४४

१. डॉ. हीरालाल शर्मा दिल्ली वापस जानेकी योजना बना रहे थे और उपवासपर थे। ऐसी यात्रासे पहले, जिससे आबहवा बदलती हो, वे एक या दो दिनका उपवास रखा करते थे।

१२३. पत्र : पांडुरंग नाथूजी राजभोजको

[५ मई, १९३३][1]

भाई राजभोज,

तुमारा पत्र[2] मिला है। तुम अच्छा कार्य कर रहे हो।

पूना पेकटके बारेमे यदि प्रश्न आगे बढा तो अवश्य मैं दूसरे हरिजन नेताका अभिप्राय लुगा।

खुले हुए मंदिरोंके बारेमें तुमारी सूचना मुझे अच्छी लगती है इसका उल्लेख मैं ह[रिजन] से[वक]मे करुंगा।

शारदा एकटकी बात हरिजनोमे फैलानेमे इस समय कोई सार नही है। थोडा और काम कर लेगे तब यह कार्य कर सकेंगे।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

मेरे उपवासमे चिंता न की जाय। कर्तव्यमे ही तन्मय रहो।

बापू

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ७१४) से।

१२४. सन्देश : आर्य समाज सम्मेलनको[3]

[६ मई, १९३३ या उससे पूर्व][4]

मैं हृदयसे कामना करता हूं कि भारतमें अस्पृश्यता मिटानेके तरीके निकालनेमे परमेश्वर आपके सम्मेलनका मार्गदर्शन करे।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ८-५-१९३३

१. पत्रके अन्तमें किसीने यह तारीख लिखी है।

२. उस पत्रमें पा० ना० राजभोजने गांधीजी से पूना समझौतेके विषयमें अम्बेडकरके प्रस्तावोंपर विचार करनेके लिए हरिजन नेताओंकी एक बैठक बुलानेकी प्रार्थना की थी, और यह सुझाव दिया था कि हरिजनोंके लिए जो मन्दिर खोले जायें वहाँ सवर्ण हिन्दुओं और हरिजनोंकी संयुक्त सभाएँ हों तथा भजन आदि कार्यक्रम हों।

३. दिल्लीमें डॉ० बी० एस० मुंजेकी अध्यक्षतामें हुआ। सम्मेलनने अन्य प्रस्तावोंके साथ गांधीजी के प्रस्तावित उपवासपर चिन्ता व्यक्त करते हुए प्रस्ताव पास किया और हर व्यक्तिसे अस्पृश्यता उन्मूलन करनेकी अपील की।

४. यह "नई दिल्ली, ६ मई, १९३३" की तिथि-पंक्तिके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

१२५. मनुष्य-रचित – २

श्री ए० ई० पोर्टर, आई० सी० एस० द्वारा प्रस्तुत बगाल एव सिक्किम जनगणना रिपोर्टमे 'दलित वर्गो' पर जो सशक्त प्रबन्ध है, जिससे गत सप्ताह मैने दो अनुच्छेद उद्धृत किये थे[1], मुझे खेद है कि मै उसका जैसा पूर्ण विश्लेषण करना चाहता था वैसा नही कर सकूँगा। अनुच्छेद ४ मे लेखक उन मापदण्डोके दोष बताता है जो विभिन्न अवसरोपर विभिन्न जनगणना आयुक्तो और अन्य लोगो द्वारा सुझाये गये है। श्री पोर्टर कहते है

> **स्वभावतः वे मात्र धार्मिक या सामाजिक निर्योग्यताएँ रह जाती है, और एक भी बार कोई ऐसा मापदण्ड नही रखा गया है जो पहली दृष्टिमें ही प्रशासनका ध्यान आकर्षित कर सके।**

क्योंकि वे "पूर्णतया सामाजिक और धार्मिक विवेचनके विषय है", इसलिए "वे दलित वर्गोकी समस्यापर सरकारके विचार-विमर्शके लिए बिलकुल अप्रासगिक होगे।" इसके बाद वे कुछ मापदण्डोपर विचार करते है। मन्दिर-प्रवेशका [उनमे] पहले नम्बर आता है। पूरा अनुच्छेद दिलचस्प है। वह इस महत्वपूर्ण निष्कर्षके साथ समाप्त होता है

> **मन्दिरोमे पूजा या प्रवेशके अधिकारके बारेमें जो निर्योग्यताएँ है वे अधिकतर प्रथानुसारी है या परिवर्तन से अप्रभावित रहनेवाली नहीं है और हर हालतमे, जबतक वे समाजके केवल सामाजिक और धार्मिक जीवनतक ही सीमित है, तबतक समुचित रूपसे उनसे यह दावा नहीं बनता कि राज्य संस्थामें उनपर विशेष रूपसे विचार होना चाहिए।**

ब्राह्मणो और नाइयोकी सेवाके बारेमे जो अनुच्छेद है, वह मुझे छोडना होगा। उसमे भी लेखक यह दिखाता है कि चलन अनिश्चित है, किसी भी अर्थमे सर्वव्यापी नही है और बराबर बदलता रहता है।

उसके बाद स्पर्शसे अशौचके विचारके बारेमे अनुच्छेद है। लेखकका कहना है :

> **अस्वच्छता और अशौचके विचारके बारेमे भी इसी तरहका प्रथानुसरण और लचकीलापन है।**

उच्च वर्णके लोग एक ही समूहके बारेमे विभिन्न स्थानोपर विभिन्न प्रकारका अशौच मानते है। यही बात खान-पानके प्रतिबन्धोपर भी लागू होती है।

1. देखिए पृ० ६५-८।

यह बात ध्यानमें रखनी चाहिए कि श्री पोर्टरने इस प्रश्नपर केवल इस दृष्टिसे विचार किया है कि 'दलित वर्गों' में किनको शामिल करना है, इस कठिन प्रश्नकी छानबीन की जाये। इसीलिए वे कहते हैं

> अतः सामाजिक प्रश्नके रूपमें दलित वर्गोकी समस्या मुख्यतया ऐसी समस्या है जिसे हिन्दू-समाजको खुद सुलझाना है। सरकारी हस्तक्षेपकी अपेक्षा रखनेवाली एक प्रशासकीय समस्याके रूपमें, सामाजिक और धार्मिक निर्योग्यताएँ [दलित वर्गोमें] शामिल किये जानेवाले वर्गोके लिए सन्तोपजनक कसौटी नहीं है। उधर, प्रशासन द्वारा सचालित सुविधाओमें दलित वर्गोके भाग लेनेपर प्रतिवन्ध इतना कम है कि वह नगण्य है। वस्तुतः, प्रशासनके लिए बंगालके दलित वर्गोकी समस्या एक तरहसे है ही नहीं, जो है वह इतनी ही है कि उनकी आर्थिक स्थिति और शिक्षाके स्तरको सुधारनेके लिए विशेष उपाय आवश्यक हैं। इसे जो प्रसिद्धि मिल रही है उसका कारण अधिकतर यह है कि पिछले कुछ सालोमें इन वर्गोंके सदस्योके लिए धारासभाओमें पृथक् प्रतिनिधित्वके सवाल उठाये गये हैं। इसलिए, कम-से-कम बंगालमें, किसी सामाजिक प्रथा या किसी नागरिक निर्योग्यताको दलित वर्गोकी पहचानके लिए एक स्पष्ट कसौटीकी तरह प्रयुक्त करनेकी कोशिश विफल हुए विना नहीं रह सकती। अत. इसके लिए कोई अन्य पहचान ढूंढनी चाहिए। अस्पृश्योको रखना आवश्यक है, क्योकि जनगणना आयुक्तने दलित वर्गोकी व्याख्या करते हुए कहा है कि ये वे जातियाँ हैं "जिनका स्पर्श होनेपर उच्च वर्णोके हिन्दू शुद्ध होना आवश्यक मानते हैं।"
>
> उन्होंने आगे कहा है
>
> आशय यह नहीं है कि इस नामका सम्बन्ध धन्धेसे होना चाहिए, वल्कि उन जातियोसे होना चाहिए जिन्हे हिन्दू-समाजमें उनकी परम्परागत स्थितिके कारण, उदाहरणार्थ, मन्दिरोमें प्रवेश नहीं करने दिया जाता है, या अलग कुँओका प्रयोग करना होता है, या स्कूलोके अन्दर बैठने नहीं दिया जाता है वल्कि उनके बाहर रहना होता है, या इसी तरहकी सामाजिक निर्योग्यताएँ भोगनी होती हैं।

प्रत्येक प्रान्तके लिए दलित वर्गोकी एक सूची तैयार करनेके प्रश्नपर जनवरी १९३१ में जनगणना कार्योके सुपरिंटेंडेंटोकी एक सभामें विचार-विमर्श हुआ। इस विचार-विमर्शके फलस्वरूप जनगणना आयुक्तने घोषणा की :

"मेरा यह सुझाव है कि 'दलित वर्ग' नामको अभी भारतकी जनगणनाके प्रयोजनार्थ अस्पृश्योका निर्देश करनेके लिए कायम रखा जाये, अस्पृश्यताकी मात्रा चाहे हल्की हो या तीव्र।"

यह भी निश्चय किया गया कि मुसलमानो और ईसाइयोको उनमें शामिल न किया जाये, और आम तौरपर उन पहाड़ी और जंगली जन-जातियोंको भी

जो हिन्दू नही बनी है बल्कि जिनका धर्म 'जनजातीय' लिखा गया है, उनमें शामिल न किया जाये।

वे फिर आगे यह बताते हैं कि 'दलित वर्ग' इस अभिव्यक्तिमे न केवल हरिजन, जो उनके द्वारा परीक्षित विभिन्न सामाजिक और धार्मिक कसौटियोपर ठीक उतरते है, शामिल किये जाने चाहिए, बल्कि वे सब लोग भी शामिल किये जाने चाहिए जिनके बारेमे,

> प्रान्तीय गवर्नरके नाम सम्राटके आदेशपत्रके अर्थोमें, अभी भी यह कहना सच होगा कि शैक्षणिक और भौतिक सुविधाओके अभावके कारण, वे विशेष रूपसे सरकारकी सुरक्षापर निर्भर हैं और अपने कल्याणके लिए अभी संयुक्त राजनीतिक कार्रवाईपर पूरी तरह निर्भर नहीं रह सकते।

अनुच्छेद १७ मे १९२१ और १९३१ की दलित वर्गोकी सूचियोकी जो तुलना है, वह बहुत ही ज्ञानवर्धक है। केवल बंगालके ब्रिटिश जिलोमे १८,०१,७१२ व्यक्तियोको, जो १९२१ की सूचीमे शामिल किये गये थे, १९३१ की सूचीसे निकाल दिया गया है और ये लोग आठ जातियोके है जिनमे सबसे ज्यादा राजवशी है। इसी तरह कुछ समूह ऐसे है जिन्हे पहली बार १९३१ की सूचीमे शामिल किया गया है। 'दलित वर्गो'के अकेले 'क' समूहमे ही, जिससे फिलहाल हमे मतलब है, १९३१ की जनगणना रिपोर्टमे ४८ जातिया है, जबकि १९२१ की रिपोर्टमे केवल १९ ही थी। तुलना अन्य रिपोर्टोकी भी की गई है, पर मैंने अपनेको केवल जनगणना-रिपोर्टोतक ही सीमित रखा है। अध्यवसायी विद्यार्थीके लिए दलित वर्गोसे सम्बन्धित इस पूरी रिपोर्टका सावधानीसे अध्ययन आवश्यक है। अपने परिश्रमसे उसे पर्याप्त लाभ होगा।

परन्तु जितना-कुछ मैंने यहाँ दिया है वह, मुझे आशा है, यह दिखानेके लिए काफी है कि अस्पृश्य मनुष्य-रचित है। यही नही, वे उन जनगणना-निर्देशको द्वारा रचित हैं जिन्हे धार्मिक अस्पृश्यतासे कुछ लेना-देना नही है, और उन आदेशोके अनुसार रचित है जो उन्हे उनके उच्चाधिकारियोसे मिलते रहे है और समय-समय पर बदलते रहे है। इस तरह कलकी जनगणनाका अस्पृश्य आज अस्पृश्य नही रहता और जो कल अस्पृश्य नही था वह जनगणनाकी इन कार्रवाइयो द्वारा आज अपने-आपको अस्पृश्य पाता है। इस सूचनाको मै ईमानदार सनातनियोके सम्मुख रखता हूँ और उनसे यह पूछता हूँ कि क्या वे इस तरहकी स्थितिसे सन्तुष्ट है, या वे अस्पृश्यताकी विभिन्न परिभाषाओ या इस तथ्यसे सन्तुष्ट है कि, एक विशेष परिभाषाके अनुसार, एक ही व्यक्तिके बारेमे अस्पृश्यता स्थान-स्थानपर बदलती है। क्या यह सब शास्त्रो द्वारा आदिष्ट हो सकता है? इस सांकेतिक और कठिन प्रश्नको बढाते जाना सम्भव है, पर मै यही रुकता हूँ।

एक चीज जिसपर प्रत्येक विचारशील पाठकका ध्यान जाना चाहिए, यह है कि राज्य या कानूनको अस्पृश्यतासे कोई वास्ता नही रखना चाहिए और, इसलिए, अस्पृश्यता-निवारण विधेयक सबसे पहले आवश्यक है। जो प्रथा मानवजातिके नैतिक बोधके प्रतिकूल है, जिसका व्यक्तियोपर प्रभाव और प्रयोग समय-समयपर और

स्थान-स्थानपर बदल जाता है, उसे एक धर्मनिरपेक्ष राज्यके, ऐसे राज्यके कानूनकी स्वीकृति नही मिल सकती और न मिलनी चाहिए जो एक ओर उन लोगोका प्रतिनिधित्व करता है जो चाहे कितने भी अस्थिर मनसे करते हो पर अस्पृश्यतामे विश्वास करते है, और दूसरी ओर उन लोगोका प्रतिनिधित्व करता है जो उसे अधर्म मानते है। इस तरहकी प्रथाको राज्यकी मान्यता रोकनेसे किसी भी व्यक्तिके व्यक्तिगत विश्वास या उसके सामाजिक चलनमे किसी भी तरहका हस्तक्षेप नही होता। किसी व्यक्तिके लिए अपने बन्धु-मानवको धार्मिक और सामाजिक समारोहोमे अस्पृश्य माननेकी तब भी स्वतन्त्रता रहेगी और कानून उसमे कोई हस्तक्षेप नही करेगा। इसमे कट्टर रूढिवादी लोगोको भी सन्तोष हो जाना चाहिए, और सुधारक यदि इससे अधिककी माग करेगा तो वह न्यायकी सीमाओका उल्लघन होगा।

एक और बात जो श्री पोर्टरके प्रबन्धसे स्पष्ट हो जाती है, यह है कि 'दलित वर्ग'—इस नामके अन्तर्गत लानेके लिए जो निर्योग्यताएँ है, अस्पृश्यताको उनमे शामिल नही करना चाहिए। वे नागरिक, राजनैतिक, आर्थिक और धर्मनिरपेक्ष प्रकारकी निर्योग्यताएँ होनी चाहिए, जिनपर राज्य ध्यान दे सकता है और उसे देना चाहिए, और जिनका कोई इलाज ढूंढना राज्यके लिए केवल सम्भव ही नही बल्कि उसका कर्त्तव्य भी है। इससे 'दलित वर्गो' की सूची अस्पृश्यतासे मुक्त हो जायेगी और अस्पृश्योके अलावा अन्य लोगोके साथ अस्पृश्यताके जो बरताव है, राज्य उनसे निपट भी सकेगा।

यदि जनगणनाकी कार्रवाइयोमे अस्पृश्यताकी उपेक्षा की जाये, जैसीकि की जानी चाहिए, तो सनातनियोके विरोधका सारा जोर निकल जायेगा। उनके लिए और मानवजातिके लिए यह खुशीकी बात है कि प्रकृतिने ऐसा कोई अमिट चिह्न नही रखा है जिससे अस्पृश्य अपने बाकी बन्धुओसे अलग पहचाने जा सके। विभिन्न जनगणना-रिपोर्टों और देशके आम कानूनके अध्ययनसे जहाँतक मै समझ सकता हूँ, इस लक्ष्यकी प्राप्तिमे, जो लेखकने इस विचाराधीन प्रबन्धमे इतनी योग्यतासे रखा है, कोई कानूनी कठिनाई नही है। यह बात भी याद रखनी चाहिए कि यरवदा-समझौतेमे दलित वर्गोकी परिभाषा निश्चित करनेकी बात सोची गई थी, पर वह अभी निश्चित नही हो पाई है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ६-५-१९३३

१२६. प्रभुकी इच्छा पूर्ण हो

खबर है कि जनरल स्मट्सने निजी तौरपर मुझसे अनशन न करनेके लिए बडी मर्मस्पर्शी अपील की है। कुँवर महाराजसिहने उस अपीलका समर्थन किया है। मुझे अभीतक तार[1] नही मिला है। लेकिन इस खबरकी सचाईमे कोई सन्देह दिखाई नही देता।

डॉक्टर अन्सारीने मुझे प्रेमके ऐसे मजबूत धागेसे बाँध रखा है जो कड़े-से-कडे झटकेसे भी टूटनेका नही।[2] जब ऐसा लगता था कि जिस 'श्यामी युग्म'[3] के जरिये मै महान और नेक हकीम साहब अजमल खाँ और फिर डॉ० अन्सारीसे मिला था, उसने मुझे छोड दिया है, तब भी डॉ० साहबका यह विश्वास कभी नही विचलित हुआ कि मेरे मनमे भारतके मुसलमानोके प्रति ऐसा प्रेम है मानो वे मेरे सगे भाई हों। बात सचमुच ही ऐसी है क्योकि हम एक ही 'मादरे हिन्दकी औलाद' है। मेरे पुराने दोस्त, सहयोगी और चिकित्सकके नाते वे हृदयद्रावक शब्दोमे मुझसे उपवासके विषयमे पुन विचार करनेपर जोर दे रहे है।

उधर मेरे अन्तरकी बात जाननेवाले चक्रवर्ती राजगोपालाचारीने एक लम्बा तार भेजकर मेरे अनशनके आधारपर ही आघात किया है।

मेरे सबसे छोटे पुत्र और योग्य सहयोगी देवदासकी अविरल अश्रुधारासे भरा, व्यक्तिगत अनुरोध भी इन्हीमे जोड ले।

जब इस तरहकी ये अपीले भी मुझे मेरे निश्चयसे न डिगा सकी, तब पाठकोको यह आसानीसे समझ लेना चाहिए कि अवश्य कोई ऐसी शक्ति मौजूद है जिसने मेरे ऊपर बेतरह कब्जा जमा रखा है और जो मुझे इन अपीलो और अनुरोधोपर कान देनेसे रोक रही है।

इन अपीलोका यह मतलब तो है ही कि मेरे मित्र मेरे इस दावेपर विश्वास नही करते कि मेरा यह अनशन 'ईश्वर-प्रेरित' है।[4] मेरा यह आशय नही है कि वे मेरे शब्दोपर विश्वास नही करते। वे यह मानते है कि मै इस समय भ्रममे हूँ, शायद मेरी कल्पना जेलकी चारदीवारीके अन्दर बन्द रहते-रहते गरम होकर भड़क उठी है और उस उत्तेजित कल्पनाके कारण ही मै अपने अनशनको ईश्वर-प्रेरित मान बैठा हूँ। मै यह दावा नहीं करता कि मेरे विषयमे ऐसी बात नही हो सकती। पर जबतक मेरी भ्रान्ति भ्रान्तिके रूपमे मेरे सामने स्पष्ट न हो जाये, तबतक मुझपर

१. दक्षिण आफ्रिका में भारत के एजेंट जनरल कुँवर महाराजसिंहके तारके लिए देखिए पृ० १२४।

२. देखिए पृ० १०७-८।

३. शौकत अली और मुहम्मद अली।

४. देखिए पृ० ७४-६ भी।

उसका कोई असर नही होनेका। जेलमे रहनेका तो मै आदी हो गया हूँ। जेलकी चार-दीवारीने कभी मेरी विवेचना-शक्तिपर कोई प्रभाव नही डाला और न उसके कारण किसी वातको लेकर उधेड-बुन करनेकी लत ही मुझे लग सकी है। अपने विभिन्न कारावासोकी अवधिमे मै वहुत अधिक कार्यव्यस्त रहा हूँ और कोरी उधेड-बुनकी मुझे फुरसत ही नही रही। निस्सन्देह, हरिजनोपर होनेवाले जुल्मोके वारेमे मैने वहुत सोचा है, पर उस निरन्तर चिन्तनके परिणामस्वरूप मैने कोई-न-कोई निश्चित कार्य ही किया है। जिस रातको उक्त महत्त्वपूर्ण निर्णय लिया गया उसके एक दिन पहले मै जो कदम उठानेके सम्बन्धमे विचार कर रहा था, निश्चय ही वह कदम अनशन तो कदापि नही था।

मेरा ईश्वरकी आवाज सुन सकनेका दावा कोई नया दावा नही है। पर दुर्भाग्यसे प्राप्त परिणामोको छोडकर और किसी तरह उसकी सचाई सावित करनेका कोई मार्ग मेरे सामने नही है। यदि ईश्वर अपने रचे हुए प्राणियोको यह शक्ति दे दे कि वे उसके अस्तित्वको सिद्ध-असिद्ध करनेका विषय वना ले, तो ईश्वर, ईश्वर ही न रहे। किन्तु वह उसकी शरणमे अपने-आपको सर्वतोभावेन अर्पित कर देनेवाले, आत्म-निवेदक दासको अवश्य यह शक्ति दे देता है कि वह कठिन-से-कठिन अग्निपरीक्षासे उत्तीर्ण हो जाये। मै प्राय पचास वर्षसे भी अधिक समयसे इस सवसे वडे न्यायप्रिय स्वामीका सर्वतोभावेन दास रहा हूँ। ज्यो-ज्यो समय वीतता गया, उसका अन्तर्नाद मेरे लिए अधिकाधिक स्पष्ट होता गया। मेरे जीवनकी अँधेरी-से-अँधेरी घडियोमे भी उसने मेरा हाथ नही छोडा। कितनी ही वार तो उसने मेरे ही सकल्पोके विरुद्ध मेरी रक्षा की और स्वतन्त्रताका लेश भी मुझमे शेष नही छोडा। मै जितना ही अधिक अपनेको उसकी शरणमे अर्पित करता गया, मैने उतना ही अधिक आनन्द पाया।

इसलिए मुझे पूरा भरोसा है कि मेरे अतिशय कृपालु मित्र मेरे अनशनके औचित्यको मान लेगे। मै उसके वाद जीवित रहूँ या मर जाऊँ, हर हालतमे वे मेरे अनशनको उचित ही माने। प्रभुकी मरजी जानी नही जा सकती, उसकी लीला अपरम्पार है। और कौन जाने अनशन-कालमे उसे मेरी मृत्यु इष्ट हो, ताकि उससे मेरे जीवनकी अपेक्षा अधिक शुभ परिणाम प्राप्त हो सके? निश्चय ही हमारा यह विचार कि क्षणभगुर शरीरसे व्यक्तिकी आत्माके अलग होते ही उसकी सेवा करनेकी शक्ति नष्ट हो जाती है, एक अपकर्षकारी विचार है। रामकृष्ण और दयानन्द, विवेका-नन्द और रामतीर्थकी आत्माएँ हम लोगोके वीचमे क्या आज भी अपना-अपना काम नही कर रही है? हो तो यह भी सकता है कि वे आत्माएँ जव पार्थिव शरीरमे आवद्ध थी, तवसे वे आज कही अधिक शक्तिशालिनी हो। यह कहना गलत है कि वहुधा मनुष्यके सत्कर्म उसकी मृत्युके साथ ही विलीन हो जाते है। हम उसकी वुराइयोको उसके नश्वर शरीरके साथ जला देते है। पर उसके सत्कर्मोकी यादको हम सुरक्षित रखते है। ज्यो-ज्यो समय वीतता जाता है, उस स्मृतिका मूल्य वढता जाता है।

और फिर किसी खास व्यक्तिकी सेवाओको, चाहे वह कितना ही नेक और योग्य क्यो न हो, इतना अधिक महत्त्व क्यो दिया जाये? हरिजनोका कार्य हरिका

कार्य है। जब भगवानको जरूरत होगी, तब वह अपनी इच्छा पूरी करनेके लिए अनेक उपयुक्त लोग उत्पन्न कर देगा।

इसलिए जनरल स्मट्स और अपने दूसरे मित्रोसे मैं इस बातपर विश्वास कर लेनेके लिए अनुरोध करता हूँ कि मैं यह काम किसी भ्रममे पड़कर नही कर रहा हूँ। उनसे मेरी विनय है कि वे परमात्मासे प्रार्थना करे कि वह मुझे अग्निपरीक्षासे सकुशल पार हो जानेकी शक्ति प्रदान करे। मुझे विश्वास है कि, चाहे-जिस सेवाके लिए हो, यदि अभी इस पृथ्वीपर थोड़े दिनोतक मेरे जीवित रहनेकी आवश्यकता है, तो डॉक्टरोके डरको असत्य ठहराकर भगवान मुझे बचा लेगा।

उपर्युक्त लेखका टकन ही हो रहा था कि सर कुँवर महाराजसिहका तार मिला। समाचारपत्रोके पाठमे कुछ शब्द छोड दिये गये है। तार इस प्रकार है.

> निम्नलिखित तार जनरल स्मट्सने निजी तौरपर मुझे भेजा है ताकि मैं इसे आपतक पहुँचा दूँ:
>
> "मैं आपसे हार्दिक अपील करना चाहता हूँ कि आप अपना घोषित उपवास शुरू न करे। अस्पृश्यता-निवारण-सम्बन्धी आपके कार्यको अधिक-से-अधिक जितनी आशा की जा सकती थी, उससे भी अधिक सफलता मिली है। हमारे युगके इस सबसे बड़े सुधारको आप धैर्यपूर्वक पूर्णतः सम्पन्न करनेकी दिशामें अब भी कार्य जारी रख सकते है। इसके अलावा भारतमें एक नये युगका आरम्भ हो रहा है, जिसमें आपके विवेकयुक्त निर्देशनकी आवश्यकता पहलेसे कहीं ज्यादा है। आपके अपने जीवनको जोखिममें डालनेसे भयानक विपत्तिका सामना करना पड़ सकता है। इस बहुत ही नाजुक समयमें वह एक कभी पूरी न हो सकनेवाली क्षति होगी। मैं पुरानी मैत्रीके नाते और उन महान उद्देश्योके लिए जिनको आपने इतनी सफलतापूर्वक आगे बढ़ाया है, आपसे यह अपील करता हूँ।"
>
> इस तारको आपके पास भेजते हुए मैं अपनी ओरसे जनरल स्मट्स द्वारा व्यक्त किये गये विचारोंका अनुमोदन करना चाहता हूँ। मुझे विश्वास है कि दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय समाजकी भी यही भावना है।
>
> महाराजसिह
> एजेंट, भारत सरकार

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ६-५-१९३३

१२७. आत्मस्वीकृति और चेतावनी

अखबारोमे मैने यह बात पढी अवश्य थी कि हिन्दुस्तानमे यह महिला[1] आई और उसने हिन्दू-धर्म स्वीकार कर लिया। मुझे यह भी मालूम था कि वह साबरमती आश्रममे जानेको बडी अधीर है। पर सितम्बर मासके मेरे अनशन-व्रतसे पहले उसने मुझसे पत्र-व्यवहार नही किया था। गत दूसरी जनवरीको, जब दूसरे उपवासकी सम्भावना प्रकट की गई, तब उसने एक लम्बा पत्र मुझे लिखा कि मेरे साथ वह भी उपवास करना चाहती है। मैने उसे इस मार्गसे हट जानेके लिए एक बहुत जोरदार पत्र लिखा, और यह भी कहा कि अगर इसपर भी उसे विश्वास न हो तो मुझसे आकर मिल ले। इसके बाद एक पत्रमे मैने उसे यह भी लिखा कि हो सके तो अपने गत जीवनका कुछ हाल मुझे लिख भेजे। उत्तरमे उसने एक लम्बा पत्र भेजा। इस बीच कुछ युवकोकी सहायतासे उस बहनने बगलोरमे हरिजन-सेवा-कार्य आरम्भ कर दिया। इस बारेमे भी उसने मुझे लिखा। इससे मेरी दिलचस्पी बढी और उसके कामकी प्रशसा करते हुए मैने पुन उसे पत्र लिखा। इस भाँति हमारा पत्र-व्यवहार बढता गया।

एकाएक, हाल ही मे मैसूरसे लौटे मित्रने मुझे चेतावनी दी कि नी० तो आपके पत्रोका दुरुपयोग कर रही है। उन्होने यह भी कहा कि वह एक मनचली युवती है। उसका चरित्र भी सदिग्ध है। उसे एक फौरी पत्र लिखकर मैने इस बातका इशारा कर दिया और लिखा कि एकदम पूना चली आओ। मेरे पत्रके उत्तरमे वह फौरन ही पूना आ गई। मुझे लगा था कि यदि यह आरोप सत्य हो, तो उसके सम्पर्कसे हरिजन-सेवाको हानि पहुँचनेकी सम्भावना है। आनेपर उसका आचरण मुझे विचित्र तो मालूम हुआ। किन्तु जब मैने उसके चरित्रके बारेमे जो कुछ सुना था वह उसे बताया तो उसने उन सारे दोपारोपणोसे इनकार कर दिया। मैने समझा कि बात खत्म हो गई और मै उससे कार्य-सम्बन्धी अन्य बाते पूछने लगा। ज्यो-ज्यो बातचीत आगे बढी, मेरा सन्देह भी बढता गया, और मैने उससे यह बात साफ-साफ कही। अब तो एकके बाद एक अत्यन्त दु खदायक बाते सामने आईं। उसका जीवन कामुक, असत्यपूर्ण तथा खर्चीला था। ऐसा लगता था कि कामुकताके प्रति उसे अरुचि नही थी। वह एक बोहेमियन परिवारमे पली-बढी थी, जहाँ ईसामसीहका नामतक निषिद्ध था। (नी० अभी केवल २४ वर्षकी है, उसका विवाह सत्रह वर्षकी आयुमे ग्रीसमे हुआ था और उसके साथ उसका एक बेटा है।) उसके जीवनमे जो आश्चर्यजनक विरोधी प्रवृत्तियाँ है उन्हे अब वह महसूस करती

१. गाधीजी की इस टिप्पणीसे पहले समाचारपत्रोंमें प्रकाशनार्थ नी०का एक पत्र आया था।

दिखाई देती है। मैंने उसे बताया कि वह उस धर्मको, जिसे उसने अपना लिया है, जबर्दस्त क्षति पहुँचा रही है और इससे हरिजन-कार्यको हानि पहुँच रही है तथा वह अपने इर्द-गिर्द एकत्रित युवकोंका चरित्र भी दूषित कर रही है। मैं समझता हूँ कि मेरे कथनमें कितना बल है, इसे वह समझ गई। उसने तत्काल अपने पूर्व जीवनसे एकदम सम्बन्ध त्याग देने और लेनदार दावा कर दे तो उसकी भी जोखिम उठानेका निश्चय कर लिया। उसने यह भी तय कर लिया कि हरिजनोंकी सेवाके लिए वह उनके बीचमें ही जाकर रहेगी और इसी कार्यके लिए अपने बच्चेका लालन-पालन करेगी। वह बंगलोर वापस चली गई। अपने दोषोंको स्वीकार करते हुए उसने एक छोटा-सा पत्र अखबारोंको भेजा, पर वे छापनेको तैयार न हुए। वह बंगलोरकी हरिजन-बस्तीमें चली गई, पर वहाँ एक लम्पट पुरुषके संसर्गमें आनेके कारण उसका पुन: पतन हुआ। तब भयभीत होकर चितलदुर्गके पास वह एक हरिजन-ग्राममें गई। जो व्यक्ति उसे वहाँ ले गया था, वह अब उसके प्रति बेपरवाह हो गया था। इससे उसे बड़ा आघात पहुँचा। इस बीच वह मेरे साथ नियमित रूपसे पत्र-व्यवहार कर रही थी। वह समझ गई थी कि समुचित पथ-प्रदर्शनके बिना हरिजनोंकी सेवा करना और अपना चरित्र ठीक रखना असम्भव है। मुझे लगा कि अपनी दी हुई सलाहको हर तरहसे पूरी करना मेरा स्पष्ट धर्म है। अगर दीन-से-दीन और दलित-से-दलित लोगोंमें सेवा करते हुए उसे जीवन बिताना है, तो उसे आश्रममें ही रहना चाहिए, जहाँ बहुत दिन पहले आनेका वह स्वप्न देखती थी। किसी मित्र या अन्य संस्थासे मैं यह नहीं कह सकता था कि वह एक ऐसी विदेशी विकारग्रस्त युवतीको अपने यहाँ रखनेकी जोखिम उठाये जिसके पूर्व-जीवनकी मलिनता अब भी कुछ अंशोंमें मौजूद हो। अत: आश्रमके व्यवस्थापककी अनुमतिसे, हिचकिचाहटके साथ, मैंने उसे आश्रम भेज दिया है। जनताके सामने मैं उसका पत्र रख रहा हूँ। ऐसा नहीं है कि मुझे इसमें कुछ संकोच न हुआ हो। उसका भयानक भूतकाल पूरी तरह मर गया है, यह विश्वास करना कठिन है। पर मानव-जीवनमें अकस्मात् परिवर्तन हुए हैं। हम आशा करते हैं कि नी० का जीवन भी ऐसा ही साबित होगा। जो बात पामर मनुष्यके लिए अशक्य है, वही परमात्माके लिए शक्य है।

यह कहना तो व्यर्थ ही है कि आश्रममें यह बहन सविनय-अवज्ञा आन्दोलनमें प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूपमें तनिक भी भाग न लेनेकी इच्छासे जा रही है।

जो युवक नी०के मोहपाशमें फँस चुके हैं उनसे भी दो शब्द कहे देता हूँ। अपने पूर्व जीवनका नग्न चित्र वह मेरे आगे रख चुकी है। सारी दुनियामें युवक-युवती भावुक होते हैं। अत: अध्ययन-कालमें अर्थात्, २५ वर्षतक ज्ञान और निश्चयपूर्वक ब्रह्मचर्यका पालन अत्यन्त आवश्यक है। देशके युवक जान लें कि तमाम सेवाकार्योंमें हरिजन-सेवाकार्य अत्यन्त कठिन है। सवर्ण हिन्दुओंकी घोर निद्रासे उनका कितना नैतिक पतन हुआ है, इस सम्बन्धमें मुझे जो-कुछ पता चला है उसका दसवाँ हिस्सा भी मैं प्रकाशित नहीं करता। अत: हरिजन-सेवाके लिए सेवकोंमें अत्यधिक पवित्रता और सादगीकी जरूरत है। जो युवक और युवतियाँ

हरिजन-सेवाका कार्य कर रही है, उन्हे नी० के उदाहरणसे शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ६-५-१९३३

१२८. हृदय-जागृतिके लिए

यह लेख मै शनिवारको[1] प्रात काल लिख रहा हूँ। बहुत मित्रोकी बाते सुनी। उनका मोह किवा प्रेम मुझे आगामी महायज्ञसे रोकना चाहता है। अन्तरात्मा कहती है—"रुकना पाप हे। सत्यनारायणके नाममे सकल्प किया हे, वही अपनी इच्छाके अनुकूल सब पूर्ण करेगा।"

बाह्य दृष्टिसे जितना म देखता हूँ, वह मुझे बताता हे कि चाहे जो हो, उपवास तो मुझे करना ही चाहिए। पडित सतानमने मुझे पजाबके कार्यका एक विवरण दिया है। उसमे लाला मोहनलालजीने तीन प्रश्न पूछे है। सक्षेपमे वे प्रश्न ये है

१ पजाबमे आर्यसमाज, सनातनधर्म, सिख, मुसलमान और ईसाई, सभी हरिजनोको अपनी ओर खीचना चाहते है।

२ हरिजनोमे ऐसे नेता पैदा हो गये है, जिनका लोभ इतना बढता जाता है कि उन्हे सन्तुष्ट करना असम्भव है।

३. इसी हेतुसे कार्य करनेवाले प्रतिस्पर्धी सघ पजाबमे है।

पाठकोको पढकर आश्चर्य होगा कि इन प्रश्नोका उत्तर मेरा उपवास है। अर्थात् हरिजन-सेवा-सघके सेवकको समझना चाहिए कि यह कार्य केवल धार्मिक है और धार्मिक दृष्टिसे होना चाहिए। इतना स्पष्ट हो जानेसे ये तीनो प्रश्न आप ही हल हो जाते है। अन्य धर्म और सम्प्रदायोके लोग जो कार्य कर रहे है, उसे मै धार्मिक नही मानता। हरिजन-सेवक अगर धार्मिक मनोवृत्तिसे कार्य करेगे तो उन्हे यह आत्मविश्वास होगा कि उनकी सेवा ही सेवाका फल है। सेवक अपनेको न्याय पर ही तोल सकते है। इसलिए हरिजन-नेता या कोई भी अनुचित दबाव डालेगे, तो वे उससे प्रभावित नही होगे। प्रतिस्पर्धी सघोपर धार्मिक दृष्टिसे किये हुए कार्यका प्रभाव अवश्य ही पडेगा।

ऐसे चमत्कारी धर्मकी व्याख्या क्या है? धर्म वह, जो आत्माको शुद्ध करता है, जो कर्म-फलकी आकाक्षा नही रखता, जिसमे अटूट विश्वास है, जिसमे स्वार्थका लेश भी होना असम्भव है। जो कार्य इस धर्मके अनुकूल है, वही धार्मिक कहा जाना चाहिए। इस अर्थकी धार्मिक प्रवृत्तिमे हरिजन-सेवा सवर्ण हिन्दुओकी शुद्धिका रूप लेती है, उनका प्रायश्चित बनती है। यदि यह बात अच्छी तरह समझमे आ जाये तो फिर पूछनेका कोई प्रश्न रहता ही नही। प्रत्येक स्त्री-पुरुष अथवा सघ यथाशक्ति

१. ६ मई, १९३३ को।

हरिजन-सेवा करके शुद्ध हो जाये, किसीकी निन्दा न करे, न किसीके साथ द्वेष करे। इसमे राजनीतिक लाभको कोई स्थान नही है।

किन्तु ऐसा कहना आसान है, करना कठिन है। इसका अर्थ यह हुआ कि धर्म बुद्धिगम्य नही, हृदयगम्य है। हृदयकी जागृतिके लिए सिवा तपके कोई अन्य साधन नही है। तप त्यागकी पराकाष्ठा है। तपका आरम्भ उपवाससे होता है। तापका सहना तप है। उपवासका ताप उपवासी जानते है। दलीलोसे जो मै नही समझा सकता, उसे उपवास-रूपी तपसे समझानेकी आशा रखता हूँ।

पर ऐसा हो या न हो, इस तपके सिवाय मुझे अन्यत्र शान्ति नही मिल सकती। क्योंकि मुझे विश्वास है कि ईश्वर मुझसे यही चाहता है। इस तपको करते हुए देह छूट जाये, तो मै समझूँगा — लोग भी समझें — कि इससे मेरा कार्य खत्म हुआ, मेरा सम्वन्ध समाप्त हुआ। यहाँ खेद अथवा दुखको स्थान नही। और हरिजन-सेवाके हितार्थ तप करते हुए यदि देहका अन्त हो जाये, तो मेरे लिए अथवा हरिजन-कार्यके लिए उससे अधिक अच्छा और क्या हो सकता है? यदि तप निर्विघ्न समाप्त हो गया, तो मेरा आत्मविश्वास अधिक दृढ होगा और मेरी सेवा-शक्ति बढेगी। हर हालतमे, यह स्पष्ट हो जायेगा कि हरिजन सेवक सघका कार्य केवल धार्मिक है, सवर्ण हिन्दुओके लिए प्रायश्चित्त-स्वरूप है और इस कार्यमे जो लोग पवित्र नही है, उनके लिए स्थान नही है।

कोई ऐसा न समझ बैठे कि केवल दैहिक उपवासमे कोई शक्ति भरी हुई है। ऐसे उपवासमे मन और वचनका साथ होना चाहिए। मनसा-वाचा-कर्मणा किया हुआ उपवास ही आत्मशुद्धिका एक आवश्यक साधन है। इसी कारण मैंने अपने अन्य लेखोमे स्पष्ट कर दिया है कि हर किसीको उपवास करनेका अधिकार नही हो सकता।

हरिजन-सेवक, १२-५-१९३३

१२९. पत्र : नारणदास गांधीको

५/६ मई, १९३३

चि० नारणदास,

परशुरामके साथ अच्छी तरह बात की है। उसके परिणामस्वरूप मै जिस निर्णयपर पहुँचा हूँ उसे लिखनेसे पहले एक चौका देनेवाली बात जो उसने कही है, तुम्हारे सामने रखता हूँ। मैंने उससे कह दिया है कि मुझे उसकी बातमे जरा भी विश्वास नही है, तो भी यदि वह कुछ लिखकर दे सके तो लिखकर दे। वह अपना कहना लिखकर ले आया। उसका कहना है कि डॉक्टर शर्मा दवा करनेके बजाय आश्रमकी आलोचनाका काम अधिक करता है और आलोचना भी गन्दी। उसका कहना है कि डॉ० शर्माके मनमे आश्रमके सम्बन्धमे कुछ विशेष पूर्वग्रह रहे हैं। किसीको भडकाकर, किसीको फुसलाकर, किसीको मजबूर करके वह लोगोसे यह

कहलवाता है कि आश्रमके लोगोंकी मनोदशा गुलामों की-सी है। वे सभी मेरे-जैसे 'ओल्ड फूल'[1] की जी-हजूरी करनेवाले हैं। उसका कहना है कि तुम प्रेमाके वशमें हो और उसकी हर बात मानते हो। उसने प्रेमाका नाम 'हर एक्सेलेन्सी'[2] रखा है और उसके पीठ पीछे बात करते समय उसे उसी नामसे सम्बोधित करता है। मुझे ज्यादा बात करनेकी तो फुरसत नहीं थी। किन्तु जो उसने कहा है, यहां उसका सार लिख दिया है।

उसका मुझपर कुछ असर नहीं पड़ा। लेकिन तुम्हें बताना ही चाहिए, इसलिए इतना लिख रहा हूँ। मुझपर डॉक्टर शर्माकी ऐसी छाप बिलकुल नहीं पड़ी। उसके दिल्लीसे आये हुए पत्रोंसे मैंने उसकी नम्रता और निष्कपटता देखी है। और मैंने यही माना है कि वह सेवाभावसे ही आया है। परशुराम जो कहता है वह बात सच हो तो मुझे बहुत दुःख होगा, हालांकि अब दुःख पहुँचाने लायक ज्यादा कुछ नहीं रहा। सोमवारसे तो मेरा मन परम शान्तिका अनुभव करेगा।

तुम्हारे बारेमें और प्रेमाके बारेमें परशुरामको तुम्हारे स्वभावोंके परस्पर प्रतिकूल होनेके अतिरिक्त और कुछ नहीं कहना है। अभी तो वह ऐसा ही कहता है। उसकी दैनन्दिनीमें 'राक्षसी' शब्द नहीं 'राजसी' शब्द है। इसलिए लगता है कि शायद तुमने पढ़नेमें भूल की है। इसी तरह उसने तुमपर दुष्टताका आरोप नहीं लगाया। प्रेमाके क्रोधसे त्रस्त है, ऐसा वह कहता रहता है। चाहे जो हो मैंने तो उससे कहा है कि वह अपनी जबान और कलमपर पूर्ण रूपसे अंकुश लगाये। ऐसी सड़ी हुई डायरी लिखना बन्द करे, वहाँ जाकर तुम्हारी शरण ले और तुम्हारे साथ पूर्ण मानसिक सहयोगकी प्रतिज्ञा करे, तो आश्रममें वापस रह सकता है। मैंने तुम्हें पत्र लिखनेकी उसे सलाह भी दी है। अभी वह पत्र मेरे पास नहीं आया है।

६ मई, १९३३

परशुरामका कहना है कि उसे आश्रममें असफल होकर नहीं जाना है। वह अब तो बिलकुल ठीक रास्तेपर आता दिख रहा है। फिर इस अवधिमें उपवास शुरू हो जायेगा, इसलिए वह तुम्हारे पाससे प्रमाणपत्र लेकर [जल्दी] आश्रम वापस आना चाहता है। यह तो मैं सुबह-सुबह लिख रहा हूँ, वह अभी बादमें आकर मिलेगा। यदि वह मुझे तुम्हारे पास वापस भेजने लायक लगा तो उसे वहाँ भेजूंगा। उसके साथ बात करना और तुम्हें सन्तुष्ट कर सके तो उसे वापस रख लेना। उसे वापस लेनेका तुमपर कोई बन्धन नहीं है। उसे तभी लेना जब तुम्हें लगे कि उसका मन साफ हो गया है। फिर उसने जो-कुछ डॉक्टर शर्माके विषयमें कहा है उसमें झूठ हो या भारी नासमझी हो तो ऐसे अव्यवस्थित व्यक्तिको दूसरी बार लेनेका साहस करें या नहीं इसपर विचार कर लेना।

किन्तु जो-कुछ डॉक्टर शर्माके बारेमें उसने कहा है वह सच निकले तो तुम्हें बहुत सोचना पड़ेगा। परशुरामको वापस रखो या न रखो, उसकी सारी बात समय

१ व २. मूल पत्रमें दोनों शब्द अंग्रेजीके हैं।

देकर सुन लेना। यदि वह अच्छा व्यक्ति हो तो हम भी उसे न छोड़े। मैं यह भी मानता हूँ कि अच्छा हो और स्वभावसे इतना अव्यवस्थित हो तो भी नहीं रख सकते, इसलिए उसे न रखनेके बारेमे तुम्हे पूरी छूट है। मैं परशुरामके आग्रहका तिरस्कार नही करना चाहता, इसलिए उसे तुम्हारे पास आने दे रहा हूँ। किन्तु मेरी शर्त एकदम स्पष्ट है। वह तुम्हे खुश रखकर ही रह सकता है।

डॉ० शर्माके जो पत्र मेरे पास आये है उनसे देखता हूँ कि बहुत-से लोगोने उससे बहुत-सी बाते तो की ही हैं। डॉ० शर्माका कहना है कि उसने बीमारोमे गुप्त रोगवाले लोग भी पाये है। उसे उनके नाम तुम्हें बताने चाहिए। मुझे तो मालूम करने ही थे। परन्तु इस बीच उपवास आ पड़ा है, इसलिए यह काम तुमपर छोड़ता हूँ। उसे पत्र लिख रहा हूँ सो देख लेना।

पण्डितजी वहाँ आ रहे हैं। नर्मदाको तो वापस नही आना है। लक्ष्मीबहन एक वर्ष बाहर रहनेका व्रत लेकर निकली है। वह इस अवधिमे वापस नहीं आयेगी।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३७२ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी।

१३०. तार: हरिलाल गांधीको[1]

६ मई, १९३३

हरिलाल
निजामिया होटल
२२५/२६ हारबर बिल्डिंग, फ्रेर रोड, बम्बई

तुम्हारा पत्र हृदयस्पर्शी है। यदि इस उपवासके परिणामस्वरूप तुम फिर पवित्र जीवन बिताने लगो तो उपवासकी सफलता दुगनी हो गई समझो। मुझसे मिलो। मैं तुम्हारे मार्गदर्शन की कोशिश करूँगा। ईश्वर तुम्हारा भला करे।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० २१२००) से।

१. हरिलालके तारीख ५-५-१९३३ के पत्र (एस० एन० २११७५) के जवाबमें। पत्रमें लिखा था: "आपके उपवाससे सबके सामने यह प्रश्न उपस्थित हुआ है, 'मेरा धर्म क्या है।' आप जो भी कुछ मुझे करनेके लिए कहेंगे मैं करूँगा। परन्तु कृपा करके आप उपवास छोड़ दें।"

१३१. तार : नारणदास गांधीको

पूना,
६ मई, १९३३

श्री राजभोज तथा दूसरे लोगोको उपवास करनेसे आग्रहपूर्वक मना करता हूँ। उन्हे तथा सब लोगोको वाचा कर्मणा शुद्ध बनना चाहिए। जब उनकी बारी आये, वे उपवास करे।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ८-५-१९३३

१३२. पत्र : सुरेन्द्रजीको

६ मई, १९३३

प्रिय सुरेन्द्रजी,

रामदास कहता था कि जब उसने तुम्हे मेरा सन्देश सुनाया तो सुनकर तुम्हारी आँखोमे आँसू आ गये। मै ऐसा मानता हूँ कि जो आँसू आये वे हर्षके ही होगे, दुःखके कदापि नही। उपवासके सिवा कोई चारा ही न था और उसके लिए यही शुभ मुहूर्त था। मुझे लग रहा है कि अस्पृश्यता-जैसे भयानक राक्षसका नाश अन्य किसी प्रकारसे अशक्य है। रावणके केवल दस सिर थे। इस राक्षसके हजार है। ये सिर कैसे है, सो तुम्हे समझानेकी जरूरत नही। इस राक्षसका मूलसे नाश सामान्य परम्परागत साधनोसे नही हो सकेगा। इसलिए मजबूरन प्राचीन परन्तु अमोघ साधन अपनाने होगे। यह बात मेरे सामने गणितके सिद्धान्तकी तरह साफ है। करोड़ रुपये चन्दा एकत्रित कर ले तो भी क्या सनातनियोका हृदय-परिवर्तन किया जा सकेगा? सच्चा अनुयायी ही यह सुधार कर सकता है, नाम-मात्रके सैकडो अनुयायी नही। जिस आश्रमके द्वारा मै यह बुराई दूर करानेकी आशा कर रहा हूँ, उस आश्रममे तो इस प्रश्नपर मतभेद रहना ही नही चाहिए। हरिजन आजकल बहुत भयभीत है। और जिन्होने भय छोड दिया है, वे उद्दण्ड बन गये है। उनका क्रोध भीषण रूप धारण कर ले, इसमे आश्चर्य ही क्या? इन सब अनिष्टोका नाश करनेके लिए हम अपनी आध्यात्मिक पूँजीका उपयोग कितनी ही दृढतासे और कितनी ही बार क्यो न करे, वह कम ही होगा। यदि ईश्वरकी इच्छासे मै अकेले ही यह काम कर सकूँ तो इस यज्ञमे अपनी आहुति देते हुए मेरे हर्षकी सीमा नही होगी। परन्तु मुझे अपने अन्दर इतनी अधिक पवित्रताका पूरा भरोसा नही है। जब मेरे-जैसे सैकडो, हजारो लोग उपवास करेगे, तभी हजारो वर्षोका संचित यह

पाप धुलेगा। तुमसे और तुम्हारे ही जैसे दूसरोसे मै बडी आशा रखता हूँ। परन्तु मै एक बात साफ कह दूँ कि मेरे इस उपवासके दौरान कोई मेरा अनुकरण न करे। तुम्हारा कर्तव्य है कि शान्त रहकर मन, वचन, कर्मसे जितनी शुद्धता साध्य हो, साधो। यह पत्र महादेवने लिखा है। वह रोजाना इसी प्रकार लिखता रहेगा और जवतक शक्य होगा मेरे दस्तखत लेता रहेगा। सरकारकी आज्ञा मिल गई है कि मै रोजाना तुमको इस प्रकारसे पत्र लिख सकूँगा और तुम भी मुझे लिख सकोगे।

सभीको मेरा आशीर्वाद।

बापू

[अंग्रेजीसे]

वम्वई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल स० १०, १९३३

१३३. पत्र : मीराबहनको

६ मई, १९३३

मीरावहनके लिए विशेष पत्र

चि० मीरा,

यह पत्र महादेव मेरी तरफसे लिख रहा है। अव वह रोज लिखा करेगा और जव-कभी सम्भव होगा, मेरे हस्ताक्षर करा लेगा। तुम और वा भी रोज लिख सकती हो। साथमे वा के लिए एक पत्र है।

तुम्हे मेरी किसी दलीलकी जरूरत नही है। जरूरत हो तो सारी वात[1] आजके 'हरिजन' मे पढ लेना। मेरे लिए यह सूर्यके प्रकाशकी भाँति स्पष्ट है कि उपवास होना ही चाहिए था। मुझे यही आश्चर्य है कि मैने यह निर्णय और भी पहले क्यो नही किया। इन तमाम दिनोमे मेरे भीतर द्वन्द्व चलता रहा है। पिछले तीन दिनोमे कशमकश तीव्र हो गई और आधी रातके कुछ देर वाद मुझे साफ आवाज आई कि मुझे यह जोखिम उठानी ही चाहिए। मै समझ सकता हूँ कि तुम्हे कैसी पीडा हो रही होगी। मैं जानता था कि वा दृढ बनी रहेगी। परन्तु तुम दोनोंके सम्मिलित तार और तुम्हारे पत्रोसे मुझे इस यात्राके लिए अभीसे आध्यात्मिक खुराक मिलने लगी है। अगर तुम चाहती हो कि मै शरीरके खिलाफ आत्माके सग्राममे विजयी रहूँ, तो तुम्हे भी सग्राममें शरीक होना पडेगा। मै जानता हूँ कि तुम्हारे लिए यह प्रयत्न कितना पीड़ाजनक होगा, परन्तु मै यह भी जानता हूँ कि तुम्हारी विजय होगी और तुम मेरे भी विजयी होनेमे सहायक वनोगी। परन्तु हमारी विजय क्या है? तुमने अपने पत्रके आरम्भमे सत्य ही कहा है — और शायद जिस समय

१. देखिए पृ० ७४-६ और १२२-४।

वहाँ तुमने ये शब्द लिखे होगे, ठीक उसी समय मैंने अपने लेखका यह शीर्षक लिखा था — हमारी नही, प्रभुकी इच्छा पूरी हो।

तुम दोनो रोज मुझे पत्र लिख दिया करो।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२७२) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९७३८ से भी।

१३४. पत्र : गोमतीबहन मशरूवालाको

[६ मई, १९३३][1]

आशा है, उपवासका रहस्य तुम्हारी समझमे आ गया होगा। नाथजी[2] क्या कहते है? पिछली बारके उपवासमे उन्होने अपनी सहमति नही दी थी, बादमे सहमत हो गये हो तो उसकी मुझे खबर नही है। इस बारका उपवास भिन्न प्रकारका है। यदि तुम किशोरलालकी राय जानती हो तो वह भी लिखना।

तुम्हे घबराना नही चाहिए। हो सके तो अपने अन्तरको शुद्ध करना चाहिए। सेवा-कार्य करना चाहिए। तनिक भी विचलित नही होना चाहिए। अपने स्वास्थ्यका ध्यान रखना। यदि मेरा शरीर छूट जाये तो यह यज्ञ तुम्हे पूरा करना होगा। तुम किस प्रकार इसे पूरा करोगी यह तो मै स्वय भी नही जानता। मैंने काकाको समझा दिया है। आश्रमको भी लिख दिया है। जितना मै समझ पाया हूँ उतना महादेव और छगनलालको समझा दिया है। अधिक लिखनेका समय नही है।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९५३०) से, सौजन्य . छगनलाल जोशी।

१३५. पत्र : रामजी जी० बधियाको

[६ मई, १९३३]

तुम्हारे उपवाससे न तो तुम्हे लाभ होगा और न अन्य किसीको। मुझे तो कष्ट ही होगा। उपवासकी भी एक विधि होती है। यदि मेरी मानो तो उपवासका विचार छोड दो और मैंने जो कहा है सो करो। अपने मनसे वहम और गुस्सा निकाल दो और मथुरादास आदिको समझो। जो अपने हितेच्छुको नही समझता वह सुखी नही हो सकता। यदि तुम्हारा मुझपर इतना विश्वास है तो फिर नारणदास, मथुरादास आदि पर विश्वास न होनेसे कैसे बात बनेगी? तुम्हारा भाई राजभोजपर तो

१. इस पत्रको तथा अगले तीन पत्रोंकी तिथिका निश्चय पत्रोंकी विषयवस्तुके आधारपर किया गया है।

२. केदारनाथ कुलकर्णी, किशोरलाल मशरूवालाके गुरु।

विश्वास है न? यदि है तो जैसा वे कहे वैसा तुम्हे करना चाहिए। यदि तुम्हारा मन शान्त हो जाये तो इससे मुझे अपने उपवासमे शक्ति अवश्य मिलेगी।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९५३३) से, सौजन्य: छगनलाल जोशी।

१३६. पत्र: अनसूयाबहन साराभाईको

[६ मई, १९३३]

तुम्हारे सतापको मै समझता हूँ। मेरा साथ कष्टदायक है। मै स्वय निपट पराधीन हूँ। मै नही जानता कि अगले क्षण क्या होगा। मुझे अपनी स्वतन्त्रता ही परतन्त्रता जैसी लगती है, और सत्यनारायणकी सेवा स्वतन्त्रताके समान जान पडती है। उपवास करनेकी तनिक भी इच्छा न होनेके बावजूद, मुझे उपवास करना पडा है। किन्तु उपवास करनेके बाद मेरे सिरसे जो बोझ उतर गया उसका वर्णन नही किया जा सकता। अतः तुम्हे इस उपवाससे प्रसन्न होना चाहिए। मुझे विश्वास है कि मेरे शरीरका कुछ नही बिगडेगा। किन्तु यदि मेरी गणना गलत सिद्ध हो तो भी क्या हुआ? यदि ऐसा हो तो तुम यह मानना कि इस शरीरसे सेवा लेने लायक कुछ नही रह गया था। अतः तुम घबराना नही। यह शरीर कॉचकी चूडीसे भी कही ज्यादा नाजुक है और इसमे रहनेवाली आत्मा ही सच्ची वस्तु है। इसपर मनन किया करो और यथासम्भव जितनी सेवा कर सको, किया करो। अब तुम्हे और शंकरलालको आराम करना चाहिए। आखिरी दिनोमे आना।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९५३१) से; सौजन्य: छगनलाल जोशी।

१३७. पत्र: लक्ष्मीबहन एम० शर्माको

[६ मई, १९३३]

चि० लक्ष्मी,

तेरे बारेमे मुझे बहुत-सी शिकायते मिली है। तूने ४० रुपये साडियोपर खर्च किये और तूने इतनी चूडियाँ खरीदी है जिन्हे तू अपनी पूरी जिन्दगीमे नही पहन पायेगी। तू जानती नही कि एक गरीब व्यक्तिसे तेरा विवाह हुआ है और गरीब बापकी बेटी है। मै तो दूधाभाईसे भी गरीब हूँ। तुझे यह जान लेना चाहिए कि मेरा उपवास तेरे लिए भी है। जिनका मुझसे सम्बन्ध है, उनके लिए है। फिर तू तो हरिजन कन्या है। तुझे अपना कर्तव्य समझना चाहिए। यदि तू झूठ बोलना या उडाऊ-पन सीखेगी तो उससे मुझे बहुत दुःख होगा। अत तू चेत जा। मुझे पत्र लिखना।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९५३२) से, सौजन्य छगनलाल जोशी।

१३८. पत्र : नारणदास गांधीको

६ मई, १९३३

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला।

नी० ने पत्र ही नही लिखा, इससे चिन्ता हो रही है। उसके रोज पत्र लिखनेकी बात थी। वह आश्रमके नियमानुसार चल निकले तो अच्छा है। उसपर नजर रखना। उपवासके दौरान भी उसकी खबर भेजना और मैं यह भी चाहूँगा कि वह खुद पत्र लिखती रहे। यदि तुम्हे उसका व्यवहार ठीक न लगे तो मुझे फौरन लिखना। उसकी छुट्टी कर देना ठीक लगे तो कर सकते हो। उसे कल जो पत्र लिखा है, वह तुमने पढा होगा। उसे स्याही, कलम, कागज, आदि जरूरतकी चीजे दे दी होगी।

उपवासके दौरान मैं क्या चाहता हूँ, ऐसा तुमने पूछा है। बाह्य व्यवहार तो जैसा चलता है वैसा ही चलता रह सकता है, किन्तु अन्तर्शुद्धिकी आवश्यकता दिखाई देती है। हमारे सभी कार्योका उद्देश्य प्रत्यक्ष या परोक्ष रूपमे हरिजन-सेवा तो है ही। किन्तु यदि कोई विशेष सेवाका विचार कर सको तो उसे हाथमे लिया जाये।

किन्तु मुख्य रूपमे तो मैं यह चाहता हूँ कि आश्रममे वे सुधार लागू किये जाये जिनका मैंने सुझाव दिया है। जो व्यक्ति नियम-पालन नही करते वे चले जाये। ऐसी और बाते जो मैंने लिखी है उनपर विचार कर लेना और जो ठीक हो सो करना। उस सिलसिलेमे यदि आश्रमकी बाह्य प्रवृत्तियां कुछ कम होती हो तो भले ही हो जाये। किन्तु शान्तिपूर्वक और चर्चा करके आश्रमको पवित्रताकी दृष्टिसे सुरक्षित बना डालो। राजभोजके सुझावों[1] पर विचार करो और आश्रमको उपवास द्वारा आहुति देनेके लिए तैयार करो।

इसके अतिरिक्त और कुछ नही सूझता।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३७४ से भी, सौजन्य : नारणदास गाधी।

१. देखिए पृ० ४८-५०।

१३९. पत्र : मणिबहन पटेलको

६ मई १९३३

चि० मणि,

पिछली बारकी तरह इस बार भी तुझे रोज पत्र लिखा जा सकेगा और तू भी रोज लिख सकेगी। मैं चाहे रोज न लिख सकूँ या लिखवा सकूँ परन्तु महादेव तो लिखेंगे ही। और सम्भव हुआ तो मेरे हस्ताक्षर करा लेंगे। यह पत्र तेरे और मृदुला[1] दोनोंके लिए है। यह भी महादेव ही लिख रहे हैं।

तुम दोनों वीर लड़कियाँ हो। मैं मानता हूँ कि तुम कभी नहीं घबराओगी। मेरी जरा भी चिन्ता न करना। मैं समझता हूँ कि मेरा शरीर पिछले उपवासकी तुलनामें इस समय अधिक ताजा और समर्थ है। राजाजी ने बहुत झगड़ा किया। आज शान्त होकर वापस जा रहे हैं। थोड़े दिनमें लौटेंगे। वल्लभभाई बड़ी शान्तिसे सब सहन कर रहे हैं और महादेवसे उन्होंने प्रतिज्ञा की है कि मुझसे जरा भी बहस न करके पूर्ण सहयोग—भले ही मौनसे—देंगे। यह वृत्ति मुझे प्रिय है। थोड़े दिन तो वे इस मौनको जरा कड़ी हदतक ले गये उनका विनोद सूख गया। परन्तु अब फिर फूटने लगा है।

यह उपवास अनिवार्य था। इसका यही मुहूर्त था इसमें भी कोई शक नहीं। गणितके सवालकी तरह मैंने इसका हिसाब लगा लिया है। यह उपवास किसीके विरुद्ध नहीं है। मुझे पता नहीं कि किस चीजसे आघात पाकर मैंने यह प्रतिज्ञा की। बहुत-सी बातोंका जाने-अनजाने जरूर असर हो रहा था। परन्तु बात यह है कि मुझमें कहीं-न-कहीं अपवित्रता होगी. तभी तो मेरे साथ सम्बन्ध रखनेवाले हरिजन-सेवक कुन्दन-जैसे नहीं हैं। और अस्पृश्यतारूपी राक्षस रावणसे भी बुरा है। रावणके दस मस्तक थे, इसके सैकड़ों हैं। इन सबका नाश सभोंसे नहीं होगा करोड़ों रुपयोंसे नहीं होगा, हरिजनोंको अधिकार दिलानेसे नहीं होगा। सवर्ण हिन्दुओं और हरिजनोंको भाईकी तरह मिलानेके लिए उनके हृदय बदलने चाहिए। ऐसा विशाल आध्यात्मिक कार्य हमारे पास जितनी भी आध्यात्मिक पूंजी हो, उसे इसमें लगा देनेपर ही हो सकता है। यह मार्ग तो पुराना है। राजमार्ग है। आजतक नहीं सूझा यही आश्चर्य है।

1. मृदुला साराभाई।

दोनो शान्त रहना, और समय आनेपर सहयोग देना। तुम मेरे साथ उपवास हरगिज नही कर सकती।

तुम दोनोको
बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४: मणिबहन पटेलने, पृ० १०५-७

१४०. सन्देश: उपवासके निर्णयपर[1]

६ मई, १९३३

मैं मरनेको उत्सुक नही हूं। मरूंगा नही। मेरे लिए आप परेशान न हों।

[अंग्रेजीमें]
हिन्दुस्तान टाइम्स, ७-५-१९३३

१४१. भेंट: पत्र-प्रतिनिधियोंको[2]

[६ मई, १९३३][3]

यह मेरा दुर्भाग्य है कि ईश्वर या सत्यकी ओरसे इस व्रतकी प्रेरणा मुझे जब मिलनी चाहिए थी, उससे बहुत देरमें मिली। परन्तु चूंकि ईश्वरीय कार्यके विषयमें कुछ कहना मेरे अधिकारकी बात नहीं है, इसलिए मैंने उसकी अटल आज्ञा शिरोधार्य कर ली है। मेरे विचारमें तो यरवदा-समझौतेपर हस्ताक्षर करनेके बाद हरिजन आन्दोलन प्रारम्भ करते समय ही मुझे इस तरहका उपवास करना चाहिए था। परन्तु तब वैसी ईश्वरकी इच्छा नहीं थी। यह निस्सन्देह घटना घट जानेके उपरान्त यज्ञका प्रारम्भ है। यह शुद्धिकारक यज्ञ भी है। चूंकि इसकी आवश्यकता पहलेसे ही थी, इस यज्ञका ऐसा ही होना जरूरी था। आपको समझ लेना चाहिए कि यह तर्क मुझे घटनाके घट चुकनेके उपरान्त सूझ रहा है। जब मुझे महसूस हुआ कि मुझे ईश्वरीय

१. उन असंख्य मित्रों और प्रशसकोंके लिए जो सुबहके आठसे लेकर सूर्यास्ततक उनसे मिलने पहुँचे थे।

२. यह "स्पार्क्स फ्रॉम द सेकिंड फायर–२" (महादेव देसाईसे दूसरी भेंट) शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था। महादेवभाईने पत्र-प्रतिनिधियोंके प्रश्नके उत्तरमें गांधीजी के शब्दोंको ही दोहरा दिया था। प्रश्न यह था कि क्या उस बातपर विस्तारसे चर्चा की जा सकती है जो गांधीजी ने कही थी और जिसका आशय यह था कि इस उपवाससे सामाजिक और धार्मिक आन्दोलनके नये युगका सूत्रपात होगा।

३. महादेवभाईनी डायरी, भाग–३, पृ० २९३-४से।

आज्ञा प्राप्त हुई है, तो मेरे आगे और कोई तर्क नहीं रहा। आवाज आई और मैं विवश हो गया। आप पूछ सकते हैं कि "क्या यह वेदनाकी तीव्र अभिव्यक्ति तो नही है?" उत्तर बिलकुल सहज और साधारण है। मैं जोरदार शब्दोमे कह सकता हूँ कि यह वेदनाकी तीव्र अभिव्यक्ति नही है। अलबत्ता यह प्रायश्चित्त अवश्य है। मैं जिन्हे अपवित्र मानता हूँ, आप जिन्हे अनुचित मानते है, उन सब बातोकी शुद्धिको इस यज्ञके एक अशके रूपमे लिया जा सकता है। चूँकि आरम्भमे उपवास नही किया जा सका इसलिए यह अब और भी अनिवार्य था। आपका अन्तिम प्रश्न यह है कि अपने वक्तव्यमे जिन दिल दहला देनेवाले मामलोंका मैंने जिक्र किया है, मैं कही उनके कारण तो यह उपवास नही कर रहा हूँ। मैं आपसे कह सकता हूँ कि यह बात बिलकुल गलत है, क्योकि मैं आपको वे तारीखे भी बता सकता हूँ जब इन दिल दहला देनेवाली घटनाओंकी सूचना मुझे मिली। उस वक्त मैंने महसूस किया कि उन व्यक्तिगत मामलोके कारण उपवास करनेका मेरे लिए कोई औचित्य नही है। इस बातके निर्णायक कारण हैं कि कैदीके रूपमे मुझे व्यक्तिगत मामलोकी वजहसे उपवास करनेकी – जैसाकि मैंने इससे पहले किया है – कोई जरूरत नही है। हरिजन-आन्दोलन-जैसे महान् आन्दोलनमे किसी भी मनुष्यके लिए अकेले हर अलग-अलग मामलेमे उपवास करके उन्हें निबटा पाना शक्तिसे बाहरकी बात होगी। इसलिए मेरे मनमे कोई सन्देह नही है कि भले ही इन मामलोने अनजाने मुझे उपवास करनेके लिए प्रेरित किया हो, फिर भी मैं उनमे से किसी एक विशेष घटनाकी ओर ऊँगली उठाकर यह नही कह सकता कि पूरी तरहसे या मुख्य रूपसे इस घटनाने मुझे इस यज्ञकी प्रेरणा दी है। मुख्य रूपसे यह ऐसा उपवास है जो कोई और कार्य आरम्भ करनेसे पूर्व आजसे बहुत पहले किया जाना चाहिए था। गौण रूपसे आत्म-शुद्धि और अपने साथियोंकी शुद्धिके लिए भी यह उपवास बहुत पहले किया जाना चाहिए था। यदि मैं सोमवारतक बना रहा तो सोमवार दोपहर १२ बजे यह उपवास शुरू कर दूँगा।[1]

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १३-५-१९३३

१. यह वाक्य महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे लिया गया है।

१४२. यज्ञका प्रारम्भ

मुझे बचपनसे ही यह सिखाया गया है कि अच्छे कामो, धार्मिक कामोका प्रारम्भ देह-शुद्धि और आत्म-शुद्धिसे किया जाना चाहिए। सितम्बरके महीनेमे जो उपवास किया गया था उसे इस प्रकारका यज्ञ नही कहा जा सकता। उस उपवासके पीछे उद्देश्य सरकारकी योजनामें फेरफार कराना ही था। हरिजन-सेवाका अतिरिक्त फल तो महज रूपमे ही निकला। उक्त उपवास अनिवार्य हो गया था। किन्तु उससे सम्बन्धित सकल्प-बल योजनामे परिवर्तन होनेके साथ-साथ समाप्त हो गया और उपवास भी पूरा हो गया। उस उपवासके साथ एक शर्त लगी हुई थी और इसलिए तुलनामे वह इस उपवाससे घटकर था।

हरिजन-सेवाका कार्य बादमे आरम्भ हुआ। अब मुझे ऐसा लगता है कि वह एक दुर्बल प्रारम्भ था, शुद्धि-यज्ञका बल उसके पीछे नही था। सम्भव है कि इस प्रकारके यज्ञके अभावके कारण ही अस्पृश्यता-निवारणके हमारे युद्धने धार्मिक स्वरूप धारण नही किया।

जब मेरे मनमें इस उपवासकी प्रेरणा हुई तब मनमें इस प्रकारकी बात नही थी। यह कहना तो मुश्किल है कि किस विशिष्ट कारणसे इस उपवासका निश्चय हुआ, फिर भी यह उपवास मेरे अन्य उपवासोकी अपेक्षा अलग है। इसमे हेतु केवल शुद्धिका है। इसलिए यह उपवास करते हुए यदि देह छूट जाये, तो मै उसे अप्रत्याशित किन्तु शुभ परिणाम गिनूंगा। मै यह भी चाहता हूँ कि सब लोग ऐसा ही मानें। मै हरिजनोका चिन्तन करते-करते उनकी शुद्ध सेवा करनेकी भावना रखता हुआ देह छोड़, तो उसे सेवाका उत्तम प्रारम्भ गिना जाये। तथापि, इस यज्ञमें मेरी इच्छा मरकर सेवा करनेकी नही, जीकर सेवा करनेकी है। यदि ईश्वरने कुछ और सोचा हो तो उसे कौन मिटा सकता है? जिस तरह जीवित रहकर सेवा करनेका उत्साह है, उसी प्रकार मेरे मनमे मरकर भी सेवा करनेका साहस है। इसलिए हमे जीवन-मरण दोनोको एक ही वस्तु समझना चाहिए।

जो लोग इस उपवासकी बात सोचकर थर-थर कॉप रहे है, उन्हे देह-सम्बन्धी मोह छोड देना चाहिए। देह छोडनेसे मनुष्यका काम भी छूट जाता है, ऐसी बात नही है। यदि बात ऐसी होती तब तो जीनेसे भी क्या होना था। शरीर नष्ट हो जाता है, आत्मा नष्ट नही होती। कर्त्ता, अकर्त्ता आत्मा है, वह चिरजीवी है, अमर है। हम इस बातको जानते हो चाहे न जानते हो, इस बातकी इच्छा करते हो चाहे न करते हो, किन्तु प्रयत्न-मात्रका सम्बन्ध आत्मासे है — फिर वह हमे उठानेवाला हो चाहे गिरानेवाला।

इस समय मेरी एक ही प्रबल इच्छा है और वह यह कि हम सब लोग इस बातको समझ ले कि अस्पृश्यता-निवारणका यह कार्य धार्मिक है और यह धार्मिक

साधनोके बिना सिद्ध नही हो सकता। अन्य सारे हिन्दुओकी शुद्धि हरिजन-सेवामे ही निहित है। यदि दूसरे हिन्दू शुद्ध न हो और हरिजनोकी आर्थिक अथवा राजनीतिक स्थिति सुधर जाये, तो इससे हिन्दू-धर्म शुद्ध नही होता। अस्पृश्यतारूपी मैल ऐसा है कि यदि यह नही कटा तो हिन्दू-धर्मको खा जायेगा। इस मैलको निकाल फेकनेके लिए असख्य हिन्दुओका हृदय-परिवर्तन आवश्यक है।

यह बात हमारे सामने दीपककी तरह स्पष्ट हो जानी चाहिए कि यह मैल आत्मशुद्धिके अतिरिक्त अन्य किसी साधनसे दूर नही होगा; और यह बात स्पष्ट करनेके लिए सर्वोत्तम साधन मनसा, वाचा, कर्मणा उपवास-रूपी यज्ञ करना है। केवल शरीरका उपवास करना तो एक निरर्थक कष्ट है, यह पाखण्ड भी हो सकता है। जिसका मन अन्न-फल आदि माँगना बन्द कर देता है, उसका शरीर अनायास ही खानेके लिए कुछ नही चाहता। जो शरीरसे तो अन्न-फलादि नही लेता किन्तु जिसका मन उन्हीके विषयमे सोचता रहता है, वह शरीरसे उपवास करता हुआ भी भोजन करता रहता है। ज्यादातर उपवास ऐसे ही होते है। किसी भी धर्मदृष्टिसे देखे, वे निरर्थक ही है और बहुत सम्भव है कि हानिकारकतक हो। इसलिए धार्मिक उपवासमे मनकी पूरी तैयारी अत्यन्त आवश्यक है। मेरी आत्मा कह रही है कि मेरी ऐसी तैयारी है। सम्भव है कि इस प्रकारके यज्ञ करते हुए अनेक लोगोको देह छोडनी पडे। ऐसा हो जाये तो भी इस प्रकारके अनेक यज्ञोको किये बिना समस्याका हल नही मिलेगा। जो मैल शताब्दियोसे हमारे भीतर जमा हुआ है, वह सहज ही नही निकलेगा। यह तो बिलकुल ठीक बात है कि ऐसे यज्ञका प्रारम्भ मुझसे होना चाहिए।

यदि २१ दिनोके उपवासके अन्तमे मेरा शरीर छूट जाये, तो पाठक यह मान ले कि यह शरीर अन्य किसी सेवाके लिए निकम्मा हो चुका था। ऐसे अवसरपर श्रद्धाकी अत्यन्त आवश्यकता होती है। अधश्रद्धा तो हम चारो तरफ देखते है। इसी कारण श्रद्धाकी भी लोग निन्दा करने लगे है। किन्तु जिस प्रकार नेत्रहीनोके समाजमे किसी एक नेत्रवानको निकम्मा नही कहा जा सकता, बल्कि वह उनका मार्गदर्शक बन जाता है, उसी प्रकार असख्य लोगोकी अधश्रद्धाके निवारणका काम एककी दृष्टिमती श्रद्धा द्वारा सम्भव है। मै ऐसी श्रद्धा प्राप्त करना चाहता हूँ। दूसरे स्त्री-पुरुष भी यही प्रयत्न करे। मै इसे प्राप्त करनेके लिए मनसा, वाचा, कर्मणा किये गये एक अथवा अनेक उपवासोकी कामना करता हूँ।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, ७-५-१९३३

१४३. पत्र : एफ० मेरी बारको

७ मई, १९३३

चि० मेरी,[1]

तुम लम्बा पत्र नही चाहती हो और न उसकी अपेक्षा ही करती हो। मेरे इस पत्रको चार या कम-से-कम तीन सप्ताहतकके लिए अन्तिम मानना। उपवासकी चिन्ता करके मुश्किलसे जो आराम मिला है उसमे खलल न पडने देना। मै तुमसे आशा करता हूँ कि तुम ताजा होकर आश्रम लौटोगी। तबतक तुम्हारे लिए काफी काम इकट्ठा हो जायेगा।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३३२९) से, सौजन्य एफ० मेरी बार। जी० एन० ६००३ से भी।

१४४. राजकुमारी एफी अरिस्टार्चीको लिखे पत्रका अंश

७ मई, १९३३

. . . तो आप स्वयं अपनी मदद नही कर सकी। लेकिन मैं उस लम्बे समुद्री तारकी बात छोडता हूँ। बेचारे हरिजन[1] वे कहते है कि आपका प्रेम उनके प्रति उतना नही है जितना कि उनके अनेको सेवकोमे से एकके प्रति है। क्या उनकी शिकायत उचित नही है? मैं उन्हे आश्वस्त कर दूँगा कि आप आगेसे उन्हे अधिक प्रेम करेगी।

मैं जानता हूँ कि आपकी दुआएँ मेरे साथ है। ऐसी दुआएँ मुझे बल देगी। जबतक यह पत्र आपके पास पहुँचेगा, यदि ईश्वरकी वैसी इच्छा हुई तो मैं आधा रास्ता तय कर चुका होऊँगा। यदि उसकी इच्छा कुछ और हुई तो वह भी ठीक है। तब शरीर काम करना बन्द कर देगा, आत्मा नही। यह उपवास ईश्वरकी इच्छा और देन है। मै चाहता हूँ कि आप इसके आनन्दकी भागी हो। ईश्वरकी शान्ति आपके साथ हो।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी, सौजन्य नारायण देसाई।

१. साधन-सूत्रमें सम्बोधन देवनागरी लिपिमें है।

१४५. पत्र : एच० एस० एल० पोलकको

७ मई, १९३३

आपके स्नेहपूर्ण सन्देश[1] की मै कद्र करता हूँ। लगता है कि इस परीक्षाके दौरान जितनी चाहिए, उससे ज्यादा खुराक मेरे पास है। मनुष्य केवल रोटीके ही सहारे जीवित नही रहता।

[अग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी; सौजन्य : नारायण देसाई।

१४६. पत्र : एस्थर मेननको

७ मई, १९३३

रानी विटिया,

मै जानता हूँ कि तुमपर क्या गुजर रही है। मै आसन्न उपवासको ईश्वरके अवतकके उपहारोमे सवसे ज्यादा मूल्यवान मानता हूँ। मुझे और ज्यादा नही लिखना चाहिए। तुम्हे विश्वास रखना चाहिए कि परिणाम कुछ भी हो, अच्छा ही होगा।

तुम दोनोको प्यार और वच्चोको चुम्वन।

बापू

अग्रेजीकी फोटो-नकल (स० १२२) से; सौजन्य . राष्ट्रीय अभिलेखागार। **माई डियर चाइल्ड**, पृ० १०१ से भी।

१. श्री पोलक व उनकी पत्नीने गांधीजी को अपनी शुभ कामनाएँ भेजी थी।

१४७. पत्र : म्यूरियल लेस्टरको

७ मई, १९३३

प्रिय म्यूरियल,

तुम्हे यह बतानेके खयालसे पत्र लिख रहा हूँ कि तुम आगामी अग्निपरीक्षामे मेरा उत्साह बनाये रखनेके लिए भावनात्मक रूपमे मेरे साथ रहो। यह पत्र तुम्हे उस वक्त मिलेगा जबकि मेरी अग्निपरीक्षाकी अवधि आधी बीत चुकी होगी। यो जब हम दोनोकी भावनाएँ एक है तो उस बातसे कोई फर्क नही पडेगा। ऐसी स्थितिमे मनोवांछित परिणाम तो कहते ही प्राप्त हो जाता है। तुम सबको मेरा प्यार।

बापू

कुमारी म्यूरियल लेस्टर
किंग्सले हॉल, बोव
लन्दन

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०१६) मे।

१४८. पत्र : होरेस जी० अलैक्जेंडरको

७ मई, १९३३

प्रिय होरेस,

मै जानता हूँ कि आगामी परीक्षामें तुम सबकी शुभ कामनाएँ मेरे साथ है मै इस उपवासको ईश्वरका महान उपहार समझता हूँ।

तुम सबको मेरा प्यार। होलैडको अलगमे पत्र लिखनेकी कोशिश नही करूँगा।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४२१) मे।

१४९. पत्र : अगाथा हैरिसनको

७ मई, १९३३

प्रिय अगाथा,

तुम मुझसे लम्बे पत्रकी अपेक्षा मत करो। मै जानता हूँ कि आगामी परीक्षामे मुझे तुम्हारा भावनात्मक सहयोग मिलेगा।

हम सबकी ओरसे प्यार।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४६५)से।

१५०. पत्र : वेरियर एल्विनको

७ मई, १९३३

प्रिय वेरियर,

तुमसे बात किये विना मै परीक्षामे नही उतर सकता। मेरे लिए यह अत्यन्त हर्षकी बात है कि अनेको सच्चे मित्रोकी ऐसी शुभ कामनाएँ मेरे साथ है जो मुझे इस पथपर आगे बढाती है — सत्य ही ईश्वर है और वह उपवासके दौरान वह सारी खुराक देगा जिसकी मुझे जरूरत होगी। अच्छा होता कि मेरे पास तुमसे और बात करनेका समय होता।

मुझे मेरीको तो अलगसे पत्र नही ही लिखना चाहिए।

आशा है कि तुम सब ठीक होगे।

तुम सबको प्यार।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८९२९) से। **दि ट्राइबल वर्ल्ड ऑफ वेरियर एलविन**, पृ० ८३ से भी।

१५१. पत्र : भुजंगीलाल छायाको

७ मई, १९३३

चि० भुजगीलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। मेरी चिन्ता न करना। ज्यादा-से-ज्यादा शुद्ध होकर मच्चे सेवक बनना।

बापूके आशीर्वाद

श्री भुजगीलाल छाया
पोरबन्दर राज्यके वकील
राजकोट
काठियावाड

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २६०१)मे।

१५२. पत्र : कस्तूरबा गांधीको

७ मई, १९३३

'गीता' के एक नही अनक श्लोकोका भाव यह है कि जो काम ईश्वरके नाम पर उसकी प्रेरणासे किया जाता है, उसे वही पूरा कराता है। कर्त्ता-धर्ता तो वही है, इसलिए हम तो कोरे-के-कोरे है।

जैसे कोई लकडीसे दूसरेको मारे तो वह काम लकडीका नही, परन्तु लकडीके मालिकका है। इसी तरह अगर हम अपना शरीर ईश्वरको सौप दे और उस शरीरसे कोई काम ले, तो वह काम शरीरका नही बल्कि ईश्वरका है। यश-अपयश उसीका है।

इसलिए समझ लेना कि जिसने उपवास कराया है, वह जरूर पार लगायेगा।

[गुजरातीमे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-३, पृ० २९५

१५३. पत्र : निर्मलाबहन बी० मशरूवालाको

७ मई, १९३३

मै जानता हूँ कि असंख्य भाई-बहनोको दुःख हो रहा है। पर [प्रसवकी] महाव्यथाके बिना कभी जन्म हुआ है? हम नये जन्मके लिए तड़पते हैं, इसलिए मैं तो इस महाव्यथासे शुभकी ही आशा रखता हूँ। धीरज रखकर जो सेवा हो सके सो करना।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग – ३, पृ० २९४-५

१५४. पत्र : जमनालाल बजाजको

७ मई, १९३३

चि० जमनालाल,

तुम्हारे दो पत्र एकसाथ मिले। तार भी मिला। तुम वहाँ बने हुए हो, यह मुझे बहुत अच्छा लगा है। इसी तरह निश्चिन्त होकर रहना। मैं मानता हूँ कि उपवास निर्विघ्न समाप्त हो जायेगा।

तुम्हारे दर्दके लिए किसी वैद्य या हकीमसे सलाह लेना भी उचित मालूम होता है। बहुतोको कानसे पीप निकलकर बन्द भी हो जाती है। इससे डरनेकी कोई वजह नही; खान-पानका ध्यान रखो तो काफी है। गाय सामने ले आये और उसके थन साफ करके साफ हाथसे दुहा जाये, तो वह दूध ताजा ही पियो। खानेमे ध्यान रखो। अटशट कुछ न खाओ, दाल नही, मसाले नही, कच्ची सब्जी कुछ-न-कुछ चाहिए। टमाटर, सलाद अच्छी वस्तु है। कच्चे प्याज खानेका डॉ० देशमुखका खास आग्रह है।

जानकीबहन[1] का समय किस तरह बीतता है? घूमती-फिरती है? ओम[2] कुछ पढ रही है? प्रभुदास क्या करता है?

शान्ति रुइयाको समवेदनाका पत्र लिखा है। राधाकृष्णने खबर दी थी।

तुमको पत्र भेजे जाते रहेगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९१५)से।

१ और २. जमनालाल बजाजकी पत्नी एवं पुत्री।

१५५. पत्र : गंगाबहन बी० झवेरीको

७ मई, १९३३

चि० गंगाबहन झवेरी,

तुम्हारा पत्र मिला।

भोजन-सम्बन्धी नियमोंका पालन करते हुए मन शान्त रखोगी तो स्वास्थ्य सुधरना ही चाहिए।

जो भी इलाज शुरू करो उसे चलाते रहना जरूरी है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९५४) से।

१५६. पत्र : नानाभाई आई० मशरूवालाको

७ मई, १९३३

भाई नानाभाई,

तुम्हारा पत्र मिला। उपवासको लेकर कोई परेशान न हो। जितनी अधिक हो सके उतनी अधिक सेवा करना।

ईश्वरके उपहारको ठुकरा दूँ, क्या स्नेही इससे प्रसन्न होंगे? या उसका स्वागत करूँ तो?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६८७) से।

१५७. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

७ मई, १९३३

चि० प्रेमा,

मेरे पत्र तुझे मिले होंगे। तूने उपवास समाप्त कर दिया होगा और तेरा चित्त शान्त हो गया होगा। तेरे उपवासका परिणाम इससे अधिक आये, ऐसा मैं चाहता हूँ। यह तू जानती है।

नी० से खूब परिचय करना। मैं मानता हूँ कि पूर्ण प्रेम उसे शुद्ध कर देगा और शुद्ध रखेगा। उसके पापकी सीमा नहीं थी। उसकी शुभ भावनाओंकी भी सीमा नहीं है। परन्तु व्यभिचारमें उसने सब-कुछ खो दिया है। वह मनपर काबू खो बैठी है। उसके जीवनमें एक क्षणमें महान परिवर्तन करानेकी जिम्मेदारी मेरी है। इसलिए इच्छा बनी रहती है कि उन परिवर्तनोंको वह आत्मसात् कर सके तो अच्छा।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३४४)से। सी० डब्ल्यू० ६७८३से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक।

१५८. पत्र : जमनाबहन गांधीको

७ मई, १९३३

चि० जमना,

जो समझदारको शोभा दे तुम ऐसे पत्र लिखती हो। उनसे मुझे बहुत प्रसन्नता होती है। तुम दृढ़तापूर्वक अपना स्वास्थ्य सुधार डालो तो मैं तुमसे खूब सेवा लूँगा। तुम्हारा स्वास्थ्य अच्छा हो सकता है, इस विषयमें मुझे कोई शंका नहीं है।

केशुको तुमने बिलकुल ठीक समझाया है। मैंने कभी नहीं सोचा था कि वह इतनी कच्ची बुद्धिका है। उससे मैंने शादीकी बात की थी। वह कहता है कि मैंने नहीं की; इससे आश्चर्य होता है। मैंने तो उसे सरदारकी राय भी बताई थी। किन्तु उसने इनकार ही किया।

उपवासके दिनोंमें भी तुम मुझे पत्र लिखती रहना।

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ८७९)से; सौजन्य : नारणदास गांधी।

१५९. पत्र : विनोबा भावेको

७ मई, १९३३

मुझे अपने उपवासके औचित्यके प्रमाण प्रतिक्षण मिल रहे हैं। मेरे लेख[1] में ऐसे ही दूसरे उपवासकी आवश्यकताकी ओर तो इशारा है ही। मेरा विचार दृढ़ होता जा रहा है। ऐसा लगता है कि जबतक इस अस्पृश्यताका नाश न हो जाये तबतक उपवासका क्रम चलाते रहना चाहिए। एकके-बाद-एक भाई या बहन उपवास करे तो यह क्रम चलता रहे। इसके बारेमें तुम्हें कुछ सूझे तो मुझे लिखना। देखता हूँ, धार्मिक आन्दोलनको धार्मिक रीतिसे चलानेके लिए इस ज्वलन्त दीपको जगाये रखना आवश्यक है। इस लौ को प्रज्वलित रखनेका भार आश्रमवासी नहीं उठायेंगे तो कौन उठायेगा? इसमें हमें पहल करनी ही चाहिए। यदि मैं उपवास समाप्त कर पाया तो इस सम्बन्धमें मैं भी तुम्हारे साथ विचार करूँगा। किन्तु यदि यह देह जाये तो तुम्हें, काकाको या जो भी बाहर होगा, उसे इसपर विचार करना होगा। मुझसे मिलना आवश्यक दिखाई दे, तो मिल जाना।

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९५४३)से, सौजन्य छगनलाल जोशी।

१६०. पत्र : नर्मदाबहन राणाको

७ मई, १९३३

चि० नर्मदा,

देख, उपवासके दौरान ठीकसे काम करना और मनमें बुरे विचार कदापि न आने देना।

बापू

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० २७७७)से; सौजन्य रामनारायण एन० पाठक।

1. देखिए पृ० १३९-४०।

१६१. पत्र : माधवदास और कृष्णा कापड़ियाको[1]

७ मई, १९३३

उपवासके बिना भी किसी दिन देहको नष्ट होना ही है न? वह उपवासमें समाप्त हो जायेगी ऐसा क्यों मान लो? विश्वास रखो कि देह रहे या जाये, भलाई दोनों ही में होगी। रोगी होकर मरनेसे यज्ञ करते हुए मरनेमें क्या बुराई है? हिम्मत बाँधकर अपना जीवन शुद्ध रखते हुए जितनी हो सके उतनी सेवा करते रहना।

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९५४९)से, सौजन्य छगनलाल जोशी।

१६२. पत्र : शामल आर० रावलको

७ मई, १९३३

चि० शामल,

तेरा पत्र मिला।

तू मेरी चिन्ता न करना। तू स्वयं अच्छा बन और सेवा कर। उससे हरिजनोंका भला ही होगा। यदि ईश्वर मुझे जिन्दा रखना चाहता है तो कौन मेरे प्राण ले सकता है?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३१४७)से।

१६३. पत्र : राधा गांधीको

७ मई, १९३३

इस बार उपवासके दौरान बाहरकी कम-से-कम चिन्ता करनी है। किन्तु बीमारोंका हाल तो मालूम करता ही रहूँगा।

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९५४८) से, सौजन्य. छगनलाल जोशी।

१. कस्तूरबा गांधीके भाई और भाभी।

१६४. पत्र : छगनलाल और काशी गांधीको

७ मई, १९३३

चि० छगनलाल और काशी,

मैं समय न होनेके कारण तुम्हें पत्र नही लिख सका। किन्तु याद दिलानेके लिए तुम्हारा पत्र आ पहुँचा। मेरा आशीर्वाद तो तुम्हे प्राप्त है ही। इस समय तुम्हारा काम यही है कि अपने कर्त्तव्यमे लीन रहो। नारणदासके साथ और योजना बना रहा हूं। उसे लिखूंगा कि तुम्हे सब बातें लिख भेजे।

बापू

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९२२३)से, सौजन्य छगनलाल गांधी।

१६५. पत्र : डी० बी० परचुरेको

७ मई, १९३३

मेरे बदले तुम अनशन नही कर सकते। जिसने यज्ञ शुरू किया हो उसे ही शुद्धि करनी है। अस्पृश्यता-यज्ञका श्रीगणेश मैंने किया है, इसलिए अनशन आदि द्वारा उसकी योग्यता मुझे ही प्राप्त करनी है।

वह समय भी आयेगा जब तुम्हारा अनशन करना मुझे अच्छा लगेगा। अपने मनको और अच्छी तरह परख लो, आश्रममें थोड़े दिन और टिक जाओ, तब बादमे उपवास अवश्य करना। इस उपवासमें बच गया तो मैं ही निर्णय करनेमे तुम्हारी सहायता करूँगा। और यदि न बचा तो काका, विनोबा, आदि तो है ही। इन सबके साथ मिलकर निर्णय करना। ना[रणदास]को तो मैंने लिखा ही है। आश्रममे निरन्तर कोई-न-कोई अनशन करे तो मुझे अच्छा लगेगा। अभी तो तुम अपना मन तैयार करना।

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९५४७) से, सौजन्य · छगनलाल जोशी।

१६६. पत्र : आनन्दी एल० आसरको

७ मई, १९३३

उपवास तेरे लिए तो है ही, वह मेरे लिए भी है। तू मरकर किस काम आयेगी? जीवित रहकर अपनी पवित्रता, दृढ़ता, आदि सिद्ध कर। और मुझे तो यही आशा है कि तू ऐसा करेगी। तू उपवासके लायक बन। बादमें तुझे भी उपवास करना होगा। हमारा काम क्या मुझ अकेलेके उपवाससे ही पूरा हो जायेगा? इसलिए काम तू स्वस्थ हो जानेके बाद हाथमें लेना।

गुजरातीकी नकल (मी० डब्ल्यू० ९५४६) से; सौजन्य : छगनलाल जोशी।

१६७. पत्र : वी० एल० फड़केको

७ मई, १९३३

जितनी हो सके उतनी सेवा करते रहो। सभी साथियोंको अनशन-यज्ञमें बैठानेकी योजना बना रहा हूँ।

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ९५४४) से, सौजन्य . छगनलाल जोशी।

१६८. पत्र : सुलोचना ए० शाहको

७ मई, १९३३

चि० सुलोचना,

तेरा पत्र मिला। खूब सेवा और नियमोंका अच्छी तरहसे पालन करती रह।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० २३३६९) से।

१६९. पत्र : पांडुरंग नाथूजी राजभोजको

७ मई, १९३३

भाई राजभोज,

रामजी ने कहा तुमारे दोनोको देहातोमे हरिजनोमें घूमना। मुझे यह बात नहि जचती है। मेरा ख्याल है कि तुमारे आश्रममें ही रहकर जो सीखनेका है वह सीखना और आश्रम जीवनमे और ओतप्रोत बनना। रामजी बहुत अस्वस्थ है किसी पर विश्वास नहि है। शिस्तका पालन करना नहि चाहता है। इनके घूमनेसे क्या लाभ हो सकता है?

इसलिए उनको समझाओ और आश्रममे शात होकर जो बन सके वह करता रहे। इसमे जो हो सके वह करो।

इतना कहते हुए भी यदि तुमारा दिल घूमनेका ही पसद करे तो अपने नामसे घूमो, आश्रमके नामसे नहि। आश्रम कार्य इस वखत व्याख्यानोका नहि है।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ७९३) से।

१७०. पत्र : नारणदास गांधीको

७ मई, १९३३

चि० नारणदास,

तुम्हे कल पत्र लिखा था। उसके बाद रामजी, डॉ० शर्मा मिले। अमतुस्सलाम और डकन बम्बईमे है।

रामजी हठ कर रहा है कि उपवासकी नही तो गाँवोमें घूमनेकी अनुमति दे दूं। राजभोज भी साथ हो यह उसकी इच्छा है। मैंने कहा है, तुमसे अनुमति ले, तुम्हे उचित लगे तो बेशक दोनो चले जाये। आश्रमके नामसे कोई न जाये। आश्रमकी ओरसे तो जो व्यवस्था वहाँ तुम करोगे उसीके अनुसार काम होना चाहिए। किन्तु मैं अपनी बुद्धिसे तुम्हारे अनुभवको ज्यादा गिनूंगा। इसलिए तुम्हे जैसा ठीक लगे वैसा करना। इसके साथके पत्रोको पढकर, वे जिन-जिनके हैं, उन्हे भेज देना। तार तो देना ही होगा।

नी० का बगलोरमे पतन हुआ था, यह मुझे मालूम था। उसने लिखा भी था, पर उसका अर्थ ठीक जिस दिन [उसे आश्रम] भेजा उससे एक दिन पहले ही समझ

सका। यदि गर्भ रहा ही हो तो मुझे अच्छा लगेगा। इससे उसकी परीक्षा होगी और हमारी भी। यदि उसका मन साफ हो गया हो तो उसे आश्रय देना हमारा कर्त्तव्य है। उसको लिखा पत्र पढना। उसके नाम जो भी पत्र आये उसे खोल लेना और पढ़कर ही उसे देना। वह जो लिखे वह जरूरी ही हो तो उसे जाँच कर डाकमे डालना। दूसरे काम कम करके हरिजन बस्तीमे नियमसे काम करना।

डॉ० शर्मासे मुलाकात मुखकर नही हुई। मुझे उसकी बाते आदि अच्छी नही लगी। परशुरामकी बातोमे बहुत सत्य दिखाई दिया है।' वह मनमे आश्रमके प्रति तिरस्कार लेकर आया था, यह मैं देख रहा हूँ। बहुत ज्यादा बात नही कर सका। कल थोड़ी और करूँगा। वह अब लौटकर नही आयेगा। भगवानजी ने अपने पत्रोमे उसके कामकी प्रशंसा की है। उसके वहाँसे आनेवाले पत्र अच्छे लगे थे। तुम परीक्षा नहीं कर पाये। क्या वह तुम्हारी अनुमति लेकर आया था? [अब] यह सब पूछना निरर्थक लगता है। उपवासके दौरान मुझे आश्रमकी चिन्ता नहीं करनी है। वह तो तुम्हे करनी है। तुम्हें जो ठीक लगे सो करना। तुम्हे मददकी जरूरत हो तो काका या विनोबाको बुला सकते हो। अपनी मर्जीके माफिक परिवर्तन कर लेना। विचार करनेके लिए कम फुरसत मिलती हो तो समय निकालना। कुसुम, आनन्दी और नी० की खबर जानना चाहूँगा। औरोके बारेमे लिखते रहना। कुछ लिखने लायक होगा तो महादेव लिख देगा। [सभी-कुछ] अपनी इच्छाके अनुसार करना। मुझे क्या चाहिए यह तुम जानते हो।

परशुराम आये और तब भी तुम्हारी इच्छा उसे न रखनेकी हो तो तुम उसकी छुट्टी कर सकते हो। शायद वह वहाँ नहीं आयेगा। यहाँ तो विचित्र घटनाएँ होती रहती हैं। इसलिए दो घटेके बाद क्या होगा, यह नही कहा जा सकता। वह स्पीगल तो एकदम मद्रास जा पहुँची है। ईश्वर तुम्हे स्थितप्रज्ञता और आवश्यक शक्ति दे। जिनमे स्थितप्रज्ञता है उन्हे शक्ति प्राप्त होती है, ऐसी भगवानकी प्रतिज्ञा है। मेरे अक्षरोमे अभी एक और पत्रकी आशा करना। इसके बाद प्रभुकी इच्छा हुई तो २९ के बाद।

बापू

[पुनश्च :]

नी० लिखती है कि वह तीन बजे उठती है तो पाखाने नहीं जा सकती। छात्रालयका दरवाजा बन्द रहता हो तो इसका प्रबन्ध अन्दर ही होना चाहिए। जिसे उठा सके ऐसा कोई पात्र मैदानके कोनेमे रख दे या उसकी व्यवस्था कोठरीमे करें।

जो लोग कच्ची खाई जानेवाली सब्जियाँ माँगे उन्हें कच्ची ही देना अच्छा है।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३३४ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी।

१. देखिए पृ० १२८-३०।

१७१. तार: नारणदास गांधीको

८ मई, १९३३

सत्याग्रह आश्रम
साबरमती

राजभोज, रामजीको प्रचार दौरेपर जानेसे जोर देकर मना करो। रामजीको अपनी शकाका समाधान कर लेना चाहिए।[1]

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३७७ से भी, सौजन्य नारणदास गाधी।

१७२. तार: 'इंडियन ओपिनियन' को

[८ मई, १९३३][2]

'इडियन ओपिनियन'
फीनिक्स (नेटाल)

आनन्द मनाओ। कर्त्तव्यका पालन करो।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १९०८४) से।

१७३. पत्र: सी० एफ० एन्ड्रचूजको

[८][3] मई, १९३३

प्रिय चार्ली,

सोमवारकी सुबह है। अभी ३ नही बजे हैं। तुम्हारा पत्र पहला पत्र है जिसे मै शुरू कर रहा हूँ। यह अपने-आप हाथमे आ गया है और इससे मुझे खुशी हुई है। तुमने मुझे जो तार भेजा[4] उसे मै बहुमूल्य मानता हूँ। मै सोच रहा था

१. देखिए "पत्र: नारणदास गांधीको", और पा० ना० राजभोजको, ७-५-१९३३।

२ साधन-सूत्रमें यह और इससे पहलेवाला तार एक ही कागजपर लिखे गये है।

३. साधन-सूत्रमें "७" तारीख है किन्तु पत्र सोमवारको लिखा गया था जो ८ मई, १९३३ को पडता है। देखिए अगला शीर्षक भी।

४. लन्दनसे प्राप्त तार इस प्रकार था : "आपके निर्णयसे सहमत हूँ। समझा, स्नेह। चार्ली।"

कि मेरे निर्णयपर तुम्हारी जाने क्या प्रतिक्रिया होगी। तुम उसका मर्म समझ गये, इसे भगवानकी कृपा मानता हूँ। मुझे इसका केवल आभास ही था कि मुझे उपवास क्यों करना पड़ रहा है। लेकिन जैसे-जैसे समय बीतता जा रहा है, मुझे उसके औचित्यके अधिकाधिक प्रमाण मिलते जा रहे हैं। मैं ऐसी घटनाओंके बीच शान्त खड़ा हूँ, या लगता है कि शान्त हूँ जो, यदि उपवास पास आ रहा न होता, तो मेरे टुकड़े-टुकड़े कर देती। अब मैं पहलेसे अधिक आश्वस्त भावसे उन्हें उस परमपिताके चरणोंमें डाल सकता हूँ।

मैं जानता हूँ कि तुम तथा हमारे अनेक मित्र मेरे लिए प्रार्थना कर रहे हो। उपवासके दिनोंमें ये प्रार्थनाएँ मेरी खुराक होंगी।

आशा है कि तुम्हारा भाई अब पहलेसे अच्छा होगा। वह न हो तो भी तुम्हारे परिवारके सदस्योंको इस बातसे बड़ी राहत मिलेगी कि तुम इतने करीब हो।

तुमको तथा उन सब मित्रोंको जिन्हें मैं लिख नहीं सकता, मेरा प्यार।

तुम्हारा,
मोहन

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९८५) से।

१७४. पत्र : मीराबहनको

८ मई, १९३३

चि० मीरा,

इस समय प्रातःकालके ३.१० हुए हैं। मैंने अपना पहला पत्र पूरा किया है। वह एन्ड्रयूजके नाम है। मैं ही नहीं, हम सब तुम्हें याद कर रहे हैं। लोग मुझे तुम्हारे बारेमें लिखते या कहते हैं और यह सुझाते हैं कि मुझे तुम्हारी खातिर उपवास छोड़ देना चाहिए। यह मेरे प्रति तुम्हारे प्रेमकी जबर्दस्त सराहना हुई; परन्तु यह उसकी अनुदृष्टि टीका भी है। मैं चाहता हूँ कि मैं खुद और तुम्हें जाननेवाला हर शख्स यह अनुभव करे कि तुम्हारा प्रेम इतना गहरा, सच्चा और ज्ञानपूर्ण है कि शरीरसे चाहे जितने अरसेतक वियोग हो जाये, वह उसका भार सहन कर लेगा। मैं जानता हूँ कि वह स्थिति आयेगी, आ रही है। वह बुद्धिसे नहीं आ सकती। हृदयसे आयेगी। असली प्रेमका आधार सर्वथा उसका आध्यात्मिक अंग होता है, यद्यपि पहले वह उत्पन्न इन्द्रिय-बोधसे होता है। मैं चाहता हूँ, तुम भी मेरी तरह महसूस करो कि यह उपवास ईश्वरकी आजतककी किसी भी देनसे बड़ी देन है। यदि मैं इसे भयभीत होकर काँपते हुए कर रहा हूँ, तो यह मेरी दुर्बल श्रद्धाका चिह्न है। परन्तु इस बार मेरे भीतर जैसी खुशी है, वैसी मैंने पहले कभी महसूस नहीं की। मैं चाहता हूँ तुम मेरी इस खुशीमें भागीदार बनो।

इसलिए तुम भोजन करना मत छोड़ना। ईश्वरको धन्यवाद देकर भोजन करो और अपने-आपकी सेवाके लिए स्वस्थ रखो। वह समय आ सकता है जब तुम्हें

ऐसा ही उपवास करना पडे। कुछ परिस्थितियोमे यही एक हथियार होता है, यह ईश्वरने हमे बिलकुल ही लाचारीके समय काममे लानेको दिया है। हमे इसका उपयोग करना नही आता या हम समझ लेते हैं कि इसका आदि और अन्त केवल शरीरको आहार न देना ही है। यह ऐसी चीज नही है। भोजन न करना अनिवार्य तो है, परन्तु वह इसका सबसे बडा अग नही है। सबसे बडा अग तो है प्रार्थना, ईश्वरसे लौ लगाना। यह शारीरिक भोजनकी कमी पर्याप्तसे भी अधिक मात्रामे पूरी करता है।

यथासम्भव महादेव तुम्हे रोज एकाध पक्ति लिख दिया करेगे।

ईश्वर तुम्हे शक्ति दे।

स्नेह।

बापू

[पुनश्च]

बा के लिए पत्र[1] साथमे है।

[पुनश्च]

आशा है, तुम्हे मेरा शनिवारका पत्र[2] मिल गया होगा। एक पत्र बा के नाम भी भेजा गया था।

अग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९६९०) से, सौजन्य मीराबहन।

१७५. पत्र : प्रेमलीला ठाकरसीको

८ मई, १९३३

प्रिय बहन,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। उससे तुम्हारा प्रेम छलकता है। ऐसा समय आये तो अभी मेरी नजरमे तुम्हारा घर ही है। वैसे, जैसाकि मै कह चुका हूँ, मुझे उस समय हरिजनोके पास रहना सबसे अधिक प्रिय होगा।[3] किन्तु उसमे बहुत कठिनाइयाँ देखता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७८) से। सी० डब्ल्यू० ४८३० से भी, सौजन्य प्रेमलीला ठाकरसी।

१. देखिए पृ० १४५।

२. देखिए पृ० १३२।

३. प्रेमलीला ठाकरसीने गांधीजी को जेलसे छूटनेपर अपने बंगलेमें आकर ठहरनेका निमन्त्रण दिया था। देखिए पृ० १६३ भी।

१७६. पत्र : मणिबहन पटेलको

[८ मई, १९३३][1]

चि० मणि,

तुझे शनिवार[2] को पत्र लिखा है। तू जवाब भी रोज लिख सकती है और इसमें मृदुका भी भाग हो सकता है। कोई बहन दुखी न हो। परन्तु सब अपनेमें जहाँ-जहाँ विकार भरा हो उसे निकालनेका प्रयत्न करें। कोई-न-कोई यथासम्भव रोज लिखा करेगा। मैं खूब शान्त हूँ। हम सब आनन्द कर रहे हैं।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४ मणिबहेन पटेलने, पृ० १०७

१७७. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

८ मई, १९३३

चि० प्रेमा,

क्या तुझसे अभीतक कुछ कहना बाकी है? जिसमें तू अपना कल्याण समझे उसे सारे जगतके विरुद्ध जाकर भी करना। मेरी दृष्टिसे ऐसा करना आश्रममें कठिन नहीं होगा। परन्तु तेरे लिए वही चीज सही है जो तुझे सूझे।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३४५) से। सी० डब्ल्यू० ६७८४ से भी, सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक।

१. साधन-सूत्रके अनुसार।
२. देखिए पृ० १३६-७।

१७८. पत्र : नारणदास गांधीको

८ मई, १९३३

चि० नारणदास,

मेरे महत्त्वपूर्ण पत्रोका सार या नकल छगनलाल आदिको न भेजते हो तो भेज दिया करो। मैं देखता हूँ कि छगनलालको कुछ खबर नही मिलती। विनोबाके साथ भी ऐसा ही होगा। प्रतियाँ तैयार करवानेका कुछ प्रवन्ध करना।

इसके साथ मेरी बारका पत्र है। वह वहाँ लौट आये तो उसका स्वागत करना।

दूसरा पत्र धीरूके वारेमे नन्दलाल बोसका है। इस पत्रके अनुसार धीरू जुलाईसे पहले नही जा सकेगा। जुलाईमे मजेसे जा सकता है। जो पन्द्रह रुपये लिखे है वे भोजनके लिए है। सो किस प्रकार, यह मै ठीकसे समझा नही। किन्तु फिलहाल कुछ-भी करनेकी जरूरत नही। यदि मैं उपवासमे वच गया और आवश्यकता दिखाई दी तो स्पष्टीकरणके लिए लिखूंगा। या वादमे तुम पूछ लेना। पत्र धीरूको आश्वासन देनेके लिए है। इस बीच जितना वहाँ वैठे-वैठे हो सके उतना करे। तीन सप्ताहकी इस अवधिमे अपने-आपको शुद्ध करे।

नी० को तुम्हे ज्यादा समय देना पड़ेगा। उसके मनमे क्या है यह जान लेना। उसके पत्र आते हो तो उन्हे खोलकर पढ लेना। वह जान-बूझकर कुछ छिपाये ऐसा नही है। किन्तु उसका अपने मनपर ज्यादा कावू नही है। देखता हूँ कि मेरे इस उपवासमे उसका काफी हाथ है। मुझे यह मालूम न था। यदि कोई चीज नी० को सहारा दे सकती है तो यही उपवास दे सकता है। और यदि उसे वहाँ भेजकर मैंने भूल की है तो मेरी भूलको भी यही उपवास धोकर साफ कर सकता है। मै मानता हूँ कि वहुत-से जवान वच जायेंगे। यदि वह गर्भवती है तो उसका कारण . [1] नामक एक हरिजन पुरोहित है। इसने उसको फँसाया या उसने इसको, यह कहना मुश्किल है। मेरे विचारसे यदि गर्भ रहा भी हो और नी० इस स्थितिको स्वीकार कर ले तो उसके द्वारा उसका उद्धार हो सकेगा। जितना स्नेह दे सको उतना देकर इस वृक्षको वढाना।

मार्गरेट मद्रास चली गई है। वहाँ रहकर उपवास करनेकी धमकी दे रही है। उपवास करेगी तो उसके शरीरको लाभ होगा। काफी चर्वी चढी हुई है, वह कम हो जायेगी।

डकनका विचार भारी भूलसे भरा हुआ है। उसे समझाऊँगा।

रसोई और दुग्धालय-सम्बन्धी सुझाव पसन्द आये तो उनपर अमल करना।

१. नाम छोड़ दिया गया है।

प्रार्थनामें फेरफार न करो, तो भी उसके तीन भाग करना। अर्थात्, पहले 'गीता' पाठ, उसके बाद संस्कृत श्लोक, उसके बाद भजन। जो लोग 'गीता' पाठमें भाग ले सकते हैं, वही उस समय आयें। दूसरोंके आनेके लिए कोई नैतिक बन्धन न माना जाये। जो उस समय आनेका विचार करे वह अपना नाम दे दे। उसके बाद संस्कृत श्लोक। उनमें भी जो आना चाहें और जिन्हें ये श्लोक आते हों वही लोग आयें। उसके बाद भजन और रामधुन। तीनों ठीक प्रकारसे किये जायें तो दस-दस मिनट लगेंगे। इस प्रकार जिसमें सबको आना चाहिए वह भाग अन्तमें है। जो लोग जिस किसी भागमें आना चाहते हैं उसके लिए नाम लिखवा दें, तो कौन अपनी प्रतिज्ञाका पालन कर रहा है, इसका ध्यान रखा जा सकेगा। दरवाजेके सामने बत्ती, ऊँचा डेस्क और रजिस्टर हो तो आते समय सभी अपने नामके सामने कोष्ठकमें चिह्न लगा दें या हस्ताक्षर करना ठीक लगे तो हस्ताक्षर कर दें, अन्तिम भागमें आने लायक आस्था भी जिसमें न हो उसके लिए आश्रममें रहनेका आग्रह छोड़ देना ही ठीक है। जिसे आश्रमके इस अभिन्न अंगमें विश्वास न हो वह न तो आश्रमसे कुछ ले सकता है और न ही आश्रमको कुछ दे सकता है।

आश्रमके काम आ सकनेके उद्देश्यसे कोई वहाँ न रहे। 'माँ के काम आऊँ', जो सन्तान ऐसा सोच लेती है, वह माँ की सेवा नहीं करती। जो आश्रमको माँ या सर्वस्व ही समझे, वही वहाँ रहे। सभी सच्चे मनसे ऐसा विचार करके रहें तो तीन सप्ताहकी यह अवधि आश्रमका नाम उज्ज्वल करेगी। इस समयका सबसे अच्छा उपयोग आश्रम ही कर सकता है और उसे करना चाहिए। मैं यही चाहता हूँ कि सभी सत्यका पालन करें। आश्रमका कार्य चलानेके लिए व्यक्तियोंकी जरूरत पड़े तो मजदूर रखें और उन्हें भाई-बहन समझकर उनके जीवनको अपना समझें और उसमें भाग लें। यह सम्बन्ध शायद अधिक स्वाभाविक होगा। जिस प्रवृत्तिके बिना काम चलता हो उसे छोड़ दें। फल या सब्जीकी खेती तथा दुग्धालय और उससे सम्बन्धित खेती नहीं छोड़ सकते। कताई-सम्बन्धी सभी क्रियाएँ यज्ञका भाग हैं। बच्चोंको लेना बन्द करें। पूरा आश्रम विद्यालय है। इसलिए मैंने जो पहले लिखा है उसीपर दृढ़ हूँ। मजदूरकी तरह रहनेके लिए आवश्यक जानकारी सिखानेकी शक्ति हममें होनी चाहिए और है। इतनी सुविधा रखें तो काफी है। हम इस बातका रहस्य समझ नहीं पाये, इसीलिए असन्तुष्ट रहते हैं और सब काम बिगड़ता है। हमारे बालक मजदूर हैं और हम उन्हें मजदूर ही रखना चाहते हैं, इतना समझमें आ जाये तो हम अनेक रोगोंसे बच सकते हैं, ऐसा मेरा विचार है। इस दृष्टिसे दी गई शिक्षा सामान्य शिक्षासे अलग ही होगी। इस वक्त तो इतना ही लिखता हूँ। इसमें से जितना पसन्द हो उतना ही लेना। जो पसन्द न हो उसे छोड़ देना।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३७८ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी।

१७९. पत्र : अमृतलाल वी० ठक्करको

८ मई, १९३३

भाई ठक्कर बापा,

घनश्यामदासके पत्र और तारमे कहा गया था कि आप आ रहे है।[1] इसीलिए मैंने नही लिखा। अब आपका पत्र मिला है। आप समाचारपत्रोसे सार सग्रह करेगे — लेकिन उनसे ज्यादा कुछ नही मिल सकता। समाचारपत्रोमे जो-कुछ छपता है उसका कम-से-कम ७५ प्रतिशत तो छोड ही देना चाहिए। समाचारपत्रोके समाचारोको तबतक प्रामाणिक नही माना जा सकता जबतक कि उनके पक्षमे स्थानीय निरीक्षकका प्रमाणपत्र न हो। हमारे अपने विश्वसनीय सवाददाता जगह-जगह हो और वे समाचार भेजे, तो यह बात मुझे अच्छी लगेगी कि आप उनका सार मुझे भेजे। तथापि, आप अपना प्रयोग कर देखे। आपको ही यह समझमे आ जायेगा कि उन प्रयोगोसे कुछ फल निकलनेवाला नही है। आप वहाँ है इसलिए मैं निश्चिन्त हूँ। राम राम राम।

बापू

श्री अ० वि० ठक्कर
हरिजन सेवक सघ
बिडला मिल्स
दिल्ली

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० १०४४९) से, सौजन्य हरिजन सेवक सघ। अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११२१) से भी।

१. देखिए पृ० ८८।

१८०. वक्तव्य : अनशनके उद्देश्यपर[1]

८ मई, १९३३

प्रभुने, सत्यने जो अग्निपरीक्षा मेरे लिए भेजी है, मेरे सामने उसका औचित्य प्रति दिन स्पष्ट होता जा रहा है। अगर मै उपवास न करता तो जो नई बाते मुझे मालूम हो रही है, वे मुझे निष्प्राण करके ही छोडती। हरिजन-आन्दोलनके लिए इस उपवासका चाहे जो मूल्य हो, पर यह निश्चय है कि यह मेरी रक्षा करेगा। इस उपवासके बाद मै जिन्दा रहता हूँ या नही, यह तो कोई महत्त्वकी बात नही है। पर अगर मै यह उपवास न करता तो, बहुत सम्भव है, मै हरिजन-सेवा या किसी अन्य सेवाके लिए किसी कामका न रह जाता।

मेरे जिन मित्रोने मुझे अनशनसे विमुख करनेके लिए जरूरी तार दिये, मुझे उम्मीद है कि वे अब इस बातको समझ लेगे कि मेरे-जैसे मनुष्यके लिए ऐसे अनशन अनिवार्य है। ईश्वरीय आदेशसे प्रेरित होकर यह व्रत ठाना गया है, अपने इस दावेके अलावा मै ऐसा कह रहा हूँ।

मै तार भेजनेवाले मित्रोको उनकी पहुँचकी अलग-अलग सूचना देनेमे असमर्थ था। इसके लिए वे मुझे क्षमा करे। अत्यधिक कार्य-भारके कारण समय इतना थोडा था कि मेरे लिए उन निरन्तर चले आनेवाले सारे तारोका अलग-अलग जवाब देना असम्भव था।

अब चूंकि यह लिखनेके दो घटे बाद मेरा अनशन आरम्भ हो जायेगा, इस समय मै अपने तमाम मित्रो और हितचिन्तकोसे अनुरोध करता हूँ कि वे परमेश्वरसे मुझे ऐसी शक्ति देनेकी प्रार्थना करे कि मै निर्बल हुए बिना यह अग्निपरीक्षा पार कर जाऊँ। मै स्वीकार करता हूँ कि मेरे पास सिवाय उसके जो ईश्वर मुझे दे दे, अपनी कोई ताकत नही है। उसने मुझे आजतक सहायता देनेमे उपेक्षा नही की, मुझे विश्वास है, वही अब भी मेरी सहायता करेगा।

एक हरिजन-सघका मुझे इस आशयका तार मिला है कि यह अनशन अनावश्यक है, क्योकि हरिजनोको सवर्ण हिन्दुओकी सहायताकी कोई जरूरत नही है। अपनी विचार-दृष्टिसे संघको ऐसा कहनेका अधिकार है। पर यह साफ हो जाना चाहिए कि यह उपवास हरिजनोपर कोई अहसान लादनेकी नीयतसे नही किया जा रहा है, यह तो मैने अपनी और अपने सहयोगियोकी आत्मशुद्धिके लिए ही किया है।

हरिजन-सेवा एक ऐसा कर्त्तव्य है जो सवर्ण हिन्दुओपर कर्जकी तरह चढा हुआ है। अपने ही सगोके प्रति किये गये अत्याचारोके लिए उन्हे अब प्रायश्चित्त करना होगा। हरिजन-सेवा उसी प्रायश्चित्तका अंग है। कुछ हरिजन भाइयोने गुस्सेमे

१. गांधीजी के उपवास शुरू करनेके तुरन्त बाद दोपहरके १२ बने यह वक्तव्य जारी किया गया था।

आकर विरोध किया है, उसे मैं अच्छी तरह समझ सकता हूँ। फिर भी मुझे आशा है कि सवर्ण हिन्दुओंके उदारतापूर्वक प्रायश्चित्त करनेका समय अभी भी निकल नहीं गया है। वह प्रायश्चित्त अब भी किया जा सकता है। उनकी ओरसे जो अगणित सन्देश आये हैं, निस्सन्देह उनसे मालूम होता है कि प्रायश्चित करना उन्हें स्वीकार है।

सनातनियोंको तो मेरे इस उपवासमें भी दबावकी गन्ध आई है, जबकि वे यह जानते हैं कि हरएक मन्दिर खोल दिया जाये और अस्पृश्यता जड़से उखाड़कर फेंक दी जाये तो भी यह अनशन अपनी अवधिके पहले भंग नहीं किया जा सकता। दिलसे तो शायद वे भी अनुभव करेंगे कि इस अनशनमें दबाव डालने-जैसी कोई भी बात नहीं है। यह अनशन तो कटुता हटाने, हृदय शुद्ध करने और यह स्पष्ट कर देनेके लिए किया गया है कि हरिजन-आन्दोलन एक बिलकुल धार्मिक आन्दोलन है और उसका संचालन सर्वथा धार्मिक लोगों द्वारा ही किया जाना चाहिए। ईश्वर इस अग्निपरीक्षाको सफल करे और इनका उद्देश्य पूर्ण करे।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ९-५-१९३३

१८१. भेंट: एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको[1]

८ मई, १९३३

मुझे यह अचानक ही मालूम हुआ, इसलिए मैं तैयार नहीं था।

कल 'वीकली टाइम्स' देखनेके बाद मैंने और सरदार वल्लभभाई पटेलने इस विषयपर थोड़ी बातचीत की कि यदि मैं अचानक रिहा कर दिया जाऊँ तो मुझे कहाँ ठहरना चाहिए। सबसे पहले तो साबरमती जाने और आश्रमके पास रहनेका विचार आया। यदि वैसा न हो सके या उचित न लगे तो लेडी ठाकरसीका निमन्त्रण स्वीकार करनेकी बात सोची। निश्चय ही सर्वेन्ट्स ऑफ इंडिया सोसाइटीका निमन्त्रण भी है, दलितवर्ग मिशनका भी है। लेकिन जब कर्नल डॉयलने मुझे सूचना दी तो मुझे लगा कि लेडी ठाकरसीके पास जाना ही सबसे ज्यादा अच्छा होगा, और मैं यहाँ आ गया हूँ।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १०-५-१९३३

१. साधन-सूत्रके अनुसार, एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाका प्रतिनिधि जब गांधीजी से लेडी ठाकरसीके घरपर मिला तो उन्होंने उससे कहा कि जेलसे रिहा होनेकी सूचना उन्हें जेलोंके महा-निरीक्षक कर्नल डॉयलने ६-४५ पर दी थी। जब उनसे पूछा गया कि क्या वे उपवासके अन्ततक लेडी विठ्ठलदास ठाकरसीके घरमें ही ठहरेंगे, तो उन्होंने उत्तर दिया कि इस विषयमें अभी कुछ पक्का नहीं कहा जा सकता।

१८२. वक्तव्य : सविनय अवज्ञा आन्दोलन मुल्तवी करनेपर

८ मई, १९३३

इस रिहाईसे मुझे जरा भी आनन्द नही हो सकता। सरदार वल्लभभाई पटेलने कल ठीक ही कहा कि इस रिहाईका फायदा मै सविनय अवज्ञा आन्दोलन चलाने या उसका मार्गदर्शन करनेके लिए कैसे उठा सकता हूँ? इस प्रकार सत्यके एक शोधकके नाते और स्वाभिमानी मनुष्यके नाते मुझपर इस रिहाईसे बड़ा बोझ और तनाव आ पड़ा है। मेरा उपवास तो जारी रहेगा ही। मैंने आशा रखी थी और अब भी रखता हूँ कि उपवासके दिनोंमे किसी भी तरहकी चर्चामे भाग न लूंगा और किसी भी बातसे क्षुब्ध नही होऊँगा। यदि मैंने अपने मनको हरिजन-कार्यके सिवाय बाहरकी और किसी भी बातमें लगने दिया तो उपवासका सारा उद्देश्य ही विफल हो जायेगा। इसके साथ ही जब मैं छूट गया हूँ, तो अपनी थोड़ी शक्ति सविनय अवज्ञा आन्दोलनका अध्ययन करनेमे लगानेके लिए भी मै बँधा हुआ हूँ।

अलबत्ता, अभी तो मै इतना ही कहूँगा कि सविनय अवज्ञा-सम्बन्धी मेरे विचारोंमे तिल-भर भी फर्क नहीं पडा है। सविनय अवज्ञा करनेवाले अनेक लोगोंने जो बहादुरी दिखाई है और कुर्बानियाँ की है, उनके लिए मेरे दिलमें प्रशसाके सिवाय और कोई भावना नही है। पर इसके बाद भी मै यह कहे बिना नही रह सकता कि इस आन्दोलनमे जो गोपनीयता घुस आई है, वह इसकी सफलताके लिए घातक है। इसलिए आन्दोलन चलाना ही हो, तो देशके अलग-अलग भागोमे जो लोग इस आन्दोलनका सचालन कर रहे है, उनसे मै आग्रहपूर्वक कहूँगा कि वे छुपाकर कुछ भी न करें। यदि ऐसा करनेसे उन्हे एक भी सविनय अवज्ञा करनेवाला मिलना मुश्किल हो जाये, तो इसकी मुझे परवाह नही।

इसमें शक नहीं कि इस समय आम जनतापर आतंक छा गया है। अध्यादेशोंने लोगोंको दबा दिया है। मैं यह मानता हूँ कि अधिकाशमे लोगोकी इस भयभीत दशाके लिए आन्दोलनके गुप्त तरीके जिम्मेदार हैं। सविनय अवज्ञा आन्दोलन उसमे भाग लेनेवाले पुरुषों और स्त्रियोंकी सख्यापर नही, बल्कि उनके गुणोपर निर्भर करता है। अगर मै आन्दोलनका संचालन करता होऊँ, तो सख्याका नही, गुणोंका ही आग्रह रखूं। यदि यह हो जाये तो तुरन्त ही आन्दोलनका स्तर उठ जाये।

वास्तविक आन्दोलनके बारेमें मै और कुछ नही कह सकता। ऊपर मैंने जो विचार रखे हैं, वे पिछले कई महीनोसे मेरे मनमे भरे हुए थे। मैं कह सकता हूँ कि मैंने जो-कुछ कहा है सरदार वल्लभभाई भी उससे सहमत हैं। मुझे यह पसन्द हो या न हो, परन्तु इन तीन हफ्तोके दरम्यान तमाम सविनय अवज्ञा करनेवालोका

मन भयानक असमजसमे पडा रहेगा। इसलिए काग्रेसके अध्यक्ष बापूजी माधव राव अणे एक या डेढ महीनेतक इस आन्दोलनको मुल्तवी रखे, तो अच्छा हो।'

अब मैं सरकारसे एक अपील करूँगा। अगर वह चाहती है कि देशमे सच्ची शान्ति स्थापित हो, और यदि उसे ऐसा लगता है कि आज देशमे सच्ची शान्ति नही है, ओर यदि वह यह मानती हे कि अध्यादेशोसे शासन करना कोई शासन करना नही कहलाता, तो आन्दोलन स्थगित होनेका उसे लाभ उठाना चाहिए और सविनय अवज्ञा करनेवाले तमाम कैदियोको बिना शर्त्त छोड देना चाहिए। अगर मैं इस परीक्षासे पार हो गया, तो मुझे परिस्थितिकी जाँच करने तथा काग्रेसके नेताओको और सरकारको भी सलाह देनेका मौका मिलेगा। इग्लैंडसे लौटनेके बाद जिस मजिलपर मुझे नजरबन्द कर दिया गया था, उसी मजिलसे मैं फिर बातचीत शुरू करना पसन्द करूँगा।

मेरे प्रयत्नसे सरकार और काग्रेसके बीच कोई समझौता न हो सके और सविनय अवज्ञा फिर शुरू हो जाये, और उस समय सरकारकी इच्छा हो, तो वह फिर अध्यादेशोका शासन शुरू कर सकती है।

पर सरकारकी दृढ इच्छा हो, तो मुझे इस बारेमे कोई शक नही कि कोई कार्य-पद्धति निकाली जा सकती है। अपनी ओरसे तो इस बारेमे मेरे मनमे जरा भी शका नही है कि जबतक इतने ज्यादा सत्याग्रही जेलोमे बन्द है, तबतक सविनय अवज्ञा आन्दोलन बन्द नही किया जा सकता। जबतक सरदार वल्लभभाई, खान साहब, अब्दुल गफ्फारखाँ, पडित जवाहरलाल नेहरू और दूसरे लोगोको जिन्दा गाड रखा गया है, तबतक कोई समझौता नहीं हो सकता। सच तो यह है कि जेलके बाहरके किसी भी आदमीको सविनय अवज्ञा वापस लेनेका अधिकार नही है। मुझे जिस समय गिरफ्तार किया गया, उस समय काग्रेसकी जो कार्य-समिति अस्तित्वमे थी उसीको यह अधिकार है।

सविनय अवज्ञा आन्दोलनके बारेमे मैं और कुछ नही कह सकता। शायद मैं जरूरतसे ज्यादा कह चुका। लेकिन यदि मुझे और कुछ कहना भी हो तो वह तभी कह सकता हूँ जब मुझमे कुछ कहनेकी ताकत शेष हो। मैं अखबारवालोसे प्रार्थना करूँगा कि वे मुझे अब जरा भी तकलीफ न दे। मुझसे मिलने आने की इच्छा रखनेवालोसे भी मैं आग्रह करता हूँ कि वे अपनेपर अकुश रखे। वे यही समझे कि मैं अभीतक कैद हूँ। मैं उपवासके दिनोमे राजनैतिक या दूसरी चर्चाएँ करने योग्य नही रहूँगा।

मैं चाहूँगा कि मुझे पूरी तरह शान्तिसे रहने दिया जाये। सरकारको भी मैं इतना बता देता हूँ कि अपनी इस मुक्तिका मैं दुरुपयोग नही करूँगा। इस परीक्षासे मैं कुशलतापूर्वक पार हो जाऊँ और मुझे मालूम हो जाये कि राजनैतिक वातावरण पहलेकी तरह ही क्षुब्ध बना है, तो सविनय अवज्ञाको आगे बढानेके लिए खुले

१ सुझावको मानकर ९-५-१९३३ से आन्दोलन ६ हफ्तोंके लिए स्थगित कर दिया गया था।

या छिपे तौरपर एक भी कदम उठाये बिना मैं सरकारसे कह दूँगा कि यरवदामें जिन साथियोंको मैं लगभग छोड़ आया हूँ, मुझे वह उनके पास ले जाये।

यह मेरा बड़ा सौभाग्य था कि मैं सरदार वल्लभभाईके साथ रहा। मैं उनकी अद्भुत बहादुरी और उत्कट देशप्रेमको अच्छी तरह जानता था, लेकिन मैं कभी उनके साथ नहीं रहा था। पिछले सोलह महीने मुझे वह सौभाग्य प्राप्त हुआ। उन्होंने जो स्नेह मुझपर उँडेला उससे मुझे माँका स्नेह याद आ जाता है। मैं नहीं जानता था कि उनमें माताके गुण हैं। मुझे यदि जरा-सा भी कुछ हो जाता था तो वह अपने बिस्तरसे बाहर निकल आते। मेरे आरामसे सम्बन्धित हर छोटी-से-छोटी बात की वह देखरेख रखते थे। उन्होंने और मेरे दूसरे सहयोगियोंने मुझे कुछ न करने देनेकी आपसमें सलाह कर रखी थी, और मैं आशा करता हूँ कि सरकार मेरे कहेपर विश्वास करेगी कि हम जब-जब राजनैतिक समस्याओंपर चर्चा करते थे तब-तब यह दिखता था कि सरदारको सरकारकी मुश्किलोंका बहुत खयाल रहता है। बारडोली और खेड़ाके किसानोंके प्रति उनकी चिन्ता मैं कभी नहीं भूल सकता।[1]

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० का० क० फाइल सं० ४२९, १९३३; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय

१८३. तार: विजयलक्ष्मी पंडितको[2]

[९ मई, १९३३][3]

मुझे आपकी दुआओं और आशीर्वादकी जरूरत है। मैं चाहूँगा कि अभी घोषित [आन्दोलनके] स्थगनके दौरान आप और रणजीत वहीं रहें और हरिजनोंके लिए काम करें।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० २१२२८) से।

१. गांधीजी की इच्छाके अनुसार, यह वक्तव्य कांग्रेसके कार्यकारी अध्यक्ष श्री अणेकी स्वीकृतिके बाद रातके ११-३० बजे जारी किया गया था। सविनय अवज्ञा आन्दोलनको स्थगित करते हुए अणेने जो वक्तव्य दिया था, उसके लिए देखिए परिशिष्ट ५।

२. यह श्रीमती पंडितके ८-५-१९३३ को प्राप्त तारके जवाबमें दिया गया था। उनका तार इस प्रकार था: "आपके साथ होनेकी इच्छा रखती हूँ। आपके सन्देशकी प्रतीक्षा करूँगी। मेरा व रणजीतका प्यार।"

३. सविनय अवज्ञाके स्थगनकी घोषणाके सन्दर्भ से।

१८४. पत्र : डंकन ग्रीनलीजको

९ मई, १९३३

मुझे खेद हुआ कि मै आपसे और देरतक बातचीत नही कर सका।

आज सुबह मैंने आपकी रिपोर्ट ध्यानपूर्वक पढी। मैंने उसका कुछ भी बुरा नही माना है। उसमे जो स्पष्टवादिता है, उसे मैं पसन्द करता हूँ। आपके कुछ सुझाव महत्त्वपूर्ण भी है, लेकिन क्या आप वहाँ रह कर विकास कर सकते हैं? आश्रमके बारेमे जो-कुछ भी अच्छी बाते कही जा सकती है, उन सबके बावजूद, मुझे ऐसा लगता है कि यदि आपके द्वारा बताई गई बुराई वहाँ इतनी फैली हुई है जितनी कि आप बताते हैं, तब तो आप वहाँ केवल ठिठुरकर रह जायेंगे। यदि नारणदास कोरे व्यापारी-भर हैं या अधिकाशमे व्यापारी है तो वे उस नमककी तरह हैं जिसमे खार ही नही है। यदि उनमे वह तत्त्व नही है तो निस्सन्देह आश्रम मृत है। पर मेरा उनके बारेमे आपसे सर्वथा भिन्न विचार है। उनमे व्यापारको अध्यात्मके साथ मिलाकर चलनेकी अनोखी प्रतिभा है। अस्तु, यह उन अनेकमे से एक उदाहरण है जिनके कारण आपकी प्रतिक्रिया इतनी विरोधपूर्ण हुई है कि आपकी रायमे यह एक ऐसी सस्था है जहाँ व्यक्तिके मस्तिष्कपर कुल मिलाकर ऐसा असर पड़ता है कि उसका विकास अवरुद्ध हो जाता है। लेकिन अपनी रिपोर्टके बावजूद अपनी भावना आप स्वय ही सबसे ज्यादा अच्छी तरह जान सकते हैं। इसलिए यदि आपको ऐसा लगता है कि आप आश्रममे रहकर अपना विकास कर सकते हैं तो यह हर तरहसे अच्छी बात है। अपनी पूरी रिपोर्टपर नारणदाससे चर्चा कीजिए और आप उनसे जो भी परिवर्तन करवा सके, करवा ले। मेरा उनमे विश्वास अब भी असदिग्ध है। लेकिन यदि आप वहाँ रहते हैं तो आपको अपने स्वास्थ्यपर ध्यान रखनेके साथ-साथ अनुशासनका पालन जरूर करना चाहिए। इसके बाद ही आपको परिवर्तनकी माँग करनेका हक होगा। आज तो आप सिर्फ अपने पहले-पहलके असर और दूसरी जगहके अनुभवके ही फलस्वरूप परिवर्तनकी सिफारिश कर सकते हैं। अच्छा होता कि मेरे पास समय होता। तब मैं आपकी कही हुई उन कई बातोंमें जो वास्तवमे सच नही हैं, सुधार कर सकता था। अभी वैसा करनेसे मुझपर बड़ा जोर पड़ेगा। यदि आपको नारणदासकी नेकनीयतीमे विश्वास है तो आपको उन सब मुद्दोंपर जिनके बारेमे आप बात करना चाहते हैं, उनसे बातचीत करनी चाहिए।

स्नेह।

बापू

श्री डकन

अग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१२६०) से।

१८५. पत्र : नारणदास गांधीको

मार्फत-लेडी विट्ठलदास ठाकरसी
'पर्णकुटी', पूना,
९ मई, १९३३

चि० नारणदास,

मुझे अचानक ही रिहा कर दिया गया है। नही तो महादेव ही पत्र लिखता और लम्बा पत्र लिखता। अब तो मुझे खुद ही लिखवाना पड़ेगा। तुम्हारा पत्र मिला। रोज लिखते रहना। जिसे कुछ खास लिखना हो वह भी लिखे। जिन परिवर्तनोके कर दिये जानेके बारेमे तुमने लिखा है वे मुझे अच्छे तो लगे है, किन्तु उनमे भय भी है। यह बहनोको लिखे पत्रसे देखना। सबने सोच-समझकर स्वीकार किया हो तो तनिक भी हानि नही है, और उनका स्वास्थ्य भी जल्दी ही सुधर जायेगा। पूरा भोजन औषधि समझकर ही लिया जाये। जो-कुछ और जितना मिले उससे ही पूर्ण सन्तोष करे। जो अच्छा न लगे वह न खाये। दूध, गेहूँ, फल और कच्ची सब्जी, इनमे से जिसे कुछ भी अच्छा न लगे, ऐसा शायद ही कोई व्यक्ति होगा। कोई ऐसा हो तो उसका इलाज उपवास ही हो सकता है। किन्तु जिसे फल अच्छा न लगे ऐसा कोई उदाहरण मेरी निगाहमे नही है। सभी निर्भय होकर ताजा कच्चा दूध लेने लगे। पकानेवालेको सभी वस्तुएँ ठीकसे पकानी चाहिए। जो कच्ची रह जाये उसे काममे न ले। जो सब्जी आश्रममे ही मिले उसीको खानेका आग्रह करे। तोतारामजी[1] को समझना चाहिए कि उन्हें टमाटर, सलाद, आदि पूरे वर्ष बराबर देते रहना है। इसमे अभी खर्च ज्यादा लगे तो उसकी मै परवाह नही करूँगा। टमाटर, सलाद, आदिके साथ-साथ फलके वृक्ष भी लगाये जाने चाहिए। एक ओर संयमवृत्ति बढ़ानेकी आवश्यकता समझनी चाहिए और दूसरी ओर इसका ध्यान रखे कि उन पर अनुचित आक्रमण न हो।

परशुरामके बारेमे तुम्हे तार भेजा है। उसने बहुत आग्रह किया था इसलिए उसे आने दिया है। यदि तुम्हारी शर्तोके अनुसार न रहे और तुम्हें तनिक भी कष्ट दे तो उसे अवश्य छुट्टी दे देना। अब उसे मेरे पास आनेकी आवश्यकता नही है। दिल्ली, कानपुर या जहाँ भी जाना हो वहाँका भाड़ा दे देना। कष्ट देकर कोई नही रह सकता। खुशामद करके किसीको रखनेका बोझ तुमपर इस समय डाला ही नही जा सकता। सबके प्रति प्रेम और विनयका व्यवहार होता है या नही, यह जानना तुम्हारा कर्त्तव्य है। ऐसा होते हुए भी जिसे खुश न कर सके उसे जाने देना। यह नियम डॉ० शर्मापर और भाई डकनपर भी लागू होता है। शर्मासे मुझे सन्तोष

१. तोताराम सनाढ्य, एक आश्रमवासी।

नही हुआ। उसमे सत्य या विनय है, ऐसी छाप मुझपर नही पडी। मैने तो उसे दिल्ली चले जानेके लिए चिट्ठी लिखी थी। किन्तु वह पहुँच गया लगता है। मैंने अपने पत्रमे असन्तोष व्यक्त किया है। वह रहे तो भी नी०की दवा न करे, उसका स्पर्श न करे, उसके साथ बात न करे। मुझे समय मिलेगा तो यही बात स्पष्ट रीतिसे डॉक्टर शर्माके भी पत्र[1] मे लिखूंगा। वह तुम देख लेना। नी०के पत्र[2] मे भी लिखूंगा।

डकन भला आदमी ही लगता है किन्तु वह ज्यादा समझदार नही है, यह मैंने देख लिया है। मुझे डर सिर्फ शर्माका ही है। गोसेवा की रिपोर्ट आज रजिस्टर करके वापस भेज रहा हूँ। किसीको दूध, घी न छोडने देना। बात यह है कि जिन परिवर्तनोका मैंने सुझाव दिया है उनको कर पानेवालोको कुछ भी छोडनेकी आवश्यकता नही रहती। कोई विशेष वस्तु छोड दी इससे कोई बडा काम नही हो जाता। मूल वस्तु तो यही है कि खाना ही औषधिके रूपमे हो। देहको भाडा देने लायक ही खाना खाये, यही मनमे बांध लेना है। और जब सभी अनावश्यक वस्तुओका त्याग कर दे तो उसके बाद और कुछ त्यागनेकी जरूरत ही नही है। मै इस समय आश्रमसे जो मांग रहा हूँ, वह बहुत बडी वस्तु है। मुझे जरूरत है अन्त शुद्धिकी, मनोनिग्रहकी। तीसरे अध्यायका छठा श्लोक सबको अच्छी तरह समझाना।

जो कर्मेन्द्रियोका दमन करके मनसे विषयका सेवन करता है, वह मूर्ख मिथ्याचारी है। इसके विपरीत सातवाँ श्लोक है। जो मनको काबूमे रखकर अनासक्तिपूर्वक कर्मेन्द्रियोसे शरीर-व्यापार चलाता है, उसका मान कर्मयोगीके रूपमे किया जाता है। इन दोनो श्लोकोमे हमारे व्यवहारकी कुजी है। यदि उपवास करते हुए भी मै मनसे अनेक प्रकारके स्वादोका भोग करूँ, २१ दिन कब पूरे होगे इसीकी प्रतीक्षा आतुरतापूर्वक करूँ, तो मेरा यह उपवास मूर्ख व्यक्तिका मिथ्याचार है। इससे ससारको कोई लाभ नही होगा और यह मुझे पापयोनिकी ओर ले जायेगा।

जो मोटे तौरपर मेरे उपवासके विषयमे लागू है, वह कम मात्रामे इस समय आश्रममे किये जा रहे त्यागके विषयमे भी लागू है। शरीरसे जो दाल-भातका त्याग करे और मनसे उसका सेवन करे, उसके द्वारा किया गया दाल-भातका त्याग सयम नही है। शारीरिक अर्थात् वैद्यकीय दृष्टिसे उसका लाभ हो सकता है। किन्तु इस समय वहाँ जो त्याग किये जा रहे हैं वे तो अनशनकी योग्यता प्राप्त करनेके लिए हैं। इसलिए जो इसमे साथ न दे सके, उन्हे रसोईमे शामिल करनेकी आवश्यकता नही है। रसोईमे शामिल न होकर खाना पकाते हुए भी, जो जिन दूसरे सयमोपर दृढ रह सके उनपर दृढ रहे तो वे आश्रमको सुशोभित करेगे — ऐसा मै मानता हूँ। क्योकि सत्य इसीमे है और इसमे कृत्रिमता नही है। इसमे विनम्रतासे अपनी मर्यादाकी स्वीकृति है। याद रहे, जिस त्यागकी बात मैंने लिखी है, वह बीमार लोगोपर लागू नही होता।

१ और २. देखिए अगले दो शीर्षक।

यह सब बहनोको मेरी ओरसे बार-बार समझाना। कोई भी बहन अपनी शक्तिसे ज्यादा कुछ न करे। बहने समझ ले और दूसरे सब लोग भी समझ ले कि इस समय यह प्रयत्न आश्रममे अनशनकी अखण्ड शृंखलाकी तैयारीके लिए है। मेरी खातिर थोड़ी देरके लिए त्याग करेगे और फिर जब किसी दूसरेका अनशन आश्रममे ही चलता होगा उस समय त्याग नही करेगे, तो कितना बुरा लगेगा। मै तो दूर पड़ा हुआ हूँ। किन्तु मेरे बादके अनशन आश्रममे ही चालू होगे। इसलिए सभी वही त्याग करे जिसे वे बराबर झेल सके। इसके आगे जानेकी तनिक भी आवश्यकता नही है। मै अधिककी आशा नहीं करता, थोडा-बहुत आगे बढे तो फिर हटे नही। चाहे एक-एक कदम बढे। पुराने कुटुम्बोके लिए संयुक्त रसोईके अपने सभी आग्रह मैने वापस ले लिये है। मेरा उपवास किसीके लिए भी किसी भी प्रकारकी जबरदस्ती नही होना चाहिए। इसके लिए तुम मेरी ओरसे जिम्मेदारी लो। रामदाससे कहना कि इस उपवासका पूर्ण औचित्य वह धीरे-धीरे समझ जायेगा। यदि यह पिस्तौल है तो भी चलाने लायक है। इसके बिना धर्मका पालन नही हो सकता, ऐसी मेरी मान्यता है।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१)से। सी० डब्ल्यू० ८३७९ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी।

१८६. पत्र: नी० को

९ मई, १९३३

प्रिय नी०,

मै तुम्हे भूल नही पाता। अपने पिछले पत्रोमे मैने जो कहा है, उसे मै नही दुहराना चाहता।

डॉ० शर्मा वहाँ है। मैने नारणदाससे कहा है[1] कि वे उससे तुम्हारा इलाज करनेको कतई न कहे। यदि डॉक्टरी सलाह लेना जरूरी हो जाता है तो डॉक्टर बुलाया जायेगा। लेकिन तुम यह बताओ, कि क्या उसकी उपस्थितिसे और उसे देखकर तुममे वही भावनाएँ जागती है जिनका तुमने बयान किया है। यदि जागती है तो मुझे देखना होगा कि क्या किया जा सकता है। लेकिन मै उसे इस भावनाके बारेमे लिख रहा हूँ ताकि वह सावधान रह सके। आशा है कि तुम इस बातका बुरा नही मानोगी। मै तुम्हारी बातका शाब्दिक अर्थ ही निकाल रहा हूँ। तुम्हारे दिमागमे एक भी ऐसा विचार नही है जिसे तुम न केवल मुझसे, बल्कि सारे संसारसे तथा उससे भी जिसके प्रति तुम्हारा वह विचार हो, छिपाना चाहती हो। यह चाहे

१. देखिए पिछला शीर्षक।

जितना अरुचिकर क्यो न हो, मैं जानता हूँ कि एक सत्यनिष्ठ व्यक्तिके लिए यही एक रास्ता है।'

स्याहीमे लिखा तुम्हारा पत्र आ गया है। बेचारी माँ के साथ कम-से-कम उतना अच्छा बरताव तो करना ही चाहिए जितना कि तुम अजनबी लोगोके साथ करती हो। लेकिन निश्चय ही कभी-कभी बच्चे अपने माता-पिताको अपनी अँगुलियो द्वारा, स्याहीकी जगह अपने खूनसे लिखते हैं।

ईश्वर तुम्हारे साथ रहे।

तुम्हे स्नेह तथा मि० को चुम्बन।

बापू

श्रीमती नी०
सत्याग्रह आश्रम, साबरमती

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१२५७) मे।

१८७ पत्र : हीरालाल शर्माको

९ मई, १९३३

भाई शर्मा,[2]

जब देवदासने बताया कि आप आश्रम गये थे[3] तो मुझे आश्चर्य हुआ। मैंने देवदासको आपके लिए एक पत्र दिया था। वह उसे आपको डाकमे भेजनेवाला था। आशा है कि आपको वह पत्र मिल गया होगा। उस पत्रमे मैंने आपको बताया था कि मैंने जान-बूझकर एक बात नहीं कही थी। अब मेरा यह कर्त्तव्य हो गया है कि वह बात आपसे कहूँ।

आप नी०की जीवनी जानते है। मैंने उसे आश्रम भेजा है कि यदि सम्भव हो सके तो उसे उसकी कुटेवोंसे बचाया जा सके। उसने मुझे बताया कि जब वह आपसे मिली तो उसकी पाशविक वासना जाग उठी। इसका यह अर्थ मानना जरूरी नहीं है कि इसमे मैंने आपका कोई दोष देखा है। यदि किसी औरतके मनमे किसी मर्दको देखकर कामुकता जाग जाये तो वह कर ही क्या सकता है? ऐसी सहज पवित्रता बहुत कम लोगोको ही सुलभ है कि उनके साथ कभी कोई ऐसा मौका न आये कि उन्हे देखकर कोई नितान्त पतित औरत भी कामवश न हो। इसलिए मैं आपपर कोई दोष डालनेके लिए यह नही लिख रहा हूँ, बल्कि यह चेतावनी देनेके लिए लिख रहा हूँ कि आप उससे कुछ भी प्रयोजन न रखे।

१. साधन-सूत्रमें आगेका पत्र गांधीजी के स्वाक्षरोंमें है।

२. साधन-सूत्रमें सम्बोधन देवनागरी लिपिमें है।

३. गांधीजी ने उन्हें एक नोट भेजते हुए यह सलाह दी थी कि वे दिल्ली लौट जायें, देखिए पृ० १५४।

आशा है कि देवदासने मेरा जो पत्र आपको डाकसे भेजा है, उसे आप सही अर्थोंमें लेंगे। आपका वह पत्र भी जो आपने मुझे दिये जानेके लिए सौंपा था, उसी रायकी पुष्टि करता है जो मैंने आपके बारेमें आपसे मिलनेके बाद बनाई थी।[1] मैं यह भी कह दूं कि आप यहाँ जिस-किसीसे मिले हैं उसपर आपने एक बुरी छाप डाली है। फिर भी यह हो सकता है कि आपके प्रति यह सब कहना तबतक अनुचित हो जबतक कि नारणदास सचाईसे आपका मार्गदर्शन करता है और आप उसका तथा सारे आश्रमका करते हैं। यदि बात इसके विपरीत हो, वह आपको पसन्द न करता हो और आप उसे या सामान्य तौरपर आश्रमको पसन्द न करते हो तो आपको वहाँसे हट जाना चाहिए, भले ही आप वहाँ कुछ मरीजोंका इलाज क्यों न कर रहे हों। यदि आश्रमके प्रति आपमें एक अरुचि पैदा हो गई है तो आपके वहाँ रहनेका उद्देश्य ही पूरी तरह विफल हो गया। मरीजोंके लिए आपको वहाँ रखना तो मेरा बहुत ही स्वार्थी होना होगा।

हिन्दीमें लिखनेका समय नहि था।[2]

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१२५८) से।

१८८. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

९ मई, १९३३

सरदारजी,

रात अच्छी बीती है। यरवदासे यहाँ हवा और सर्दी बहुत ज्यादा है। बिलकुल खुलेमें ही सोया था। काम जरूर बढ़ा है। दो-एक दिन काम करना पड़ेगा। फिर तो काम न करनेका ही निश्चय किया है। अभी कोई खास कमजोरी नहीं लगती।

फिक्र बिलकुल न करें।

आपसे मुझे माताका-सा प्यार मिला है।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० १७

१. ६ मईको; देखिए पृ० १५३-४।

२. साधन-सूत्रमें यह वाक्य हिन्दीमें है।

१८९. तार: कस्तूरबा गांधीको[1]

[१० मई, १९३३]

एक्सप्रेस

तुम्हारा तार पढा। पचास वर्षसे ज्यादा मेरे साथ रह चुकनेके बाद तुम्हे बहादुर होना चाहिए और अर्जी नही देनी चाहिए। मै बिलकुल ठीक और खुश हूँ। ईश्वर तुम्हे साहस, विश्वास और शान्ति दे। खुशी हुई कि मीरा खुश है। स्नेह।[2]

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० २१२६९) से।

१९०. पत्र: मीराबहनको[3]

१० मई, १९३३

तुम्हे और बा को ऐसी सूचना रोज मिलती रहेगी। आशा है, स्वास्थ्य ठीक चल रहा होगा।

बापू

कुमारी स्लेड
साबरमती जेल

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२७४) से, सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९७४० से भी।

१. यह तार इस तारीखको मिले साबरमती जेलसे कस्तूरबाके तारके जवाबमें दिया गया था और सम्भवतः उसी दिन भेजा गया था। कस्तूरबाका तार इस प्रकार था:

"समाचारपत्रोंसे ऐसा प्रतीत होता है कि कैदी रिहा नहीं होनेवाले है। इसलिए मैं सरकारको दो महीनेकी छुट्टीकी अर्जी देनेकी इजाजत आपसे माँगती हूँ, ताकि मैं आपके पास आ सकूँ। बहुत व्यग्र हूँ। तारसे जवाब दीजिए। मीरा प्यार भेजती है। उसे प्रार्थनासे साहस और शान्ति मिल रही है।"

२. साधन-सूत्रमें, जिस कागजपर गांधीजी के तारका मसविदा है, उसमें इस तरहकी गुजरातीमें टिप्पणी है:

"जिस मुखसे हमेशा पान खाती रही हो उससे अब कोयला चबानेको आमादा न होओ। ईश्वरमें विश्वास रखो। इस गलतफहमीको दूर करो कि हम शरीर हैं। रामनाम जपो। बापू"

३. बापूज लेटर्स टू मीरा में मीराबहनने स्पष्ट किया है कि यह "बापूने स्वयं उन पत्रोंपर लिखा था जिनमें उनके उपवासकी प्रगतिका ब्योरा था।" यह "'पर्णकुटी', पूना" से लिखे गये मथुरादास

२१९. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

पर्णकुटी, पूना ६,
६ जून, १९३३

प्रिय अमला,

तुम्हारा पत्र मिला। आश्रममें आश्रमका काम करते हुए तुम्हें यही समझना चाहिए कि तुम मेरे साथ ही हो। मुझे विश्वास है कि तुम इस सीधे-से सत्यको समझती हो। जेलमें कई कैदी मेरे ही अहातेमें थे और हम सब एक ही बरामदेका उपयोग करते थे। क्या तुम समझती हो कि वे मेरे साथ रह रहे थे?

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल कागजात; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय। एस० एन० १९०९० भी।

२२०. पत्र : नी० को

६ जून, १९३३

प्रिय नी०,

महादेवके पास पड़े हुए तुम्हारे पत्रोंको मैं कल ही पढ़ सका। आटेकी चोकर अलग कर दिये जानेके बारेमें जरूर कोई गलतफहमी हुई है। आश्रममें चोकरहीन आटे का इस्तेमाल नहीं होता। आश्रममें प्रयोगमें लाया जानेवाला सारा आटा खास तौर पर पीसा जाता है और यह हमेशा बिना छना होता है। पिस जानेके बाद कभी इसे चलनीसे छाना जाता है और कभी नहीं। इसलिए पूछताछ करके मुझे बताना। भोजनके बारेमें मैंने तुम्हें जो-कुछ कहा है वह केवल तुमपर ही नहीं, निश्चित रूपसे सभीपर लागू होता है। सभी लोग उक्त नियत आहार न लेते हों, यह तो एक अलग बात है। परन्तु आश्रमके सार्वजनिक रसोईघरमें कमोबेश सख्तीके साथ आम तौरपर वही तरीका इस्तेमाल किया जाता है। चावल और दालका प्रयोग बिलकुल न किया जाये, यह सम्भव नहीं है। परन्तु जो चावल और दालोंका उपयोग नहीं करना चाहते, उन्हें सब तरहका प्रोत्साहन दिया गया है। मुझे पूरी आशा है कि तुम आश्रममें अधिकाधिक शान्ति महसूस कर रही होगी और तुम तथा सी० दोनों ठीक होंगे।

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९०९१) से।

१९२. पत्र : नारणदास गांधीको

१० मई, १९३३

चि० नारणदास,

डकनकी आलोचना-सम्बन्धी मेरा पत्र[1] मिल गया होगा। उसकी टीकामें बहुत अज्ञान है, पर जहर नही है। अज्ञानसे भरपूर होनेपर भी उसमे कई बाते अच्छी हैं। उसकी रिपोर्ट तुम्हे भेजूंगा। उसके पास हो तो ले लेना और शान्तिपूर्वक चर्चा करना। अपना कुछ समय ऐसी बातचीतमे लगाना।

मैं रोज लिख या लिखवा नही सकता, किन्तु तुम सबके बारेमे तफसील से लिखना। विशेष रूपसे नी०, परशुराम, डकन और शर्माके बारेमे। तुमने कुसुमकी खबर नही दी।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३८० से भी, सौजन्य नारणदास गांधी।

१९३. पत्र : भाऊ पानसेको

१० मई, १९३३

चि० भाऊ,

ईश्वरपर आस्था रखो और किसी बातकी फिकर मत करो।

बापूके आशीर्वाद

सी० डब्ल्यू० ९६८६ से, सौजन्य भाऊ पानसे।

१. देखिए पृ० १५९-६०।

१९४. पाठकोंसे[1]

सभीको यह जान लेना चाहिए कि यद्यपि मुझे स्वतन्त्र माना जाता है, पर 'हरिजन' का सम्पादन उसी तरह होता रहेगा मानो मैं जेलमे ही हूँ। यह पूर्णतया हरिजन-ध्येयको ही समर्पित रहेगा और हर तरहकी राजनीतिको पूरी सतर्कतासे दूर रखेगा। मेरे लिए यह खेदका विषय है कि तीन सप्ताहतक मैं 'हरिजन' के लिए कुछ नहीं लिख सकूंगा। परन्तु यदि ईश्वरने मुझे जीवित रखा तो आशा है कि मैं 'हरिजन' के लिए [आगे] और भी अधिक योग्यताके साथ लिखूंगा। मुझे यह भी आशा है कि इस बीच हरिजन-ध्येयकी तेजीसे प्रगति होगी, सुधारक और सनातनी, जहां भी सम्भव होगा, हरिजनोंकी सेवाके लिए परस्पर सहयोग करेंगे, सुधारक बाकी कार्यक्रमको, सनातनियोंकी भावनाओंको ठेस पहुँचाये बिना, अमलमे लायेंगे और हरिजन स्वयं अपनेमे पूरी शक्तिसे वे सुधार करेंगे जिनकी ओर इन स्तम्भोमें मैं इतनी बार ध्यान आकर्षित कर चुका हूँ, और इस तरह सनातनियो और सुधारकोके लिए यह स्वीकार करना और आसान हो जायेगा कि हरिजन सचमुच हरिजन हैं और उनमें प्रेमकी बिलकुल उसी ढंगसे और उसी मात्रामे प्रतिक्रिया हो सकती है जैसेकि अन्य लोगोंमें।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १३-५-१९३३

१. बॉम्बे क्रॉनिकल, १३-५-१९३३ के अनुसार, यह गांधीजी द्वारा ११ मई, १९३३ को 'लिखवाया' गया था।

१९५. तार: डॉ० मु० अ० अन्सारीको

११ मई, १९३३

डॉ० अन्सारी
दिल्ली

सरोजिनीने आपके अखबारी बयान[1] का जिक्र किया था। आपको तकलीफ नहीं देना चाहता लेकिन यह आपका हक है और फर्ज है। आप जब आना चाहें आयें। आप जानते हैं कि आपपर मुझे कितना भरोसा है। आप सबको प्यार।

गांधी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एम० एन० १९०८५) से।

१९६. तार: मदनमोहन मालवीयको

११ मई, १९३३

आपके आशीर्वाद[2] से मुझे सुख मिला। आपके परामर्शको बराबर पालन करता रहा हूँ। बचपनसे ही रामनाम मेरा कवच रहा है। मैं अच्छा और शान्त हूँ। प्रार्थना है कि यहाँ आनेका कष्ट न करें।

गांधी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एम० एन० १९०८५) से।

१. १२-५-१९३३ के बॉम्बे क्रॉनिकल में "पूना, ११ मई, १९३३" की तारीखके अन्तर्गत यह रिपोर्ट थी: "गांधीजी काफी कमजोर थे। पर जब सरोजिनी नायडूने उन्हें बताया कि डॉ० अन्सारी पूना आनेको तैयार हैं और यह पूछा कि क्या उन्हें बुलवाया जाये, तो गांधीजी बहुत खुश हुए और बोले, "मैं डॉ० अन्सारीकी गोदमें सिर रखे मरना चाहूँगा"। डॉ० अन्सारीको जब फोनपर यह बात बताई गई तो उन्होंने दिल्लीसे जवाब दिया: "मैं बापूको अपनी गोदमें कभी मरने नहीं दूंगा। मैं उन्हें मरने ही नहीं दूंगा। मैं जल्दी-से-जल्दी बापूके पास पहुँचूँगा।"

२. देखिए पृ० ९४।

२२१. पत्र : रमाबहन जोशीको

६ जून, १९३३

चि० रमा,

अब चाहो तो मुझे पत्र लिख सकती हो। हाथ कैसा रहता है? क्या दर्द पहले जितना ही बना है? अध्ययन कैसा चल रहा है? मानसिक दशा कैसी है? बच्चे कैसे हैं? धीरूकी तबीयत कैसी रहती है?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५३५१) से।

२२२. पत्र : नारणदास गांधीको

६ जून, १९३३

चि० नारणदास,

मैं देख रहा हूँ कि चलने-फिरनेके योग्य होनेमें तो मुझे समय लगेगा ही, किन्तु हाथ भी जल्दी काम करने लायक नहीं हो पायेंगे। कल महादेवसे वहाँका हालचाल सुना। उसके दिये हुए पत्र मैंने पढ़ लिये हैं। थोड़ी गलतफहमी लगती है। मेरे कथनका तो अर्थ यह है कि सत्यकी शोधमें हो या अहिंसाके मार्गमें हो, हमारा अन्तिम कदम तो साधकमात्र द्वारा इस तरहका अनशन ही हो सकता है। और उपवासके सिलसिलेमें आश्रममें जो फेरफार खाने-पीने के सम्बन्धमें किये गये हैं उन्हें इस अन्तिम कदमकी तैयारी समझना चाहिए। इतना समझ लेना जरूरी है। जिसे ऐसा न लगे वह इन परिवर्तनोंके झंझटमें न पड़े। सभीको अनशनकी इस शृंखलामें भाग लेना ही है, और नहीं तो आश्रमसे चले जाना होगा, मेरे कथनका यह अर्थ नहीं था। मेरे जरा ठीक हो जानेपर तुम्हारे यहाँ आनेका विचार मुझे अच्छा लगा। अगले सप्ताह जब चाहो आ सकते हो। बहुत बात न भी कर सकूँ तो भी अपनी बात समझाने और तुम्हारी शंकाका निवारण करने लायक तो मैं हो ही जाऊँगा। किसीके घबरानेकी कोई बात नहीं है। मेरा यही कर्त्तव्य है कि जिस तरह मैंने सत्यको समझा है उस तरह उसे समझा-भर दूँ। तुम सब उसमें से जो स्वीकार कर सको सो स्वीकार कर लो। मुझे कोई नई सृष्टिकी रचना नहीं करनी है। वहाँसे तुम्हें

१९८. पत्र : मीराबहनको[1]

[१२ मई, १९३३][2]

चि० मीरा,

तुम अन्ततक बहादुर बनी रहना। मेरी बेटी होना खेल नही है। वहाँ होनेसे तुम्हे [मुझ]से[3] भी ज्यादा कडी अग्निपरीक्षामे से गुजरना पडेगा। परन्तु मेरे बच्चोको मेरे योग्य होनेके लिए मुझसे भी अधिक अच्छा आचरण करना पडेगा। क्यो ठीक है न? ईश्वर तुम्हारी रक्षा करे।

स्नेह।

बापू

अग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९६९१) से, सौजन्य मीराबहन।

१९९. जन्मसे नहीं, गुणसे

पाठकको शायद पता न हो कि हरिजन-ध्येयके बहुत-से एकनिष्ठ सेवकोमे दो कोढी भी है। उनमे एक क्षत्रिय है जिन्हे इस रोगका सक्रमण गरीबोकी सेवा करते हुए हो गया। कुछ वर्षोसे, प्राय सारी सम्पत्ति-सहित, उन्होने अपना भाग्य उन्हीके साथ जोड दिया है। उनका कोढ भी उन्हे स्वेच्छासे चुने सेवा-मार्गसे रोक नही सका। दूसरे, एक ब्राह्मण पण्डित है जो सस्कृतके अच्छे विद्वान है। वे प्राय मुझे शास्त्रोसे चुनकर ऐसे उद्धरण भेजते है जो अस्पृश्यताके विषयमे सुधारककी स्थितिका समर्थन करते है। नीचे उनके नवीनतम सकलनका अनुवाद दिया जा रहा है

> १ स्वय ब्रह्माका कहना है कि जिसने अपनेको शुद्ध कर्मोसे शुद्ध कर लिया है और जिसका अपनी इन्द्रियोपर नियन्त्रण है, वह चाहे शूद्र ही क्यो न हो उसके साथ ब्राह्मणका-सा बरताव होना चाहिए।
>
> २ स्वभाव और कर्मसे जो उच्च है, वह शूद्र होते हुए भी सर्वोत्तम द्विज माना जाना चाहिए।

१. यह मीराबहनके ८-५-१९३३ के पत्र (एस० एन० २१२३१) के जवाबमें लिखा गया था।

२. तारीख मीराबहनकी दी हुई है।

३. मीराबहनने स्पष्ट किया है: "इसके साथ उपवासकी प्रगतिका ब्योरा देनेवाला जो पत्र था, उसमें मथुरादासने लिखा था: 'इसके पीछे जो पंक्तियाँ है, वे बापूने शुक्रवारको दोपहरके लगभग २ बजे लिखी थी। उस समय उन्होंने ऐनक नही लगाई हुई थी, इसलिए वाक्य अधूरा रह गया'"।

३. जन्म या कुल, संस्कार या वेदोका ज्ञान किसीको द्विज नही बना सकता। निर्णायक कारण केवल सदाचार है।

४. केवल सदाचारसे ही व्यक्ति ब्राह्मण बन सकता है। सदाचारी व्यक्ति शूद्र होते हुए भी ब्राह्मणत्व प्राप्त कर लेता है।

५ जो धर्मके पालनके लिए जीता है, जिसका धर्म ईश्वरको समर्पित है और जो दिन-रात सत्कर्मोमे लगा रहता है, देवताओने उसे ब्राह्मण कहा है।

६ खाने, पहनने और सोनेके लिए जो-कुछ मिल जाता है, उसीसे जो सन्तुष्ट है, देवताओने उसे ब्राह्मण कहा है।

— महाभारत . शान्तिपर्व

सकलनकर्त्ताने इसपर टिप्पणी करते हुए यह सच ही कहा है कि "भारतके हरिजन इस कसौटीपर आज खरे उतरते है।"

७ ब्राह्मणके लिए सत्य ब्रह्म है, तप ब्रह्म है, इन्द्रिय-निग्रह ब्रह्म है, जीवमात्रके प्रति दया ब्रह्म है . . .

—पाराशर स्मृति

८. ब्राह्मण वह है जो आत्मसयम, तप, आत्म-निग्रह, दान, सत्य, शुद्धता, दया, वेदोका ज्ञान, विद्या, बुद्धिमत्ता, आस्था . . .से सम्पन्न है।

— वशिष्ठ

९. केवल वही ब्राह्मण (मानवजातिकी) रक्षा कर सकते है जिनमे पूर्ण आत्मसयम है, जिनके कान वेदमन्त्रोके सगीतसे भरे है, जिन्होने अपनी इन्द्रियोको जीत रखा है, जो किसी भी जीवको कष्ट नही देते और जो परिग्रहसे बचते है।

(साधन-सूत्र अज्ञात)

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १३-५-१९३३

२००. पत्र : मीराबहनको[1]

१४ मई, १९३३

तो अब सार-सम्भाल या साथके लिए बा तुम्हारे पास नही रही।[2] ईश्वर तुम्हारी पूरी तरहसे परीक्षा कर रहा है। वह तुम्हे बल देगा।

स्नेह।

बापू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२७५) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९७४१ से भी।

२०१. क्या करें?

एक हरिजन-सेवक लिखते है

> हमारे गाँवमें सिर्फ तीन देश-हितैषी पुरुष है। उन्होने हरिजन-सेवाका कार्य आरम्भ कर दिया है। यहाँ हरिजनोके लिए उनके उद्योगसे एक पाठशाला खोल दी गई है। गत रामनवमीके दिन इन सज्जनोने सैकड़ो हरिजनोको अपने यहाँ भोजन कराया। पंगतमें उन्हे पानी पीनेको लोटे दिये, जो बादमें धोकर वापस ले लिये गये। गाँवके कट्टरपंथी इस बातको सहन न कर सके। उन्होने नाराज होकर इन हरिजन-सेवकोंको जातिसे बाहर निकाल दिया। पर इन तीनो सेवकोने उनकी नाराजीकी कोई परवाह नहीं की। आज धोबी इनके कपड़े नहीं धोते, नाई बाल नहीं बनाते। बेचारे बड़ी मुसीबतमें है। आप सलाह दे, तो अदालतमें यह मामला पहुँचानेका विचार है। कृपा कर लिखें।

१. यह मीराबहनके नाम मथुरादास त्रिकमजीके उसी तारीखके पत्रमें जोड़ा गया था। उस पत्रमें लिखा था· "बापूको आपके पत्र बराबर मिल रहे हैं। आज उनके उपवासका छठा दिन पूरा होता है, और उनकी हालत इस अरसेमें कुल मिलाकर सन्तोषजनक ही रही है। कल डॉक्टरोंने परस्पर परामर्श करके बुलेटिन जारी किया था, जो आजके समाचारपत्रोंमें निकल गया होगा। वे लोग निराश नही हैं। डॉ० देशमुखने एक बहुत ही उपयोगी सुझाव दिया। साधारण जलकी जगह उन्होंने 'विची' जल देनेकी सिफारिश की। बापूने जब उसके बारेमें आवश्यक बातें जान लीं तो उसे लेना तुरन्त स्वीकार कर लिया, और वह उनके बहुत ही अनुकूल रहा। आशा है कि उससे अम्लता काबूमें रहेगी। कलसे उनके आगे पूरी गीताका पाठ किया जा रहा है। शामको संगीतका कार्यक्रम होता है। वे खूब प्रसन्न रहते है।"

२. बा को साबरमती जेलसे १३ मई, १९३३ को रिहा कर दिया गया था।

इसमे सन्देह नही कि इस तरह अपने लोटे हरिजनोको पानी पीनेके लिए देना भी पाप समझा गया। बेचारे सेवकोंने लोटे साफ भी कर लिये थे। हम बाजारसे लोटे खरीदते हैं। उनका उपयोग किसने किया है, यह किसीसे पूछने नही जाते। हमारे हाथमे लोटा आ जानेके बाद उसमे ऐसी कौन-सी विशेषता पैदा हो जाती है जिससे कि किसी हरिजनके हाथमे जाने से वह हमारे लिए एकदम निरुपयोगी हो जाता है? उक्त गाववालोंने तो इसका उत्तर दे दिया है। पानी पीनेके लिए हरिजनोको लोटा देना भी गुनाह है, ऐसा वे कहते हैं, और इस दोषके लिए तीन युवक सेवको पर अत्याचार कर रहे हैं। अब वे क्या करे? जिसे गाँववाले गुनाह मानते हैं, उसे मैं पाप नही मानता, मैं तो उसे पुण्य-कार्य मानता हूँ। इसलिए धोबी-नाईका प्रतिरोध तो क्या, देह-दण्ड भी दे, तो भी सहन कर लेना धर्म है। धोबी न मिले तो अपने हाथसे कपड़े धो ले। नाई न मिले तो खुद बाल बना ले, यह न हो सके तो पत्रकेश बढने दे। पर ऐसी हरकतों से हिम्मत न हारे।

लेकिन गाँववालोंपर रोष तो भूलकर भी न करना चाहिए। वे बेचारे क्या करे? उन्हे तो धर्मके नामपर अधर्म सिखाया गया है। वे लोग तो दयाके पात्र है। अस्पृश्यता-निवारण एक धर्म है, यह ज्ञान तो वहाँके तीन ही युवक सेवकोको हुआ है। गाँववाले तो बेचारे अज्ञान-कूपमे पड़े हुए है। ऐसी स्थितिमें उन युवकोका यह धर्म है कि वे अपनी दृढता, पवित्रता, तपश्चर्या, त्याग, धैर्य, उदारता और प्रेमसे अन्धेरेमे फँसे हुए देहातियोंके कठोर हृदयको पिघलाये, और साथ ही हरिजनोको भी शौचादि नियमोंका पालन करनेकी शिक्षा दे। अदालतका द्वार तो किसी भी हालतमे नही खटखटा सकते।

हरिजन सेवक, १९-५-१९३३

२०२. तार : मदनमोहन मालवीयको

१९ मई, १९३३

पण्डित मालवीयजी
इलाहाबाद

आपके बताये हुए 'भागवत'के अंशोका गुजराती अनुवाद अभी-अभी समाप्त किया है।[1] आपकी आवाज और धारावाहिक टीकाकी कमी महसूस हो रही है। आप हमेशा मेरे साथ है। मैं बिलकुल शान्तिमे हूँ।

गांधी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९०८५)से।

१. मालवीयजी ने अपने १५ मईके तार (एस० एन० २१३०२) में देवदास गांधीको सुझाव दिया था कि "गांधीजी को ध्रुवकथा भागवत, चतुर्थ स्कंध, आठवाँ व नवाँ अध्याय तथा गजेन्द्र स्तुतिभागवत, अष्टम स्कंध, दूसरा, तीसरा व चौथा अध्याय पढ़कर सुनाये जाने चाहिए।"

२०३. तार: खान साहब और अब्दुल गफ्फार खाँको

१९ मई, १९३३

खान साहब [और] अब्दुल गफ्फार खाँ
हजारीबाग सेन्ट्रल जेल

आपके तारका[1] दिलपर बडा असर हुआ। ईश्वर महान और कृपालु है।

गाधी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एम० एन० १९०८५)से।

२०४. तार: बापटको

[२० मई, १९३३][2]

आपके उपवासके बारेमे अभी-अभी सुना है। दिलपर बडा असर हुआ। लेकिन आपसे उपवास तोड देनेका अनुरोध करता हूँ। ईश्वरकी मेरे प्रति जो इच्छा हो उसे पूरी होने दे। यदि आप मेरी बात मान लेगे तो मुझे बडी राहत मिलेगी। कृपया उत्तर दीजियेगा[3]।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २१-५-१९३३ (विशेषांक)

१. १९ मईका उक्त तार इस प्रकार था: "महात्माजी हम दोनों भाई एक महान उद्देश्यके लिए आपके उत्तम उपवासपर आपको बधाई देते हैं। हम रोज दुआ करते हैं कि आपका जीवन लम्बा हो ताकि आप भारतके दलित लोगोंकी सेवा करते रहें।"

२. बॉम्बे क्रॉनिकल, २२-५-१९३३ से।

३. बापटने, जो रत्नगिरि जेलमें ८ मईसे सहानुभूतिमें उपवास कर रहे थे, जवाब दिया था: "हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ। आपकी तरह मैं भी ईश्वरके हाथोंमें हूँ। कृपया चिन्ता न करें। जीवन या मृत्युका फैसला अब ईश्वरको ही करने दीजिए।"

२०५. पत्र : मीराबहनको[1]

पूना,
[२१ मई, १९३३]

चि० मीरा,

तुम अद्‌भुत वीरताका परिचय दे रही हो। ईश्वरपर पूर्ण भरोसा रखे बिना सच्ची बहादुरी प्राप्त नहीं होती।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२७६) से, सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९७४२ से भी।

१. गांधीजीने यह मीराबहनके नाम मथुरादास त्रिकमजीके २१ मई, १९३३ के पत्रमें अपनी ओरसे जोड़ा था। उस पत्रमें लिखा था: "...सुबहके ७ बजनेमें अभी देर है। गांधीजी यरवदा सेंट्रल जेलके सामने पड़नेवाले पोर्चमें गहरी नींदमें सोये हैं। मैं एक कोनेमें बैठा ये पंक्तियाँ लिख रहा हूँ और यहाँसे बराबर उनपर भी नजर रखे हूँ। वे एक प्यारे बच्चेकी तरह अपनी खाट पर सोये हैं और उनका चेहरा भोरके उजालेमें दमक रहा है। केवल उनके चेहरेको देखकर कोई यह यकीन नहीं कर सकता कि पिछले तेरह दिनोंमें उन्होंने अन्न छुआतक नहीं है। सब-कुछ ठीक चल रहा है। वे आजकल सिंहगढ़का जल पी रहे हैं, जो मराठा इतिहासका एक प्रसिद्ध स्थान है। १९२० में वे स्वयं कुछ दिन उस गढ़में ठहरे थे। उन्हें वह बहुत अच्छा लगता है और उसके ऐतिहासिक महत्त्वके कारण वे उसकी ओर तथा उसके जलकी ओर आकर्षित हुए हैं। डॉ० दिनशा मेहताने, जो आजकल उनकी देखभाल कर रहे हैं, वहाँ अपने चिकित्सालयकी एक शाखा खोल रखी है और वहाँसे जल प्राप्त करनेका प्रबन्ध उन्होंने ही किया है। वे और उनकी पत्नी बापूकी अद्‌भुत सेवा कर रहे हैं। बापूका मन बिलकुल शान्त है और वे अधिकाधिक अनासक्त होते जा रहे हैं। महादेव देसाई कल आश्रम चले गये। बापूने ये पंक्तियाँ स्वयं अपनी ओरसे जोड़ी हैं। वे तब ऐनक नहीं लगाये हुए थे, इसीलिए दोहरे पत्र हो गये। उन्होंने जब इसके लिए कहा, तब पत्र डाकमें छोड़ा ही जानेवाला था। नोट — मैं आपको बिना नागा रोज पत्र लिख रहा हूँ और महादेवने आपको कल पत्र लिखा था। आपका आखिरी पत्र १९ मई, १९३३ का लिखा हुआ है।"

२०६. बातचीत : देवदास गांधीके साथ

पूना,
२७ मई, १९३३

यदि उपवासके इन बीस दिनोंतक बराबर मुझे जिन्दा रखनेके बाद भी इक्कीसवें दिन परमेश्वर मुझे उठा लेना चाहता है, तो यह मेरा अन्तिम यज्ञ होगा। लेकिन यदि परमेश्वर मुझे आगे और जीनेका पट्टा देता है और चाहता है कि मैं और काम करूँ, तो मेरे जीवनमें एक नये युगका आरम्भ होगा।

मेरी भावी योजना परमेश्वरके हाथमें है। मैंने अपने दिमागसे रामनामके सिवाय अन्य सभी विचार निकाल दिये हैं। ईश्वर जो चाहेगा वही सही और न्यायोचित होगा।

श्री देवदासने परमेश्वरको गांधीजी के जीवनकी रक्षा करनेके लिए धन्यवाद दिया, महात्माजी ने कहा :

हाँ, यह ठीक है। परमेश्वरकी ही कृपासे मैं जी रहा हूँ। लेकिन मैं नहीं समझता कि ईश्वरकी कृपाकी सीमा मुझे बचानेतक ही है। उसका मुझे उठा लेना भी कृपापूर्ण कार्य माना जाना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २९-५-१९३३

२०७. पत्र : मथुरादास त्रिकमजीको

२८ मई, १९३३

कल 'ईशावास्य' उपयुक्त नहीं होगा। उसके बदले 'शुद्धोऽप्र बुद्धोऽथवा' रखना और अमिय या महादेव टैगोरका कोई गीत गाये। यह श्लोक भजनावलीमें है। महादेव जानता है। गीत कौन-सा गया हो, यह मुझे नहीं देखना है।[1]

[गुजरातीसे]
बापुनी प्रसादी, पृ० १२७

१. २१ दिनके उपवासकी समाप्तिपर महादेव देसाईके विवरणके लिए देखिए परिशिष्ट ६।

२०८. सन्देश : इक्कीस दिनका उपवास समाप्त करनेसे पूर्व[1]

२९ मई, १९३३

अब एक-दो मिनटमे ही उपवास समाप्त करने जा रहा हूँ। ईश्वरके नामपर और ईश्वरमे विश्वास रखकर ही मैंने यह उपवास शुरू किया था। अब उसीके नामसे यह समाप्त होता है। भगवानमे मेरी श्रद्धा आज कम नही है, बल्कि और बढी है।

आप लोगोको मुझसे यह आशा नही करनी चाहिए कि इस अवसरपर मैं कोई भाषण दूँगा। यह तो ईश्वरका नाम जपने और उसका गुण-गान करनेका ही समय है। लेकिन उन डॉक्टरो और अपने उन मित्रोको मैं कैसे भूल सकता हूँ जो उपवासके इन दिनोमे मुझपर अपने प्रेमकी सतत वर्षा करते रहे? मैं उनकी उन सेवाओका उल्लेख किये बिना नही रह सकता — वे सेवाएँ मेरे लिए ईश्वर-कृपाका ही एक अश है। सिवाय धन्यवादके उन्हे देनेके लिए मेरे पास और है ही क्या? समुचित पुरस्कार तो उन्हे केवल ईश्वर ही दे सकता है।

मुझे बडी प्रसन्नता है कि आज हमारे साथ यहाँ हरिजन भी उपस्थित है। मैं यह तो ठीक-ठीक नही जानता कि परमात्मा इस शरीरसे क्या काम लेना चाहता है; पर वह काम चाहे जो हो, मुझे विश्वास है कि वह मुझे उस कामकी शक्ति अवश्य देगा।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, ३-६-१९३३

२०९. पत्र : मीराबहनको

२९ मई, १९३३

चि० मीरा,[2]

मैंने अभी-अभी उपवास तोड़ा है। आगेका काम शुरू होता है। प्रभु ही उपाय और मार्ग बतायेगा।[3]

अग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९६९२) से; सौजन्य : मीराबहन।

१. महादेव देसाई द्वारा लिखित "स्पार्क्स फ्रॉम द सेक्रिड फॉयर-४" से उद्धृत। गांधीजी ने महादेव देसाईको यह सन्देश बोल कर लिखवाया था। उन्होंने बादमें इसको पढकर सुनाया था।

२. साधन-सूत्रमें सम्बोधन देवनागरी लिपिमें है।

३. इसके साथ महादेव देसाईने उपवास तोड़नेका पूरा विवरण लिखा था; देखिए परिशिष्ट ६।

२१०. पत्र : द० बा० कालेलकरको

[जून, १९३३ मे पूर्व][1]

चि० काका,

तुम्हारे दो पत्र एकसाथ मिले। वजन ठीक बढा है। दूधसे बढना ही चाहिए। तुम लोगोके बीच उपवासकी बात चल रही है, वह ठीक ही है। तुमने जो पुस्तक भेजी है उसकी पद्धति और वहां जो-कुछ हो रहा है उसमे अन्तर है। उससे मालूम होता है कि दिनशाजी[2] ने दूसरी पुस्तकोसे कुछ लिया है या कुछ मौलिक सुधार किये हैं। हमे तो जो वे कहे वही करना है।

लेप और मालिशपर जो जोर दिया है वह मेरे ध्यानसे बाहर नही है। देख रहा हूँ कि क्या करना सम्भव है।

क्या बाल[3] आदि तुम्हारे साथ रह सकते है? बालका पत्र मिल गया है। उसे बादमे या अभी समय मिला तो उसके साथ ही पत्र लिखूंगा।

मुलाकातके लिए आनेवाले त्रिवेदीके यहां ठहरते है। यह अच्छा नही लगता। इसमें वे उसकी स्थितिका खयाल नही करते। ऐसे लोगोका वहां ठहरना रोक देना चाहिए। इतना ही नही, लोगोको तुम्हारे पास भी आना नही चाहिए। आनेमे खर्च कितना हो जाता है। पिछले सप्ताह पूरी फौज ही आ गई थी। मुझे यह बिलकुल अनावश्यक लगा।[4] अभी नीचे आनेका विचार भी न करना। वहांका पूरा-पूरा लाभ उठाओ, यह आवश्यक है। इसीमे अक्लमदी है। जब वहांसे आओगे अर्थात्, जूनके महीनेमे, उस समय तो मिलेगे ही। आनेकी तनिक भी जल्दी न करना। शरीर बिलकुल स्वस्थ हो जाये और इस प्रकारके उपचारोके सम्बन्धमे ज्ञान मिल जाये, तो बहुत लाभ होगा।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९४७४)से, सौजन्य द० बा० कालेलकर।

---

१. दूध-चिकित्साके सन्दर्भसे (देखिए "पत्र मीराबहनको", २१-६-१९३३) और कालेलकरसे जूनमें मिलनेके उल्लेखसे।

२. दिनशा मेहता, पूनाके प्रसिद्ध प्राकृतिक चिकित्सक।

३. बाल कालेलकर, श्री द० बा० कालेलकरके पुत्र।

४. इसके बादका कुछ अंश पत्रमें काट दिया है।

२११. पत्र : मीराबहनको

पर्णकुटी पूना ६.
३ जून, १९३३

चि० मीरा,

महादेव तुम्हें सब समाचार जरूर देगा और मैं केवल इसमें एक या दो पंक्तियाँ जोड़ दूँगा।

मुझे पहले ही तुम्हें पत्र लिखना चाहिए था परन्तु दूसरे कामके दबावसे नहीं लिख सका। बापूका स्वास्थ्य बराबर ठीक होता जा रहा है और वे धीरे-धीरे खुराक बढ़ा रहे हैं। कल उन्होंने पहली बार दूध लिया, दिन-भरमें उन्होंने १४ औंस दूध लिया। कुल मिलाकर वे दिनमें छः बार खुराक लेते हैं, जिसमें फलोंके रस, शहद और अब दूध भी शामिल है। कल दूधके अलावा उन्होंने आठ चम्मच शहद, चार सन्तरे, एक चकोतरा और एक पौंड आमका रस लिया। यह काफी अच्छा है और यदि वे इस आहारमें वृद्धि करते रहे तो डॉक्टरोंको आशा है कि लगभग दो हफ्तोंमें उनका वजन सामान्य और शक्ति पहले-जैसी हो जायेगी। परन्तु उनकी हिदायतें बड़ी कठोर हैं और बापूने उनका पालन करनेका वायदा किया है। इसका मतलब है कि इस महीनेकी चौदह तारीखतक उन्हें लिखनेका कोई काम नहीं करना चाहिए, समस्याओंके बारेमें कोई चिन्ता नहीं करनी चाहिये, किसी चर्चा आदिमें भाग नहीं लेना चाहिए। पहली तारीखको सुबह लिया गया उनका वजन ८४ पौंड था।

भविष्य ईश्वरके हाथमें है। वे आज सुबह ही तुम्हारी रिहाईकी तारीखके बारेमें मुझसे पूछ रहे थे। मैंने स्वीकार किया कि मुझे मालूम नहीं है, लेकिन आश्रममें मुझे बताया गया था कि तुम्हारे ढाई महीने अभी और बाकी हैं। कृपया मुझे बताना कि क्या मैं सही हूँ. और अब बापूको तुम्हारा पहले-जैसा पूर्ण, विस्तृत और विवरणपूर्ण पत्र मिल जाना चाहिए जिससे कि उन्हें तुम्हारे बारेमें सब-कुछ पता चल जाये। उन्होंने एक तरहसे मौनव्रत लिया हुआ था, परन्तु यदि वे हममें से किसीके बारेमें सोचते थे तो तुम्हारे बारेमें ही सबसे ज्यादा सोचते थे।

राजाजी[1] पिछली शाम चले गये और आशा है कि वे ११ या १२ तारीखतक वापस आ जायेंगे। जमनालालजी यहाँ आये थे। वे पल-भरके

१. गांधीजीसे १ और २ जूनको हुई इनकी बातचीतके लिए देखिए परिशिष्ट ८।

लिए ही बापूसे मिले और उन्होंने उन्हे तबतक बातचीतमें उलझाना नहीं चाहा। जबतक कि वे ठीक नही हो जाते। छोटे बबला[1] के सिवाय आश्रमसे और कोई नहीं आया। कहीं मै बहुत जल्दी अपने आवासको वापस न चला जाऊँ इसलिए वह मुझसे जी-भरकर बात कर लेना चाहता था।

मथुरादासने इन दिनो मेरी गद्दी संभाल रखी है और कुछ वक्ततक उनके गद्दीपर बने रहनेकी सम्भावना है। देवदास कामके बोझ और थकानकी वजहसे बीमार रहे, परन्तु अब स्वास्थ्य-लाभ कर रहे है। परिचारकोमें अच्छे ब्रजकृष्ण[2] अभी है। बाल और हरिहर शर्मा[3] भी है जो अब जानेवाले है। शायद उनकी जगह रामदास ले ले। वह यहां है। बा बिलकुल प्रसन्न है और अपना सारा समय बापूकी परिचर्यामें, उनकी मालिश करनेमें और पूरी श्रद्धा और स्नेहयुक्त लगनसे उनकी खुराक तैयार करनेमें लगा रही है।

मैंने काफी जगह छोड़ दी है ताकि बापू एक पंक्ति लिख दें।

चि० मीरा,

मुझसे प्रत्यक्ष मुलाकातकी इच्छासे तुम्हे अपने-आपको मुक्त करना चाहिए। आशा है कि बुखार हट गया होगा।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२७७) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९७४३ से भी।

२१२. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

४ जून, १९३३

प्रिय अमला,

तुम्हे धैर्य रखना चाहिए और आश्रमके सभी कार्यकलापोमे भाग लेना चाहिए।

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल कागजात, सौजन्य नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय।

१. नारायण देसाई, महादेव देसाईका पुत्र।

२ ब्रजकृष्ण चाँदीवाला, दिल्ली के कांग्रेसी कार्यकर्ता।

३. दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रासके मंत्री।

२१३. पत्र : नारणदास गांधीको

४ जून, १९३३

चि० नारणदास,

आजसे थोडा लिखना शुरू कर रहा हूँ। लगता है, तुमपर बोझ असह्य सिद्ध रहा है। किन्तु मुझे आशा है कि अब कुछ हलका हो जायेगा। मैं स्वयं ज्यादा नहीं लिख पाऊँगा; बोलकर लिखवा दूंगा। इसलिए अब जरूरी बातोंके बारेमें मुझे लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३८१ से भी, सौजन्य· नारणदास गाधी।

२१४. पत्र : जमनाबहन गांधीको

४ जून, १९३३

चि० जमना,

क्या अभी वही इलाज चल रहा है? अब मुझे नियमित रूपसे लिखती रहना। पुरुषोत्तम कैसा है?

वापू

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ८८१) से, सौजन्य: नारणदास गाधी।

२१५. पत्र : अमतुस्सलामको

४ जून, १९३३

वेटी अमतुल सलाम,

आज कुछ खत लिखे, इसलिए यह तुमको। अब मुझे सब हाल दे दो। कैसे हो?

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० २८५) से।

२१६. तार : सी० एफ० एन्ड्रचूजको[1]

५ जून, १९३३

भलीभाँति सोचे विना सहमा कोई कदम नही उठाया जायेगा।

गाधी

अग्रेजी फोटो-नकल (एस० एन० २१४४२) से।

२१७. पत्र : मीराबहनको

५ जून, १९३३

चि० मीरा,

तुम्हे फिर बुखार आ जानेसे मुझे चिन्ता हो रही है। तुम्हे सच्चा आत्मसयम सीखना चाहिए। यह पढने-लिखनेसे नही आता। यह तो तभी आता है जब हम यह बात निश्चित समझ ले कि ईश्वर हमारे साथ है और वह हमारी सार-सभाल इस तरह करता है मानो उसे और कोई काम ही न हो। यह कैसे होता है, यह मै नही जानता। परन्तु ऐसा होता जरूर है, यह मै जानता हूँ। जिन्हे उसपर श्रद्धा होती है, उनके कधोसे वह सभी चिन्ताओका भार उतार लेता है। हममे श्रद्धा भी हो और मनमे व्यग्रता भी बनी रहे, ये दोनो बाते एकसाथ हो ही नही सकती। इसलिए मनको शान्त रखो।

स्नेह।

बापू[2]

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू ६२७८) से, सौजन्य : मीराबहन। जी० एन० ९७४४ से भी।

१. ४ जून, १९३३ को मिले उनके तारके उत्तरमें जिसमें लिखा था : "परमप्रिय अन्सारीको प्यार। पूरी तरह विश्राम करो। कैदियोंकी रिहाईका भरसक प्रयत्न किया जा रहा है। आशा है, इस मामलेको जल्दबाजी कर और उलझाया नही जायेगा। इसके लिए थोडा समय जरूरी है।"

२. साधन-सूत्रमें इसके आगे महादेव देसाईकी टिप्पणी थी, जिसमें लिखा था : "बापूका स्वास्थ्य वस्तुत: बिल्कुल ठीक चल रहा है। आज उनका वजन लिया गया और वह ८८ पौंड २६ तोले निकला। यह बहुत ही अच्छा है। वे बहुत ही प्रसन्नचित्त लगते हैं और समस्याओंका सामना करने और उन्हें सुलझानेको तत्पर रहते हैं। पर डॉक्टर उन्हें ऐसी कोई चीज करने नहीं देते और उन्होंने उन्हें १४ तारीख

२१८. पत्र : डंकन ग्रीनलीजको

६ जून, १९३३

प्रिय डंकन,

केवल कल ही मैं महादेवको लिखे आपके पत्र देख सका। निस्सन्देह वक्त आनेपर आप निश्चय ही आत्मदान एवं आत्मशुद्धि-सम्बन्धी उपवासमें भाग लेंगे। वह २१ दिनका होना चाहिए या उससे कम-ज्यादा, अभी यह निश्चय करनेकी जरूरत नहीं है। ऐसा लगता है कि आपने २१ दिनका निश्चय कर लिया है। आप इसे मनसे निकाल दें। मैं आपसे यह भी अनुरोध करूँगा कि आप जल्दबाजी न करें। आपके लिए पहली जरूरी चीज यह है कि आप देखें कि क्या कुल मिलाकर आश्रम आपको कोई प्रेरणा दे पा रहा है। इस बातपर विचार करते समय आप कृपया आश्रम और उसके आदर्शको अलग-अलग न मानें। उच्चतम आदर्शको कागजके किसी टुकड़ेपर अंकित कर देना संसारमें अत्यन्त सहज है। परन्तु यदि उस आदर्शका कोई जीता-जागता प्रतिनिधि नहीं है, तो उस आदर्शका कोई महत्त्व नहीं। इसलिए मैंने सदा ही यह अनुरोध किया है कि जो मुझे और जीवनकी मेरी व्याख्याको जानते हैं, वे आश्रमके माध्यमसे उसपर अमल करें, और यदि किसी निरीक्षकको जीवनकी मेरी व्याख्या नहीं जँचती तो उसे चाहिए कि वह मेरी बात बिना किसी संकोचके अस्वीकार कर दे। मैं नहीं जानता कि मैं अपनी बात आपके सामने स्पष्ट कर पाया हूँ या नहीं। जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, मैं चाहता हूँ कि मैं जैसा जीवन जी रहा हूँ और जो यज्ञ करनेका प्रयत्न कर रहा हूँ, आप उसमें यथाशक्ति योग दें।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९०८९) से।

तक पूरा आराम करनेका आदेश दिया है। वे बैठ सकते हैं और वजन करनेकी मशीनपर एक सेकिण्डके लिए खड़े भी हो सकते हैं (बेशक, इसके लिए उन्हें सहारा चाहिए)। वैसे सब-कुछ बिलकुल ठीक है। वे इस बातसे चिन्तित हैं कि तुमने लगातार उनके बारेमें सोचकर और चिन्ता करके रातों जागकर और अपनी जीवन-चर्यामें अनियमितता लाकर बुखार मोल ले लिया है। बापूकी खातिर अब जल्दी ठीक हो जाओ।"

१९१. पत्र : नी०को

१० मई, १९३३

देखता हूँ कि लिखनेकी अपेक्षा बोलकर लिखवानेमें ज्यादा मेहनत करनी पड़ती है। जैसे-जैसे दिन निकलते जायेंगे, मैं शायद न लिख सकूँगा और न बोलकर लिखवा सकूँगा। तब तुम समझना कि मेरे विचार तुमसे बात कर रहे हैं।

लेकिन तुम्हें रोज विस्तारसे एक पत्र लिखना है जिसमें अपनी शारीरिक और मानसिक अवस्थाका, अपने और सि०के खानेका हाल लिखना होगा।

आशा है कि तुम गर्भपात न करवानेकी नैतिक आवश्यकता समझ गई होगी।

अपने सोनेके कमरेके छज्जेपर रोज सूर्यस्नान करो। वहाँ आश्रमके लिए सिलाईका काम कर सकती हो। तकली भी कातो।

मेरी कामना है कि तुम पाइथागोरस, बैकस और 'महाभारत'को भूल जाओ। जब आश्रममें तुम्हें फिर 'महाभारत'को दुहराना है, तो फिर विगतके बारेमें क्यों सोचती रहती हो? सामने जो काम पड़ा है उसमें मन लगाओ। दूसरे लोग कैसे हैं इसे बिना सोचे, आश्रमकी एक योग्य सदस्या बनना ही तुम्हारा काम है।

तुमको व सि०को प्यार।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८२) से।

त्रिकमजीके उसी तारीखके पत्रमें जोड़ा गया था। उस पत्रमें लिखा था: "बापूके उपवासका आज तीसरा दिन है। अपनी रिहाईके बाद पहले दिन रातको बापूने वस्तुस्थितिपर अपना वक्तव्य बोलकर लिखवाया। उसमें उनकी काफी शक्ति खर्च हुई, पर वह अनिवार्य था। कल उन्होंने कम काम किया और आज मुझे आशा है कि वे और भी कम श्रम करेंगे। सन्तोषकी बात यह है कि उन्होंने खुद यह निश्चय कर लिया है कि जहाँ तक सम्भव हो अपनी शक्ति बचाई जाये। उन्हें नींद अच्छी आ जाती है और वे बिस्तरपर ही लेटे रहते हैं। देवदास, ब्रजकृष्ण, मैं और अन्य मित्र उनके कष्टको यथासम्भव ज्यादा-से-ज्यादा हल्का करनेकी भरसक कोशिश कर रहे हैं। मुझे पूर्ण विश्वास है कि वे इस अग्निपरीक्षाको सफलतापूर्वक पार कर लेंगे।

१९७. टिप्पणियाँ[1]

अस्पृश्यताको बुद्धि ग्रहण कर नहीं सकती। वह सत्यके, अहिंसाके, धर्मके विरुद्ध है, इसलिए धर्म ही नहीं। उसके मूलमें यह दम्भ है कि हम उच्च और दूसरे नीच हैं। जिस ब्राह्मणमें शूद्रका — सेवा — गुण नहीं, वह ब्राह्मण नहीं। ब्राह्मण तो वही है जिसमें क्षत्रियके, वैश्यके और शूद्रके सब गुण हों। और इनके सिवा ज्ञान हो। शूद्र कोई ज्ञानसे सर्वथा रहित अथवा विमुख नहीं होते, उनमें सेवा प्रधान है। वर्णाश्रम धर्ममें ऊँच-नीचकी भावनाके लिए अवकाश ही नहीं। वैष्णव-सम्प्रदायमें तो भंगी, चांडाल, आदि तर गये हैं। जो धर्म संसार-मात्रको विष्णुरूप मानता है, वह हरिजनको विष्णु-रहित किस प्रकार मान सकता है?

* * *

कोई यदि कहे कि अस्पृश्यताको मैं प्रेम-भावसे मानता हूँ तो मैं इस बातको कभी न मानूँगा। मुझे तो उसके अन्दर कहीं प्रेम-भाव प्रतीत नहीं होता। यदि प्रेम हो तो हम उन्हें जूठन नहीं खिलायेंगे। प्रेम हो तो हम उन्हें उसी तरह पूजेंगे जिस तरह माता-पिताको पूजते हैं। प्रेम हो तो हम उनके लिए अपनेसे अच्छे कुएँ, अच्छे मदरसे बना देंगे, उन्हें मन्दिरोंमें आने देंगे। ये सब प्रेमके चिह्न हैं। प्रेम अगणित सूर्योंसे मिलकर बना है। एक छोटा-सा सूर्य जब छिपा नहीं रहता तब प्रेम क्यों छिपा रहने लगा? किसी माताको कहीं यह कहना पड़ता है कि मैं अपने बच्चेको चाहती हूँ? जिस बच्चेको बोलना नहीं आता वह माताकी आँखोंको देखता है। जब आँखसे आँख मिल जाती है तब हम देखते हैं कि वे किसी अलौकिक चीजको देख रहे हैं।

हरिजन सेवक, १२-५-१९३३

१. ये "स्वर्ण-सूत्र" शीर्षकसे प्रकाशित हुई थीं।

जो प्रश्न पूछने हो, पूछ लेना। तुम आनेका विचार करो तब जिसे साथ लाना हो, ले आना।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१)से। सी० डब्ल्यू० ८३८२ से भी, सौजन्य नारणदास गाधी।

२२३. तार : सीतलासहायको

७ जून, १९३३

सीतला सहाय
१६, लाटूश रोड, लखनऊ

आप १५ के बाद पद्मा[1] के साथ आ सकते है। लेकिन ठाकुरसाहबको मात्र दर्शनके लिए आनेसे रोकिये। अलावा इसके, मेहमानोके रहनेके लिए और कमरा या जगह नही है। लेकिन यदि वे आते ही है तो उन्हे होटलमे ठहरनेको तैयार रहना चाहिए।

बापू

अग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१४५६) से।

२२४. पत्र : मीराबहनको

पर्णकुटी, पूना ६,
७ जून, १९३३

चि० मीरा,

मेरा लिखना ठीक नही है। मैंने तुम्हे जो पिछला पत्र लिखा था, उससे मेरे हाथपर बहुत जोर पडा। इसलिए तुम्हारे ५ तारीखके पत्रके जवाबमे यह पत्र बोलकर लिखवा रहा हूँ।

तुम कहती हो कि महादेवके लिखे हुए पत्र[2] के अन्तमे मैंने जो सक्षिप्त वाक्य लिखा, उससे तुम्हे पीडा हुई। आश्चर्यकी बात है कि जहाँ दु ख होनेका कोई भी कारण न हो, हम वहाँ भी दु ख पैदा कैसे कर लेते है। मेरा वाक्य तुम्हारे बुखारके सम्बन्धमे था। तुम्हीने लिखा था कि वह अधिक चिन्ताके कारण आ गया था। तुमने

१. सीतलासहायकी पुत्री।
२. देखिए पृ० १८९।

साफ तौरपर उल्लेख किया था कि तुम वियोग सहन नही कर सकती। इसीके उत्तरमे मैने वह वाक्य लिखा था। आशय लाचारीसे दूर रहनेकी परिस्थितिसे ही था। यह आशय तो कतई नही था कि जब मेरे साथ रह सकना सम्भव हो यानी, हम दोनो कैदमे न हो, तब भी तुम मुझसे दूर रहो। उस सूरतमे तो तुम मेरे साथ ही रहोगी। लेकिन मेरा जेलसे बाहर रहना स्वाभाविक नही है। मेरा स्वाभाविक जीवन तो कैदीका है और इसलिए मेरा सुझाव है कि तुम्हे मेरी शारीरिक उपस्थिति के बिना काम चलाना सीख लेना चाहिए। क्या यह बात सूर्यके प्रकाशकी तरह साफ नही है?

तुम्हारा यह वजन घटना मुझे पसन्द नही है। कन्धोपर चिन्ताका यह भार लिये फिरनेकी जडमे कही कोई मौलिक खराबी है। एक जीवन्त ईश्वरके अस्तित्वमे जीवन्त श्रद्धा रखनेका इससे मेल नही बैठता। जैसे-जैसे समय बीतता है, वैसे-वैसे मै रोम-रोममे उसका जीवन्त अस्तित्व अनुभव करता हूँ। यह अनुभव न हो तो मै पागल हो जाऊँ। मेरे मनकी शान्तिको भंग करनेवाली कितनी ही बाते होती रहती है। इतनी घटनाएँ होती है कि ईश्वरके अस्तित्वका भान न हो तो वे मुझे जडसे हिला डाले। परन्तु वे मुझे लगभग बिना छुए गुजर जाती है। मै चाहता हूँ कि तुम भी मेरी तरह इस सत्ताको पहचानो। फिर तुम्हे शारीरिक रूपसे मेरे निकट न हो पानेपर क्षोभ नही होगा। याद रखो कि तुम्हे और मुझे जैसा वियोग मजबूरन सहना पडता है, उसे सहन करनेके लिए किसी बहादुरीकी जरूरत नही है। लाखो मनुष्य बिना किसी प्रयत्नके इसे सहन करते है। यह समझनेकी भूल न करो कि इस तरहकी बातोके प्रति सवेदनशील न होनेके कारण वे ऐसा वियोग सहन कर लेते है। अगर हम बारीकीसे देखे तो पता चलेगा कि हम जितने सवेदनशील हो सकते है ठीक उतने ही सवेदनशील वे भी है। अन्तर इतना ही है कि उनकी ईश्वरमे ऐसी स्वाभाविक श्रद्धा होती है कि उसका उन्हे ज्ञान भी नही होता। उनके मुकाबलेमे हमारी श्रद्धा प्रयत्न-साध्य है। इसलिए हमे वियोग सहन करनेके लिए भगीरथ प्रयत्न करना पडता है। बहरहाल, तुम्हारी मनोवृत्तिका मेरा यह विश्लेषण है। अगर यह सही नही है तो तुम अपना विश्लेषण स्वय कर लो और किसी-न-किसी तरह इस भयकर चिन्तासे मुक्त हो जाओ। 'गीता'के दूसरे अध्यायमे कृष्णके सवादपर ध्यानपूर्वक मनन करो। फिर बारहवाँ अध्याय पढो। और देखो कि तुम्हे सच्ची मानसिक शान्ति और स्थिरता प्राप्त हो पाती है या नही। मेरी इस दलीलका ब्यौरेवार उत्तर देनेका प्रयत्न न करना। मै तुमपर इतना जोर नही डालना चाहता। मैने यह दलील सिर्फ इसलिए दी है कि यदि सम्भव हो तो तुम्हे सान्त्वना दे दूँ। मै जानता हूँ कि जब हमारा समूचा अस्तित्व अपने ही विद्रोहमे खडा हो तब तर्क व्यर्थ है। शायद जिस कष्टप्रद प्रक्रियामे से तुम गुजर रही हो वह, ईश्वरकी जीती-जागती उपस्थितिका तुम्हे जो अनुभव होनेवाला है, उसकी प्रारम्भिक दशा है। ईश्वर करे ऐसा ही हो। कुछ भी हो, अपने मनमे दुबारा यह विचार आने ही न दो कि जब हम दोनो जेलसे बाहर होगे, तब भी तुम्हारे मुझसे अलग रहनेका कोई प्रश्न रहेगा।

अब मेरी बात। मैं मजेमें हूँ। ६४ वर्षकी आयुमें शरीरका पुनर्निर्माण धीमी गतिसे ही हो सकता है। देखता हूँ कि वह गति मैंने जितनी आशा रखी थी उसमें भी धीमी होगी। फिर भी लगातार स्वस्थ हो रहा हूँ। २४ औंस दूध आसानीसे ले रहा हूँ। २ पौंडतक जानेकी कोशिश है। डॉ० दिनशा मेहताकी देखरेखमें मात्रा और भी बढ़ सकती है। मैं जिस ढंगसे प्रगति कर रहा हूँ, उससे मुझे पूरा सन्तोष है। दूधके अलावा मैं नारंगियों और तीनसे चारतक अनारोंका रस लेता हूँ। और खासी मात्रामें, शायद ४ औंस, शहद ले रहा हूँ। कलतक सब्जीका रस ले रहा था। आजसे डॉ० मेहताने दूधकी मात्रा बढ़ानेके विचारसे रस बन्द कर दिया है। इस प्रकार तुम देखोगी कि जिस ढंगसे मेरे भोजन और स्वास्थ्यमें सुधार हो रहा है उसमें शिकायतकी कोई बात नहीं है।

तुम शिकायत करती हो कि वहाँ सख्त गरमी पड़ रही है। यहाँ ऋतु बढ़िया और ठंडी है। बेशक, पूना बरसातके लिए एक आदर्श स्थान है।

१६ तारीखको देवदासका लक्ष्मीसे विवाह होगा, धार्मिक संस्कार उसी तारीखको होगा। परन्तु चूँकि यह विवाह वर्तमान हिन्दू-रिवाजके अनुसार नहीं है, इसलिए २१ तारीखको उनकी सिविल रजिस्ट्री भी होगी। जमनालालजी प्रभुदासका भी विवाह-सम्बन्ध निश्चित करनेकी कोशिश कर रहे हैं। यदि रिश्ता पक्का हो गया तो उसका विवाह भी उसी तारीखको हो जायेगा। रामदास यहाँ है। वह कतई स्वस्थ नहीं रह पा रहा है। उसका शारीरिक स्वास्थ्य उसकी मानसिक स्थितिपर निर्भर करता है और अभी उसे मानसिक शान्ति प्राप्त नहीं हुई है। जमनालालजी माताके समान उसकी देखभाल करते जा रहे हैं। सम्भवतः वह इससे ठीक हो जायेगा। वे वर्धामें सपत्नीक रहेंगे।

ऐसा प्रतीत होता है कि नी० ठीक रास्तेपर लग रही है। मार्गरेट स्पीगल, जिसका नाम अमला रखा गया है, बिलकुल पागल है। परन्तु कोई क्या करता? वह आ गई और उसे लेना पड़ा। वह एक अच्छी महिला है। परन्तु यह अभी देखना है कि वह कैसी बनती है। नी० और अमला दोनोंको हरिजन-सेवा करनी है।

मैं समझता हूँ कि मैंने तुम्हें सप्ताह-भरके लिए काफी-कुछ लिख दिया है।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२७९)से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९७४५ से भी।

२२५. पत्र: वेरियर एल्विनको

७ जून, १९३३

प्रिय वेरियर,

निस्सन्देह मुझे आपके बारेमें समाचार तो मिलते ही रहे हैं और अब पिछले महीनेकी ३१ तारीखका आपका पत्र भी मेरे सामने है।

यह सही है कि ईश्वरकी मुझपर कृपा रही है। ईश्वरने जरूरतके वक्त मित्रकी तरह मेरी मदद की है। उसने मुझे उन अत्यन्त आश्चर्यजनक २१ दिनोंमें कभी नहीं छोड़ा। मैं लम्बा पत्र बिलकुल नहीं लिखवाऊँगा। अभी-अभी मीराको एक लम्बा पत्र लिखवा चुका हूँ — उसे इसकी जरूरत भी थी। मैं नहीं चाहता कि आप यहाँ मात्र मुझे मिलनेके उद्देश्यसे आयें। "आ जाओ" कहनेका लालच तो है, परन्तु मैं जानता हूँ कि मुझे यह लोभ संवरण करना चाहिए। आपका काम सुनिश्चित रूपसे आपके सामने है, उसमें विघ्न नहीं पड़ना चाहिए।

आप सबका स्वास्थ्य ठीक लग रहा है, यह जानकर खुशी हुई। आशा है, मेरी बिलकुल शान्त भावसे रह रही होगी। जब आप माँ, इडिथ और इटलीकी बहनोंको पत्र लिखें तो उन्हें मेरा प्यार भेज दें। मेरे स्वास्थ्यमें तेजीसे सुधार हो रहा है।

हृदयसे आपका[1]

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९०९२)से। दि ट्राइबल वर्ल्ड ऑफ **वेरियर एल्विन**, पृ० ८३-४ से भी।

२२६. पत्र: मनु गांधीको

७ जून, १९३३

चि० मनुडी,

तेरे आश्रममें पहुँचनेकी खबरसे खुशी हुई। तुझे अच्छा लगता है न? अब गलेकी गाँठें काट दी गई होंगी। उन्हें कटवानेके बाद थोड़े दिन लगभग चुप रहना चाहिए, यह तो तुझे मालूम ही होगा। खुराकमें भी कुछ दिन तरल पदार्थ ही खाने चाहिए। उक्त नियमोंका पालन करनेपर ही गाँठें कटवानेका पूरा लाभ मिल पाता है।

मुझे ब्यौरेवार पत्र लिखना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५२२)से, सौजन्य: मनुबहन मशरूवाला।

१. मुद्रित साधन-सूत्रमें "स्नेह। बापू" है।

२२७. पत्र : नारणदास गांधीको

७ जून, १९३३

चि० नारणदास,

यह पत्र तुम्हे समयपर आज ही डाकमे भेजनेका इरादा था। किन्तु मीरा बहनको लम्बा पत्र[1] लिखा, इसलिए दूसरा पत्र लिखनेकी हिम्मत नही पडी। इस तरह गाडी धीरे-धीरे चल रही है, किन्तु ठीक ही चल रही है।

नी० और अमलाके बारेमे अपने अनुभव लिखना। सफेद आटेके बारेमे नी०ने शिकायत की थी, वह तुमने देखी होगी। मुझे तो उसमे थोडी गलतफहमी लगती है।

लडकेके बारेमे परचुरे शास्त्रीका पत्र आने ही उनके लडकेको उसे यहाँ बुला लूंगा। यह बोझ तुमपर नही रहने दूंगा।

कुसुमके बारेमे मुझे सन्तोष नही हुआ। अब फिर कोई देशी वैद्य खोजना है या किसी डॉक्टरको ही दिखाना है? मुझे जरा लिखना कि वस्तुस्थिति क्या है।

रमाबहनके कधेके लिए भी कुछ करना जरूरी है। या तो माणेकरावको[2] दिखाओ या वह यहाँ चली आये ताकि कुछ किया जा सके। हमारा क्या कर्त्तव्य है यह देख लेना। दूसरी बातोंके बारेमे महादेवने लिखा होगा इसलिए मैं नहीं लिखता।

अमतुस्सलाम कैसी रहती है? लगता है कि वह पत्र लिखनेमे घोर सयमका पालन कर रही है।

डॉ० शर्माके बारेमे अपने अनुभव लिखना। क्या उसका कोई पत्र आता है? तुमने उसे छुट्टी दी या वह खुद चला गया?

प्रेमा मुझे मिलने आयेगी, मैं ऐसा मानकर बैठा हूँ।

कनु अब कैसा रहता है? पुरुषोत्तमका क्या समाचार है?

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३८३ से भी; सौजन्य नारणदास गाधी।

१. देखिए पृ० १९५-७।

२. प्रोफेसर माणेकराव, प्रसिद्ध अस्थि-विशेषज्ञ और बडौदा व्यायामशालाके संस्थापक।

२२८. तार: गिरिजाशंकर राय चौधरीको

[८ जून, १९३३ या उसके बाद][1]

गिरिजाशंकर राय चौधरी
२५३, बालीगंज एवेन्यू, कलकत्ता

धन्यवाद। बरसी विवाहके आडे नही आती। बल्कि इसे सुखद संयोग माने।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० २१४५८) से।

२२९. पत्र: मार्गरेट स्पीगलको

९ जून, १९३३

प्रिय अमला,

तुम्हारे पत्र मिले। मनको स्थिर करो। बराबर मेरे साथ रहनेकी बात सोचते रहना अच्छा नही है। इसके विपरीत तुम्हारे सामने जो कर्त्तव्य है, उसके बारेमे तुम्हे सोचते रहना है। ३५ वर्षकी एक बुद्धिमती महिला बनो, न कि पाँच वर्षकी बच्ची।

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल कागजात, सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय। अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म, (एस० एन० १९०९४) भी।

१. गिरिजाशंकर राय चौधरीके ८-६-१९३३ के तार के जवाबमें। तारमें सूचित किया गया था कि देवदासके विवाहकी तिथिपर ही देशबन्धु दासकी मृत्युकी बरसी पड़ती है।

२३०. पत्र : नी०को

६ जून, १९३३

प्रिय नी०,

अभी तुम मुझसे अपने पत्रोंके उत्तरकी कोई आशा मत रखो। मुझमें आशाके अनुरूप गतिसे ताकत नहीं आ रही है। मेरा वैसी आशा करना उचित भी नहीं था। ६४ वर्षके बूढ़े आदमीमें जितनी जल्दी ताकत लौट सकती है, उस लिहाजसे तो ताकत जल्दी ही आ रही है। परन्तु आशाका किला बनाते हुए मैं भूल गया था कि मैं ४६ वर्षका नहीं ६४का हूँ।

मासिकधर्मके बारेमें तुम जो कहती हो वह बिलकुल सही है। परन्तु इस बातकी सम्भावना नहीं है कि यह बात तुम्हारे बारेमें सही हो। जिस स्थितिका तुमने वर्णन किया है वहाँतक पहुँचनेके लिए तुम्हें करनीमें ही नहीं, विचारमें भी पूर्ण पवित्रता लानेकी जरूरत है। तब निस्सन्देह स्त्री-पुरुषमें अन्तर नहीं रहता, केवल रूप-भेद रह जाता है। मुझे निश्चय ही पूरी आशा है कि तुम उस स्थितितक पहुँच सकती हो। परन्तु अभी तुम उस स्थितितक पहुंची नहीं हो, पहुँच जरूर सकती हो। मुझे इसमें लेशमात्र भी सन्देह नहीं है कि तुममें ऐसी महिला बननेके गुण है। मैं तुम्हारी महत्त्वाकांक्षाएं जानता हूँ। मैं यह भी जानता हूँ कि तुम बिलकुल सच्ची बनना चाहती हो। जहांतक तुम्हारे पत्रोंसे मैं जान पाया हूँ, तुम इसके लिए भगीरथ प्रयत्न कर रही हो। मेरी कामना है कि इसमें सफलता मिले। फिलहाल मासिकधर्म की न्यूनताके आधारपर तो मुझे कोई बहुत आशा नहीं बची है। इसलिए गर्भ ठहर जानेकी मेरी आशंका पूरी तरह नहीं गई है। इस दशामें मैं चाहता हूँ कि तुम इससे घबरानेके बजाय इसे ईश्वरका वरदान समझो। यदि गर्भ स्थित नहीं हुआ है तो इसे भी हम वरदान ही मानेंगे और सोचेंगे कि बाल-बाल बच गये। दोनो ही परिस्थितियोंमें इसे अन्तिम और अविस्मरणीय चेतावनी मानना है।

मुझे प्रसन्नता है कि तुम्हे अब्बास और गोविन्दजी ट्यूटर के रूपमें पसन्द आये। मुझे मालूम है कि वे बहुत बढिया कार्यकर्त्ता है। वे मन लगाकर काम करते है। निस्सन्देह लक्ष्मीदासको तुम अपने पहले शिक्षक और पिताके स्थानमें मानोगी। वे आश्रमके सबसे ईमानदार पुरुषोंमें से एक हैं। मैं चाहता हूँ कि आश्रममें तुम्हे जो-कुछ भी अच्छा लगे उसे ग्रहण करो और उसपर दृढ रहो।

जहाँतक नामका सम्बन्ध है, तुम देखोगी कि मैंने तुम्हारा सुझाव मान लिया है। तुम आश्रममें प्रत्येक व्यक्तिसे कह दो कि देवी शब्द [तुम्हारे नामसे] बिलकुल हटा दे। वे तुम्हे इच्छानुसार नी० या नी०बहन कहके सम्बोधित करे। परन्तु फिर इस

२३३. पत्र : मनु गांधीको

९ जून, १९३३

चि० मनुडी,

मैंने सुना है कि गलेकी गाँठें कटवानेमें काफी दर्द हुआ। किन्तु यह पत्र पानेतक तुम्हें पूरी तरह आराम हो चुका होगा। मेरा पहला पत्र[1] मिल गया होगा।

बापू

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १५२३)से, सौजन्य मनुबहन मशरूवाला।

२३४. पत्र : भगवानजी पु० पंड्याको

१० जून, १९३३

चि० भगवानजी,

तुम्हारा पत्र मैंने अपने गद्देके नीचे दबाकर रख दिया था। आज ही मिला है। वहाँसे निकल सको और नारणदास अनुमति दें तो अवश्य आ जाओ, ताकि बात कर सकें और कुछ समझना हो तो समझ लें। तुम न आ सको तो जो प्रश्न पूछने हों पूछ लेना। किन्तु आओगे ही, यह सोचकर अभी कुछ नहीं लिखता।

बापू

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ३५८)से, सौजन्य भगवानजी पी० पंड्या।

२३५. तार : ए० फेनर ब्राकवे तथा अन्य लोगोंको[2]

१२ जून, १९३३

धन्यवाद। बराबर प्रगति कर रहा हूँ।

गाधी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१४६४)से।

1. देखिए पृ० १९८।
2. १० जून, १९३३ को प्राप्त उनके तारके उत्तरमें। तार इस प्रकार था :

"हम आनन्दित हैं कि ईश्वरने भारतीय अछूतों और सामाजिक तथा राष्ट्रीय स्वतन्त्रताके कार्यको चलाते रहनेके लिए आपका जीवन अक्षुण्ण रखा। फेनर ब्राकवे, जेम्स मैक्स्टन, जॉन मेकगोवर्न, पार्लियामेंट-सदस्य, गिरधारीलाल पुरी, गुरदित सिंह दारासेक्रेटरी, ३३ स्टालडेट्स ऑक्सफोर्ड।"

२३६. पत्र : भूलाभाई जे० देसाईको

पर्णकुटी, पूना ६,
१२ जून, १९३३

भाईश्री भूलाभाई,

मैंने तो आज ही और अभी सुना कि आप खूब बीमारी भोग रहे हैं। जल्दी स्वस्थ हो जायें। मुझे लिखिये अथवा किसीसे लिखवाइये।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

भूलाभाई देसाई कागजात, फाइल नं० १; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय।

२३७. तार : मदनमोहन मालवीयको[1]

१४ जून, १९३३

खुशी हुई कि दर्द थोड़े समय ही रहा। आप वाइसको आयेंगे यह जानकर खुशी हुई। देवदास और लक्ष्मीका विवाह शुक्रवारको है। यदि आप मनसे दे सकें तो आपके आशीर्वाद चाहता हूँ[2]।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० २१४७०)से।

१. यह तार मदनमोहन मालवीयके १३ जून, १९३३ के इस तारके जवाबमें दिया गया था: "धन्यवाद, दर्द थोड़े समय ही रहा। बिल्कुल स्वस्थ हूँ। केवल कमजोरी है। आपसे २२ को मिलनेकी आशा करता हूँ। प्रभुसे प्रार्थना है कि आप शीघ्र ही पहले-जैसी पूरी शक्ति प्राप्त कर लें।"

२. मालवीयजी ने तार द्वारा उत्तर दिया: "यद्यपि यह सम्बन्ध मुझे सम्मत नहीं है, मैं देवदास और उसकी वधूके सुखकी कामना करता हूँ।"

२३८. तार : सतीशचन्द्र दासगुप्तको[1]

१४ जून, १९३३

देवदासके विवाहका धार्मिक संस्कार शुक्रवारको। अदृष्टके विचारसे रजिस्ट्रेशन जरूरी।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एम० एन० २१४७३) से।

२३९. पत्र : मीराबहनको

पूर्णकुटी, पूना ६,
१४ जून, १९३३

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र अभी पहुँचा है। मुझे इस सप्ताह बहुत संक्षिप्त विवरण देकर काम चलाना पड़ेगा, क्योंकि ८ बजेसे जिसे दुग्धाहार कहते हैं, शुरू होता है और ३.३० या ४ बजेतक चलता है। इस अरसेमें सम्पूर्ण शारीरिक और मानसिक विश्राम की जरूरत होती है। फिर भी अगर मुझे यह पत्र समयपर ही लिखना हो, तो दुग्धाहारके बीचके समयमें ही लिखना होगा। वह क्या है, इसका वर्णन बादमें[2] महादेव करेंगे। इसमें अभीतक यह तो नहीं कहा जा सकता कि वजन बढ़ रहा है, फिर भी स्पष्ट है कि मेरी शक्ति बढ़ रही है। अतः मेरे लिए चिन्ता करनेका कोई भी कारण नहीं है। जहाँतक मुझे दिखाई देता है, यह कहा जा सकता है कि मेरी प्रगति सम्यक् गतिमें हो रही है।

अपनी तन्दुरुस्तीके बारेमें जो तुम कहती हो और मेरा पत्र पढ़नेमें तुमने जो भूल की, उसके बारेमें मैंने तुम्हारी बात समझ ली है। आशा करता हूँ कि कम-

१. यह सतीशचन्द्र द्वारा देवदासको दिये गये तारके जवाबमें था। तार इस प्रकार था:
"समाचारपत्रोंमें कहा गया है कि आपका विवाह रजिस्टर्ड विवाह होगा। क्या यह सही हो सकता है? तार दीजिये।"

२. पत्रके अन्तमें महादेव देसाईने अपनी तरफसे लिखा था: तनिक-सा समय और है, इसलिए लिख रहा हूँ कि हर पौन घंटेपर ६ से ८ औंस दूध दिया जाता है। दूध बगैर उबाला हुआ होता है। बकरियोंके थन पोटाशियम परमैंगनेटसे और दुहनेवालेके हाथ गर्म पानीसे ठीकसे धोनेके बाद दूध सुबह-सवेरे दुह लिया जाता है। फिर उसे एक अच्छे रेफ्रीजरेटरमें रख देते हैं। इससे दूध बहुत ठण्डा और स्वादिष्ट हो जाता है। आजसे बापूको हर खुराकके साथ दो छुहारे लेनेकी इजाजत है। पूरी खुराक ६ पौंड होती है।

जोरीने तुम्हारा पिण्ड छोड दिया होगा और बुखार भी टूट चुका होगा। मै मान लेता हूँ कि तुम फल लेनेमे कसर नही रखोगी। शरीरको जिस चीजकी भी आवश्यकता हो उसे जुटा लेना चाहिए और इस तरह स्वस्थ और सशक्त बन जाना चाहिए।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२८०) से, सौजन्य. मीराबहन। जी० एन० ९७४६ से भी।

२४०. पत्र : सी० एफ० एन्ड्रयूजको

पर्णकुटी, पूना ६,
१५ जून, १९३३

प्रिय चार्ली,

मै चाहता था कि जितनी जल्दी हो सके तुम्हारे दो जरूरी पत्रोका जवाब दूं। तुम्हारे तार और पत्रो[1] ने मुझे बडी मदद दी है। लेकिन मुझे बीती हुई बातोकी चर्चा नही करनी चाहिए, क्योकि मुझे अभी अपनी शक्तिके व्ययमे कजूसी बरतनी है। मुझे खुशी है कि तुम वहाँपर कुछ हदतक अपने भाईकी देखभाल कर पा रहे हो।

तुम्हारा यह सोचना बिलकुल सही था कि यदि मुझे ऐसा लगता कि तुम्हारा यहाँ होना जरूरी है तो आवश्यकतानुसार तुरन्त तुम्हे लिखता या तार देता। लेकिन मुझे पूरा विश्वास है कि तुम्हे अभी वही रहना चाहिए। अपने प्रभावके बारेमे जितने आशावान तुम हो मै उतना नही हूँ। इडिया ऑफिस जो तुम्हारी बात सुनता है, इसका मै यह अर्थ लगाता हूँ कि वे लोग पहलेकी अपेक्षा अधिक शिष्ट हो गये है। मै वहाँ तुम्हारी उपस्थिति इससे कही बडे उद्देश्य व कही बडे असरके विचारसे चाहता हूँ। वहाँ होनेसे तुम उन सब लोगोको साथ रख पा रहे हो जो इस उद्देश्यके प्रति मित्रभाव रखते हैं। इसके अतिरिक्त, तुम्हारा आन्तरिक सत्य चुपचाप और अलक्ष्य गतिसे शुद्ध बुद्धिवाले अग्रेजोके मनमे घर करता जा रहा होगा। इस सबका सुफल अन्तमे मिलेगा। परमेश्वर तो महान और सर्वव्यापी है तथा रहस्यमय तरीकोसे काम करता है, अत उसके लिए सभी बाते सम्भव है। तथापि, आदमी जितना देख सकता है उसके आधारपर कहूँ तो मै मौजूदा हालतके जल्दी ही बेहतर होनेकी आशाका कोई कारण नही देखता और आज तो जहाँतक मै देख पाता हूँ, हालत अधिक-से-अधिक बुरी है। इस अध्यादेश-राजने जनताको गूंगी बना दिया है।

१. देखिए पृ० १५५-६ और १९१।

अबोध जनता आतंकित हो उठी है। वह नही जानती कि कल उन्हे क्या भोगना पडेगा। धनवान लोगोके मन इस अस्पष्ट आशकासे भयभीत हैं कि वे किसी सरकारी कानूनकी बन्दिशमे न बाँध दिये जाये। उन्हे लगता है कि उनकी रक्षा केवल इसीमे है कि वे उस शक्तिके आगे पूर्ण समर्पण कर दें जो उन्हे देवसे भी बडी प्रतीत होती है, वह ऐसी ताकत है जो हर हालतमे उन्हे अपनी इच्छाके आगे झुकनेको मजबूर करेगी। इस तरह देशमे एक प्रकारसे मौतका-सा सन्नाटा है जिसे मैं, हालाँकि मैं डॉक्टरोके आदेशसे लोगोके सम्पर्कसे दूर हूँ, अपने बिस्तरपर भी महसूस किये बिना नही रह पाता। यह श्मशानकी शान्ति है, जैसाकि लॉर्ड इर्विनने १९३० मे एक या दो बार कहा था। उस समय उन्होने उस भयावह शक्तिका, जिसे भारत सरकार जब चाहे प्रयोगमे ला सकती थी, और अधिक प्रयोग करनेसे इनकार कर दिया था। इसलिए यद्यपि मैं निकट भविष्यमे कोई आशा नही देखता और यद्यपि तुम और मैं इसकी उपेक्षा नही करते तथापि, हम सत्यको दृष्टिमे रखकर उसतक पहुँचनेके व्यवधानोको ध्यानमे रखते हैं। महत्त्व समयका नही है, यदि है तो हमारे पक्षमे है। क्योकि यहाँ तो आशा-ही-आशा है, निराशाका कोई कारण नही है। जबतक सत्यका एक भी प्रतिनिधि सचेष्ट है, सत्यकी अन्तिम विजय निश्चित है। ईश्वरको धन्यवाद है कि जहाँतक मैं देखता हूँ, भारतमे आज सत्यके यदि बहुत नही तो कुछ प्रतिनिधि ऐसे है जो सत्यकी रक्षाके लिए कोई भी मूल्य चुकानेमे आगा-पीछा नही करेंगे।

जब उद्देश्यके औचित्यमे इतना अडिग विश्वास मुझमे है, तो इस तरफसे जल्दबाजीमे कोई कदम उठाये जानेका खतरा नही है। हर जरूरी कदम अधिक-से-अधिक सोच-विचारकर उठाया जायेगा। मैं स्वय सम्मानपूर्ण शान्तिके लिए कुछ उठा नही रखूंगा। मेरी समझमे तो मैं इसमे विफल ही रहूँगा, लेकिन इसकी मुझे चिन्ता नही है। जनरल स्मट्स जितने ज्यादा सख्त होते गये, मैं उतनी ही दृढतासे और पहलेसे भी अधिक उनका द्वार खटखटाता रहा। लगा कि वह और भी मजबूतीसे बन्द कर दिया गया है, लेकिन धैर्यका पुरस्कार मिला। इसी तरह इस मामलेमे भी होगा। अब्दुल गफ्फार खाँकी हम बलि नही दे सकते। खुर्शीद नौरोजी, जो तीस वर्षसे ऊपरकी है, भावावेशसे मुक्त है, श्रद्धा और आध्यात्मिकतासे भरी हुई हैं। वे सीमान्त प्रान्तमे अब्दुल गफ्फार खाँके साथ रही थीं और वहाँके लोगोके घनिष्ठ सम्पर्कमे आईं। इसके बाद देवदास गया था और इन दोनोने मुझे बताया कि अब्दुल गफ्फार खाँके मनमे कोई दुराव-छिपाव नही है, वे हमेशा वही कहते है जो उन्हे कहना है, और वे जो-कुछ कहते हैं वही दिलसे चाहते हैं। वे स्वीकार करते हैं कि वे उग्र स्वभावके है और काममे जल्दबाजी कर जाते हैं। लेकिन हिंसामे उनका विश्वास नही है और अमानुल्ला या किसी भी अन्य व्यक्तिसे उनकी गुप्त साँठगाँठ नही है। उनकी आकाक्षा केवल इतनी ही है कि अपने लोगोको खुश और आतक-वादसे मुक्त देख सके। मेरा निजी अनुभव यह है कि वे नियन्त्रण व अनुशासनमें रह सकते हैं। मुझे याद नही आता कि उन्होने कभी अपने वायदे पूरे करनेसे

इनकार किया हो। मैंने जब कभी चाहा है, वे मेरे पास आये हैं। मेरा अपना दृढ़ मत यह है कि अधिकारी वर्गके सामने उनका काफी गलत चित्र खींचा गया है। अधिकारी जो बात नहीं चाहते वह है — उनका अपने यहाँकी जनतापर असर। निस्सन्देह उनका असर तो है, क्योंकि वे त्यागी हैं, सीधे-सादे और बहादुर हैं। यह फिरसे एक बार उसी पुरानी नीतिको दुहरानेवाली बात है कि लम्बे वृक्षोंको काटा जाये। अब्दुल गफ्फार खाँपर जिन बातोंका शक किया जाता है, यदि वे सच हैं तो एक निष्पक्ष न्यायाधिकरण द्वारा उन्हें सिद्ध किया जाना चाहिए। यदि उनके खिलाफ लगाये जानेवाले आरोप सच्चे साबित हो तो कांग्रेसको या खुद मुझे कुछ भी नहीं कहना होगा। लेकिन वह न्यायाधिकरण एक स्वीकार्य न्यायाधिकरण होना चाहिए। मैं मेरठके मामले[1] की पुनरावृत्ति नहीं चाहता। जैसाकि आप अच्छी तरह जानते हैं, मुझे साम्यवादसे कोई सहानुभूति नहीं है। मेरठके अधिकांश बन्दी मेरे विरुद्ध थे। मुझे बदनाम करने या अपमानित करनेका कोई मौका वे नहीं चूकते थे। लेकिन उसका कोई महत्त्व नहीं है। उन्हें एक विशेष मत रखनेके लिए दण्ड दिया गया है, किसी कृत-कर्मके लिए नहीं और दण्ड भी कैसा! लेकिन यह तो गहरी जड़ोंवाली बीमारीका लक्षणमात्र है। सत्ता और उससे मिलनेवाले फलोंको छोड़नेका आई० सी० एस० वर्गका कोई इरादा नहीं है, और श्री बॉल्डविन या सर सैम्युअल होरका इरादा भी इससे विपरीत नहीं है।

अस्पृश्यता-सम्बन्धी तुम्हारा तर्क महत्त्वपूर्ण तो है मगर उसमें एक प्रारम्भिक दोष है। मेरा जीवन एक अविभाज्य इकाई है। उसमें खाने नहीं हैं — खण्ड-पद्धतिपर उसका निर्माण नहीं हुआ है। सत्याग्रह, सविनय अवज्ञा, अस्पृश्यता, हिन्दू-मुस्लिम एकता और अन्य कई चीजें, जो मैं गिना सकता हूँ, अलग-अलग नहीं गिनी जानी चाहिए और अलग-अलग नहीं सुलझायी जानी चाहिए। वे एक ही पूर्ण वस्तु, सत्यके अविभाज्य अंग हैं। ऐसा नहीं हो सकता कि मैं अपने-आपको पूरी तरह अस्पृश्यतामें लगा दूँ और कहूँ कि "हिन्दू-मुस्लिम एकता या स्वराज्यकी उपेक्षा करो। ये सब चीजें परस्पर गुंथी हुई और एक-दूसरेपर आश्रित हैं। तुम मेरे जीवनमें मुझे कभी एक चीजपर जोर देते पाओगे, कभी दूसरी चीजपर। लेकिन यह ठीक उस पियानोवादकके समान है जो कभी एक स्वरपर जोर देता है तो कभी दूसरेपर। लेकिन वे सब स्वर एक-दूसरेसे जुड़े हुए हैं। इसलिए तुम समझ सकते हो कि मेरे लिए यह कहना नितान्त असम्भव है कि "अब मुझे सविनय अवज्ञा या स्वराज्यसे कुछ सरोकार नहीं है।" केवल इतना ही नहीं यदि मैं ऐसा कुछ करनेका प्रयत्न भी करूँ तो कर नहीं सकता। मैं तुम्हें बता सकता हूँ कि स्वराज्यके

१. मेरठ कॉन्स्पिरेसी केस (मेरठ षड्यन्त्र अभियोग), जिसमें न्यायमूर्ति यार्क इस निष्कर्षपर पहुँचे थे कि रूसमें स्थापित कम्यूनिस्ट अन्तर्राष्ट्रीय संगठन पूँजी और श्रमके बीच विरोध-भावनाको भड़काकर और हड़तालों आदिके जरिये विभिन्न देशोंकी मौजूदा सरकारोंको उखाड़नेकी साजिश चला रहा है। जिन्होंने अभियुक्तोंको इस षड्यन्त्रमें हिस्सा लेनेका दोषी घोषित किया गया था और तीस अभियुक्तोंने दे सजाओंको आजीवन निर्वासनसे लेकर तीन वर्ष कठोर कारावासतक की सजाएँ दी गई थीं।

विना अस्पृश्यताका पूर्णतः और हमेशाके लिए निवारण सर्वथा असम्भव है। यदि मैं अपने कथनको सही साबित करनेके लिए प्रमाण आदि प्रस्तुत करूँ तो यह पत्र व्यर्थ ही बहुत लम्बा हो जायेगा।

स्नेह।

मोहन

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १३००) से। एस० एन० १९०९७ से भी।

२४१. तार: सेवकराम करमचन्दको

१६ जून, १९३३

सेवकराम करमचन्द
हरिजन सेवक संघ, पुराना सक्खर

कृपया मेरी तरफसे नेवन्दरामको कहिये कि साधुवेला मन्दिरके सम्बन्धमें उपवास न करे।

गांधी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१४७८) से।

२४२. तार: रामकृष्णदास चाँदीवालाको

१६ जून, १९३३

रामकृष्णदास चाँदीवाला
कटरा खुशाल, दिल्ली

आपका तार ब्रजकृष्णको पढ़कर सुना दिया। उसका स्वास्थ्य दिनोदिन सुधर रहा है। कलसे बुखार बिलकुल नहीं है। मैं चाहता हूँ वह पुराने कब्जका पूरा इलाज कराये। आपको या माँ को नहीं आना चाहिए। मैं आपको सूचना देता रहूँगा।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१४७८-ए) से।

२४३. भाषण: देवदास-लक्ष्मीके विवाहके अवसरपर[1]

पूना,
१६ जून, १९३३

तुमने अभी-अभी हमारा परिचित भजन "वैष्णव जन तो तेणे कहिए" सुना। तुम दोनो इसपर विचार करो और सन्त-कवि नरसिंह मेहताने जैसे सच्चे वैष्णवका वर्णन किया है उसके समान रहनेकी कोशिश करो।

देवदास, तुम जानते हो कि मुझे तुमसे कितनी आशाएँ हैं। मेरी इच्छा है, तुम उन्हें पूर्ण करनेमें समर्थ बनो। यदि यह हो सका तो मैं विश्वास दिलाता हूँ कि तुम्हारे इस विवाहके बारेमें उठाई गई सारी आपत्तियाँ हवा हो जायेंगी। जबसे मैंने होश संभाला, मैंने धर्मका अर्थ समझने और जहाँतक बन पड़े तदनुकूल आचरण करनेकी कोशिश की है। मेरी समझमें यह विवाह धर्मके नियमोके विरुद्ध बिलकुल नहीं है। यदि ऐसा होता तो तुम्हें आशीर्वाद नहीं मिलता और मैं आयोजनमें उपस्थित न होता।

तुम अपने ऊपर गम्भीर उत्तरदायित्व ले रहे हो। यह उत्तरदायित्व तुम्हें प्राप्त इस महान सौभाग्यके अनुपातमें ही महान है। किसे मालूम था कि तुम्हारा विवाह पवित्रात्मा श्रीमती ठाकरसीकी छत्रछायामें उनके घरमें होगा? किसे मालूम था कि पुरोहितका काम निभानेके लिए लक्ष्मण शास्त्री-जैसा महान विद्वान और शुद्ध चरित्र-वान् व्यक्ति मिल जायेगा? शायद यह संस्कार आगे किसी सुविधाजनक तारीखमें आश्रममें सम्पन्न होता। परन्तु उपवासके कारण यह अभी और यहीं हुआ। जो अनिवार्य रूपसे एक धार्मिक संस्कार है, उसका फल भी धार्मिक ही होना चाहिए। तुम्हें इसकी स्मृति हर कदम धर्मकी पूरी भावनासे उठानेकी प्रेरणा देती रहे। तुम जानते हो, धर्म ही सत्य है, और यदि तुम उसे ध्रुव तारेके समान अपना पथप्रदर्शक मानोगे तो वह निश्चय ही तुम्हारी रक्षा करेगा। तुम्हारा यह कितना बड़ा सौभाग्य है कि इतने मित्र और गुरुजन इस अवसरपर तुम्हें आशीर्वाद देनेके लिए उपस्थित हैं। आज तुमने राजगोपालाचारीकी चिर-संचित मणि लूट ली है। ईश्वर करे तुम इसके योग्य बनो। तुम इस निधिको संभालकर रखो। यह सच्चे अर्थोंमें लक्ष्मी है। तुम इसकी उसी तरह चौकसी और सुरक्षा करो जैसेकि तुम सब अच्छाइयों और सुन्दरताकी अधिष्ठात्री देवी लक्ष्मीकी करते। तुम दोनो चिरजीवी होओ और धर्मके

१. भाषण महादेव देसाई द्वारा लिखित विवाहके विवरणसे लिया गया है। भाषणको प्रस्तुत करते हुए अपने विवरणमें महादेव देसाईने लिखा था: "गांधीजी ने वर और वधूसे कुछ शब्द कहे। बोलनेके लिए आवश्यक शक्ति समेटनेमें गांधीजी को पाँच मिनटसे कुछ अधिक ही समय लगा। देवदाससे उन्होंने अपनी बात गुजरातीमें कही और वधूसे हिन्दीमें। मैं यहाँ उनके इस भाषणका सार दे रहा हूँ।"

पथपर चलो। तुम धर्मके लिए जियो और जब अवसर आये, धर्मके लिए प्राण न्योछावर करनेका तुममे उत्साह हो। आजसे तुम्हारा जीवन पहलेसे भी अधिक समर्पित जीवन बन जाये और तुम निरर्थक भोगविलासमे कभी न पडो। यह मेरा आशीर्वाद है और यह मेरी चिर-सचित आशा एव अभिलाषा है।

देवदास, तुमने राजगोपालाचारीको सदा सामान्य बुजुर्गके रूपमे देखा है। आजसे वे तुम्हारे पितृ-तुल्य हुए। उनके प्रति वही भक्ति और श्रद्धा रखो जो तुम मेरे प्रति रखते आये हो।

लक्ष्मी, तुमसे मुझे ज्यादा-कुछ कहनेकी जरूरत नही है। मुझे विश्वास है कि देवदास अपने-आपको पति रूपमे तुम्हारे अनुरुप सिद्ध करेगा। जबसे मैंने तुम्हे देखा है और जबसे मै तुम्हे जानता हूँ, मैंने महसूस किया है कि तुम्हारा नाम तुम्हारे अनुरूप ही है। तुम्हारे विवाहसे राजगोपालाचारी और मेरे बीच उत्तरोत्तर बढते स्नेहका बन्धन और भी ज्यादा मजबूत बने। जिस अनोखे मुहूर्तमे यह विवाहोत्सव सम्पन्न किया जा रहा है उसका महत्त्व बतानेकी जरूरत नही है। यह अनिवार्य रूपसे एक धार्मिक सस्कार है और यह तुम दोनोको अपना कर्त्तव्य ज्यादा अच्छी तरह निभानेका साधन साबित हो। यदि मै ऐसा नही मानता कि यह विवाह धर्म-सगत है और हमारी अनुमति एव आशीर्वाद प्राप्त करनेके लिए तुम दोनो द्वारा की गई तपश्चर्याका फल है, तो मेरा इससे कोई सम्बन्ध नही होता। हमारी अनुमति और आशीर्वादके तुम पूरी तरह पात्र हो।[1]

ये कुछ-एक शब्द कहनेके लिए मुझे बडा प्रयत्न करना पडा है। परन्तु मैंने सोचा कि मेरे लिए जरूरी है कि मै तुम्हे आशीर्वाद दूँ और तुम अपने ऊपर जो महान उत्तरदायित्व ले रहे हो उसके प्रति तुम्हे सचेत कर दूँ। ईश्वर तुम्हारी रक्षा करे। केवल वही रक्षा करता है, क्योकि वही पिता, माता, मित्र और सब-कुछ है। तुम्हारा जीवन मातृभूमि और मानवताकी सेवामे लगा रहे। तुम दोनो सदा विनम्र रहो एव तुममे सदैव ईश्वरका भय बना रहे।

[अग्रेजीसे]

हिन्दू, १७-६-१९३३, हिन्दुस्तान टाइम्स, १७-६-१९३३ भी।

१. ये दो वाक्य हिन्दुस्तान टाइम्स, १७-६-१९३३ से लिये गये हैं।

२४४. तार: अगाथा हैरिसनको[1]

१७ जून, १९३३

अगाथा हैरिसन
११९ ग्रोवर स्ट्रीट, लंदन

जब स्वास्थ्य मुलाकातके लायक हो जायेगा मेरी तरफसे कोई शर्त नही रखी जायेगी।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४६६) से।

२४५. सन्देश: दक्षिण भारतीयोंको

१७ जून, १९३३

दक्षिणके प्रान्तोमें हिन्दी-कार्यके सम्बन्धमें पण्डित हरिहर शर्माका[2] विवरण सुनकर सभीको खुशी होनी चाहिए। लेकिन मुझे सच्ची खुशी तो तभी होगी जब हिन्दी हर गाँवमें फैल जायेगी। मैं चाहूँगा कि हर व्यक्ति इस पवित्र कार्यमें अधिक-से-अधिक जितना सहयोग दे सकता है दे।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २४-६-१९३३

१. कुमारी अगाथा हैरिसनके १५ जून, १९३३ को मिले तार (एस० एन० १९०९६) के जवाबमें, जो इस प्रकार था: "यदि दो व्यक्ति बिना शर्त मिलें तो क्या शान्तिका कोई रास्ता नहीं निकाला जा सकता?"

२. प्रसिद्ध हिन्दी-प्रचारक तथा उपवासके दौरान गांधीजीके चार परिचारकोंमें से एक।

२४६. सन्देश : आश्रमवासियोंको

[१८ जून, १९३३से पूर्व][1]

सत्याग्रह आश्रमके प्रबन्धक श्री नारणदास गांधी, जो गांधीजी के दर्शन करने पूना गये थे, आज सुबह वापस लौट आये। उन्होंने महात्माजी के साथ उनके उपवासके महत्त्वपर चर्चा की। गांधीजी के अनुसार, वह सत्य और अहिंसाकी साधनामें अन्तिम सहारा है।

समझा जाता है कि गाधीजी ने श्री नारणदाससे कहा कि अपने पिछले उपवाससे उन्हें यह विश्वास हो गया है कि इसी तरहकी हजारो परीक्षाएँ उत्तीर्ण करना जरूरी होगा, और आश्रमवासियोको पहलेकी तरह उपवास करनेमें पहल करनी चाहिए। इसलिए उन्हें चाहिए कि वे पहलेसे भी ज्यादा पवित्र जीवन व्यतीत करते हुए अपने-आपको इसके योग्य बनायें।

[अग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १५-६-१९३३

२४७. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

मौन में

पर्णकुटी, पूना,
प्रात. ४ बजे, रविवार [१८ जून, १९३३][2]

भाई वल्लभभाई,

आपको पिछला पत्र लिखनेके बादसे ही अपने हाथसे पत्र लिखना बन्द कर देना पडा था। मैंने देखा कि मुझमें जरूरी शक्ति नही आई है। अबतक शक्ति आ गई है या नही, यह आजमानेको जी कर रहा है। यह आजमाइश तो आपको पत्र लिखकर ही की जा सकती है न?

डॉक्टरोकी रिपोर्ट और उनकी बताई अवधिसे घबराइये नही। 'होइहि सोइ जो राम रचि राखा।' मैंने माना था कि तीन सप्ताहमे चलने-फिरने लगूँगा। मगर यह खयाल गलत निकला। फिर भी चिन्ताका कोई कारण नही। विलम्ब हो रहा है, इतनी ही बात है। सच पूछे तो चौसठ वर्षकी उम्रमे दूसरा हो भी क्या सकता है? यह निश्चित समझिये कि मैं सकुशल हूँ। प्रेमलीलाबहनके प्रेम-सागरमे नहा

१. समाचारके ऊपर स्थान अहमदाबाद और तिथि १८ जून, १९३३ दी गई थी।
२. देखिए "पत्र : नारणदास गांधीको", पृ० २१६-७।

रहा हूँ। उनके घरको मैंने धर्मशाला बना दिया है। देवदास और लक्ष्मीका विवाह उन्होंने कराया और वह भी कितने प्रेमसे। ईश्वरकी अपार कृपा है। क्या हम उसके योग्य हैं। वही योग्य बनावे।

आपकी नाकका क्या हाल है?[1]

जोशी[2] से कहिये कि रमा[3] के ऑपरेशनकी बात अभी मैंने लिखकर मुल्तवी करा दी है। डॉ० पटेल[4] ने ही बरसात होतेतक और ठंडक हो जाये तबतक ठहरनेको कहा है। वैसे कर डालनेका आग्रह उन्हीका है और वे हिम्मतके साथ कहते हैं कि इसमे कोई खतरा नही, और वह आवश्यक है। छगनलाल चिन्ता न करे। यह बात एक क्षणके लिए भी मेरे ध्यानसे बाहर नही रही।

इतना लिखा है, परन्तु थकावट नही लगती। फिर भी मीठे पेडको जडसे नही उखाड़ूँगा और आज इसके सिवा और पत्र नही लिखूँगा।

प्रभावती यहाँ आ गई है, यह तो आपको लिखा जा चुका होगा।

बापूके आशीर्वाद

सरदार वल्लभभाई पटेल
यरवदा जेल, पूना

[गुजरातीसे]
बापूना पत्रो – २: सरदार वल्लभभाईने, पृ० १७-९

२४८. तार: नारणदास गांधीको

१९ जून, १९३३

सत्याग्रह आश्रम
अहमदाबाद

रामनारायण चौधरी कहते हैं कि ज्ञानदेवी प्रभुदाससे विवाहपर पूरी तरह सहमत है। इसकी पुष्टि करो और ज्ञानदेवीसे कहो वह अपनी पूरी बात मुझे लिखे।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। एस० एन० २१४८५ से भी।

१. ४ जनवरी, १९३२ को गांधीजी और वल्लभभाई गिरफ्तार किये गये थे। उसके एक दिन पहले ही वल्लभभाईने नाककी बढी हुई हड्डीको विजलीसे जला डालनेकी क्रिया कराई थी। ऐसी हालतमें कडाकेकी ठंडमें खुली मोटरमें उन्हें बम्बईसे पूना ले जानेसे उनका कष्ट बढ गया था, जो जेलकी अवधिमें बना ही रहा।

२ व ३. साबरमती आश्रमके श्री छगनलाल जोशी। वल्लभभाईको उनकी पत्नी रमाबहनका ऑपरेशन करानेकी चिन्ता थी।

४. बम्बईके प्रसिद्ध डॉक्टर स्व० पी० टी० पटेल।

२४९. तार : जमनालाल बजाजको

१९ जून, १९३३

श्री
बम्बई

रामनारायण चौधरीने तार दिया है कि ज्ञानदेवीने अपने पितासे बात करनेके बाद पूरी सहमति प्रदान की है। नारणदाससे इस कथनकी पुष्टि करनेको कहा है और ज्ञानदेवीका पत्र भी माँगा है।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१४८६) से।

२५०. डंकन ग्रीनलीजको[1]

पर्णकुटी, पूना,
१९ जून, १९३३

मैं तुम्हारा ८ तारीखका पत्र इतने दिनोतक बराबर अपने गद्देके नीचे इस आशासे रखे रहा हूँ कि स्वयं लिखूंगा या कुछ नही तो बोलकर लिखवा दूंगा। लेकिन आजसे पहले इतनी ताकत ही महसूस नही कर पाया। मौन तोड़नेमें अभी ५५ मिनट बाकी है। इनमें से जितना उपयोग तुम्हारे पत्रका जवाब लिखनेमें कर सकूं कर रहा हूँ। मुझे तुम्हारी बात बहुत पसन्द आई। तुमने जो-कुछ कहा है, मैं वह सब समझ गया हूँ और उससे मुझे सन्तोष भी हो गया है। आश्रमसे तुम्हे और कोई नही निकाल सकता, तुम स्वयं जाना चाहो तो बात दूसरी है। जबतक वहाँ रहनेसे तुम्हे सन्तोष है और तुम्हे यह लगता रहता है कि वहाँ तुम्हारा विकास हो सकता है, तबतक तुम वहाँ अवश्य रहो। यदि शुद्धिके लिए उपवास फिरसे किया गया,[2] कभी-न-कभी किया ही जायेगा, तो निश्चय ही उसमे तुम्हारा नाम होगा। और उसमे प्रचार और ढोल-ढमाकेका दोष भी नही होगा — मेरे उपवासमें तो यह दोष आ ही गया था। हर व्यक्ति अपने-आप यह तय करेगा कि उसमे इसकी योग्यता है या नही। सैद्धान्तिक दृष्टिसे तो वास्तवमे कोई भी योग्यता सम्पन्न नही है, क्योंकि हममे से

१ डंकन ग्रीनलीजका नाम अगले शीर्षकके आधारपर दिया गया है।

२. गांधीजी उस समय ऐसा सोच रहे थे कि आत्मशुद्धिके ऐसे उपवास एक-एककर अनेक हरिजन-सेवक करेंगे।

हर व्यक्तिमे पापका कुछ-न-कुछ अश है ही। इसलिए मैंने इसे मुख्यतः आत्मशुद्धिके लिए ही घोषित किया है। यदि व्यक्तिमे सेवा, और अधिक समर्पण व शुद्धिकी आन्तरिक प्रेरणा है और यह विश्वास है कि वह परीक्षा से गुजर सकता है, तो इतना काफी है। क्षमता तो आन्तरिक प्रेरणाकी उत्कटता और (इसीके प्रतिरूप) बराबर गहरे होते जानेवाले इस विश्वाससे आती है कि तपस्याकी जरूरत है। सत्यके अन्वेषकमे ऐसी कोई शक्ति नही होती जिसे वह खुद अपनी शक्ति कह सके। उसे उस कामके लिए, जिसके लिए उसे प्रेरित किया जाता है, उस क्षण आवश्यक (उससे अधिक नही) शक्ति दे दी जाती है या भेज दी जाती है।

यदि मेरे जीवित रहते उपवासका सिलसिला शुरू हो गया तो अन्य लोगोकी तरह तुम्हारी बारी भी मैं निश्चित करूँगा या फिर मेरी मृत्यु हो जानेपर मेरे द्वारा मनोनीत उत्तराधिकारी निश्चित करेगा। यदि मैं ऐसा न कर पाया तो भाग लेनेवाले लोग अपने बीचसे स्वयं अपना नेता चुन लेगें।

जहाँतक मैं सोच-विचारकर तय कर पाया हूँ, बात ऐसी है।

यह पत्र एक तरहसे महत्त्वपूर्ण हो गया है। इसलिए मैं तुम्हारा नाम दिये बिना टाइपराइटरपर इसकी कई प्रतियाँ बनवा रहा हूँ।

आशा है कि तुम शरीर तथा मन दोनोसे स्वस्थ होगे।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १९१००) से। एस० एन० २१४८८ से भी।

२५१. पत्र : नारणदास गांधीको

१९ जून, १९३३

चि० नारणदास,

कलसे फिर पत्र लिखनेका प्रयत्न शुरू किया है। वल्लभभाईको लिखा। आज डंकनके पत्रसे शुरू किया था। अब तुम्हे लिख रहा हूँ। डकनका लिखा पत्र भी इसके साथ है। डंकनको लिखे पत्रमे मैंने अपने विचार सहज ही स्पष्ट रूपसे व्यक्त किये हैं, इसलिए मैंने उसकी प्रतियाँ तैयार करवा ली है। उनमे डंकनका नाम निकाल दिया है। समय होगा तो उसकी एक नकल भी साथ भेज दूंगा। नही होगा तो कल भेज दूंगा। मेरे भोजन-सम्बन्धी परिवर्तनोके बारेमे तो जो लोग पत्र लिखते है वे लिखेंगे ही; इसलिए मैं नही लिख रहा।

अब तुमसे देवलालीकी पूरी खबर मिलनी चाहिए। जमना, कुसुमका क्या हाल रहा है? क्या मैत्रीकी कुछ खबर है? कुसुमके लिए वैद्यकी बात पक्की कर ली हो तो लिखना।

रमाबहनका क्या हुआ? ठण्ड हो गई है, यह डॉ० पटेल कब मानेंगे? अमीना कैसी है? उसने मेरे पत्रका उत्तर नही दिया।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३८४ से भी; सौजन्य: नारणदास गाधी।

२५२. पत्र: पांडुरंग नाथूजी राजभोजको

१९ जून, १९३३

भाई राजभोज,

तुम्हारा तीन पत्र मेरे सामने है एक १० मईका और दूसरा आठ जूनका और तीसरा १६ मईका। आज तक तो सब पत्र मुझको नही बताये जाते थे अब भी बहुत थोडे पत्र मुझे बताये जाते है। क्योकि पूरी शक्ति अभी तक नही आई है, मेरा उत्तर देनेका तो पत्र पढने और सुननेसे भी ज्यादा अनिश्चित रहा है। आज तक बहुत कम पत्र लिख सका हूँ। तुमको लिखनेका तो बहुत दफे दिलमें रहा था लेकिन मेरी इच्छा आज ही सफल होती है। श्री दफतरीके बारेमें जो कुछ तुमने लिखा है वो ठीक है ऐसी प्रतिज्ञाके लिए हरिजनोको कहनेका केवल हरिजनोको ही अधिकार है, इतर हिन्दू सूचना ही कर सकते हैं। शराब और गन्दा जीवनकी बात तो सारा ससारके लिए है ये केवल हरिजनोके लिये ही नही हो सकती। इस बारेमें मुझको शक्ति आनेसे मैं भाई दफतरीको लिखूंगा और हरिजनमें भी लिखूंगा। तुम्हारे तीन मास खतम होनेके बाद तुम अवश्य आश्रम छोड सकते हो यदि तुमको विश्वास हो गया कि जो लेनेके लिए गए थे वो पाया है। मेरी सलाह यह है कि इस बारेमें नारणदासको पूछना, उनको भी अगर ऐसी प्रतीती हो गई है तो अच्छी बात है। तुम्हारे अथवा दूसरे हरिजनोको अनशन करनेका आज कोई कारण नही है। प्रायश्चित्त इतर हिन्दुओको करनेका है, हरिजनको नही। उनके लिए प्राश्चित और अनशन करनेका अवसर अवश्य आवेगा लेकिन थोडे समयकी आवश्यकता है। मेरा खयाल है कि इसमे तुम्हारे मुख्य हिस्सेका उत्तर आ जाता है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ७९२) से।

२५३. पत्र : व्रजकृष्ण चाँदीवालाको

१९ जून, १९३३

चि० व्रजकिसन,

तुमारा खत मिला। केशुको अवश्य बुला लो। माताजी को तकलीफ नहि देना चाहिये। मैंने आज तार भेज दिया है। तो भी पीछे देखा जायगा। हां कुछ उपचार छुट नहि सकते।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४००) से।

२५४. पत्र : अरुण दासगुप्तको

पर्णकुटी, पूना,
२० जून, १९३३

प्रिय अरुण,

इतने लम्बे अरसेके बाद तुम्हारा छोटा-सा पत्र पाकर मुझे खुशी हुई। मेरे उपवासके दौरान शायद ही कोई पत्र मुझे पढ़कर सुनाया जाता था। उपवासके दौरान माताजी और पिताजी ने दौड़कर पूना पहुँचनेके मोहका संवरण किया और अब भी संयम रखकर अपने-अपने काममें लगे हैं, इससे मुझे खुशी हुई। यदि मुझे पहलेकी तरह यात्रा करनी पड़ी, और यदि तुम शारीरिक तौरपर यात्राकी थकान बर्दाश्त करनेमें समर्थ हुए, तो मैं अपनी किसी यात्रामें तुम्हें अपने साथ ले जाना चाहूँगा। तुमने अपने स्वास्थ्य और अपनी गतिविधियोंके बारेमें कुछ नहीं लिखा है। इस पत्रके जवाबमें तुम इन दोनों बातोंके बारेमें मुझे कुछ जरूर लिखना।

क्या तुम अभी हालमें अब्दुल हलीमसे मिले हो?

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९१०१) से।

२५५. पत्र : नी० को

२० जून, १९३३

प्रिय नी०,

अन्य पत्रोंके साथ मैं अपने बिछावनके नीचे तुम्हारे भी तीन पत्र रखे तो रहा, लेकिन अब कहीं बोलकर जवाब लिखवा पा रहा हूँ। मैं पहले उस पत्रका जवाब दे रहा हूँ जो सबसे बादका है और मुझे अभी दिया गया है। मद्रासके गवर्नरके नाम तुम्हारा पत्र आज डाकमें भेजा जा रहा है। वह कुछ दूसरे शब्दोंमें भी लिखा जा सकता था, लेकिन शब्दोंका परिवर्तन इतना महत्त्वपूर्ण नहीं है कि उसकी वजहसे पत्र भेजनेमें देर की जाये। दो-तीन दिनके बीच प्रार्थनामें तीन-चार बार देरसे पहुँचनेके लिए तुम्हें न तो चिन्ता करनी चाहिए और न इसके कारण अपने प्रति मनमें वितृष्णा आने देनी चाहिए। फिर ऐसा भी है कि व्यक्ति अपने प्रति कुत्साका भाव रखते हुए भी गलत काम करता चला जाता है। मैंने ऐसे कई उदाहरण देखे हैं। इसलिए मेरा तो यह सुझाव है कि देर होनेके कारणका शान्तिसे विश्लेपण करो और उस कारणका निवारण करो। इन मामलोंमें तुमने स्वयं बताया है कि प्रार्थनाके लिए सही समयपर तुमने अपना काम क्यों नहीं छोड़ा। इसलिए अब तुम्हें सावधान रहना चाहिए और उचित समयपर काम छोड़ देना चाहिए, ताकि प्रार्थनाके स्थानपर शान्तिसे पहुँच सको। अपने हर मिनटपर बराबर नजर रखनेसे व्यक्ति ऐसी परेशानियोंसे बचा रहता है।

तुम्हारा १३ तारीखका लम्बा पत्र मेरी दृष्टिसे बहुत ज्यादा भावुकतापूर्ण और कवित्वमय है। तुममें कविताका आधिक्य है। और तुम्हारी भावुकताकी कोई सीमा नहीं है। मैं चाहता हूँ कि तुम इस सबको सच्ची सेवाके लिए अक्षय शक्तिमें बदल डालो। हम सबको बच्चों-जैसा बननेकी आकांक्षा करनी है। हम बच्चे नहीं बन सकते क्योंकि वह तो असम्भव है। लेकिन हम सब बच्चों-सरीखे बन सकते हैं। प्राप्त किये गये ज्ञानके बावजूद हम उनकी तरह सरल, निष्कपट, ऋजु और सहज बन सकते हैं। यहाँ 'सहज' शब्दका एक खास अर्थ है। हम जिन गुणोंको मूल्यवान मानें उनका प्रस्फुटन शीशेके उष्ण कमरोंमें होनेवाले कृत्रिम प्रस्फुटनकी तरह बनावटी नहीं होना चाहिए, बल्कि वे गुण हमारे लिए वैसे स्वाभाविक हों जैसेकि शायद बच्चोंके लिए शैतानी स्वाभाविक होती है। हमें उनकी शैतानी प्यारी लगती है, क्योंकि वह उनके लिए बिलकुल स्वाभाविक है। बड़े लोगोंमें इस शैतानीका रूप स्वभावतः अच्छे, संयमित, नम्र और प्रलोभनसे परे होना है।

मासिकधर्मकी कमीका तुम जो अर्थ गढ़ रही हो, उसके विरुद्ध मैं तुम्हें चेतावनी देना चाहता हूँ। मुझे आशंका है कि इस कमीका अर्थ तुममें किसी मानसिक स्वस्थताका अंकुरित होना नहीं है। तुम अभी यौन-भावनाओंसे मुक्त नहीं हो और जबतक तुम मनसा-वाचा-कर्मणा उनसे मुक्त नहीं हो, तबतक मासिकधर्मकी

अनियमितता या कमीको किसी-अन्दरूनी गड़बड़ीका ही लक्षण मानना चाहिए। मुझे लगता है कि साधारण रूपसे कहे तो उस स्थितितक पहुँचनेमे तुम्हें काफी समय लगेगा जो मासिकधर्मका प्रवाह समाप्त करनेके साथ-साथ पूर्ण स्वास्थ्यका लक्षण भी हो। हाँ, यह बात और है कि तुम, मैं और आश्रम इतने भाग्यशाली हों कि तुम एकाएक सहज शुचिताकी उस अपेक्षित स्थितितक जा पहुँचो। जब तुम वैसी स्थिति प्राप्त कर लोगी, तब तुम्हें फोड़े-फुंसी आदि नहीं होंगे और कोई दूसरा शारीरिक अथवा मानसिक कष्ट नहीं होगा। तुम उन गुणोंसे युक्त प्रसादपूर्ण व्यक्ति बन जाओगी जिनकी हम हर शाम प्रार्थनाके समय याचना करते हैं। मेरा अभिप्राय 'गीता' के द्वितीय अध्यायके अन्तिम श्लोकोंसे है; तुम उनका मनन करो।

दूधके उपचारको लेकर अपने मनको अशान्त न बनाओ। दवाके तौरपर उपचारकी दृष्टिसे उसमे भले ही गुण हो, किन्तु मैं जानता हूँ कि दस पौंड दूध एक अस्वाभाविक आहार है। अनेक लोग दूधमे उन गुणोंके होनेका दावा करते हैं। डॉ० मेहता, जो मेरा इलाज कर रहे हैं, कहते हैं कि यह उनका अनुभूत सत्य है। जो भी हो, फिलहाल मैंने उसे उपचारके रूपमे लेना स्थगित कर दिया है और हो सकता है कि यह उपचार बिलकुल ही छोड़ देना पड़े। तुम्हें मुझपर विश्वास रखना चाहिए कि मैं सावधान रहकर तथा पर्याप्त संयमके साथ व्यवहार करूँगा। यद्यपि मेरे स्वास्थ्यमे सुधार धीरे-धीरे हो रहा है, लेकिन बराबर हो रहा है। मैं अभी रोज ३-४ पौंड दूधकी अपनी सामान्य खुराक ले रहा हूँ और काफी मात्रामे फल लेता हूँ जिनमे सन्तरे, अनारका रस और अंगूर शामिल है। यह सब तुम्हारे और अमला दोनोंके लिए लिख रहा हूँ, क्योकि वह भी मेरी खुराकके बारेमे चिन्तित है।

मैं देखता हूँ कि तुम कश्मीरके बारेमे बहुत आश्वस्त हो। लेकिन मैं कहना चाहता हूँ कि वहाँकी जलवायु ऐसी नहीं है जो सभी तरहकी शारीरिक व मानसिक गठनको माफिक आ जाती हो। मैं स्वास्थ्य-लाभके लिए किसी भी हालतमे कश्मीर नहीं जा सकता। मुझे अपना स्वास्थ्य वहीं हासिल करना चाहिए जहाँ मेरा काम पड़ा है। यही मैंने पहले भी किया था और तब भी उपवासके बाद। मैं आश्रममें था और मित्रोंके कहनेके बावजूद आश्रमसे बाहर निकलनेको तैयार नहीं था। वही परमेश्वर जिसने २१ दिन मेरी देखभाल की, यदि चाहेगा तो पुनः स्वास्थ्य-लाभ करनेमे भी मेरी मदद करेगा और तुम्हारा, अमला तथा अन्य लोगोंका मेरे जल्दी स्वस्थ होनेमें सर्वोत्तम अंशदान यही हो सकता है कि सब अपना-अपना कर्त्तव्य जितनी अच्छी तरह हो सके पूरा करते रहें।

अपने अन्तिम पत्रमे तुमने अपने फोड़ोंके बारेमें कुछ नही लिखा और एस०को सामान्य वजन हासिल करनेके लिए दिये गये मेरे सुझावके बारेमें भी कुछ नहीं लिखा। उसे पहले-जितना वजन तो प्राप्त करना ही है, साथ ही उसे वजन, ऊँचाई और सामान्य तौरपर शारीरिक तथा मानसिक विकासमें वृद्धि भी करके दिखानी है।

मैं समझता हूँ कि इस पत्रमे तुम्हारे सब प्रश्नोंका उत्तर आ गया है।

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस०, एन० १९१०२) से।

२५६. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

२० जून, १९३३

प्रिय अमला,

तुम्हारा पत्र मिला।

देखता हूँ कि तुम मेरे बारेमें चिन्ता करती ही रहोगी। चूँकि मुझे नी० को उसके पत्रसे उठनेवाले कई मामलोंपर काफी विस्तारसे लिखना था, इसलिए मैंने उससे अपना पत्र — कम-से-कम उसका मेरे आहारसे सम्बन्धित अंश — तुम्हें भी दिखा देनेको कहा है।[1] मुझे खुशी है कि तुम्हारा भी सब काम ठीक चल रहा है। निश्चय ही यदि मैं देखूंगा कि तुम बराबर सादा और विवेकयुक्त जीवन बिता रही हो तो मैं तुम्हारा पागलपन भूल जाऊँगा।

स्नेह।

बापू

[पुनश्च :]

तुम्हारा पार-पत्र किसके पास है? कृपया मुझे मुख्य अंशकी एक नकल भेजो। तब मैं बताऊँगा कि क्या करना होगा।

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल कागजात; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय। (एस० एन० १९१०३) भी।

२५७. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

२० जून, १९३३

प्रिय सतीश बाबू,

मैं तुम्हें पत्र लिखनेकी सोचता रहा लेकिन लिख नहीं सका। अब तुम्हें अपनी गतिविधियोंके बारेमें, बंगलामें प्रकाशित 'हरिजन' के बारेमें, और जो-कुछ भी तुम जानते हो उस सबके बारेमें तथा तुम्हारा स्वास्थ्य कैसा चल रहा है, इसके बारेमें मुझे विस्तारसे लिखना चाहिए। मुझे अभी भी बिस्तरमें रहना पड़ता है। लेडी ठाकरसीने जो बड़ा कमरा मुझे दे रखा है, मुझे उसमें कुछ कदम घूमनेकी इजाजत मिल गई है। मैं लगभग ४ पौंड दूध और काफी मात्रामें सन्तरे, अनारका रस तथा अंगूर ले

१. देखिए पिछला शीर्षक।

रहा हूँ। यही मेरा मुख्य भोजन है। प्रगति धीमी तो है; लेकिन वह निश्चय ही बराबर हो रही है।

देवदास-लक्ष्मीके विवाहके कानूनी रजिस्ट्रेशनके सम्बन्धमे तुम्हारे सवालका जवाब तारसे दिया था।[1] जहाँतक हमारा सम्बन्ध है, धार्मिक बन्धन और धार्मिक रस्मको पूरी तरहसे कर लेना ही काफी था। लौकिक, सामाजिक तथा नागरिक परिणामोकी दृष्टिसे इस तरहके विवाहोमे, जिन्हे प्रतिलोम[2] विवाह कहा जाता है, धार्मिक रस्मका कोई महत्त्व नही होता और उन्हे कोई वैध नही मानता। मैं समझता हूँ कि सर हरिसिंह गौड़के कहनेपर, इन सब बातोको बचानेके लिए सिविल मैरेजका कानून पास किया गया था। उसके अनुसार एक हिन्दूको यह घोषित करना जरूरी नहीं होता कि वह हिन्दू नही है; बल्कि इसके विपरीत वह अपने-आपको हिन्दू घोषित कर सकता है, ऐसा वह करता भी है, और फिर भी इस तरहके विवाहके रजिस्ट्रेशनका हक माँगता है। फिर उस विवाहको कानूनकी नजरोमे भी मान्यता मिल जाती है। रजिस्ट्रेशनकी बात मैंने खुद नही सोची थी, लेकिन राजाजी ने ऐसे विवाहोमे माता-पिताका यह कर्त्तव्य माना कि ऐसी परिस्थितियोमे बच्चोको जितनी हो सके उतनी सुरक्षा मुहैया कर दी जाये, ताकि प्रतिकूल परिणामोसे बचा जा सके। मैं तुरन्त उनसे सहमत हो गया। यदि अब भी आपको इसमे कोई दोष दिखाई दे तो आप कृपया उसे मेरे ध्यानमे लानेमे संकोच न करे।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० २१४९२) से।

२५८. पत्र : जयकृष्ण पी० भणसालीको

२० जून, १९३३

चि० भणसाली,

कई दिन बाद अर्थात् महीनों बाद तुम्हारा पत्र मिला, इसलिए खुशी हुई; किन्तु पत्र पढ़कर दुःख भी हुआ। तुमने आत्मदर्शनके लिए जो उपाय सोचा है, उस रास्तेसे आत्मदर्शन नहीं हो सकता। ऐसा मेरा दृढ़ मत है। कोई होंठ सीकर मौन धारण कर ले तो उसे मौन नहीं मान सकते। जीभ काट डालनेसे भी मौन रह सकते हैं, किन्तु वह भी मौन नहीं है। बोलनेकी शक्ति होते हुए भी जो सहज मौनका पालन कर सके वही मौनधारी है। तुम जो तप कर रहे हो उसे गीताकारने तामसी तप कहा है और मैं उस कथनको सही मानता हूँ।

तुम कच्चा आटा खाते हो, यह भी चिकित्साशास्त्रके विरुद्ध है। धर्मशास्त्रने कहीं भी ऐसा करनेके लिए नहीं कहा है। तुम्हे कच्चा पदार्थ ही खाना हो तो

१. १४ जून, १९३३ को, देखिये पृ० २०५।

२. जहाँ वधुका वर्ण वरसे श्रेष्ठ हो।

फलादि खाओ, दूध-दही लो और यह खुराक पूर्ण होगी। मुझे लगता है कि तुम इस सब झंझटमें न पड़ो तो अच्छा। नीचे लिखे भजनका मनन करो।[1]

तुम आश्रममें या जहाँ अच्छा लगे शान्तचित्त होकर रहो और कोई सेवा करो। इस तरह यदि भाग्यमें होगा तो सहज भावसे आत्मदर्शन कर लोगे। यह तो तुम जानते ही होओगे कि मैंने तीन सप्ताह पहले २१ दिनोंका उपवास पूरा किया है। इसका एक विशेष कारण था। अभी बिस्तरपर तो रहना ही है, किन्तु शक्ति लौटती आ रही है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० २१४९१)से। हरिजनबन्धु, २५-६-१९३३ से भी।

२५९. पत्र : हेमप्रभा दासगुप्तको

पूना,
२० मई, १९३३

चि० हेमप्रभा,

तुम्हारा खत मिला था। कलसे ही कुछ पत्र लिखानेकी कुछ चेष्टाका फिर आरम्भ हुआ है। रामायणकी दस प्रति पहुँच गई हैं। मैं कुछ और शक्ति आनेपर पढ जाऊँगा। तुम्हारे स्वास्थ्यके बारेमें कुछ चिन्ता रहती है। लेकिन तुमको मैं क्या समझाऊँ? ईश्वरपर ही तुमने सब कुछ छोड रखा है। वह ही रक्षा करेगा। खादीका काम दिन प्रतिदिन आजकल कुछ कठिन बन रहा है। लेकिन अपनी मर्यादामें रहकर करनेसे कठिन काम भी आसान बन जाता है ऐसा मेरा अनुभव है और ईश्वर-भक्त अपनी मर्यादाके बाहर कभी नहीं जाते।

खादी प्रतिष्ठानके मूल उद्देशको कायम रखते हुए ही सौदेपुरको आश्रम बनानेकी चेष्टा हो सकती है। "श्रेयान् स्वधर्मो विगुण परधर्मात् स्वनुष्ठितात्"[2] ये श्लोक यहाँ विचारनीय है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १७०१) से।

१. कबीरका प्रसिद्ध भजन, 'साधो सहज समाध भली', जो यहाँ नहीं दिया गया है। देखिए खण्ड ४४, पृ० ४२६-२७, भजन संख्या ११८।

२. गीता, अध्याय ३, श्लोक ३५। देखिए खण्ड ३२, पृ० १७७ भी।

२६०. पत्र : मीराबहनको

पर्णकुटी, पूना,
२१ जून, १९३३

चि० मीरा,

तुम्हारा १८ तारीखका पत्र मेरे हाथमे आज सुबह आया।

जिसे दुग्ध-चिकित्सा कहा जाता है, उसे मैंने छोड दिया है। परन्तु मै अपने ही ढगसे ६ वजेसे प्रारम्भ करके ३ घटेके अन्तरसे ४ पौड दूध और रसदार फल (नारगियाँ, अगूर और अनारका रस) ले रहा हूँ। फिलहाल मेरे लिए इसी ढगके अधिक अनुकूल होनेकी सम्भावना है। मेरा वजन बढकर ९३¾ पौडतक पहुँच गया है। यह वृद्धि अच्छी है और मुझे रोज तीन-चार बार चन्द कदम टहल लेनेकी इजाजत भी मिल गई है। छह सप्ताहके बाद मैंने पहले-पहल टब-स्नान किया। इससे बड़ी ताजगी आई। तो देख लो, जहाँतक मेरे स्वास्थ्यका सम्बन्ध है, कोई चिन्ता की बात नही है। कथित दुग्ध-चिकित्सामे मेरी ऊँचाईके हिसाबसे मुझे बिना किसी कष्टके १२ पौड दूध रोज ले सकना चाहिए। यह एक खास तरीका है और बहुत लोगोके लिए बड़ा कारगर होता है। मेरे लिए भी अन्तमे इसके सफल होनेकी आशा रखी गई थी, परन्तु मै इसपर तर्क करनेमे फँसना नही चाहता था और इसलिए फिलहाल मैंने इसे छोड़ दिया है। तुम्हे यह जानकर आश्चर्य होगा कि काकासाहब यह इलाज करा रहे हैं। इस समय वे १० पौड दूध रोज ले रहे है और उन्हे १२ पौडतक पहुँचना है। उनका वजन १२० पौडतक हो गया है। ब्रजकृष्ण भी, जिन्हे तुम्हे मालूम है, वरसोसे हमेशा कब्ज रहता है, यही चिकित्सा करा रहे हैं। वह हर घटे १ पौडके हिसावसे विना किसी दिक्कतके १२ पौड दूध रोज ले लेते हैं। यह अच्छी तरह आजमाया हुआ तरीका है। इस प्रणालीमे मुख्य बात यह है कि जबतक दुग्ध-कल्प जारी रहे, तबतक बिस्तरमे लेटे रहना पड़ता है। दूध लेनेसे पहले रोज सुवह खूब व्यायाम किया जा सकता है।

यह कुछ निश्चित नही है कि देवदास भविष्यमे कहाँ रहेगा या क्या करेगा। इतना ही काफी है कि वह और लक्ष्मी दोनों बहुत खुश हैं और राजाजी भी, जो अपने बच्चोके लिए माता-पिता दोनो है, बहुत खुश है। वे उन्हे प्यार करते हैं और यदि वे किसी और काममे व्यस्त न हों तो उनमे निमग्न रहकर सन्तुष्ट रहेगे। इसके बाद प्रभुदासकी बारी है। ऐसा सम्भव है कि उसका विवाह एक लडकीसे हो जाये जो इस समय आश्रममे रह रही है। वह सयुक्त प्रान्तकी है। लेकिन अभी कुछ निश्चित नही है। रामदास साबरमती गया है और अपनी पत्नीके साथ जल्दी ही वर्धा जायेगा। वेरियरको एक-न-एक तकलीफ बनी ही रहती है। अब वह र्हनियाका

ऑपरेशन करानेकी तैयारीमें है। लम्बे अरसेसे उसे यह कष्ट है। वास्तवमें मुझे तो लगता है कि ऑपरेशन करानेमें काफी देर हो चुकी है। राधा अभीतक देवलालीमें ही अटकी है। वहाँ रुखीके दूसरा बेटा हुआ है। वह देवलालीमें अपना इलाज करवा रही है। केशू अब भी वहाँ रह रहा है। उसे क्या करना है, यह तय नहीं हुआ है। छोटालालका एक्जीमा अब ठीक है। बालकृष्ण अब भी वैसा ही कमजोर है जैसा पहले था। वह भी वर्धामें है। स्वास्थ्यके कारणोंसे शान्तिबहन यहाँ ओम[1] के साथ है। उसका स्वास्थ्य ठीक नहीं चल रहा। एक पुराने व्यापार-सम्बन्धी मामलेके सिलसिलेमें जमनालालजी अभी-अभी वर्धाके लिए रवाना हो गये हैं। कानकी उनकी तकलीफ अभी कुछ दबी है। लेकिन वह केवल दबी ही है। उसने उन्हें बहुत कमजोर कर दिया है। उन्हें शारीरिक व मानसिक थकान बडी जल्दी हो जाती है। लगता है, नी० ठीक राहपर आती जा रही है। इकन निश्चय ही काफी खुश है और जाहिरमें तो उनका स्वास्थ्य भी ठीक बना हुआ है। नी० के बारेमें ऐसा नहीं है। उसके फोडे-फुन्सियाँ हो रहे हैं। मैं समझता हूँ कि मैंने तुमको परिवारकी लगभग सारी खबरें सुना दी हैं। यह तो ठीक ही है कि मैं कई नाम और छोटी-मोटी अनेक तकलीफोंका उल्लेख करना भूल गया हूँ जो इस बडे परिवारमें चल रही हैं, लेकिन तुम्हें एक बानगी दे दी है जिससे परिस्थितिका अनुमान हो जाता है।

तुम्हारे अपने स्वास्थ्यका समाचार सुखद है। मैं चाहता हूँ और आशा करता हूँ कि तुम अब लगातार बिना रुकावटके प्रगति जारी रखोगी। रोजमर्राका कार्यक्रम पूरा करनेका आग्रह करके तुम अपने-आपपर ज्यादा बोझ मत डालो। घबराओ मत और बिना कठिनाई या बोझके जो-कुछ किया जा सके, करो। तब तुम बिलकुल ठीक रहोगी।[2]

बालक-बालिकाओंके नक्षत्र-विद्या सीखनेके बारेमें तुम जो कहती हो वह बिलकुल सही है।

क्या मैंने तुम्हें बताया था कि प्रभावती साथ है? पत्र लिखते समय वह मेरे पलगके पास खडी है।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२८१) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९७४७ से भी।

१. उमा अग्रवाल, जमनालाल बजाजकी पुत्री।
२. साधन-सूत्रमें आगेका अंश गांधीजी के स्वाक्षरोंमें है।

२६१. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

पर्णकुटी, पूना,
२२ जून, १९३३

प्रिय अमला,

तुम्हारे दो मूर्खतापूर्ण व्यर्थके पत्र मिले।

मुझे नही मालूम था कि तुम इतनी असतुलित, शक्की और अतिभावुक हो। किस बातसे तुमने ऐसा सोच लिया कि मै तुम्हे एक अजनबी मानता हूँ? या यह मान लिया कि तुम मेरे लिए बेटीसे कम कुछ हो? आजकल तुम अपने हस्ताक्षर करते समय अपनेको मेरा शिष्य लिखती हो। मेरा एक ही शिष्य है; वह बहुतोके बराबर है; वह शिष्य मै खुद हूँ। तुम क्यो समझती हो कि मै यह अतिरिक्त भार उठाऊँगा और अपना जीवन दुःखमय बनाऊँगा? बेटे-बेटियाँ और भाई-बहन बनानेमे मुझे खुशी होती है। इसलिए तुम या तो बेटी हो या कुछ नही; और शिष्या तो निश्चय ही नही हो। और यह कैसा शिष्य जो हर कदमपर गुरुपर सन्देह करे। क्या अब भी मेरे 'पागल' कहनेपर तुम्हे आश्चर्य हो रहा है? और तुम मेरे भोजनके बारेमे चिन्ता क्यों करती हो? क्या तुम मुझपर इतना विश्वास नही कर सकती और तुम्हे इस बातका भरोसा नही हो सकता कि मै अपने लिए कोई जोखिम नही उठाऊँगा। खैर, अब चूँकि मै अपने तरीकेसे दूध और फल ले रहा हूँ, शायद तुम चिन्ता करना छोड़ दोगी। हर हालतमे, मै अच्छा हो रहा हूँ, वजन बढ रहा है और ताकत भी आती जा रही है। क्या तुम भी मेरी तरह अच्छी होती जा रही हो?

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल कागजात; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय। एस० एन० १९१०५ से भी।

२६२. पत्र : नारणदास गांधीको

२५ जून, १९३३

चि० नारणदास,

तुम्हारे पत्र मिल गये हैं। केशु और राधा कल आये। राधा मेरे पास ठहरी और केशु व्रजकृष्णके पास। कल रातको केशुसे बात की। राधा आज व्रजकृष्णके साथ गई है। व्रजकृष्ण दिनशाजी के यहां इलाज करवा रहा है। वह भी यह इलाज करवाये या नहीं, इसका विचार कर रही है। केशु या राधा आश्रममें तो नहीं आयेंगे, यह स्पष्ट है। जमनालालजी उनसे देवलालीमें मिलकर तब वर्धा गये हैं।

शान्ता वर्धा चली गई होगी। प्रभुदास उससे मिले और तुम्हारी, काशी और रामदासकी राय जाननेके बाद तय करे।

राजभोजके बारेमें अपने अनुभव विस्तारसे लिखना। नी० के पत्र पढ़ लेने होंगे। रामजी का क्या हाल है?

कुसुमके ज्वरका क्या कारण हो सकता है? जमना अब ठीक होगी। पुरुषोत्तमका पोस्टकार्ड आया है। दिनशाके साथ बात कर उसे तार दूंगा। किसी प्रकारकी अड़चन होनेकी ज्यादा सम्भावना तो नहीं है।

वहां बरसातका क्या हाल है?

बापू

[पुनश्च]

लगता है शक्ति दिन-प्रतिदिन बढ़ रही है। वजन भी ९५ तक पहुंच गया है। यह तो अच्छा ही माना जायेगा।

भणसाली और चैतन्यके पत्रोंके बारेमें तुम सबको मालूम ही है। उनका जवाब[1] 'हरिजनबन्धु' में देखना।

इसके साथ, नी०, अमला, आनन्दी, रमा, अमीना, कुसुम, जमना, अमतुस्सलाम, चम्पा और रामदासके पत्र भेज रहा हूं (अंतिम अलग लिफाफेमें सील किया है)।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३८६ से भी, सौजन्य . नारणदास गांधी।

१. जे० पी० भणसालीको; देखिए पृ० २२२-३।

२६३. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

२६ जून, १९३३

चि० अमला,

माँ को जो कष्ट पहुँचा है उसकी पूर्ति करनेके दो तरीके हैं। सबसे स्वाभाविक तरीका (यानी उनके पास लौटना) तुम्हे स्वीकार नही है। दूसरा है, उस सेवा-कार्यमे अपनेको खपा देना जो तुमने चुना है। उस हालतमे हर प्रौढ महिला तुम्हारे लिए माँ हो जायेगी। तुम्हे उनको पत्र बराबर लिखते रहना चाहिए और अपने कामका विवरण देते रहना चाहिए। इससे उन्हे राहत मिलेगी।

जो पोशाक तुम्हे सबसे अच्छी लगती हो और आसानीसे धुल सकती हो, वही पहनो। इसका मतलब है मेरे जैसा . .[1], एक पेटीकोट जो टखनोसे ३ इच ऊपर रहे और एक ढीली घुटनोतककी कुरती। मीराने मजदूरी करनेवाली औरतो-जैसी पोशाक चुनी है साथमें . . .[2]।

तुम्हे उसके बाहरी रूपकी नकल करनेकी जरूरत नही है। यदि कर सकती हो तो उसकी आत्माके आन्तरिक सौन्दर्यकी नकल करो। लेकिन वह बात भी क्यो सोचो। तुम्हारे सामने आश्रमका आदर्श है। अपनी क्षमता-भर उस आदर्शको पानेकी कोशिश करो तो वह तुम्हे प्राप्त हो जायेगा। और अपनी शक्तिकी सीमासे बाहर जानेकी कोशिश न करो।

कृपया मेरे स्वास्थ्यके बारेमें चिन्ता न करो। परमेश्वरको जबतक इस ससारमे मेरी सेवाओकी जरूरत है, वह उसकी चिन्ता करेगा।

स्नेह।

बापू

[अग्रेजीसे]

स्पीगल कागजात; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय।

१ और २. यहाँ पढ़ा नहीं जा सकता।

२६४. पत्र : डॉ० सैयद महमूदको

पर्णकुटी, पूना,
२६ जून, १९३३

प्रिय डॉ० महमूद,

आप चाहे जहाँ जाये, पारिवारिक कष्ट तो साथ लगे ही रहते है। देखता हूँ, इन दिनो बेगम महमूद शायद मियादी बुखारसे पीडित है और आप उन्हे दिल्ली साथ ले गये है। बडी जोखिमका काम था; लेकिन उन्हे डॉ० अन्सारीकी देखभालमे रखा जा सके इस दृष्टिसे मै समझता हूँ कि ऐसा करना सही था। मै आशा करता हूँ कि उनके स्वास्थ्यमे बराबर सुधार हो रहा होगा।

देवदासने मुझे वे उपहार, जो आप लाये थे, दिखाये। उन उपहारोके पीछे आपकी तथा जालभाई[1] की प्यारकी भावनाओकी यद्यपि मैने कद्र की, किन्तु मुझे लगा कि रेशमकी चीजोको स्वीकार नही करना चाहिए क्योकि पिछले निश्चय और आदतके अनुसार लक्ष्मीको यथासम्भव रेशमकी चीजे नही पहननी चाहिए। यह राय दे चुकनेके बाद मैने निर्णय लक्ष्मी, राजाजी और देवदासपर छोड दिया। जहाँतक रेशमकी चीजे इस्तेमाल करनेकी बात थी, उन सभीको मेरे-जैसा ही लगा, लेकिन मित्रो द्वारा स्नेहपूर्वक भेजे गये उपहारोको वापस करनेमे उन्हे कुछ सकोच हुआ। लेकिन मैने कहा कि अगर सब लोग इस बातसे सहमत हो कि इस तरहके उपहारोको लौटा देना चाहिए तो लौटानेका काम मै कर दूंगा। श्रीमती नायडूको जब यह सब मालूम हुआ, तो उन्होने कहा कि यदि आपका दिया हुआ उपहार लक्ष्मीके लिए स्वीकार न किया जाये तो वह उन्हे दे दिया जाये। इसलिए मैने आपकी दी हुई साडी उन्हे दे दी। जालभाईकी साडी उन्हे लौटाई जा रही है। मथुरादास हाल ही मे एक या दो दिनके लिए बम्बई जा रहा है, तब वह उसे ले जायेगा। लेकिन थैला और उसमे की अन्य चीजे रख ली गई है। आशा है कि आपको यह सन्तोष होगा कि वे चीजे देवदास और लक्ष्मीको आपके स्नेहकी बराबर याद दिलाती रहेगी। तीसरे मित्र जिन्होने रेशमकी साडियाँ भेजी, घनश्यामदास बिडला थे। मैने उनके बारेमे उनसे बात की। उन्होने हमारी कठिनाई समझी और खुशीसे साडियाँ वापस ले ली। मै इसके निष्कर्षकी ओर इशारा करना चाहूँगा। अगली बार मित्रोको उपहार देनेसे पहले आप देख ले कि वे लोग उन उपहारोको लेकर उनका इस्तेमाल कर सकते है या नही। हम लोग रोमाँ रोलाँके निवासपर गये थे। उन्होने सोचा कि हममे से हरेकको उस अवसरकी यादमे कुछ-न-कुछ दिया जाये। और ऐसा लगता

1. दादाभाई नौरोजीके पौत्र।

है कि मुझे क्या दिया जाये, इसपर उन्होंने अपनी बहनसे रात-भर विचार-विमर्श किया। किताब या ऐसी ही कोई अन्य उपयोगी चीजपर उनका ध्यान नही गया। इसलिए उन्होंने एक बडी मामूली मगर बडी ही कलात्मक डिबिया मुझे भेजी। यह डिबिया शायद सुँघनी रखनेकी थी। मेरे लिए तो यह एक अमूल्य निधि है। इसलिए यह विद्यापीठ सग्रहालयमे रखी जायेगी। निश्चय ही यह छोटी-सी डिबिया स्वीकार करनेमे सकोचकी कोई बात नही थी। मैंने इस सुन्दर घटनाका उल्लेख इसलिए किया कि यहाँ उसका उल्लेख उपयुक्त है और मै जानता हूँ कि इससे आपको खुशी होगी, साथ ही मै जो-कुछ कहना चाहता हूँ उसे भी इससे बल मिलेगा।

मैं नही जानता कि आप कब कहाँ होंगे। यदि आप इस तरफ जल्दी ही न आ सके, तो मै चाहूँगा कि आप राजनैतिक परिस्थितिपर अपने विचार मुझे लिख भेजे। आप मुझे क्या काम देना चाहेंगे? आम काग्रेसी जनोको क्या करना चाहिए? शेरवानी कहाँ है? यदि यह पत्र आपको दिल्लीमे मिल जाये तो मै चाहूँगा कि कम-से-कम पत्रका यह अश आप डॉ० अन्सारीको दिखा दे और यदि वे अगले महीनेके शुरूमे ही न मिल सके, तो मै चाहूँगा कि वे भी मुझे अपनी राय लिख भेजे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

डा० सैयद महमूद
मार्फत – डॉ० मु० अ० अन्सारी
१ दरियागज, दिल्ली

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५०८९) से। एस० एन० १९१०६ से भी।

२६५. पत्र : मोतीलाल रायको

२६ जून, १९३३

प्रिय मोतीबाबू,

मै आपके पत्रका जवाब इससे पहले ही न दे पाया, आप इसके लिए मुझे क्षमा करें। बात यह है कि मैं अभी बिस्तरसे लगा हूँ और मुझमे बोलकर पत्र लिखवानेकी शक्ति भी सीमित ही है। मेरा अधिकाश समय शरीरकी जरूरतोपर ध्यान देनेमे बीत जाता है।

जैसाकि आप 'हरिजन' के ताजा अंक[1] से देखेंगे, मन्दिर-प्रवेशपर लिखे आपके पत्रका एक अश तो प्रकाशित किया ही जा चुका है।[2] केवल प्रमाणित किये जा

१. २४ जून, १९३३ के।

२. "हमें अपने मित्रोंसे बचायें", शीर्षकसे।

सकनेवाले वक्तव्य ही प्रकाशित हो, इस वातकी अतिरिक्त सावधानी रखी गई है, फिर भी गलतियाँ हो जाती है। ईश्वरको धन्यवाद है कि आपके-जैसे जागरूक लोग है जो 'हरिजन' के स्तम्भोमे कोई गलत वात छप जानेपर उधर ध्यान दिलाते रहते है। आदमीके कामोमे गलतीकी गुजाइश न रहे, ऐसा पक्का प्रवन्ध सम्भव नही है और त्रुटि हो जानेके डरसे कामकी घटनाओकी रिपोर्ट ही प्रकाशित न की जाये, यह भी वडी कठिन वात है। इसलिए त्रुटिशील हम लोग इतना ही कर सकते है कि अपने सव वक्तव्यो, कार्यों और विचारोमे जरूरतसे ज्यादा सावधान रहे और जव भी गलती हो जाये, तभी अपना कदम वापस लेने और भूल स्वीकार करनेको तत्पर रहे।

मेरी हालत ठीक होते ही मै 'हरिजन' मे उपवासपर लिखनेकी वात सोच रहा हूँ।[1] इसलिए मै उसके वारेमे यहाँ कुछ नही कह रहा हूँ। मुझे खुशी है कि आपका काम ठीक रूपमे आता जा रहा है। जिस डॉक्टरके वारेमे आपको लिखा था, सयोगवश वह अभी यही है। उसका पर्याप्त अनुभव हो चुकनेपर मै आपको तत्काल लिखूंगा। आपको विना अधिक देर किये अपनी आँखकी तकलीफपर ध्यान देना चाहिए।

आपका,
बापू

श्रीयुत मोतीलाल राय
प्रवर्त्तक सघ, चन्द्रनगर

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११०४५) से।

२६६. पत्र : एम० आसफ अलीको[2]

२६ जून, १९३३

प्रिय आसफ अली,

आपका लम्वा पत्र मिला। उसके लिए धन्यवाद। उसे समाचारपत्रोमे भेज देनेकी वातका मै विल्कुल वुरा नही मानता। मुझे वह पत्र भेजनेका आपको पूरा-पूरा हक था और जिस स्पष्टतासे आपने अपने विचार व्यक्त किये है, उसकी मै कद्र करता हूँ।

१. देखिए "उपवासके वारेमें", पृ० २६६।

२. यह ४-७-१९३३ के हिन्दू में प्रकाशित हुआ था और गांधीजी की ओरसे श्री आसफ अलीके उस खुले पत्रका जवाब था जिसमें सत्याग्रहको स्थगित करने और कांग्रेसकी नीतिमें बुनियादी परिवर्तन करनेकी मॉंग की गई थी।

मैं मौजूदा हालतपर अभी कुछ कह नही सकता क्योकि मैं अभीतक विस्तरसे लगा हूँ और स्थितिका ठीकसे विश्लेषण नही कर पाया हूँ। फिर भी मैं चाहता हूँ कि आप मेरी सैद्धान्तिक कठिनाई समझे, वह मेरी सीमा भी है। अहिंसा मेरे लिए केवल प्रयोग ही नही है। वह मेरे जीवनका अग है। सत्याग्रहका समूचा सिद्धान्त, असहयोग, सविनय अवज्ञा और इसी तरहकी अन्य चीजे इस सैद्धान्तिक मान्यताकी निष्कृति है कि अहिंसा मानव-जीवनका नियम है। मेरे लिए वह साधन भी है और साध्य भी। और अब तो मेरा यह विश्वास पहलेसे भी ज्यादा दृढ हो गया है कि भारतके सामने जो जटिल स्थिति है, उसमे सच्ची स्वतन्त्रता पानेका इसके अलावा दूसरा कोई उपाय नही है। इसलिए मौजूदा स्थितिपर विचार करते समय मुझे हर चीजकी जाँच अहिंसाकी दृष्टिसे करनी होगी।

हृदयसे आपका,

एम० आसफ अली महोदय, बार-एट-लॉ
कूचा चेलान, दिल्ली

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १९१०८) से।

२६७. पत्र : जमनालाल बजाजको

२६ जून, १९३३

चि० जमनालाल,

यदि तुम केशुको काबूमे कर सको तो उसमे मेरा आशीर्वाद तो है ही। मेरी एक चिन्ता भी दूर हो जायेगी। वह आजकल यही है। राधा भी है। इस बारेमे मथुरादास लिखेगा। कमलाकी खातिर तुम्हे यहाँ आनेकी कोई जरूरत नही होनी चाहिए। उपवासकी कड़ीके बारेमे तुम्हें विचार ही नहीं करना है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९१६) से।

२६८. पत्र : रमाबहन जोशीको

२६ जून, १९३३

चि० रमा,

क्या मुझे पत्र न लिखनेकी सौगन्ध खाई है? जिसका शरीर और मन ताजा हो, स्वस्थ हो, वह ऐसा करे तो मुझे बिल्कुल बुरा न लगेगा। लेकिन क्या तुम्हारे बारेमें यह सही है?

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५३५३) से।

२६९. पत्र : अमीना गु० कुरैशीको

२६ जून, १९३३

चि० अमीना,

क्या तू मेरे पत्रका जवाब भी नहीं देगी? समय-समयपर तेरी याद आती रहती है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६६७) से। सी० डब्ल्यू० ४३१२ से भी, सौजन्य हमीद गु० कुरैशी।

२७०. पत्र : जमनाबहन गांधीको

२६ जून, १९३३

चि० जमना,

फिर कैसे बीमार पड गई?

मौन समाप्त होनेके बाद दिनशाजी से पुरुषोत्तमके विषयमें बात करूँगा और बादमें तुम्हें तार[1] दूंगा। उसके बारेमें मुझे याद है।

बापू

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ८८३) से, सौजन्य : नारणदास गाधी।

१. गांधीजी ने किन्तु जमनाबहन गांधीके श्वसुर खुशालचन्द गाधीको तार दिया था; देखिए पृ० २३६।

२७१. पत्र : अमतुस्सलामको

२६ जून, १९३३

बेटी अमतुल सलाम,

जो मुझे हमेशा लिखती थी वह लडकी अब बिलकुल लिखती ही नही। यह कैसी वात! तुमको मैंने एक खत लिखा था वह मिला कि नही? सेहतके खबर लिखो।

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० २८६) से।

२७२. तार : नारणदास गांधीको

२८ जून, १९३३

नारणदास गाधी
साबरमती आश्रम

सि० के बारेमे कानूगासे परामर्श करो और लिखो।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१५००) से।

२७३. तार : जमनालाल बजाजको

२८ जून, १९३३

जमनालाल बजाज
वर्धा

ज्ञानदेवीने दृढतापूर्ण पत्र लिखा है कि उसे प्रभुदाससे विवाहके लिए वाध्य न किया जाये। आप हर मूल्यपर उसकी स्वतन्त्रताकी रक्षा करेंगे। उसे पत्र भेज रहा हूँ।[1]

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१५०१) से।

१. देखिए पृ० २१४ और २२४।

२७४. पत्र : बलीबहन एम० अडलजाको

२८ जून, १९३३

चि० वली,

मनुडीके बारेमे तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारी जवान या तुम्हारी कलमका मुकाबला कौन कर सकता है। तुम्हे तिलका ताड बनाना अच्छी तरह आता है। तुम्हे मालूम नही है कि मैंने तो सबको आनेसे रोका है। नीमू[1] को भी मना किया है। मेरे मना करनेपर भी जो नही रुक पाते, वे आ जाते है। बुआ[2] को भी मना किया है। रामी आने लायक नही है। उसके पास पैसा कहाँ है। कुँवरजी का खर्च बडी मुश्किलसे चलता है। हाँ, तुम्हारे पास अखण्ड खजाना है और तुम उसे बच्चोपर लुटाना जानती हो। किन्तु मेरी सलाह मानो तो मेरे पास आनेका मोह खुद भी छोड दो और रामीका भी छुडा दो। मै जानता हूँ तुम्हे मुझसे स्नेह है। इस स्नेहका उपयोग तुम मेरे काममे करो तो वह मुझसे मिलनेसे ज्यादा अच्छा है। तुमने जो लिखा है वह सच ही है। मेरे लिए जिस तरह रामदास और देवदास है, उसी तरह तुम बहने भी हो। तुम्हे बिना पूछे भागकर मेरे पास आनेका अधिकार जरूर है। इसी अधिकारके आधारपर मै तुम्हे सयमका पालन करनेकी सलाह दे सकता हूँ। न हो पाये तो आ सकती हो। मैंने रामदासको भी यही लिखा था। कमु[3] का पत्र मेरे पास पडा है। उसे अलग पत्र नही लिखता। अभी पूरी शक्ति नही आई। कमु ठीक होगी?

हरिलालका पत्र इसके साथ है। उसकी अभी तो कोई आशा नही है। मनुका विवाह अभी नही हो सकता। मनु बिलकुल बच्ची है। उसमें घर चलानेकी तनिक भी क्षमता नही है।

मेरी समझमे आजकल हरिलाल यहाँ नही है। उस ओर होना चाहिए।

मुझे लिखती रहना।

मनुका वजन बढ रहा है। जबतक उसे ठीक लगे तबतक यही रहने देना। अब तो मुझे भी यहाँ बहुत दिन नही बिताने है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ५०५४) से, सौजन्य : सुरेन्द्र मशरूवाला।

१. निर्मला, रामदास गांधीकी पत्नी।
२. सरोजिनी नायडू।
३. कमला पटेल।

२७५. तार : खुशालचन्द गांधीको

२९ जून, १९३३

खुशालचन्द गांधी
राजकोट

पुरुषोत्तमके लिए प्रवन्ध कर लिया। उसे भेजे। मैं ठीक हूँ।

मोहनदास

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१५०३) से।

२७६. तार : फ्रांसिस जे० मैककोनेलको

विशप मैककोनेल
होटल मोरिसन, शिकागो

२९ जून, १९३३

धन्यवाद। खेद है शरीक नहीं हो सकता[1]।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० २१५०४) से।

२७७. पत्र : मीराबहनको

२९ जून, १९३३

चि० मीरा,

गुरुवारकी सुवह है और ५.३० वजे हैं। तुम्हारा पत्र मेरे सामने है।

यह सोचकर मुझे खुशी होती है कि तुम फिर अच्छी हो गई हो और दिनो-दिन तुममें शक्ति आ रही है। हमें सभी ऋतुओंमें स्वस्थ बने रहने योग्य शक्ति प्राप्त कर लेनी चाहिए। मैं जानता हूँ कि यह कठिन काम है, परन्तु यह इन्सानके

१. सी० एफ० वेल्सके २८ जून, १९३३ के पत्र (एस० एन० २१५०२) से ज्ञात होता है कि गांधीजी को शिकागोमें सितम्बर, १९३३ में होनेवाली 'पार्लियामेंट ऑफ रिलीजन्स' में आमन्त्रित किया गया था और उनका यह तार उसीके सम्बन्धमें था।

बूतेसे बाहरकी बात नहीं है। इसमें मनका बहुत हाथ होता है। अगर हम बाह्य बातोंके प्रति 'गीता'के छठे अध्यायके अनुसार पूरी तरह अनासक्त हो सकें, तो यह स्थिति प्राप्त हो सकती है। सम्प्रति यह हमारे बूतेके बाहर दिखाई देती हो, तो इसमे घबरानेकी आवश्यकता नहीं है। गीताकार हमें कोशिश करनेके लिए कहता है और अपने विपुल अनुभवसे बताता है कि सच्चा प्रयत्न असफल कभी नहीं होता। देर लग सकती है, परन्तु सफलता निश्चित है।

हाँ, उपवासके दिनोंमें मैंने नमक नहीं लिया। यह तो 'रपट पड़ेकी हरगंगा' थी। मैं नमक ले ही नहीं सकता था। मुझे अरुचि हो गई थी और इस कारण इसको लेनेकी मैंने कोशिश नहीं की और उसकी वैसी जरूरत भी नहीं थी जैसीकि सोडेकी। सोडा तो इसलिए मैंने ज्यों-त्यों करके लिया ही।

कल मेरा वजन ९७½ था। कल कुल मिलाकर तीन बारमें ८८ मिनट घूमा तो भी थकान नहीं मालूम हुई। इसलिए यह प्रगति पहलेसे बहुत अच्छी है। थोड़ी बातचीत करनेमें भी कठिनाई नहीं होती।

राधा और केशु अभी मेरे पास हैं। राधा पहलेसे कुछ बेहतर है। वह आज देवलाली वापस जा रही है। केशु कुछ दिन मेरे साथ रहेगा ताकि पूरी बातचीत हो सके।

बेचारा प्रभुदास! प्रस्तावित नाता टूट गया है। इसलिए और आगे खोज होनी है।[1]

देवदास और लक्ष्मी और अपनी विधवा बेटीके[2] साथ राजाजी व उनका बेटा अब भी यहीं हैं और कुछ समयतक और रहनेवाले हैं।

'महाभारत' पढ़नेके बारेमें तुम्हें सभी व्यक्तियोंके नाम और उनका संक्षिप्त इतिहास और उनका एक-दूसरेसे सम्बन्ध लिख लेना चाहिए और वर्णक्रमानुसार ऐसी तालिका बना लेनी चाहिए जिससे अपनी नोटबुकसे किसी भी नामका परिचय तुरन्त पा सको। उसे तैयार कर लेनेसे तुम्हें भ्रममें नहीं रहना पड़ेगा और यदि वह सूची ठीकसे तैयार हो सकी तो दूसरोंके लिए भी बड़ी उपयोगी होगी।

तुम्हारा यह कहना बिलकुल ठीक है कि हिन्दी-अनुवाद अंग्रेजी-अनुवादसे, चाहे वह कितना ही अच्छा हो, पढ़नेमें बेहतर होता है। यह स्वाभाविक है, क्योंकि संस्कृत हिन्दीसे सम्बद्ध है।

प्रभावती मेरे पास है और तुम्हें प्यार भेजती है। राधा आज देवलालीके लिए रवाना हो गई है।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२८२) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९७४८ से भी।

१. देखिए "तार: जमनालाल बजाजको", २८-६-१९३३।
२. नामगिरि वरदाचारी।

२७८. तार : प्रफुल्ल घोषको

३० जून, १९३३

प्रफुल्ल घोष
३९ क्रीक रोड, कलकत्ता

किसी भी दिन आइये स्वागत है।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१५०५) से।

२७९. तार : नेवन्दरामको

नेवन्दराम
सीरूका चौक, सक्खर

३० जून, १९३३

तुमसे उपवास न करनेका आग्रह करता हूँ[१]।

गांधी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१५०६) से।

२८०. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

पर्णकुटी, पूना,
३० जून, १९३३

प्रिय अमला,

तुम्हारे दादीकी तरह सलाह देनेके बावजूद, मुझे अपने भोजनका वही क्रम जारी रखना है, जो मैंने अपनाया है। अधिकाश दादियाँ जब सलाह देती हैं, तो बिना माँगे सलाह देनेका अपना काम शुरू करनेसे पहले कम-से-कम वे तथ्योंकी जानकारी तो ठीकसे कर लेती हैं। लेकिन तुम विचित्र दादी हो। तुम अपने प्रवचन इस बातकी परवाह किये बिना शुरू कर देती हो कि वे तथ्योंपर आधारित

१. हरिजनोंको मन्दिर-प्रवेश दिलानेके लिए; देखिए पृ० २०९।

है या प्यारपर। फिर तुम्हारा साधिकार यह 'यूरोपमे हम लोग' कहना भी मजेदार है। दुर्भाग्यसे यूरोपके लिए जो-कुछ ठीक है, हो सकता है वह हर हालतमे भारतके लिए ठीक न हो। और क्या तुम यह नही देख पाती कि 'यूरोपमे हम लोग' का अर्थ केवल तुम्हारे-जैसे कुछ सनकी लोग ही होते है? सच्चे 'यूरोपके हम लोग' जीवित शुक्तियो, झिंगा मछली, आखेटमे मारे हुए बडे जानवरो, 'कॉलिंग' पनीर, उत्तेजक शैम्पेन और तेज बियरमे विश्वास करते हैं। तुमने बात गाजरके रससे शुरू की है। आशा है कि तुम बात 'पोर्ट वाइन' तक नही ले जाओगी। रस तो दोनो ही हैं, लेकिन दोनोमे थोडा अन्तर है। भगवान न करे कि तुम कभी प्राकृतिक चिकित्सावाली कुमारी बन जाओ। इतना ही बहुत काफी और बहुत अच्छा होगा कि तुम ठीकसे पूरी हरिजन-सेविका बन जाओ। यदि तुम वह बन जाओ तो प्राकृतिक चिकित्सा अपने-आप चलती रहेगी।

क्या तुम जानती हो कि तुम्हे हिन्दी-अक्षर अभी ठीकसे बनाने नही आते। मै आशा करता हूँ कि तुम खुद जिस ढँगसे पढ रही हो उस ढगसे अपने शिष्योको नही पढाती होगी। तुम्हे दोषपूर्ण अक्षरोसे सन्तोष नही कर लेना चाहिए। क्या तुम जानती हो कि तुम्हारा 'क' 'फ' की तरह और 'र' सख्यासूचक '२' की तरह और 'ट' 'ढ' की तरह होता है? शायद ही कोई ऐसा अक्षर होगा जिसे बिलकुल ठीक लिखा गया कह सकूँ। शुरू-शुरूमें मै आलोचनात्मक नही होना चाहता था। लेकिन जब तुमने पहले-पहल हिन्दीमे अक्षर लिखने सीखे तबसे अभीतक कुछ सुधार नही हुआ है। तुम्हे इतना तो कर लेना चाहिए कि जो अक्षर तुम हर पत्रमे उतारती हो उन्हे उनके सही रूप समझनेके बाद उतारो। यह काम अपने बेकारके भारी वस्त्रोको साफ करने जितना भारी नही है। वस्त्रोका वजन तो खुद तुम्हारा बढाया हुआ है, लेकिन वह थोडा-बहुत क्षम्य है। गलत अक्षर लिखना तुम्हे सर्वथा अक्षम्य मानना चाहिए।

मै देखता हूँ कि तुम्हारा पारपत्र नकलके अनुसार १५ मार्च, १९३५ को समाप्त हो जायेगा। यदि यह ठीक है और यदि उसकी अवधि बढानेकी जरूरत है तो मैं समझता हूँ कि यह काम जर्मन वाणिज्य दूतको करना है। यदि तुम यह नही जानती तो पूछताछ करनी होगी।

[अग्रेजीसे]

- स्पीगल कागजात; सौजन्य . नेहरू स्मारक सग्रहालय और पुस्तकालय। एस० एन० १९१०९ से भी।

२८१. पत्र : नी० को

३० जून, १९३३

नी०,

तुम्हारे पत्र सामने है। मैं आखिरी पत्रका जवाब पहले दे रहा हूँ।

तुम भयानक लेकिन एक अद्‌भुत परीक्षामें से गुजर रही हो। आशा है कि भगवान तुम्हें इसे सह सकनेकी शक्ति देगा। यदि तुम केवल इतना समझ जाओ कि हमारा परिवार बहुत गरीब परिवार है और हम गरीबीके आदर्शसे बहुत दूर हैं तो तुम देखोगी कि सि० की बीमारी गरीब लोगोंके जीवनमें घटनेवाली साधारण बात है; और तब उसका बोझ उठाना तुम्हें आसान हो जायेगा। तुम्हें एक डॉक्टर सुलभ है। सचमुचके गरीबोंको डॉक्टर नहीं मिलता। वे तो यह भी नहीं जानते कि डॉक्टर कैसा हो सकता है। उन्हें तो देहातके बिल्कुल अयोग्य वैद्यसे ही सन्तोष करना पड़ता है। जितना-कुछ वह वैद्य कर दे उतना ही बहुत है। बहुधा वैद्योंकी स्वार्थी वृत्तिके कारण भी उन्हें कोई ठीक मदद नहीं मिल पाती। इसलिए सि० को आश्रममें जितनी राहत दी जा सकती है, तुम्हें उसीसे सन्तोष करना होगा। तुम आश्रमके उन थोड़े-से लाड़-प्यारमें बिगड़े लोगोंसे अपनी तुलना न करो जो तुम्हारी सूक्ष्म दृष्टिसे बच नहीं पाये होंगे। लेकिन जब यह जानकर कि तुम और लाड़-प्यारमें बिगड़े हुए लोगोंमें से नहीं हो, तुम्हें खीझ और आक्रोश हो, तो इस बातको याद कर लेना कि जिसे तुमने अपना पिता बना लिया है वह लाड़ने बिगड़े आश्रम-वासियोंमें सबसे बढ़कर है। यदि तुम मेरा लाड़में बिगड़ना बर्दाश्त कर सकती हो, तो अन्य लोगोंका लाड़में बिगड़ना भी बर्दाश्त कर सकोगी। और शायद तब तुम यह भी समझ जाओगी कि वे यदि बिगड़े हुए हैं तो क्यों बिगड़े हुए हैं; और फिर यह भी जान जाओगी कि अन्य लोगोंकी तुलनामें तो तुम भी शायद लाड़ने बिगड़े लोगोंमें गिनी जाओगी, क्योंकि लाड़-प्यारके कारण बिगड़नेके भी तो अलग-अलग दर्जे हैं। जो भी हो, मैं चाहता हूँ कि तुम खुश रहो, शान्त रहो और सि० की बीमारी और अपने फोड़ोंके बावजूद भी सन्तुष्ट रहो।

डॉक्टरोंपर अविश्वासके मामलेमें तुम्हारी और मेरी दोनोंकी एक ही दशा है। लेकिन यह अविश्वास एक सीमातक ही होना चाहिए और इसे विवेकपर आधारित होना चाहिए। जो डॉक्टर मेरी देखभाल कर रहे हैं, उनके प्रति तुम सरासर अन्याय कर रही हो। उन्होंने बड़ी सावधानी रखी है, ईमानदारीसे काम किया है और मेरी मदद करते रहे हैं। जैसाकि तुम सोचती हो, उन्होंने सन्तरे बन्द नहीं किये हैं। उनका कथन प्राकृतिक चिकित्साकी नवीनतम पद्धतिके अनुरूप है। वे जानते हैं कि मैं उनका कोई नीमहकीमी उपचार स्वीकार करनेवाला नहीं हूँ। इसलिए वे

ईमानदारीसे मेरी सनक के अनुकूल कुछ करनेका प्रयत्न कर रहे हैं। मैं तुम्हें बता सकता हूँ कि उन्होंने मुझे क्या हिदायतें दी हैं, मैं सचमुच क्या कर रहा हूँ और तब शायद तुम्हें लगेगा कि उन्होंने ऐसा कुछ नहीं कहा या ऐसा कुछ नहीं किया जो प्राकृतिक चिकित्साके नियमोंके विरुद्ध पड़ता हो। आश्रममें डॉक्टरकी मौजूदगीसे सि०के बारेमें मैं इतना तो जानना ही चाहता हूँ कि सि०को शिकायत क्या है और उसका वजन क्यों घट गया है। वहाँका डॉक्टर आसानीसे कोई दवा नहीं लिखेगा, फिर भी वह सामान्य उपाय बतायेगा और इसके लिए मुझे और आश्रमवासियोंको उसका कृतज्ञ होना चाहिए। उसके बाद हम उसकी सलाह मानें या न मानें, लेकिन बालककी बीमारीका ठीक-ठीक निदान तो हर हालतमें जरूरी है।

जहाँतक तुम्हारे फोड़ोंका सवाल है, तुमने यह ठीक किया कि फिलहाल दूध तक छोड़ दिया। रसदार फल अधिक मात्रामें लो और गर्म पानी, नीबू और नमक या सिर्फ गर्म पानी, नीबू तथा गुड़ या शहद लो। यदि गुड़ लो तो पानी छान लेना चाहिए। सबसे अच्छा तो यह होगा कि उसे ठंडे पानीमें घोल लो और फिर गुड़का छना हुआ पानी स्टोवपर रख दो।

यह भी ठीक है कि तुमने पत्रमें अपने उग्र स्वभावके कुछ दृष्टान्तोंका उल्लेख किया है। मैंने उस स्वभावको ताड़ लिया था और इसलिए तुम्हारे पत्रसे मुझे कोई अचम्भा नहीं हुआ। लेकिन तुम एकाएक कोई साहसिक प्रयत्न करके उस हिंसासे छुटकारा नहीं पा सकती, न तुम्हें अपना क्रोध मि० पर उतारना चाहिए। किसी चीजको खाने-न-खानेके बारेमें सि० पर कोई दबाव मत डालो। आखिरकार जो चीजें वह खाता है वे उसे अच्छी लगनी चाहिए और याद रखो कि हम सब अधिकांशत: अपने माता-पिताके ही अनुरूप होते हैं। तुम्हें मि० पर इसलिए गुस्सा नहीं होना चाहिए कि वह कई बातोंमें तुम्हारा ही दूसरा संस्करण है।

क्या मि० ने आश्रममें किसी औरसे दोस्ती बना ली है, बड़े लोगोंमें से किसीसे या बच्चोंमें से? मुझे लिखो।

अब रही कुत्तोंकी बात। तुम्हारा यह कहना बिलकुल ठीक है कि हमें इसका कोई हल खोजना चाहिए। यूरोपीय देशोंमें यह हल है कि वहाँ आवारा कुत्तोंको मार डाला जाता है। भारत उस हलको बर्दाश्त नहीं करेगा, तथापि अहिंसाके नियमानुकूल आदर्श हल भारत नहीं खोज पाया है। जानवरोंकी देखभाल करनेवाला संघ आवारा कुत्तों वगैरहकी जिम्मेदारी उठा लेता है। दुर्भाग्यसे ऐसे संघ ठीक ढंगसे संगठित नहीं हैं। जो भी हो, आश्रम एक ऐसे संघसे सम्पर्क रखे हुए है और बहुधा वह कुत्तोंसे आश्रमको मुक्त कर देता है। नारणदाससे कहो कि इस बार संघने कुत्तोंको वहाँसे क्यों नहीं हटाया।

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९११०) से।

२८२. पत्र : बी० एस० रावको

३० जून, १९३३

प्रिय गोपालराव,

तुम्हारा पत्र पाकर खुशी हुई। लेकिन आश्रमके ४० लोगोमे से सर्वोत्तम लोगो पर तुमने जो प्रयोग किया, उसके अत्यन्त कटु अनुभवके बावजूद तुम अपनी सलाह जोर देकर दोहरा रहे हो, इससे मुझे दुःख हुआ। क्या तुम अपने प्रयोगकी[1] पूर्ण विफलताको भूल गये हो? मुर्देकी तरह पीली पड़ जानेके बावजूद साहसके साथ तुम्हारे प्रयोगकी आजमाइश जारी रखनेकी वजहसे मीराबाई मृत्युके द्वारतक पहुँच गई थी और मै कमजोरीसे लगभग निश्चेष्ट हो गया था। क्या तुम यह सब भूल गये? तुम्हारी विफलता और बिना पके माँडका प्रयोग करनेकी हिदायतके लिए तुम्हारी अज्ञान-भरी जिद्दपर मैंने तुम्हे चेतावनी दी थी। मैंने तुम्हारा ध्यान इस ओर भी खीचा था कि तुम्हारी बुद्धि वैज्ञानिक नही है और यह भी कहा था कि जो लोग दुर्भाग्यवश तुम्हारी देखरेखमें हैं, तुम उनके प्रति बिल्कुल लापरवाह हो। दूधकी कमीको पूरा करनेके लिए तुमने जो सब्जी लेनेकी सलाह दी है वह बच्चोंके लिए जहर है, मै तुमसे आग्रह करूँगा कि जिन प्रयोगोके बारेमे तुम जानते हो कि वे असफल रहे हैं उन्हे छोड़ दो। कुछ मामलोमे शायद तुम्हें अस्थायी सफलता प्राप्त हो गई हो। किन्तु उससे तो यही सिद्ध होता है कि प्रकृति कितनी कृपालु और सहिष्णु है। वह नियमका उल्लघन करनेवाले अपने बच्चोंको लम्बे अर्सेतक बर्दाश्त करती है। तुम प्रकृतिकी इस उदारताका नाजायज फायदा उठा रहे हो। यह जानकर शायद तुम्हें दुःख होगा कि मै बकरीके दूध और फलसे स्वास्थ्य-लाभ कर रहा हूँ और तुम जो चीज उसकी जगह लेनेको कहोगे, उसके लेनेकी कोई गुंजाइश नही है। मै तो तुमसे इतना ही आग्रह करूँगा कि जो भोले-भाले लोग तुम्हारे ऊपर विश्वास करके अपनी बीमारियोसे छुटकारा पानेके लिए आये, उनके स्वास्थ्यको खतरेमे न डालो। मैंने कड़े शब्दोंमे लिखा है, क्योकि मै उस खतरेको जानता हूँ जो तुम्हारी बताई हुई गलत खुराकमे निहित है। अगर तुम यह कह सको कि अपने उस प्रयोगपर, जो गलत साबित हो चुका है, अब और अड़े नहीं रहोगे, तो मुझे प्रसन्नता होगी।

हृदयसे तुम्हारा,

श्रीयुत बोल्लाप्रागुड्ड सुन्दरगोपाल राव

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १९१११) से।

1. कच्चा अन्न खानेका। यह १९२९ की गर्मियोंमें किया गया था; देखिए खण्ड ४१।

२८३. पत्र : एम० एस० वाजिद हुसैनको

३० जून, १९३३

प्रिय महोदय,

आपने जो जूते व चप्पले भेजी है, उनके लिए धन्यवाद। मुझे इस बातकी खुशी है कि ऊँचे खानदानके होते हुए भी आपने मोचीका उपयोगी पेशा अपनाया है।

हृदयसे आपका,

एम० एस० वाजिद हुसैन
शूज क्यूरिओ चैम्बर, विक्टोरिया स्ट्रीट, लखनऊ

अग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९११२) से।

२८४. पत्र : हिल्डा वुडको

३० जून, १९३३

प्रिय बहन,

आपका पत्र मिला।

मै इसे हरिजन सेवक सघके केन्द्रीय बोर्डके महा सचिव श्रीयुत अमृतलाल ठक्करके पास भेज रहा हूँ। आपने जिन विद्यार्थियोका उल्लेख किया है, उन्हे वजीफा देनेमे मै समझता हूँ कि कोई कठिनाई नही होगी। फिर भी जिन बालक-बालिकाओके लिए वजीफोकी जरूरत हो, उनके पूरे ब्यौरे श्रीयुत ठक्करके पास भेजना जरूरी होगा।

हृदयसे आपका,

श्रीमती हिल्डा वुड
वुड बगला, अडियार, मद्रास

अग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९११३) से।

२८५. पत्र : जमनाबहन गांधीको

३० जून, १९३३

चि० जमना,

मेरा पत्र मिला होगा। पुरुषोत्तमको यही बुलाना था, इसलिए उसे और कुछ लिखा था। अब उसे तार[1] भेजा है और उसकी राह देख रहा हूँ।

मैंने और किसे पत्र लिखनेकी बात कही थी? मैं भूल गया हूँ।

बापू

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ८८४) से; सौजन्य : नारणदास गांधी।

२८६. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

३० जून, १९३३

चि० प्रेमा,

तेरे पत्र क्यों नहीं आते? तेरा शरीर कैसा है, मन कैसा है, गला कैसा है?

सुशीलाके क्या समाचार हैं?

धुरन्धर तो मुझसे फिर एक बार मिल चुका है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ६७८५) से; सौजन्य प्रेमाबहन कंटक।

१. देखिए "तार : खुशालचन्द गांधीको", पृ० २३६।

२८७. पत्र : नारणदास गांधीको

३० जून, १९३३

चि० नारणदास,

सुनता हूँ कि महालक्ष्मीको रिहा हुए और वहाँ आये हुए तीन सप्ताह हो गये हैं। किन्तु मुझे तो कल शामको अनायास ही इसकी खबर मिली। हो सकता है कि तुमने अपने किसी पत्रमें लिखा हो और वह मुझे न बताया गया हो। अब उसे यही भेज देनेके लिए आज तार दे रहा हूँ। वह अपने बच्चोंके बारेमें परेशान है, ऐसा जान पडता है।

सि० के लिए तार[1] भेजा ही है। तुमने जो लिखा है वह ठीक है कि उसे जबर्दस्ती खाना खिलानेमें भूल हुई है। मैंने इस विषयमें लिखा तो है।[2] उसका वजन कम हो गया, यह बहुत चिन्ताकी बात है। उसे मक्खनकी आदत है, इसलिए शायद मक्खन देनेसे वजन ठीक हो जाये। गेहूँके आटेके बारेमें मैंने जो लिखा है और कहा है उसका कुछ कर पाये हो? ज्ञानके बारेमें क्या हुआ, सो कुछ मालूम नही पडा। उसका अन्तिम पत्र पढा होगा। लगता है, उसके पिताने उसपर दबाव डाला है। काशी, जमना, आदि ज्ञानके साथ सम्बन्ध करनेके विरुद्ध हैं, इसका कारण मालूम करके लिखना। ज्ञानका विरोध एक बात है और काशी आदिका विरोध दूसरी बात है। यह सब मालूम कर लेना आवश्यक दिखाई देता है।

भगवानजीसे मिलनेकी बहुत इच्छा है। मुझे लगता है कि उसे आने देना ही ठीक है। और महालक्ष्मी उसके साथ ही आये।

बापू

[पुनश्च]

सलग्न पत्र भगवानजी, रामदास, जमना, मैथ्यू, प्रेमा और ज्ञान।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू० / १) से। सी० डब्ल्यू० ८३८७ से भी, सौजन्य नारणदास गाधी।

१. देखिए पृ० २३४।
२. देखिए पृ० ६९-७०।

२८८. पत्र : नारणदास गांधीको

३० जून, १९३३

चि० नारणदास,

डॉ० अग्रवाल आँखोके डॉक्टर है। चश्मेके विना कैसे काम चलाये, वे मुख्यतया यही बताते है। वे वहाँ आश्रम देखने आ रहे है। बच्चोकी आँखोका निरीक्षण करना चाहे तो करने देना। हरिजन बालकोको देखे तब भगवानजी साथ जाये। जिनके चश्मा है वे उसे छोडनेका तरीका उन्हे सिखाये। बाहरके लिए सिफारिशकी माँग करे तो नही देना। मुझे उनकी शक्तिका कुछ पता नही है। अच्छे आदमी लगते है। मुझपर जो प्रयोग किया उसमे सफल नही हुए। वे दो-चार दिन रहेंगे।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू० / १) से। सी० डब्ल्यू० ८३८८ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

२८९. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

१ जुलाई, १९३३

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मेरे पत्रके साथ टकरा गया। मैंने कल ही लिखा और तूने भी कल लिखा।

हम सबके वर्ष एकके-बाद-एक बहे जा रहे है। हम छोटे हो रहे है, क्या यह कहना कदाचित् अधिक सही नहीं होगा? जितने वर्ष चले गये उतने आयुमे से कम हो गये। इस हदतक क्या हम छोटे हुए नही माने जायेंगे? मै तो इसमे से सार यह निकालना चाहता हूँ कि हम अधिक सावधान बने। हमे सौंपी हुई पूँजी कम होती जा रही है। जो शेष रही है उसका पूर्ण उपयोग करना हम सीखे। मै चाहता हूँ कि तेरे विषयमे ऐसा ही हो।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३४७) से। सी० डब्ल्यू० ६७८६ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कटक।

२९०. एक गश्ती चिट्ठी[1]

२ जुलाई, १९३३

प्रिय भाई,

जैसाकि आप जानते हैं, श्रीयुत अणेने १२ तारीख[2] को कुछ कांग्रेसी लोगोंको आमन्त्रित किया है। यदि आपका स्वास्थ्य इजाजत दे, तो मैं चाहूँगा कि आप उक्त दो या तीन दिनोंके लिए आ जायें। वे दिन मेरे लिए बहुत महत्वपूर्ण होंगे; सम्भवत राष्ट्रके लिए भी। मेरी इच्छा है कि आप उपस्थित हो सकें।

सदैव आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९११४) से।

२९१. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

२ जुलाई, १९३३

चि० अमला,

मेरे दो वायदोंकी याद दिलाकर तुमने ठीक किया है। तुम्हारी माताजी को पत्र लिखनेकी बात मेरे मनमें थी, लेकिन इस समय मैं लिख नहीं सका। और फिर यह बात ध्यानसे उतर गई। मुझे पता था कि तुम्हें कुछ भेजना है। वह इस पत्रके साथ ही तुम्हें मिल जायेगा।

जहाँतक सूतके हारकी बात है, मेरा खयाल था कि महादेवने तुम्हें भेज दिया है। वह भी तुम्हें इस पत्रके साथ मिल जायेगा। यह मेरे अपने सूतसे तैयार किया गया है।

अगर तुम वही चीज पहन रही हो जो मीरा पहनती है, तो वह चीज साया ही है। क्या वह साया वैसा ही नहीं जैसा आश्रमकी महिलाएँ पहनती हैं? तुम्हें याद होना चाहिए कि मीराकी साडी एक दुपट्टा मात्र है जो उसके बदनपर पडा रहता है। यह लम्बाईमें शायद तीन गज भी न हो। उससे केवल उसकी नंगी पीठ, सिर और पेट-भर ढँकते हैं।

अगर तुम्हें आश्रमका अपना आदर्श वहाँ सुलभ नहीं है, तो एक-न-एक दिन तुम्हें निराश होना पडेगा। अच्छा हो कि तुम खुद अपनेपर ध्यान रखो। तुम्हारे पत्रोंसे स्थिरता और जिम्मेदारीकी कमी झलकती है। सावधानी बरतो और विनम्र रहो।

१. एस० एन० रजिस्टरके अनुसार यह पत्र अनेक व्यक्तियोंको भेजा गया था।

२. देखिए पृ० २७४ और २७८।

तुम्हारे पार-पत्रके बारेमें मैं पहले ही लिख चुका हूँ।[1]
स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल कागजात. सौजन्य. नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय।

२९२. पत्र : अभयदेव शर्माको

२ जुलाई, १९३३

भाई अभय,

तुमारा खत (राजेन्द्र बाबू) परका पढ गया। मुझको अच्छा और उचित लगा। भावना सुंदर है। प्रायोपवेशनका समय आया हुआ नहि लगता है। किसी रोज ये भी करना पड़े।

छीपाकर कार्य करनेसे नुकसान ही हुआ है उसमें संदेह नहि है। देखें क्या संभवित है। सब कुछ करनेवाला राम है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९६६२)से।

२९३. बातचीत : पूनामें हरिजन कार्यकर्त्ताओंके साथ[2]

[२ जुलाई, १९३३][3]

उचित रीतिसे किये गये उचित प्रचार-कार्यके विरुद्ध मैं नहीं हूँ। हरिजनोंमें मद्यनिषेधका प्रचार-कार्य अवश्य ही कल्याण-कार्य होगा, पर इस कार्यमें भी कम-से-

१. देखिए पृ० २३९।

२. इस सम्बन्धमें महादेव देसाईने अपने लेख "स्पार्क्स फ्रॉम दि सेक्रेड फायर-९" में, जिससे कि यह अंश उद्धृत किया गया है, लिखा था: "उपवासके बाद गांधीजी पहली बार हरिजन-कार्य करनेवाले कार्यकर्त्ताओंकी काफी बड़ी मण्डलीसे मिले। सर्वेन्ट्स ऑफ अनटचेबिल्स सोसाइटीकी सामान्य सभाकी बैठक सर्वेन्ट्स ऑफ इंडिया सोसाइटीके भवनमें हुई थी, किन्तु उसके सदस्य कुछ प्रश्नोंपर गांधीजी की राय जाननेके लिए उनसे मिलने पर्णकुटी आये। प्रश्न ये थे: प्रचार-कार्य और सेवाकार्यमें से क्या किसी एकको चुना जाये अथवा दोनोंको महत्त्व दिया जाये? या प्रचार-कार्य न करके केवल सेवाकार्य ही किया जाये? गांधीजी का आग्रह था कि व्यवस्था-सम्बन्धी खर्च बहुत कम हो और जो भी सीमा तय कर दी जाये उसका उल्लंघन न हो। लेकिन इस नियमके अर्थके विषयमें बहुत-सारे मुद्दे उठाये गये। उदाहरणके लिए, हरिजनोंमें प्रचलित मद्यपानकी बुराईके खिलाफ गाँवोंमें जो प्रचार-कार्य किया जाये उसपर होनेवाला खर्च उचित माना जाये या नहीं? मैं यहाँ इन सवालोंके विषयमें गांधीजी के विचार संक्षेपमें दूँगा।"

३. देखिए अगले शीर्षकका 'पुनश्च:'।

कम खर्च होना चाहिए। अगर हरिजन-बस्तियोमे इस प्रचार-कार्यके लिए निर्दोष चरित्रवाले हरिजन ही मिल सके, तो यह सारा पैसा हरिजनोके पास ही जायेगा, और प्रचार-कार्य भी अधिक कारगर हो सकेगा। एक प्रश्न मुझसे यह पूछा गया है कि क्या मै एक चरित्रवान सुयोग्य सवर्ण शिक्षकसे एक अयोग्य हरिजन शिक्षकको अधिक पसन्द करूँगा? इस और ऐसे ही अन्य प्रश्नोके सम्बन्धमे मै कहना चाहता हूँ कि मै तो एक सच्चरित्र हरिजन शिक्षक खोजनेकी कोशिश करूँगा, और फिर, जहाँतक शिक्षण-योग्यताका सम्बन्ध है, मै उसे योग्य बनानेका प्रयत्न करूँगा। किसी हरिजन विशेषको आजीविका देने के बजाय मै, निस्सन्देह, बच्चोके हितके बारेमे पहले सोचूंगा। पर ऐसे प्रत्येक प्रश्नका निर्णय उसके गुण-दोषको दृष्टिमे रखते हुए करना चाहिए। इसलिए मै यही कहना चाहता हूँ कि योग्यतापर जरूरतसे ज्यादा जोर मत दीजिए।

पर प्रचार-कार्यके सम्बन्धमे हम एक सामान्य नियम यह बना सकते है कि प्रचार-व्ययपर हर बार सदस्योकी राय ली जाये। इस विषयमे जितना ही अधिक मै सोचता हूँ, उतना ही मुझे निश्चय होता जाता है कि अगर हमे अपने कार्यको स्थायित्व देना है, तो प्रचार-कार्यके लिए खर्च कम-से-कम करना होगा। प्रचार-कार्यके लिए जहाँ लगातार खर्चकी जरूरत हो, वहाँ वह तीन भागोमे बाँट दिया जाये २० प्रतिशत प्रबन्ध-व्यय, २० प्रतिगत प्रचार-कार्य और ६० प्रतिशत कल्याण-कार्य।

आप पूछते है कि पहलेके समान 'हरिजन-दिवस' मनाया जाये या नही। मै कहूँगा, जरूर मनाया जाये। परन्तु यदि वह ठीक तरहसे मनाया जाये, तो पैसेकी कोई आवश्यकता नही है। हरिजन-दिवसका यह मतलब नही है कि अपनी थोडी-सी बची-खुची रकममे काट-छाँट की जाये। इसी तरह, १०० रुपये दान प्राप्त करनेके लिए ७५ रुपये खर्च कर डालना मै पसन्द नही करूँगा। क्योकि उस दशामे दान तो केवल २५ रुपयेका ही रह जाता है। मै यह नही कहता कि प्रचार-कार्य बुरा है, बुद्धिमानीसे निर्देशित प्रचार-कार्य जरूरी है। पर मेरा कहना यह है कि प्रचार-कार्य स्वावलम्बी बनाया जा सकता है। स्वागत अथवा जुलूसके लिए अपने कोपको हाथ न लगाइये। उसपर खर्च होनेवाला पैसा आप सहानुभूति रखनेवाले स्थानीय मित्रोसे ले और अपने बजटपर उसका भार न डाले।

हमे सदा यह याद रखना चाहिए कि तीव्र आलोचकोकी दृष्टि हमारे ऊपर जमी है। फलेच्छाके बिना यदि हम प्रत्येक कार्य धार्मिक भावनासे करे, तो हमारे कार्यका अवश्य असर पडेगा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ८-७-१९३३

२९४. पत्र : जमनालाल बजाजको

२ जुलाई, १९३३

चि० जमनालाल,

ज्ञानके सम्बन्धमे तार[1] दिया है, सो मिला होगा। छगनलालका पत्र इसके साथ है। इससे मैं यह समझा हूँ कि ज्ञान वहाँ नही पहुँची। ज्ञान किस तरह राजी हो गई, यह यदि तुम जान पाये हो तो मुझे लिखना।

१२ तारीखवाली बैठकके[2] लिए तुम जैसे-तैसे आओ ही, इसकी बिलकुल जरूरत नही है। अपनी राय भेजना चाहो तो भेज दो। जरूरत होगी तो पढ़ लूँगा। अच्छा तो यह हो कि उसे तुम अणेजी को लिख भेजो।

कमलाके लिए भी तुम्हे आनेकी जरूरत नही। जो-कुछ हो सकता है, वह बराबर होता रहेगा। मै पूछताछ करता रहता हूँ। कमलनयन आता-जाता रहता है। जानकी देवीसे भी मिला था। कमला भी मिलकर गई। वह अभी बच्ची ही है। खूब लाड-प्यारमे पली है, इसलिए अपनी जिम्मेदारीका भान कम है। इसमे उसका कसूर नही। जैसे हम, वैसी ही हमारी सन्तति। हमारे भीतर उत्तरोत्तर जो परिवर्तन होते है, उन सबतक हमारी सन्तति नही पहुँच सकती। हरिलाल इसका सोलह आने उदाहरण है। वह सब मर्यादाएँ लाँघ गया। उसने ये सब खुलेआम तोड़ी। मैंने मनसे भोगोको चाहा और बाह्येन्द्रियोपर धीरे-धीरे अधिकार प्राप्त किया। यदि मनको भी अन्तमे वश न कर सका होता तो आसानीसे मिथ्याचारी व्यक्तियोमे मेरी गिनती होती। परन्तु मुझमे जो परिवर्तन हुए, उनका प्रभाव हरिलाल पर कैसे होता? मैने बीचमे यह व्याख्यान ही दे डाला।

तुम सारे काम शरीरको सँभालकर करो। प्रभुदास यदि वहाँ आया हो तो लिखना कि उसके क्या हाल है। अब वह किस खोजमे है?

विनोबा, बालकृष्ण और छोटेलालकी तबीयत कैसी रहती है?

राधिका आकर गई। अब वह देवलालीमे है। केशु अभी यहाँ है, शान्त है। अभी किसी निश्चयपर नही पहुँच सका है। पहुँच जायेगा। उसे काफी समय दे रहा हूँ। लक्ष्मीनिवासकी पत्नी सुशीलाने जो ५,००० रुपये हरिजन-सेवाके लिए दिये है, उनके बारेमे तुमने क्या फैसला किया?

देवदास और लक्ष्मी, रणछोडदासके बंगलेमे रहते है। राजाजी घनश्यामदासके साथ। मेरी तबीयत ठीक हो रही है। रोज तीन बार मे ४५ मिनट घूम लेता

१. देखिए पृ० २३४।

२. देखिए "एक गश्ती चिट्ठी", पृ० २४७।

हूँ। वजन ९७ पौंडतक पहुँच गया है। और भी बढ़ेगा। अब मेरी चिन्ता करनेकी कोई बात नहीं रहती।

नारणदासका पुरुषोत्तम बहुत करके यहाँ आयेगा और डॉ० दिनशाके यहाँ नैसर्गिक उपचारकी शिक्षा लेगा।

वहाँका तुम्हारा काम कब पूरा होगा?

गिरधारी फिर आज गिरफ्तार होगा। कल छूटा था। उसे हैदराबाद जानेका हुक्म दिया गया था। उसने उसे नहीं माना।

तुम्हारा खान-पान आदि ठीक चल रहा होगा। मुझे सविस्तार लिखना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

आज १०से ११-३० बजेतक हरिजन-सेवकोंके साथ बातचीत की।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९१७)से।

२९५. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

३ जुलाई, १९३३

चि० मणिलाल और सुशीला,

तुम दोनोंके पत्र बराबर मिलते रहते हैं। मैंने पत्र तो सब पढ़े ही हैं पर मैं जवाब कहाँसे देता। अब काफी शक्ति आ गई है, इसलिए रोज थोड़े-से पत्र लिखनेका प्रयत्न करता हूँ। वजन भी बढ़ रहा है। खुराक काफी ले लेता हूँ। खुराकमें सिर्फ दूध और फल ले रहा हूँ। मेरी चिन्ता करने-जैसी कोई बात नहीं है। तुम्हें यह पत्र मिलनेतक कहाँ रहूँगा यह तो राम ही जाने। शायद वल्लभभाईके पास। जो होता है सो हो। हमारी इच्छासे कुछ और नहीं हो सकता।

तुम अपने कर्त्तव्यमें जुटे रहो, इतना ही काफी है। सुशीला तुम्हारी मदद करती है, यह बात मुझे पसन्द आती है। दोनों संयमका पालन करोगे तो सुशीला बहुत-कुछ कर पायेगी। लगता है, सीता[1] के लिए ठीक व्यवस्था कर दी है। मेरी समझमें शान्तिका विश्वास नहीं किया जा सकता। वह बहुत अस्थिर-सा है।

जालभाई मिल गया था। उसकी लड़कीके सम्बन्धमें समझ गया हूँ।

सोराबजी[2] के बारेमें तुमने जो किया है वह ठीक लगता है। कई बार नीतिका पालन करते हुए मित्र साथ छोड़ देते हैं। उसके विषयमें चिन्ता नहीं करनी चाहिए। इतना निश्चित रूपसे जान लें कि जिसे हम नीति मानते हैं, वह वास्तवमें कहीं अनीति तो नहीं और उसमें हमारा स्वार्थ तो नहीं छिपा हुआ है। नीतिके नामपर

१. मणिलाल और सुशीलाकी बेटी।

२. दक्षिण आफ्रिकामें गांधीजी के एक सहयोगी कार्यकर्ता, पारसी रुस्तमजीका पुत्र।

जितना अनीतिपूर्ण व्यवहार ससारमे होता है, उतना उसे अनीति कहकर नही होता। अनीति, नीतिकी आडमे ही पनप सकती है। इसीलिए कई बार हमारे सामने धर्म-सकट उपस्थित हो जाता है। नीति-अनीतिका भेद कर पानेके लिए यम-नियमोका पालन आवश्यक हो जाता है।

देवदास और लक्ष्मी यही है। मजेमे है। विवाहका वर्णन तो किसी-न-किसीने लिख ही भेजा होगा। दोनो भाग्यशाली दिखाई देते है। अप्रत्याशित आशीर्वाद प्राप्त कर पाये है।

रामदास बदनसीब है। सुखी या शान्त रह ही नही पाता। शरीर शिथिल हो चुका है। नीमू भी बीमार पड़ती ही रहती है; बच्चोका भी यही हाल है। फिर अब योनिमे विकृति आ गई है, इसलिए शायद ऑपरेशन भी करवाना पड़े। फिर भी रामदास भक्त है, भोला है और कर्त्तव्य जानने और उसका पालन करनेका प्रयत्न करता है। इसलिए मै यही मानता हूँ कि अन्तत· उसका जीवन सुखी ही होगा। फिर भगवान तो भक्तोकी परीक्षा अच्छी तरह लेते ही है। इसलिए विश्वास है कि रामदास यदि जिन्दगी-भर दुखी रहा तो भी वह भक्ति छोड़नेवाला नही है। तुम दोनों उसे पत्र लिखते रहना। रामदास और नीमूने अपनी डोरी जमनालालजी के हाथमे दे दी है, किन्तु अभी तो वे नीमूके बीमार हो जानेसे वर्धा पहुँच ही नही पाये है। इसलिए वहाँ पहुँचनेमे कुछ देर हो सकती है। जमनालालजी को पत्र लिखते रहते होगे। जानकीदेवी और बच्चे यही है। सिर्फ मदालसा[1] वर्धामे विनोबाके पास है। महादेव और मथुरादास भी है। बा तो है ही। मनु अभी हालमे आई है। हरिलाल शराबके पीपेमे पडा रहता है अथवा यो कहे कि शराबका पीपा उसके पेटमे पडा रहता है। उसका बोझ लादकर वह और बोझ कैसे उठा पाये? मैं इस दुखका रोना नही रोता। मेरे ही पापोका यह कडवा फल होगा, ऐसा सोचकर शान्त रहता हूँ।

वेस्टके बारेमे समझ गया हूँ। अन्तमे जो तुम्हे ठीक लगे वही करना। तुमपर उसकी अच्छी छाप न पड़े तो मै उसकी सफाई नही दे सकता। देवीबहनको लिखे वेस्टके पत्र मैंने विलायतमे पढे थे। उनसे मुझे लगा था कि वह जैसा-का-तैसा बना है। मनुष्योंके गुण देखकर उनका ही स्मरण करनेकी सीख तुलसीदासने दी है। अवगुण तो हममे होते ही है। उनके कारण संसार हमारा त्याग करे तो हम मुँह फुला लेते है और यह भूल जाते है कि इन अवगुणोके रहते हुए भी जगतने हमारा त्याग नही किया और ध्यान रखा। इतनी सीख काफी है न?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४८१०)से। सी० डब्ल्यू० १२२२ से भी; सौजन्य. सुशीला गांधी।

१. जमनालाल बजाजकी पुत्री।

२९६. पत्र : लीलावती आसरको

३ जुलाई, १९३३

चि० लीलावती,

तेरा पत्र मिल गया है। यह अच्छा सकल्प है। अब श्रद्धापूर्वक इसपर दृढ रहना। अपनी शक्तिसे ज्यादा कुछ न करना। शरीर जो काम न कर सके उसे करनेका हठ न करना। मनमे नम्रता होगी तो सब-कुछ ठीक ही होगा। मुझे पत्र लिखती रहना। ईश्वर तुझे शान्ति देगा।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९३२६) से। सी० डब्ल्यू० ६६०१ से भी।

२९७. पत्र : नारणदास गांधीको

३ जुलाई, १९३३

चि० नारणदास,

ज्ञान वर्षा नही गई ऐसा माने ले रहा हूँ। पुरुषोत्तमको तार भेजा है। उसका कोई उत्तर नही आया। मैने पत्र नही लिखा। तार मिल ही गया होगा, ऐसा मान लिया है। यदि तुम्हे उससे कुछ खबर न मिली हो तो उसे फौरन पत्र लिख देना जिससे समय बचे। वह जितनी जल्दी आये उतना अच्छा। मुझे फिर कब गिरफ्तार कर लिया जायेगा, कहा नही जा सकता।

केशु अभी यही है। मेरे साथ चर्चा करता रहा है। शान्त है। पिंजाईके बारेमें क्या फैसला करना है, यह पूछनेपर लगा कि वह इसे समझा ही नही है और मै तो निश्चय ही नही समझा हूँ।

महालक्ष्मीको भेजनेके बारेमे तार भेजा है। उसे रवाना न किया हो तो कर देना। भगवानजी के बारेमे भी मैने यही राय दी है कि वह चाहे तो यहाँ चला आये।[1] यहाँ आयेगा तो उसे शान्त कर पाऊँगा।

व्रजकृष्ण डॉ० मेहताके अस्पतालमें इलाज करा रहा है। वह अच्छा हो रहा है। रोज दससे बारह रतल दूध पीता है। कृष्णन नायर भी अभी यही है। वहाँ जानेका सुझाव दूंगा।

१. देखिए पृ० २४६।

यदि बहनोने अलग रसोई शुरू की है तो कोई बुराई नही। मुझे उसमे भलाई ही दिखाई देती है। उसका एकमात्र कारण भात नही है, भात भी एक कारण हो सकता है। भातके बिना उनकी गुजर नही और कभी-कभी दूसरी चीजे भी चाहिए। दूसरे उनसे द्वेष न करे। दूसरे जो करते हो उसकी बुराई न करे। हम जो-कुछ करते है अपने हितके लिए करते है — यही समझे, तभी काम चलता है। दूसरोकी देखादेखी किसीको भी कुछ करनेकी जरूरत नही। ऐसा करनेमे कोई भलाई भी नही है। इसलिए सार्वजनिक रसोईमे दूध-घीके सिवा जो-कुछ बने वह जेलकी खुराक-जैसा हो, यही ठीक लगता है। हमारी परीक्षाका समय अभी आ रहा है। कब आ जायेगा, यह नही जानता। किन्तु आयेगा और आना ही चाहिए, इस सम्बन्धमे मुझे कोई शका नही। जिसने उसके लिए अपने शरीर और मनको तैयार किया होगा वह जीतेगा। जिसने नही किया होगा वह गिरेगा। ससारमे सदा ऐसा ही होता आया है। जो बहने अलग रसोई करती है उनकी कोई आलोचना न करे। किसीको ऐसा करनेका अधिकार नही है। आलोचना करनेका कोई कारण ही नही है। कौन अपने सामर्थ्यसे बाहर कुछ कर सकता है? किसीके भोजनके सम्बन्धमे आलोचना करना बहुत बुरा है। इसमे जो जितने सयमका पालन कर सके उतना कम समझे। लेकिन किसीको दूसरे व्यक्तिके सयमको तौलनेका कोई अधिकार नही है। तौलनेका कोई साधन भी नही है। मिर्च-मसाला छोड़नेके अपने त्यागको मैं बहुत बड़ा नही मानता, किन्तु यदि हरिलाल शराब छोड़ सके तो मैं अपने मनसे उसके सयमको बहुत महान मानूँगा। इसी तरह कई लोगोके लिए मसालेका त्याग उतना ही बड़ा हो सकता है। रेवाशकरभाई[1]को बीड़ी छोड़नेमे कितनी परेशानी हुई थी। अहिंसाके सारे प्रयोग ऐसी ही चीजोमे तो करने पड़ते है। सबको पूरी बात धीरजसे समझाना।

कुसुमके सम्बन्धमे मेरा असन्तोष दूर नही हुआ। क्या कभी वैद्य द्वारा इलाज करानेकी नौबत न आयेगी? किन्तु जबतक वह सन्तुष्ट है तबतक मुझे विचार करनेकी जरूरत नही है।

धीरू और बलभद्र[2]के फेफड़ोकी जाँच हो चुकी होगी। मुझे तो उसमे बिलकुल विश्वास नही है। एक्सरे लेनेके बाद विशेषज्ञ ही उसे देख सकता है। तुम्हे या मुझे तो उससे कुछ भी समझमे नही आयेगा। इन सबको मैं बड़ोका मनबहलाव मानता हूँ। वे गरीबोके लिए तो कतई नही है। किन्तु जबतक लोग हमे पैसा देते है और जबतक हमारा इन बातोंपर विश्वास है, तबतक यह करते रहे।

मुझे लगता है कि अब मैंने तुम्हारे सभी प्रश्नोका उत्तर दे दिया है।

मेरी तबीयतका अन्दाज तो तुम्हे मेरे पत्रसे ही मिल जायेगा।

पुरुषोत्तम आ गया है। जमनालालके पत्रसे मालूम होता है कि ज्ञान वर्धा पहुँच गई थी। तुम्हारे पढनेके लिए जमनालालका पत्र साथ भेज रहा हूँ।

१. रेवाशंकर जगजीवन झवेरी, डॉ० प्राणजीवन मेहताके भाई और श्री राजचन्द्रके श्वसुर।

२. रावजीभाई नाथाभाई पटेलके छोटे भाई, आश्रमके एक विद्यार्थी।

[पुनश्च .]

नारणदास,

पत्र समाप्त होनेके बाद कन्हैयालाल और मगनलालके पत्र मिले। वे इसके साथ है। मुझे तो इस सम्बन्धमे कोई खबर नही थी। तुम्हे कुछ मालूम है? जीवराम[1]का कोई पत्र आया है? उसका क्या हाल है? मैंने तो उन्हे लिखा है कि जीवरामका पत्र मिलनेपर ही सलाह दे सकूंगा। सम्भव है, वे दोनो भद्रकसे चल चुके हो। मुझे ये पत्र आज ही मिले हैं। २० जूनके है। उत्तर मासके अन्ततक मांगा था।

परचुरे शास्त्रीके लडकेके बारेमे वाई[2] पत्र लिखा है। जवाब आनेपर तुम्हे लिखूंगा।

हरखाजी का पत्र है। तुमने शायद देखा होगा। वह चाहता है कि किसी दूसरे स्थानपर रहनेकी व्यवस्था कर दी जाये। क्या तुम्हारे ध्यानमे कोई ऐसा स्थान है।

पत्र . अमला, उसकी माँ, गजराकी माँ, बालजी, रामजी, कुसुम, हरखाजी, लीलावतीको और कन्हैयालाल, मगनलालके।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१)से। सी० डब्ल्यू० ८३८९ से भी, सौजन्य नारणदास गांधी।

२९८. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

पर्णकुटी, पूना,
४ जुलाई, १९३३

चि० अमला,

तुम्हारा पत्र मिला। मुझे पत्र लिखना बन्द करनेकी तो कोई बात ही नही है। फिर भी मैं व्यस्त रहूँ अथवा न रहूँ, यह हमेशा चाहूँगा कि तुम समझदारीकी बाते लिखो, नासमझीकी नही। तुम लगभग हमेशा नासमझीकी बाते लिखती हो। अगर तुम समझदारीके साथ लिखो और तुम्हे काफी-कुछ लिखना पड़े तो मैं, पत्र चाहे जितना लम्बा क्यो न हो, परवाह नही करूँगा। लेकिन मूर्खतापूर्ण पत्र केवल एक वाक्य अथवा एक शब्दका भी हो, तो वह जरूरतसे ज्यादा लम्बा माना जायेगा।

१. कच्छके जीवराम कोठारी, जो एक लाखकी अपनी सारी सम्पत्ति गांधीजी को दान करके गरीबोंकी सेवा करनेके लिए उड़ीसा चले गये थे।

२. गाँवका नाम।

क्या तुम जानती हो कि जिस पत्रका जवाब लिख रहा हूँ, उसमे तुमने कितनी ही व्यर्थकी बाते लिख मारी है। इसी वजहसे मैंने तुम्हे ३५ बरसकी 'बच्ची' कहा है।[1]

अपने भविष्यके बारेमे तुम्हारे सवाल बहुत ज्यादा विचित्र है। मेरे विचारमे तुमने अभीतक कुछ सीखा ही नही है। तुमने काफी-कुछ सीख लिया है, यह प्रमाण-पत्र तो अन्ततः सिखानेवाले ही देगे न? तुम खुद ही अपनेको प्रमाणपत्र नही दे लोगी। जब तुम अच्छी तरह सीख जाओगी तो तुम देखोगी कि तुम्हारा काम तो तय कर दिया गया है। निश्चय ही तुम हरिजन-सेवाके लिए प्रशिक्षित की जा रही हो। उस सेवाका क्या स्वरूप होगा, यह कहना अभी कठिन है। लेकिन उसे कर सकनेसे पहले तुम्हे हिन्दी ठीक आ जानी चाहिए और कपासको कपड़ेकी शक्लमे बदलने तककी सारी प्रक्रियाओका तुम्हे अच्छी तरह ज्ञान प्राप्त कर लेना चाहिए। मैंने केवल दो चीजोका जिक्र किया है; ऐसी बहुत-सी अन्य चीजें भी हैं जिनका ज्ञान प्रभावशाली ढगसे हरिजन-सेवा कर सकनेके लिए जरूरी है।

आशा है कि जजीर और तुम्हारी माताजी के नाम मेरे पत्र-सहित तुम्हें मेरा कलका पत्र[2] मिल गया होगा।

स्नेह।

बापू

[अग्रेजीसे]

स्पीगल कागजात; सौजन्य: नेहरू स्मारक सग्रहालय और पुस्तकालय। एस० एन० १९११५ भी।

२९९. पत्र: नी० को

४ जुलाई, १९३३

आशा है कि सि० का बुखार मियादी नहीं होगा। उसे मियादी बुखार हो जानेका कोई कारण नहीं है। लेकिन मुझे ऐसा लगता है कि तुमने उसे खानेको जो दिया, वह नहीं दिया जाना चाहिए था। मुझे भरोसा नहीं होता कि लक्ष्मीदास ऐसा चाहता था कि सि० वह सब खाये जो तुमने बताया है। वैसे तो हर बुखारके मियादी बन जानेकी सम्भावना मानकर उपचार करना सदा अच्छा होता है। दूसरे शब्दोंमे सभी तरहके बुखारका मुख्य इलाज एक ही है, यानी फलोंके रस और उबले पानीके सिवाय कुछ न दिया जाये और जब बुखार हट जाये तो

१. देखिए पृ० २००।

२. देखिए पृ० २४७। यह पत्र ३ जुलाईको "पत्र: नारणदास गांधीको" के साथ भेजा गया था; देखिए पृ० २५५।

पानी मिलाया हुआ पतला दूध उबालकर दिया जाये। यदि तुम्हारा दिमाग बिलकुल साफ और शान्त है, तो मैं नहीं चाहता कि सि० को कहीं और ले जाओ। आश्रममें उसकी ठीक परिचर्या हो जाये तो वह बिलकुल ठीक हो जायेगा। मियादी बुखारके मरीजके लिए अच्छी परिचर्या और फलोंके रसके अलावा किसी अन्य चीजकी जरूरत नहीं होती। फलोंके रसमें मुख्य रूपमें सन्तरेका रस और कुछ परिस्थितियोंमें पतला दूध दिया जाना चाहिए। डॉक्टरी मददके बारेमें जिद मत करो। आश्रममें जो डॉक्टर आते हैं, वे बहुत समझदार हैं। वे जानते हैं कि आश्रमके लोग बहुत ज्यादा दवाएँ लेनेके प्रति रुचि नहीं रखते। यदि सम्भव हो तो व्यक्तिगत मोह छोड़कर सि० को आश्रमके एक ऐसे बच्चेके रूपमें देखो जिसकी परिचर्यामें तुम्हें लगाया गया है। लेकिन मैं जानता हूँ कि यह एक ऐसी मनःस्थिति है जो थोपी नहीं जा सकती। यदि तुम ऐसी मनःस्थिति नहीं बना सकतीं तो साफ तौरपर ऐसा कहनेमें संकोच मत करना। आश्रममें हर व्यक्ति ऐसा अनासक्त नहीं है। बल्कि ऐसी अनासक्ति शायद किसीमें भी नहीं है। लेकिन मैं तुमसे बहुत-कुछ आशा करता हूँ। तुम्हारे सामने उच्चतम आदर्शसे कम कोई चीज नहीं है। मैं चाहता हूँ कि तुम उस उच्चतम आदर्शको हासिल करो। हो सकता है कि सि० की बीमारी तुम्हारी अनेकों अग्निपरीक्षाओंमें से एक हो। ईश्वर तुम्हारा पथ-प्रदर्शन करे, शक्ति दे और रक्षा करे।

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एम० एन० १९११६) से।

३००. बातचीत: एक मित्रके साथ[1]

४ जुलाई, १९३३

यदि यह कथन सच है कि जीवनके बीच हम मृत्युमें रह रहे हैं, तो क्या इससे उल्टी बात भी सच नहीं है कि मृत्युके बीच हम जीवनमें रह रहे हैं? उस दिन एक मित्रके साथ गांधीजी की भेंटके दौरान कम-से-कम मुझे तो यही अनुभूति हुई।

एक मित्रने अपने घर लौटनेसे पहले गांधीजी से दो-चार मिनट बात करनेकी इच्छा प्रकट की। कई दिनोंतक यहाँ रहनेके बाद ही उसने यह इच्छा मुझे बताई थी। पर गांधीजी के सामने जाते ही उसका धैर्य छूट गया। कुछ देर वह अवाक् ही रहा।

गांधीजी बोले, बात शुरू करो। महादेवने मुझसे कहा है कि तुमने कई साल पहले जो प्रतिज्ञा की थी, उसके बारेमें मुझसे तुम कुछ बात करना चाहते हो। मैं तो उस प्रतिज्ञाको भूल ही गया हूँ। पर खैर, बात शुरू करो।

१. यह महादेव देसाई द्वारा लिखित "स्पार्क्स फ्रॉम दि सेक्रेड फायर-९" से लिया गया है।

यह सुनकर उसकी कुछ हिम्मत बंधी और टूटे-फूटे शब्दोंमें वह बोला: पाँच साल पहले मैंने एक प्रतिज्ञा लिखी थी, और —

गा० : और उसका तुम पालन नहीं कर सके?

नहीं, इससे उल्टी बात है, मैंने बीचमें कहा।

गा० : (हिम्मत बंधाते हुए) तो फिर ये आनन्दाश्रु हैं?

पर वह तो अवाक् ही रहा और उसके गालोंपर आँसू बहने लगे। गांधीजी ने कहा:

महादेवने जो कहा है, वह शायद सब ठीक नहीं है। तो मैंने जो किया था, वह करो। मैंने अपने पिताके आगे जब पहले-पहल अपना पाप स्वीकार किया था,[1] तो मेरी भी जबान नहीं खुली थी। इसलिए मैंने अपना अपराध लिखकर उन्हें दे दिया था। तुम्हें भी जो कहना हो, मुझे लिखकर दे दो।

पर वह मित्र तो अब भी नहीं बोला। उसने मेरी तरफ इशारा किया कि मुझे अब जाने ही दो। पर थोड़े और आँसू बहाकर उसमें बोलनेकी हिम्मत आ गई।

मित्र: बापू! पाँच सालसे कुछ अधिक पहले मैंने अपनी एक प्रतिज्ञा लिखी थी और आपने उसका एक शब्द ठीक किया था।

गा० : हां, पर मैं तो वह सब भूल गया हूँ।

गांधीजी को वह पुरानी बात याद करानेके बाद उस युवकने कहा:

बापू, मेरी आत्माके अन्दर एक घोर संग्राम चलता रहा है। किन्तु भगवानकी दयासे मैं उस प्रतिज्ञाके अक्षरोंका और बहुत-कुछ अंशोंमें उसके मर्मका भी पालन कर सका हूँ।

गा० : यह बड़ी अच्छी बात है। तुम्हारे आँसुओंको मैं अब समझा। ईश्वर जिसकी प्रतिज्ञा पूरी करा देता है, उसका हृदय कृतज्ञतासे उमड़ पड़ता है।

मित्र: पर सवाल अब यह है।

गां० : क्यों? तुम्हारी माँ अधीर हो रही होगी। माताएँ तो सभीकी अधीर रहा करती हैं।

मित्र: जी हाँ। आपने जिस प्रतिज्ञापर हस्ताक्षर करके अपनी मोहर लगा दी थी वह उसीके पास है। वह सिर्फ यही पूछा करती है कि प्रतिज्ञाकी अवधि कब पूरी होगी। लेकिन माता-पिता मुझे तनिक भी तंग नहीं कर रहे हैं। हैरानी तो मेरी खुद अपनी ही है। एक बार मैं संकल्प कर लूँ, तो फिर कोई मुश्किल नहीं। मगर बापू, अन्तरात्माके इस निरन्तर संग्रामसे क्या कोई लाभ है?

गां० : अवश्य है। संग्राम क्या प्राकृतिक जगतका एक नियम नहीं है? यदि है, तो आध्यात्मिक जगतका तो यह और भी बड़ा नियम है। प्राकृतिक जगतमें

१. देखिए खण्ड ३९, पृ० ८८।

आध्यात्मिक नियम हैं और आध्यात्मिक जगतमें प्राकृतिक नियम है। जीवन एक सतत संघर्ष है। हमारे अन्दर हमेशा ही तूफान उठता रहता है। प्रलोभनके विरुद्ध संघर्ष करते रहना हमारा सतत कर्तव्य है। 'गीता' में तीन स्थानोंपर यह बात कही गई है। इसका उल्लेख तो तीनसे भी अधिक स्थानोंपर आया है, पर मुझे तीन ही का स्मरण है। कहावत है, संकल्प-भर हो तो मार्ग तो निकल ही आता है। बाइबिलमें कहा गया है, "माँगो, तो तुम्हें दे दिया जायेगा", "ढूंढो, तो तुम्हें मिल जायेगा", "खटखटाओ, तो द्वार खुल जायेगा।"

मि० : बापू, मुझे आशीर्वाद दो।

गा० तुम जो चाहते हो वह लिख दो। अगर वह ठीक होगा, तो उसपर मैं हस्ताक्षर कर दूंगा।

उस मित्रने अपनी डायरी निकाली और चौथी जुलाईके पृष्ठपर लिखा : "तुमने जो-कुछ कहा है, उसका मर्म याद रखना। तुम्हारी साधना सफल हो, यही मेरा आशीर्वाद है।" और यह लिखकर उसने उसपर "बापू" — यह अमूल्य स्वीकृति प्राप्त करनेके लिए डायरी मेरे हाथमें दे दी।

बापूने उन शब्दोंको एक बार पढा, दो बार पढा और फिर कहा :

एक शब्द मैं यहाँ जोड दूं?

यह कहकर गांधीजी ने अपने हाथसे 'साधना' के पहले 'अनिवार्य' शब्द लिख दिया और फिर नीचे कांपते हुए हाथसे 'बापू' यह हस्ताक्षर कर दिये। उन्होंने कहा :

हाथ न कांपता तो कितना अच्छा होता। पर कोई हर्ज नहीं। 'अनिवार्य' शब्द यहाँ बहुत जरूरी है। इस सिलसिलेमें 'गीता' के छठे अध्यायका अन्तिम भाग पढ लेना।

वह भाई कृतज्ञतापूर्वक प्रणाम करके चुपचाप चल दिया। उसके वे आँसू संक्रामक थे। उन आँसुओंने मुझे भी रुला दिया, क्योंकि दो दिन पहले ही गांधीजी ने कहा था :

अपने चारों ओर मैं ज्यों-ज्यों अन्धकार घिरता देखता हूँ, मेरी आस्था त्यों-त्यों बढती ही जाती है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ८-७-१९३३

३०१. पत्र : नी० को

५ जुलाई, १९३३

नी०,

तुम्हारा लम्बा पत्र मिला। मुझे वात जँची नही। तुम फिर भावनाओके वशमे पड़ गई हो। सुनहरे ढक्कनने सत्यको छिपा रखा है। यदि तुम सि०को ही अपना वच्चा मानना छोडती हो तो समारके सभी वच्चोको तुम्हे अपना मानना होगा। अभी तुम्हारी दुनिया आश्रम है। वहुधा गरीव लोग पहाडोसे मैदानमे आते है और तव उनके वच्चे मैदानोमे जो परिस्थिति होती है उसके अनुसार रहते है। यह सोचना विल्कुल गलत है कि छोटे वच्चे नयी जलवायुमें पहुँचकर वहाँके परिवर्तनोको वर्दाश्त नही कर सकते। मै इस सम्भावनासे इनकार नही करता कि यदि सि०को किसी पहाडी स्थानपर ले जाये तो वह जल्दी ठीक हो जाये। लेकिन तुम्हारी तपस्या तो इसीमे है कि तुम जहाँ हो, वही वनी रहो और उसका जीवन जोखिममे रहने दो। विश्वासका ऐसा ही मूल्य चुकाना होता है। वह विश्वास कोई विश्वास ही नही है जो जोखिमके प्रति पूरी सुरक्षा चाहे। यदि तुम सि० के वारेमे चिन्ता करना छोड दो और उसकी परिचर्या-भर करो, तो वह विलकुल ठीक हो जायेगा।

यदि मेरी दलील या मेरी राय तुम्हे अच्छी न लगे तो निस्सकोच होकर लिखना। मै नही चाहता कि तुम अपने-आपको विवश अथवा किसी तरहके दवावमे महसूस करो। मै तो चाहता हूँ कि तुम अपने-आपको इतना आजाद महसूस करो जितनी कि कभी नही थी। तुमको मुझसे और आश्रमसे वाँधने वाली चीज है प्रेम और समान आदर्श। मै तभीतक तुम्हारा मार्गदर्शन कर रहा हूँ जवतक कि तुम्हे मेरे निर्णयमें विश्वास है? मैने एक नही अनेक वार अपने वहुत ही ज्यादा प्यारे लोगोकी जिन्दगीसे काफी खिलवाड किया है। यदि तुमको मेरी इस वातमे सचाई लगे, तो तुम्हे भी ऐसा करना चाहिए। तुम्हे साहससे काम लेना चाहिए, लाचारीसे कभी नही। इसलिए तुमको कैसा लग रहा है, तुम्हारा क्या खयाल है, यह लिखनेमे सकोच मत करना। वैसे, मै आशा करता हूँ कि सि०को अव ज्वर नही होगा और वह तात्कालिक खतरेसे वाहर हो चुका होगा। इन दोनो वातोके ख्यालसे गीले कपडेकी पट्टियाँ रखना जरूरी है।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९११७) से।

३०२. तार: भूलाभाई जे० देसाईको

६ जुलाई, १९३३

भूलाभाई देसाई
सिविल अस्पताल, नासिक

अभी-अभी पता चला कि आप बहुत बीमार हो जाने के कारण रिहा कर दिये गये हैं। कृपया सही हालत तारसे सूचित करें। जल्दी से पुन स्वास्थ्य लाभ की आशा करता हूँ।

गांधी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१५०९) से।

३०३. तार: नी० को

६ जुलाई, १९३३

नी०
सत्याग्रह आश्रम, साबरमती

तुम्हारा पत्र मिला। आशा है कि सि० बेहतर होगा। मेरी पक्की राय है कि तुम्हे अल्मोडा नही जाना चाहिए। स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१५०८) से।

३०४. तार: उर्मिला देवीको

६ जुलाई, १९३३

उर्मिला देवी
२४, रमेश मित्तर रोड, भवानीपुर, कलकत्ता

पत्र मिला। ठीक हूँ। यदि आना जरूरी हो तो आप आ सकती हैं। खुद मैं आपके आनेको पैसा, समय, शक्तिका अपव्यय मानता हूँ। रजिस्टर्ड पत्र द्वारा अपने विचार लिख भेजो।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१५१०) से।

३०५. तार: भूलाभाई जे० देसाईको

६ जुलाई, १९३३

भूलाभाई देसाई
बम्बई

सुबह सवेरे नासिक तार दे दिया। यदि आप काफी ठीक हो तो जरूर आयें। हालत तार से सूचित करें।

गांधी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१५११) से।

३०६. पत्र : मीराबहनको

६ जुलाई, १९३३

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र मिला।

मेरी प्रगति बराबर हो रही है। अब मैं ९८ पौंडसे ऊपर हूँ। खुराक वही पहले-जैसी है। दिनमे तीन बार कुल मिलाकर १ घटे २० मिनट घूम सकता हूँ। यह कम नही है। इससे मुझे थकान नही होती। आशा है, अच्छी सेहतकी स्पर्धामे तुम मुझे हरा दोगी। बेशक, वहाँकी गर्मी तुम्हारे विरुद्ध है। लेकिन अब तो वर्षा हो ही जायेगी। किसी भी हालतमे, जब गर्मी बहुत सताये, तब अगर गीली चादर लपेट लोगी तो तुरन्त ठण्डक मिल जायेगी। चादर कैसे लपेटनी है, यह तो तुम्हे आता ही है। अपने बिछौनेकी चादर ले लो। उसे ठण्डे पानीमे डुबो लो। इतनी अच्छी तरह निचोड लो कि पानी न रह जाये। उसे एक कम्बलपर बिछा दो। चादरपर नगी लेट जाओ और उसे अपने चारो और लपेट लो। पैरोसे गर्दनतक कम्बल ओढ लो। पाँच मिनट या आराम मालूम हो तो अधिक उसीमे रहो। ठिठुरन महसूस नही होनी चाहिए। ऐसा हो तो तुरन्त बाहर निकल आना चाहिए। इससे बडी ताजगी और ठण्डक मिलती है। जरूरत हो तो अकसर इस तरह चादर लपेट सकती हो। खुद इसकी परीक्षा करके देख लो।

टिप्पणियाँ लिखना, जैसाकि मैंने सुझाया है,[1] उतना कठिन नही जितना तुम्हे लगता है। जब आदत हो जाती है तो वह बहुत आसान और दिलचस्प काम हो जाता है। जैसे-जैसे आगे पढती जाओ सन्दर्भ लिखना न भूलो ताकि अपनी साकेतिका और टिप्पणियोके सहारे तुम तुरन्त किसी विशेष नामको खोज सको। ये टिप्पणियाँ साधारण उपयोगके लिए बडी जरूरी साबित हो सकती है, बशर्ते कि वे सक्षिप्त हो और सगत हो।

तुम्हारा बन्दरोका वर्णन बडा दिलचस्प है। क्या वे अभीतक तुम्हारा भोजन छीनकर नही ले गये? हाँ, यह तो तुम जानती ही हो कि जब वे क्रोधमे आते है, तब सख्त चोट पहुँचा सकते हैं।

पुरुषोत्तम यहाँ है और मेहताकी देखरेखमे, जो पूरी लगनसे मेरी सेवा-परिचर्या कर रहा है, प्राकृतिक चिकित्सा सीख रहा है। महादेव बुखारमे पडा है। वह एक-दो दिनमे बिलकुल ठीक हो जायेगा।

गगाबहन झवेरी और नानीबहन झवेरी गगाबहनके स्वास्थ्य-लाभके लिए यहाँ है। बडी गगाबहन आश्रममे है। वह दो दिन पहले वहाँ पहुँची है।

१. देखिए पृ० २३७।

लक्ष्मी देवदासके साथ बहुत ज्यादा खुश दिखलाई देती है। केलु अब भी यहाँ है, और कुछ दिनों रहेगा। फिर वह वर्धा जायेगा और जमनालालजी के रुई ओटने के कारखानेमें काम करेगा। प्रभावती विशेष प्यार भेजनेका आग्रह कर रही है।

हम सबकी ओरसे स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२८३) से, सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९७४९ से भी।

३०७. पत्र: विनोबा भावेको

७ जुलाई, १९३३

चि० विनोबा,

मैंने तुमपर बहुत बड़ी जिम्मेदारी डाल दी है। लेकिन जो भी जिम्मेदारी आ पड़े उसे उठा लेनेकी शक्ति तुममें है या 'गीता'की भाषामें कहें तो तुम सारा बोझ ईश्वरपर छोड़ पाते हो। आश्रममें जितने लोगोंको भेजा है, उन सबकी ठीक व्यवस्था हो गई होगी। लेकिन अभी तो मैं तुम्हें पश्चिमके चार भाई-बहनोंके बारेमें विशेष रूपसे लिखना चाहता हूँ। चारोंको हरिजन-सेवाके लिए तैयार करना है। जबतक इन लोगोंका हमसे सम्बन्ध है तबतक वे राजनीतिसे अलिप्त रहें। चारोंके साथ काफी मिलते रहना और किसी अंग्रेजी जाननेवाले व्यक्तिको उनकी सहायताके लिए रख देना। मेरीबहन और डंकन भाई दोनों सरल हैं और तुम्हें उनसे कोई परेशानी नहीं होगी। नी० और अमलाबहन (अर्थात् डॉक्टर स्पीगल)के विषयमें यह नहीं कहा जा सकता। नी०का स्वास्थ्य ठीक रहा तो सम्भव है कि वह काफी काम कर पायेगी। अमलाबहनके विषयमें कुछ नहीं कहा जा सकता। उसमें आग्रह है, पर योग्यता कम है। विचार उत्तम होते हुए भी उनपर अमल करनेमें बहुत सुस्त है। अनेक प्रकारकी योजनाएँ बनाया करती है। चारोंको दूधकी आवश्यकता होगी। इन लोगोंको तेल माफिक नहीं आयेगा, ऐसा मेरा विचार है। चारोंकी जरूरतें मालूम कर लेना। उन चारोंसे और दूसरोंसे भी कहना कि फिलहाल मैं उन्हें पत्र लिखनेमें असमर्थ हूँ। भविष्यकी रामजी जाने। . . .[1]को सोचकर एक पत्र लिखना या लिखवाना। तुम्हारी तबीयत अच्छी होगी? मनु बीमार नहीं पड़ी होगी?

बालकृष्ण और छोटेलालके स्वास्थ्यकी खबर अच्छी नहीं थी। रामदास वहाँ जम गया होगा और वहाँकी जलवायु उसे, नीमू और बच्चोंको माफिक आ गई होगी। विद्या हिंगोरानी वहाँ आई है। वह शरीर और मनसे नाजुक है पर वह

१. साधन-सूत्रमें नाम अस्पष्ट है।

अत्यन्त पवित्र महिला है। उसमें भक्तिकी मात्रा बहुत ज्यादा है। उसकी तरफ लक्ष्मीबहन ध्यान देती होगी, इसलिए ज्यादा नहीं लिखता। वत्सलाका डर दूर हो गया होगा। मदालसा प्रगति कर रही होगी। हरिजनोंसे तुम्हारा सम्पर्क दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा होगा। उपवासकी कड़ीकी बात मुझे भूली नहीं है। वह मेरे मनमें रहती है। ऐसा लगता रहता है कि इसके बिना हमारा प्रायश्चित्त पूरा नहीं हो सकता। मेरा यह अभिप्राय नहीं कि वह इससे ही पूरा हो जायेगा। किन्तु यदि योग्य स्त्री-पुरुष उपवासकी शृंखलामें भाग लें तो अस्पृश्यता-निवारणका काम बहुत आगे बढ़ेगा, ऐसा मेरा विचार जरूर है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३०८५) से।

३०८. पत्र : हेमप्रभा दासगुप्तको

७ जुलाई, १९३३

चि० हेमप्रभा,

तुमारा खत मिला। उमेद है अब अच्छी हो गई होगी। तुमारी परीक्षा ईश्वर चारों ओरसे कर रहा है। तुमारे चित्तमें शांति है यही बड़ी बात है। मैं तुमको क्या आश्वासन दूं? मुझे लिखा करो।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १७०२) से।

३०९. पत्र : अमतुस्सलामको

७ जुलाई, १९३३

प्यारी बेटी अमतुल सलाम,

तुम्हारा खत बहुत दिनोंके बाद मिला। मुझे बहुत खुशी हुई। 'प्यारी' लफ्ज अगर मेरे कोई खतमें छूट गया, तो उसके माने ऐसे कभी नहीं हो सकते कि तुम प्यारी मिट गई।

यह सुनकर कि तुमको अब अच्छा है, मैं बहुत खुश हुआ। तुम्हारा और खत मुझे नहीं मिला है। मेरे सब हाल तो तुम सबको मिलते रहते हैं।

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० २८७) से।

३१०. अनशनके बारेमें[1]

अनशन पूरा होनेके बादसे ही मुझे यह लग रहा था कि अपने अनशनके बाद सार्वजनिक रूपमे यदि कुछ भी लिखूं, तो वह हरिजनोके बारेमे, 'हरिजन' पत्रमे और अनशनके सम्बन्धमे ही हो। ईश्वर-कृपासे यह इच्छा पूरी हुई है और मै इसी कृपाके कारण पहलेकी तरह भविष्यमे कुछ-न-कुछ 'हरिजनबन्धु' मे देते रहनेकी आशा रखता हूँ। पर इसका यह अर्थ नही है कि प्राप्त कामको निपटानेकी मुझमे पहले-जैसी शक्ति आ गई है। अभीतक मुझे बड़ी सावधानीसे रहना पडता है और यह भी आवश्यक होता है कि मै बिस्तरपर लेटा रहूँ। इसलिए खास तौरपर पत्र लिखने-वालोसे मै धीरज रखनेकी प्रार्थना करता हूँ। शायद मुझे अच्छा होनेमे अभी एक महीना और लगेगा। कौन जानता है कि इस एक महीनेमे क्या होगा? हम क्षण-जीवी है। दूसरे ही पलमे क्या होगा, इसका भी हमे पता नही होता। तो फिर मेरे-जैसे हरिजन-सेवकोकी अभिलाषाओके बारेमे तो कहा ही क्या जाये? 'हरिजन-बन्धु' के जो पाठक उसे सेवाभावसे ही लेते और पढते है, उन्हे मेरी सलाह यह है कि वे मेरे लेखो और रायोकी प्रतीक्षा ही न करे। हरिजन-सेवकका मार्ग तो बिलकुल स्पष्ट है, क्षेत्र विशाल है। 'हरिजनबन्धु' हर हफ्ते चालू प्रवृत्तियोकी कल्पना करानेका प्रयत्न करता है। वह यह भी बतानेका प्रयत्न करता है कि क्या करना चाहिए, क्या हो सकता है और वह कैसे किया जा सकता है। उसमे से सभीको कुछ-न-कुछ सेवाका सुयोग मिल जाना चाहिए। तो फिर मेरे लेख या मेरी रायकी क्या जरूरत रहती है? मुझे उसके लिए कुछ लिखनेकी इच्छा हो जाती है, तो वह सिर्फ आत्मसन्तोषके लिए ही है। जब मै पाठकोसे कुछ कहना चाहता हूँ, उन्हे कुछ समझाना चाहता हूँ, तभी लिखनेकी जरूरत होती है। किन्तु लिखनेकी जरूरत हो या न हो, या मुझमे लिखनेकी शक्ति न रहे या मुझे अवकाश न हो, तो भी मै आशा रखता हूँ कि पाठक शिथिल नही होगे और 'हरिजनबन्धु' के साथ अपने सम्बन्ध बनाये रखेगे।

अब अनशनके बारेमे लिखता हूँ।

बहुतोने यह प्रश्न किया है कि ईश्वरकी प्रेरणा क्या चीज थी? वह प्रेरणा मुझे किस तरह हुई? यह मैने कैसे जाना कि वह ईश्वरकी ही प्रेरणा थी? क्या मैने ईश्वरके दर्शन किये है? मुझे उसका साक्षात्कार हुआ है? लोग अभीतक इस तरहके प्रश्न पूछ रहे है।

मेरे लिए ईश्वर-प्रेरणा, अन्तरकी गूढ़ ध्वनि, अन्त:प्रेरणा और सत्यका सन्देश, वगैरह एक ही अर्थके सूचक शब्द है। मुझे किसी आकृतिके दर्शन नही हुए, ईश्वरका

१. इसी लेखका संक्षिप्त अनुवाद ९-७-१९३३ के **हरिजन** में भी छपा था।

साक्षात्कार नही हुआ है। मै यह नही मानता कि इस जन्ममे साक्षात्कार होना होगा तो भी वह किसी आकृतिका दर्शन करना होगा। ईश्वर निराकार है, इसलिए ईश्वरका दर्शन आकृतिके रूपमे नही हो सकता। जिसे ईश्वरका साक्षात्कार हो जाता है, वह सर्वथा निष्कलक बन जाता है। वह पूर्णकाम हो जाता है। उसके विचारमे दोष, अपूर्णता या मैल नही होता। उसका कार्यमात्र सम्पूर्ण होता है, क्योकि वह स्वय कुछ करता ही नही। उसके भीतर रहनेवाले अन्तर्यामीको ही सब-कुछ करना है। वह तो उसीमे समाकर शून्यवत् हो गया है। ऐसा साक्षात्कार करोडोमे किसी एकको ही होता होगा। हो जरूर सकता है, इस बारेमे मुझे बिलकुल शका नही। मुझे यह साक्षात्कार करनेकी अभिलाषा है, किन्तु मुझे हुआ नही, और मै जानता हूँ कि मै अभी इससे बहुत दूर हूँ। मुझे जो प्रेरणा हुई, वह दूसरी ही चीज थी, और ऐसी प्रेरणा समय-समयपर या किसी समय बहुतोको होती है। ऐसी प्रेरणा होनेके लिए खास साधनाकी जरूरत तो होती ही है। मामूली-से-मामूली काम करनेकी शक्ति प्राप्त करनेके लिए भी अगर कुछ-न-कुछ प्रयत्न, कुछ-न-कुछ साधनाकी जरूरत रहती है, तो ईश्वरकी प्रेरणा प्राप्त करनेकी योग्यताके लिए प्रयत्न और साधनाकी जरूरत हो, इसमे क्या आश्चर्य? मुझे जो प्रेरणा हुई उसके विषयमे कहता हूँ· जिस रातको वह प्रेरणा हुई, उस रातको बडा हृदय-मथन होता रहा। चित्त व्याकुल था। मार्ग नही सूझता था। जिम्मेदारीका बोझा मुझे कुचले डालता था। इतनेमे मैने एकाएक आवाज सुनी। मैने देखा कि वह बहुत दूरसे आती हुई मालूम होनेपर भी बिलकुल नजदीककी थी। यह अनुभव असाधारण था। वह आवाज ऐसी ही थी जैसे कोई व्यक्ति हमसे कुछ कहता है, तब होता है। इच्छा न होनेपर भी उसे सुने बिना गति ही नही है, यह मै साफ देख सका। उस समय मै स्वप्नावस्थामे नही था। मै बिलकुल जागृत था। असलमे रातकी पहली नीद लेकर मै उठा था। यह भी न समझ सका कि मै कैसे उठ गया। आवाज सुननेके बाद हृदयकी वेदना शान्त हो गई। मैने निश्चय कर लिया, अनशनका दिन और उसका समय निश्चित किया। मेरा भार एकदम हल्का हो गया और हृदय उल्लासमय हो गया। वह समय ११ से १२ बजेके बीचका था। थकनेके बजाय मै ताजा हो गया। इसलिए आकाशके नीचे बिस्तरपर जहाँ पडा था, वहाँसे उठकर कोठरीमे जाकर और लालटेन जलाकर मुझे जो लिखना था वह लिखने बैठा। वह लेख[1] पाठकोने देख लिया होगा।

पूछा गया है, क्या मै यह सिद्ध कर सकता हूँ कि वह ईश्वरकी प्रेरणा थी और मेरे सन्तप्त मस्तिष्ककी तरग नही थी। जो ऊपर दिये गये वर्णनको नही मान सकता, उसके लिए मेरे पास दूसरा सबूत नही है। पूछनेवाला जरूर कह सकता है कि मेरा वर्णन केवल आत्मवचना है। ऐसा और लोगोके बारेमे भी हुआ है। मै यह तो हरगिज नही कह सकता कि मेरे विषयमे आत्मवचनाकी सम्भावना थी ही नही। ऐसा कहूँ तो उसे साबित नही कर सकता। मगर इतना जरूर कहता हूँ कि सारी

१. देखिए पृ० ७४-६।

दुनिया मेरा कहना न माने और विरुद्ध राय दे, तो भी मै अपने इस विश्वासपर कायम रहूँगा कि मैने भीतरी आवाज सुनी और मुझे ईश्वरकी प्रेरणा हुई।

परन्तु कुछ लोग तो ईश्वरके अस्तित्वसे ही इनकार करते है। वे तो यही कहते है कि ईश्वर-जैसी कोई शक्ति ही नही, वह केवल मनुष्यकी कल्पनामे ही रहता है। जहाँ इस विचारका वोलवाला हो, वहाँ तो यह भी कहा जा सकता है कि किसी भी चीजका अस्तित्व नहीं है। क्योकि ऐसे लोगोंको तो सभी कुछ कल्पनाके घोड़े-जैसा ही लगना चाहिए। ऐसे लोग भले ही मेरे कथनको कल्पनाका एक नया घोडा माने, मगर उन्हे भी समझना चाहिए कि जवतक यह कल्पना मुझपर अधिकार जमाये हुए है, तवतक मै उसीके अधीन रहकर काम कर सकता हूँ। सच्ची-से-सच्ची चीजे भी सापेक्ष या सन्दर्भके अनुपातमे ही सच्ची होती है। सम्पूर्ण और शुद्ध सत्य तो केवल ईश्वरके वारेमे ही हो सकता है। अपने लिए तो जो आवाज मैने सुनी, वह मुझे अपने अस्तित्वसे भी ज्यादा सच मालूम हुई है। ऐसी आवाजे मैने पहले भी सुनी है। उनके अनुसार चलकर मैने कुछ खोया नही, वल्कि वहुत-कुछ पाया है। दूसरे लोगोंका भी, जिन्होने ऐसी आवाजे सुननेका दावा किया, यही अनुभव है।

एक दूसरा सवाल भी जरा सोच लेने लायक है। जिस अनशनके दौरान कई होशियार डॉक्टरोकी उपस्थिति और मदद रहती हो और वे अत्यन्त प्रेमपूर्वक उपवासीकी देखभाल कर रहे हो और उसे रास्ता वता रहे हो, जहाँ उपवासीको अनेक प्रकारसे आराम दिया जाता हो — और मेरे लिए यह सव-कुछ हुआ है — वह अनशन क्या ईश्वर-प्रेरित माना जा सकता है? इस तरहकी आलोचनामे कोई सार नही, यह तुरन्त नही कहा जा सकता। इसमे कोई शक नहीं कि मेरे लिए जो-जो सुविधाएँ कर दी गई थी, वे न होती और किसी एकान्त स्थानमे किसीकी मददके विना उपवास किया होता, तो जिस प्रेरणाका दावा मैने किया है, वह ज्यादा चमक उठती।

इस तरह आलोचनाको एक हदतक मान लेनेपर भी मुझे कहना चाहिए कि प्रेमी मित्रोकी उदारताका मैने जो उपयोग किया है, उसके लिए न मुझे पछतावा है, न शर्म। मै मृत्युके साथ लड रहा था। इसलिए मेरी प्रतिज्ञाके विरुद्ध न जाने-वाली जितनी मदद मिल गई, उस सवको मैने ईश्वरकी भेजी हुई मदद मानकर नम्रतापूर्वक स्वीकार कर लिया।

कोई मुझसे पूछे कि अनशनके उचित होनेके वारेमे मुझे अव कोई शका है या नही, तो मै कह सकता हूँ कि मुझे जरा भी शका नही। इतना ही नहीं, इस अनुभवके तो मेरे पास अत्यन्त ही मीठे सस्मरण है। यद्यपि शरीरकी व्यथा काफी थी, परन्तु उस समयकी अवर्णनीय आन्तरिक शान्तिसे उस व्यथाका पूरी तरह वदला मिल गया। शान्ति तो मुझे अपने सभी अनशनोंमे मिली है, किन्तु इस हालके अन-शनसे वहुत शान्ति मिली। शायद उसका कारण यह था कि इस वार मेरी दृष्टि अनशनके किसी भी परिणामपर नही थी। पहलेके अनशनोंमे मुझे ऐसे परिणामोंकी

आशा रहती थी जो थोडे-बहुत साफ तौरपर दिखाई दे सकते थे। परन्तु इस उपवासके बारेमे ऐसी कोई बात थी ही नही। इतनी श्रद्धा जरूर थी कि इसके परिणाम-स्वरूप आत्मशुद्धि और दूसरे साथियोकी शुद्धि थोडी-बहुत होगी ही। साथी इतना जरूर समझ लेगे कि आन्तरिक शुद्धिके बिना सच्ची हरिजन-सेवा असम्भव है। लेकिन ऐसे परिणामका अन्दाज लगानेका हमारे पास कोई पैमाना नही होता। इसलिए परि-णामपर बाह्य दृष्टि रखनेके बजाय उन इक्कीस दिनोमे मै मुख्यत अन्तर्मुख रहा, यह कहा जा सकता है।

इस अनशनके स्वरूपपर थोडा और विचार कर लेना जरूरी है। क्या वह केवल देह-दमन था? मेरा दृढ विश्वास है कि केवल देह-दमनके लिए किया गया उपवास डॉक्टरी दृष्टिसे शरीरको कुछ लाभ पहुँचाता है, इसके अलावा उसका कोई खास असर नही होता। यह मै जानता हूँ कि मेरा उपवास देह-दमनके लिए बिलकुल नही था। उसकी कोई तैयारी भी नही थी। उपवास आरम्भ करनेसे पहले मैने उसकी कल्पना भी नही की थी। इस अरसेमे मित्रोको लिखे गये पत्र यह साफ बताते है कि उस समय यह अनशन मेरी दृष्टिमें था ही नही। मेरे लिए यह अनशन हृदयसे निकली ईश्वरके प्रति याचना या प्रार्थना थी। प्रार्थनाके विषयमे अपने क्रमिक अनुभवसे मेरे सामने यह स्पष्ट होता रहा है कि थोडे-बहुत अनशनके बिना शुद्ध प्रार्थना असम्भव है। यहाँ अनशनका विस्तृत अर्थ करना जरूरी है। अन-शनका अर्थ है अपनी सब इन्द्रियोको पोषण देनेकी क्रिया थोड़े-बहुत अशमे बन्द कर देना। प्रार्थना हृदयगत वस्तु है। प्रार्थना करता हुआ मनुष्य न आँखोसे दूसरा कुछ देखता है, न कानोसे दूसरा कुछ सुनता है, न दूसरी इन्द्रियोका व्यापार करता है, उसके विचार भी सिर्फ प्रार्थनामे ही लगे रहते है। तो फिर ऐसे समय खानेकी क्रिया मन्द हो जाये या बिल्कुल बन्द हो जाये तो इसमे क्या आश्चर्य? इस प्रकार जो मनुष्य प्रार्थनामे ही लगा हुआ होता है, उसे और कुछ भी काम नही सूझ सकता। ऐसा एक समय जरूर आ सकता है जब मनुष्य केवल प्रार्थनामय हो जाता है। इसीका अर्थ है साक्षात्कार। ऐसे समय तो वह खाता-पीता या कुछ भी काम करता हो, तो भी प्रार्थना ही करता है, क्योकि उसकी प्रवृत्तिमात्र एक महायज्ञ है। वह स्वय शून्यवत् बनकर रहता है। इसे सन्तोने 'सहज समाधि' कहा है। असख्य मनुष्य अनशनमय प्रार्थना करते हो, तो उनमे से थोडे-बहुत ही 'सहज समाधि' प्राप्त कर सकते है। अत मेरे-जैसे मामूली आदमीके लिए तो सर्वेन्द्रिय-दमनसे ही प्रार्थनाका आरम्भ हो सकता है। इस प्रकार अनशनका विचार करे तो यह आध्यात्मिक दृष्टिसे किया जानेवाला दुख-तृप्त हृदयका नाद है। इसमे आत्माकी परमात्मामे लीन हो जानेकी तीक्ष्ण वृत्ति होती है। यह तो मै नही जानता कि मेरा अनशन कहाँतक इस प्रकारका था। पर मै यह जानता हूँ कि वह अनशन सिर्फ इसी दृष्टिसे हुआ था। ईश्वर-प्रेरणाकी मेरी भूख बहुत वर्षोंकी है। वह भूख अभीतक तृप्त नही हुई है। मै कह सकता हूँ कि मेरा सारा पुरुषार्थ इसलिए है कि मेरा छोटे-से-छोटा काम भी ईश्वर-प्रेरित ही हो।

परिणामकी अपेक्षा न होनेपर भी मैं इस अनशनके कुछ परिणाम देख सका हूँ। इस अनशनसे प्रेरित होकर कुछ साथियोंने अपनी शुद्धि की है। मेरा अनशन सिर्फ उन्ही साथियोके दोषोसे सम्बन्ध नही रखता था जिन्हें मैं जानता था। वह हरिजन-सेवामे लगे सभी साथियोंकी और मेरी अपनी शुद्धिके लिए था। उपवासको पूरा हुए अभी थोड़ा ही समय हुआ है। इस बीच जो प्रमाण मेरे पास आये हैं, उनसे जाहिर होता है कि अनशनसे साथियोमे शुद्धि हुई है और हो रही है। यह भी कहा जा सकता है कि इस अनशनसे यह बात काफी स्पष्ट हुई है कि हरिजन-सेवाका काम केवल धार्मिक प्रवृत्ति है, वह धार्मिक दृष्टिसे होना चाहिए और उसमे धार्मिक वृत्तिवाले शुद्ध हृदयके सेवक और सेविकाएँ होनी चाहिए।

अस्पृश्यता-निवारणका अर्थ इतना ही नही है कि हरिजनोकी आर्थिक और सामाजिक स्थितिमे सुधार हो जाये। इस कामका ध्येय इससे बहुत आगे बढ़ा हुआ है। अस्पृश्यता अनादि कालसे चली आ रही ईश्वर-निर्मित व्यवस्था है, ऐसा माननेवाले असंख्य हिन्दुओंके हृदयोंको हिलाना है। यह तो स्पष्ट ही है कि इस ध्येयको हम प्राप्त कर ले, तो हरिजनोंकी आर्थिक और सामाजिक स्थिति अपने-आप सुधर जायेगी। उनकी हीन दशाका सबसे बड़ा कारण अस्पृश्यताका भूत है। परन्तु धर्मके नामपर होनेवाला यह अधर्म दूर करने और ऊँच-नीचकी भावनाको बिलकुल मिटा देनेका अर्थ होगा — हिन्दुओंके हृदयका जबरदस्त परिवर्तन कर देना और हिन्दू-धर्मको धीरे-धीरे नष्ट करनेवाले जहरको निकाल डालना। ऐसा परिवर्तन मनुष्यमात्रमे रहनेवाली दयाकी भावनाको जागृत करनेसे ही हो सकता है। यह जागृति अनशनमय प्रार्थनासे सम्भव है, ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है और ऐसी पूर्वजोंकी भी साक्षी है।

इसलिए दिन-दिन मेरा यह विश्वास पक्का होता जा रहा है कि प्रार्थनारूपी अनशनोंकी एक शृंखला बनानी चाहिए, जिसमे योग्य पुरुष और स्त्रियाँ अपना-अपना योग दे और उस शृंखलाकी कड़ियाँ बन जायें। वह शृंखला कैसे बने, कौन उसकी कड़ियाँ बने, यह सब मैं अभी साफ तौरपर नहीं जानता, लेकिन उसके लिए खूब कोशिश कर रहा हूँ। अगर यह शृंखला तैयार की जा सकती हो, तो मेरा दृढ़ विश्वास है कि उससे सुधारक, सनातनी और हरिजन तीनोंको लाभ होगा; संसार भी उस लाभसे वंचित नहीं रहेगा। हरिजन भाई-बहनोंके पत्र बताते हैं कि उनमे मेरे अनशनसे विशेष जागृति हुई है। हिन्दुस्तानके बाहरसे आनेवाले अनेक पत्र बताते है कि व्यक्तियोंके हृदयमें वहाँ भी जागृति हुई है। और अगर मेरे-जैसे एक आदमीके अपूर्ण अनशनसे इतनी जागृति हो सकती है, तो जब अनशनोंकी अविच्छिन्न शृंखला कायम होगी और उसमे अनेक निर्दोष भाई-बहन आडम्बरके बिना, डॉक्टरों वगैरहकी मददकी आशा के बिना और दूसरे किसी आश्वासनके बिना अपना बलिदान देंगे, तो उसका परिणाम कितना बड़ा होगा और उसका असर कहाँतक पहुँचेगा, इसका हिसाब कौन लगा सकता है?

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, ९-७-१९३३

३११. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

८ जुलाई, १९३३

प्रिय "दादी मा",

वृद्धावस्थाके कारण तुम सीधे-सादे हिन्दीके अक्षर भी नही सीख पाती।

तुम्हारी खातिर मैंने 'पेटीकोट' शब्दको ऑक्सफोर्ड शब्दकोशमे देखा और पाया कि मैंने उसका सही प्रयोग किया था।[1] भारतीय महिलाकी स्कर्ट उसकी सार्डीका वह हिस्सा है जो कमरसे नीचे रहता है और पेटीकोटको ढाँकता है।

'वेलास्ट' शब्दका ठीक प्रयोग किया गया था। शब्दकोश देखो। अभी मेरे पास इतना समय नही है कि मेरा जो अभिप्राय है उसके दृष्टान्त तुम्हे दूं। यदि तुम स्वय उन्हे खोज लो तो अच्छा होगा।

जो गलेकी जजीर तुम्हे भेजी है, वह इतनी मजबूत तो है ही कि कुछ महीने काम दे जायेगी। दूसरी आसानीसे बनाई जा सकती है। क्या तुम चाहती हो कि तुम्हे एक अतिरिक्त जजीर भेजूं।

स्नेह।

बापू

अमलाबहन[2]

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल कागजात, सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय और पुस्तकालय।

३१२. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

८ जुलाई, १९३३

प्रिय सतीशबाबू,

× × ×[3]

यदि बगलामे प्रकाशित 'हरिजन' आत्मनिर्भर नही होता तो आप उसे बन्द कर देनेमे न झिझके। जनता चाहती हो तभी उसका प्रकाशन जारी रखना चाहिए। आप उसका मूल्य घटाकर यथासम्भव कम-से-कम कर सकते है। लेकिन फिर

१. देखिए पृ० २४७।

२. देवनागरी लिपिमें गांधीजी के स्वाक्षरोंमें।

३. साधन-सूत्रके अनुसार।

भी काफी ग्राहक न मिले, तो साफ हो जायेगा कि उसकी माँग नहीं है। हरिजन-सेवा ऐसे प्रचारपर निर्भर नहीं है। इस कार्यका क्षेत्र अधिक विस्तृत होनेके बजाय उसमें घनत्व और तीव्रता अधिक होनी चाहिए। तीव्रता ही कार्यका क्षेत्र भी निश्चित करेगी।

डाकका समय पूरा हो गया इसलिए और अधिक कुछ नहीं।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९११९) से।

३१३. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

८ जुलाई, १९३३

चि० प्रेमा,

. . .[1] के बारेमें अपना अनुभव लिखना। बहुत लोग कहते हैं कि वह . . .[2] के लिए अयोग्य है। नारणदासकी भी यही राय है। अपनी राय बताना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३४८) से। सी० डब्ल्यू० ६७८७ से भी, सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक।

३१४. पत्र : एलस्टेयर मैकेको

पर्णकुटी, पूना ९
९ जुलाई, १९३३

प्रिय श्री मैके,

आपने पिताके पत्र का प्रथम पृष्ठ, जिसमें उन्होंने मेरे उपवासका जिक्र किया है, भेजनेके लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ।

संसारके मुख्य धर्मोंके बारेमें मेरी जो राय है वह 'यंग इंडिया' के पृष्ठोंमें कई बार साफ-साफ व्यक्त की गई है। उन धर्मोंके सत्य होनेमें मेरी आस्था है। मैंने उनका अध्ययन किसी आलोचककी तरह नहीं, बल्कि अपनी योग्यतानुसार सत्यके अनुयायीकी तरह किया है, और इसलिए उनके अध्ययनसे मुझे काफी मदद मिली है। मेरी समझमें आजके मेरे विचारोंमें परिवर्तनकी सम्भावना नहीं है। मैं ईसा मसीहको महानतम धर्मोपदेशकोंमें मानता हूँ। किन्तु उन्हें पूर्ण ईश्वर-रूप मानना स्वीकार नहीं करता। आपको यह जानकर हैरत होगी कि प्रगाढ़ प्रार्थनामें मेरा विश्वास तभी दृढ़ होने

१ और २. साधन-सूत्रमें नाम नहीं दिये गये हैं।

लगा था जब मै ईसा मसीहके उपदेशोके बारेमे कुछ भी नही जानता था। लेकिन जब मैने बाइबिल, कुरान तथा दूसरे धर्मग्रन्थोको पढा, तो यह जानकर कि इन सबने उपवासको अन्त.करणसे निकलनेवाली प्रार्थना कहा है और उसे ईश्वरसे घनिष्ठता स्थापित करनेमे सहायक बताया है, तो मेरे विश्वासको और ज्यादा बल मिला।

आपके पिताके पत्रका पृष्ठ मै वापस भेज रहा हूँ।

सलग्न

हृदयसे आपका,

अग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १९१२१) से।

३१५. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

१० जुलाई, १९३३

चि० अमला,

अपनी सभी त्रुटियोको समझनेमे जल्दबाजी मत करो। मै चाहता हूँ कि तुम पत्रोमे मुझे अपनी सहज प्रवृत्तियोके बारेमे लिखती रहो। मुझे जब समय मिलेगा, मै उनमे से कुछकी व्याख्या करूँगा। तबतक इतना जान लो कि मै आलोचनामे जो-कुछ कहता हूँ वह स्नेहयुक्त होता है और मै आशा करता हूँ कि तुम मजाक समझ पाती हो।

स्नेह।

बापू

[अग्रेजीसे]

स्पीगल कागजात, सौजन्य . नेहरू स्मारक सग्रहालय और पुस्तकालय।

३१६. पत्र : नारणदास गांधीको

१० जुलाई, १९३३

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। पुरुषोत्तमने काम शुरू तो कर दिया है किन्तु अभी निश्चिन्त नही हुआ।

केशु अभी यही है। वह शान्त है। मुझे लगता है कि ज्ञानके सम्बन्धमे हमे कुछ ज्यादा करना चाहिए।

पण्डितजी[1] से कहना कि गजानन और बीरूके सम्बन्धमे समझ गया हूँ। रामदास और नीमू आये हुए है। कानो[2] बीमार पड़ गया है, इसलिए उन्हे रुकना पड़ा है।

१. नारायण मोरेश्वर खरे।

२. रामदास गांधीका पुत्र।

महादेवको बिलकुल काम नहीं है। बाबलाको ज्वर हो आया है, किन्तु आज थोड़ा-सा ही है। चिन्ताकी कोई बात नही।

बापू

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३९० से भी, सौजन्य : नारणदास गांधी।

३१७. भाषण : नेताओंके सम्मेलन, पूनामें–१

१२ जुलाई, १९३३

इसके बाद[1] गांधीजी बोले। उन्होंने सम्मेलनके सामने उपवास रखनेके कारण स्पष्ट किये। उन्होंने यह भी कहा कि उपवासके बाद मुझे देशमें चल रहे आन्दोलनकी स्थितिके बारेमे कई सुझाव मिले हैं। अनेक कांग्रेसियोंने मुझसे यह अनुरोध किया था कि मैं उनके विचार जाननेके लिए आन्दोलन स्थगित कर दूँ और इसलिए कार्यकर्त्ताओंका यह सम्मेलन बुलाया गया है। उन्होंने कहा कि यह सुझाव भी दिया गया था कि सर्वश्री- शास्त्री और बिड़लाको भी सम्मेलनमें आमन्त्रित करना चाहिए। परन्तु मैंने कहा कि यदि सर्वश्री शास्त्री और बिड़लाको बुलाया जाये तो समान विचार रखनेवाले दूसरे लोगोंको भी बुलाना चाहिए। चूँकि सम्मेलन कांग्रेसियोका है, इसलिए मैंने यह सलाह दी कि इसमें गैर कांग्रेसियोंकोआमन्त्रित न किया जाये।[2]

श्री गांधीने अपने भाषणके दौरान देशमें शान्ति स्थापित करनेकी अपनी तीव्र इच्छा व्यक्त करते हुए कहा कि मैं शान्ति स्थापनाके लिए निश्चय ही भरसक कोशिश करूँगा।

श्री गांधीने कहा कि सम्मेलन बुलानेका कारण यह नहीं है कि परिस्थितियाँ बदल गई हैं या सरकारने कुछ शर्तें सामने रखी हैं, बल्कि इसका कारण यह है कि मेरे उपवास और बादमें मेरी रिहाईसे विचित्र परिस्थिति पैदा हो गई। मुझे यह सोचकर शर्म महसूस होती है कि यह सब सिर्फ एक आदमीकी वजहसे हो रहा है। परन्तु और कोई चारा नहीं था।

सदस्योंसे अपने विचार निस्संकोच और साफ-साफ व्यक्त करनेके लिए कहते हुए श्री गांधीने कहा कि मैं जानना चाहूँगा कि आप सविनय अवज्ञा आन्दोलनको अनिश्चित कालतक के लिए स्थगित रखना चाहेंगे या कुछ शर्तों-सहित निश्चित अवधितक। उन्होंने कहा कि मुझे पता लगा है कि कुछ लोगोंकी ऐसी राय है कि आन्दोलन बिना शर्त वापस ले लेना चाहिए। अन्य लोगोंका खयाल है कि सरकारके

१. सम्मेलनके प्रधान एम० एस० अणेने पहले भाषण दिया।

२. आगेका अंश हिन्दू, १३-७-१९३३ से लिया गया है।

आग कुछ शर्तें रखनी चाहिए और उनपर समझौता हो जानेपर ही आन्दोलन वापस लेना चाहिए। गांधीजी ने कहा कि मैं सबके विचार सुननेके बाद सोच-विचारकर कल अपनी राय जाहिर करूँगा और कांग्रेसको क्या कार्यवाही करनी चाहिए, इस बारेमें कांग्रेसको सलाह दूंगा।[1]

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १३-७-१९३३ और हिन्दू, १३-७-१९३३

३१८. पत्र : मीराबहनको

१३ जुलाई, १९३३

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र पहुँच गया। तुम कल्पना कर सकती हो कि मुझपर कितना भार आ पडा है। यह पत्र, दूसरे एक-दो महत्त्वपूर्ण पत्र और 'हरिजन' के लेख लिखनेके लिए मैंने मौन ले लिया है। ७ बजे सुबह एक सज्जनको मिलनेका समय दिया है। अभी उसके लिए कुछ मिनट बाकी हैं। ईश्वरकी मुझपर कृपा है कि वह मुझे अपने सामने पडे हुए कामको निवटा सकने योग्य शक्ति दे देता है।

वजन घटता-बढता रहता है। कार्याधिक्यके कारण वह १०१ से घटकर ९९ से भी कम हो गया है। कुछ समयतक इसी तरह घटता-बढता रहेगा। मेरी तबीयत बिलकुल अच्छी रहती है।

मैं चाहता हूँ कि तुम मन और शरीर दोनोकी स्वस्थताकी होडमे, उसकी चिन्ता किये बगैर, मुझे हरा दो। तुमने मुझे पिता और माँ दोनो बना तो लिया, परन्तु मुझसे पाई हुई विरासतमे वृद्धि नही की तो फायदा क्या हुआ? मेरा सचमुच यह विश्वास है कि जहाँ परस्पर कर्त्तव्यका भाव हो, वहाँ ऐसा ही होना चाहिए। माता-पिता उनके दोषो और कमियोके लिए नही बनाये जाते, बल्कि उनमे जो गुण तुमने मान लिये हो उनके लिए बनाये जाते हैं। इसलिए उनके असली या काल्पनिक गुण केवल आत्मसात् ही नही किये जाते, उनमे वृद्धि भी की जाती है। मैं चाहता हूँ, तुम इस नियमको सिद्ध कर दिखाओ। मुझे विश्वास है कि तुम ऐसा कर दिखाओगी।

क्या तुम्हे गोरखनाथकी मशहूर मिसाल मालूम है? वे अपने गुरु मछन्दरनाथसे आगे बढ गये थे।

स्नेह।

बापू

१. समाचारमें आगे कहा गया है: "केवल एक या दोको छोडकर अन्य सभी वक्ताओंने यह राय जाहिर की कि सविनय अवज्ञा स्थगित कर देनी चाहिए, और बावजूद इसके कि सरकार राजबन्दियोंको रिहा करती है या नहीं, यह कदम उठाया जाना चाहिए . . .।"

[पुनश्च:]

मेरे पत्र लिखते समय प्रभावती मेरे पास खड़ी है और तुम्हे स्नेह भेजती है।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९६८०) से; सौजन्य: मीराबहन।

३१९. भाषण: नेताओंके सम्मेलन, पूनामें–२

१४ जुलाई, १९३३

पिछले सितम्बरसे जो घटनाएँ घटी थीं, उनका हवाला देनेके बाद गांधीजी ने अपना भाषण शुरू किया। उन्होंने कहा:

मुझपर दोष लगाया जाता है कि मैंने तीन पाप किये है। वे ये है: (१) साम्प्रदायिक आधारपर निर्वाचनके निर्णय (कम्यूनल अवार्ड)मे परिवर्तनके लिए मेरा उपवास, (२) अस्पृश्यता-विरोधी प्रचार चलानेके लिए मेरे द्वारा सशर्त स्वतन्त्रताका स्वीकार किया जाना (३) सविनय अवज्ञा आन्दोलनको स्थगित करना।

जहाँतक साम्प्रदायिक निर्णयका सम्बन्ध है, मैंने गोलमेज परिषद्मे स्पष्ट कर दिया था[४] कि मै 'अछूतोके लिए पृथक् निर्वाचन' के विरोधमे सघर्ष करते हुए मिट जाऊँगा। उस वक्तव्यके अनुरूप आवश्यक था कि मै साम्प्रदायिक आधारपर किया गया निर्णय बदलवाता। इसलिए मुझे सरकारसे पत्र-व्यवहार करना पड़ा। उपवास और जेलके अन्दरसे प्रचार उसके स्वाभाविक परिणाम थे।

तीसरे आरोपका उत्तर देते हुए गांधीजी ने कहा कि जैसे ही मुझे रिहा करके जेलका दरवाजा मेरे लिए बन्द कर दिया गया, मैंने सोचा कि गिरफ्तारियों, लाठी-चार्ज, आदिकी खबरें सुन-सुनकर मैं उपवासके दौरान जीवित नहीं रह सकूँगा; इसलिए मैंने श्री अणेसे प्रार्थना की कि आन्दोलन स्थगित कर दिया जाये।

सविनय अवज्ञाके बारेमें बोलते हुए गांधीजी ने इस तरह कहा:

मैंने हरएकके भाषण ध्यानसे सुने है और जो [आन्दोलन] वापस लेनेकी बात कह रहे है, उनके भाषण और भी ज्यादा ध्यानसे सुने है। मैंने उनके तर्क सुने; परन्तु मैं अभीतक आश्वस्त नही हुआ हूँ। मै वही तर्क आन्दोलनको जारी रखनेके बारेमे भी दूँगा। कईएक वक्ताओसे यह सुनकर कि कार्यकर्त्ता थक गये है और आराम चाहते है, मुझे दु:ख हुआ। यदि उन्होंने यह कहा होता कि वे स्वयं थक गये है, तो मुझे ज्यादा अच्छा लगता। कार्यकर्त्ता नही थके हैं। देश नही थका है। देश [आन्दोलनको] जारी रखनेके लिए तैयार है।

कुछ नेताओंमे विश्वासकी कमीका मुझे दुख है। मुझे पक्का विश्वास है कि किसी सम्मानजनक समझौतेके विना आन्दोलनको वापस लेना गलत और विनाशकारी होगा और इसके घातक परिणाम होंगे। यह राष्ट्रके प्रति विश्वासघात कहलायेगा। सरकार पूरी तरह आत्मसमर्पण चाहती है। मैं मिट्टीमे मिल जाऊँगा पर आत्मसमर्पण

४. देखिए खण्ड ४८, पृ० ३३०।

नही करूँगा। जब सरकारने राष्ट्रीय माँग नही मानी है, तो हम आन्दोलनको किस तरह वापस ले सकते हैं? यह कहना कि आन्दोलन १९३० में शुरू हुआ, गलत है। असली आन्दोलन १९२० मे शुरू हुआ और सघर्ष अभी जारी है, हालाँकि बीचमे कुछ सालोंके लिए उसमे विराम-सा आ गया था।

अब उसे वापस नही लिया जा सकता। सच्चा सत्याग्रही अन्ततक अपने उद्देश्यकी प्राप्ति होनेतक सघर्ष करता ही रहेगा। कईएक वक्ताओंने सख्याकी कमीका हवाला भी दिया है। जो ऐसा कहते है वे सत्याग्रहका क ख ग भी नही जानते। मुझे सख्याकी परवाह नही है। मैं आपको ऐतिहासिक तथ्य दे सकता हूँ जहाँ मुट्ठीभर लोगोंने भारी सकटके बावजूद लड़ाई लडी और विजयी हुए।

गांधीजी ने उन लोगोंके रुखपर, जो आन्दोलन वापस लेनेके पक्षमें हैं, खेद प्रकट किया। उन्होने दोहराया कि देश नहीं, कुछ नेतागण अब थक गये हैं। उन्होने काठियावाडके बैलोका उदाहरण दिया कि जब दोनोमें से एक बैल बैठ जाता है तो दूसरेको भी बैठना पड़ता है। परन्तु यदि दूसरा खडा हुआ बैल काफी मजबूत हो, तो बैठे हुए बैलको भी खड़ा होना पड़ता है। बताया जाता है कि गांधीजी ने कहा कि दमनके कारण सामूहिक सविनय अवज्ञा जारी रखना सम्भव नहीं है और इसलिए उन्होंने व्यक्तिगत सत्याग्रहकी योजना बनाई है जिसमें हर कार्यकर्त्ता स्वयं अपना नेता होगा। कई वक्ताओ द्वारा जिस रचनात्मक कार्यक्रमका सुझाव दिया गया था, उसका हवाला देते हुए गांधीजी ने कहा कि यह भ्रम है। यदि आन्दोलन वापस ले लिया गया तो देशमें रचनात्मक कार्यक्रम जारी नहीं रखा जा सकता।

एक वक्ताने सुझाव दिया था कि एक करोड़ कांग्रेस-सदस्योंकी भर्ती की जाये। उसका हवाला देते हुए गांधीजी ने कहा कि यह असम्भव कार्य है। यदि आन्दोलन वापस ले लिया गया तो बारडोलीमें छः सदस्य भी भर्ती नहीं किये जा सकते।

भाषण समाप्त करते हुए गांधीजी ने कहा कि मैं शान्तिकी खोजमें भटक रहा हूँ और सविनय अवज्ञा फिरसे आरम्भ करनेसे पूर्व मैं सम्मानजनक समझौता करनेके सभी उपाय ढूँढूँगा। कुछ मित्रोने उनके वाइसरायको पत्र लिखनेपर आपत्ति की थी। इसपर उन्होने कहा कि सच्चे सत्याग्रहीको बातचीत आरम्भ करनेका प्रस्ताव रखनेमें कोई लज्जा अनुभव नहीं करनी चाहिए। उसे सम्मानजनक समझौता करनेकी भरसक कोशिश अवश्य करनी चाहिए। बातचीत कमजोरीकी वजहसे नहीं, पूर्ण शक्तिकी भावनासे आरम्भ की जा रही है। उन्होने सम्मेलनसे अपील की कि यदि वे लोग आवश्यक समझें तो उन्हे [गांधीजी को] यह अधिकार दे दिया जाये कि वे वाइसरायसे बिना किसी शर्तके मिल ले और सम्मानजनक समझौतेकी कोशिश करे।

गांधीजी ने बिना शर्त आन्दोलन वापस लेनेकी बातका विरोध किया और कहा कि समझौतेकी बातचीतसे पहले बिना शर्त आन्दोलन वापस लेनेकी सरकारकी माँग एक जाल है। उन्होंने सदस्योंसे कहा कि वे इस जालमें न फँसें। अपने भाषणके

उपरान्त उन्होंने सदस्योंको अपने वक्तव्यपर विचार व्यक्त करनेके लिए कहा। उन्होंने वक्ताओंसे कहा कि वे उनके प्रति व्यक्तिगत निष्ठाके कारण उनका समर्थन न करें।[1]

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १५-७-१९३३

३२०. तार : वाइसरायके निजी सचिवको[2]

१४ जुलाई, १९३३[3]

वाइसरायके निजी सचिव

वाइसराय कैम्प

क्या महामहिम शान्तिकी सम्भावनाका रास्ता खोजनेके खयालसे भेंटकी अनुमति देंगे। कृपया तार दीजिए।[4]

गांधी

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) (१४), पृ० ४२। एस० एन० २१५२६ भी।

१. गांधीजी के भाषणके बाद सम्मेलन सदस्योंको विचार-विमर्श करने और अपना मत स्थिर करनेके लिए अवकाश देनेके विचारसे एक घंटेके लिए स्थगित कर दिया गया। सम्मेलनकी बैठक जब पुनः आरम्भ हुई तब गांधीजी ने प्रतिनिधियों द्वारा पूछे गये प्रश्नोंका उत्तर दिया; देखिए परिशिष्ट ८। सम्मेलनने गांधीजी को वाइसरायसे बिना शर्त भेंटकी अनुमति देनेका अनुरोध करनेका अधिकार दिया। देखिए अगला शीर्षक।

२. इस तारका गांधीजी के हाथका लिखा मसविदा भी प्राप्त है; उसका आशय यही है, शब्दोंमें कुछ फर्क है।

३. एस० एन० साधन-सूत्रके अनुसार।

४. उत्तरमें वाइसरायके निजी सचिवका तार इस प्रकार था: "भेंटकी अनुमति देनेके विषयमें आपके तारके उत्तरमें वाइसराय महोदयने मुझसे यह कहनेको कहा है कि यदि परिस्थितियाँ भिन्न होतीं तो वे आपसे सहर्ष मिलते। लेकिन ऐसा लगता है कि आप सविनय अवज्ञा आन्दोलनको, कुछ शर्तोंके सिवा, वापस लेनेके लिए तैयार नहीं हैं और वाइसराय महोदयसे आप जो भेंट करना चाहते हैं उसका उद्देश्य सरकारसे इन्हीं शर्तोंके विषयमें बातचीत करना है। ऐसा निर्णय भी ले लिया गया मालूम होता है कि इस बातचीतके फलस्वरूप यदि सरकारके साथ कांग्रेसका समझौता न हो तो पहली अगस्तसे कांग्रेस सविनय अवज्ञा पुनः शुरू कर दे। आपको यह याद दिलानेकी तो जरूरत ही नहीं है कि सरकारकी स्थिति इस विषयमें यह है कि सविनय अवज्ञा आन्दोलन पूर्णतः असंवैधानिक है, उसके साथ कोई समझौता नहीं हो सकता और सरकार उसे बंद करानेके लिए किसी तरहकी बातचीतमें कोई हिस्सा नहीं लेना चाहती। २९ अप्रैल, १९३२ को भारत-मन्त्रीने हाउस ऑफ कामन्समें यह कहा था कि कांग्रेसका सहयोग प्राप्त करनेकी शर्तके रूपमें कांग्रेसके साथ कोई सौदा करनेका सवाल ही पैदा नहीं होता। अपने परवर्ती वक्तव्योंमें सरकार लगातार इस स्थितिपर कायम रही है। यदि कांग्रेस एक संवैधानिक दलकी स्थितिको

३२१. उलटा रास्ता

अपनेको सनातनी कहनेवाले एक प्रोफेसरके पत्रसे नीचे कुछ अश उद्धृत किये जा रहे हैं। उद्धरण पढने लायक है

> मैं एक पक्का सनातनी ब्राह्मण हूँ। मैंने अनेक प्रकारसे सनातनधर्मकी सेवा की है। सनातनधर्म पर मैंने पुस्तके लिखी है और लेख भी लिखे है। अनेक सनातनी सस्थाएँ और नेता मेरे इस सेवा-कार्यके साक्षी है। इसलिए सनातनधर्म पर बोलनेका मैं अधिकार रखता हूँ। अबतक मैं हरिजनोके मन्दिर-प्रवेशका विरोधी था। किन्तु आज अचानक मेरी अन्तरात्माने मुझसे कहा कि यदि तथाकथित अस्पृश्योको मन्दिरोमें पतितपावन भगवानके दर्शनका अधिकार न मिला, तो हिन्दू-धर्मका विनाश निश्चित है। पिछले महीनोके कटु अनुभवने मेरी विचारधारामें क्रान्तिकारी परिवर्तन कर दिया है। मैं जानता हूँ कि मेरे इस कथनसे बहुतोको आश्चर्य होगा। बहुतेरे तो यह भी कहेगे कि यह मनुष्य अपना धर्म त्यागकर भाग रहा है। लेकिन मुझे तो हिन्दुओ और हिन्दू-धर्मकी सुरक्षा ही आज एकमात्र धर्म-कार्य प्रतीत होता है और इसके लिए मैं दुनिया-भरकी बदनामी अपने सिरपर लेनेको तैयार हूँ। . . . हिन्दुओकी आज कैसी दुर्दशा हो रही है। उनकी विपत्तिका पार नहीं। किसी भी दुखी हिन्दूको देख कर मेरी आँखोसे आँसू बहने लगते है और मैं यथासाध्य उसका दुःख दूर करनेकी कोशिश करता हूँ . . . उन्हे इस प्रकार दुर्दशामें ग्रस्त देखनेसे तो मर जाना अच्छा . . . . पर सनातनी हिन्दुओको अपनेसे सहमत करनेके लिए अगर आप मेरी एक शर्त मान ले तो बड़ा अच्छा हो। वह शर्त यह है कि सिर्फ उन्हीं हरिजनोंको मन्दिर-प्रवेशका अधिकार दिया जाये जिन्होने नित्य स्नान करने, स्वच्छ वस्त्र पहनने और गोमांस तथा मुरदार मांस न खानेकी दृढ प्रतिज्ञा कर ली हो। बेचारे सनातनियोंका भी दोष नहीं है। उनकी इन गन्दी आदतोंने ही वस्तुतः अस्पृश्यताको जन्म दिया है। हरिजन जिन निर्योग्यताओसे पीड़ित है, उनके लिए बहुत हदतक वे खुद ही दोषी है। हरिजनोको उनकी गन्दी आदतोके लिए न धिक्कारकर सनातनियोसे मन्दिर-प्रवेशके लिए कहना, मेरी समझमें, उनकी बुरी आदतोको और प्रोत्साहन देना है।

पुन. अपनाना चाहती है और इस आन्दोलनको, जिससे देशको गम्भीर क्षति पहुँची है और कष्ट उठाना पड़ा है, समाप्त करना चाहती है, तो उसके लिए रास्ता खुला ही है। कांग्रेस सविनय अवज्ञा आन्दोलनको स्वयं वापस लेकर शान्तिकी स्थापना करे, यह सर्वथा कांग्रेसके हाथकी बात है। लेकिन चूँकि कांग्रेस ऐसा करनेकी इच्छुक नहीं है, इसलिए वाइसराय महोदयसे भेंटकी बातका कोई अर्थ नही रह जाता।"

इसलिए आपसे प्रार्थना है कि मेरे इस सुझावको आप स्वीकार कर लें, और मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि मैं सनातनी मित्रोंको इसके लिए राजी करके रहूँगा कि हरिजनोंको मन्दिर-प्रवेशका अधिकार मिलना चाहिए। इसके लिए मैं जोरोंका प्रचार करूँगा और ईश्वरकी कृपासे मुझे इसमें सफलता भी मिलेगी।

पाठकको यह नही सोचना चाहिए कि इस पत्रमे 'अन्तरात्माकी वाणी' का जो उल्लेख है, उसका उपवासके वारेमे मेरे दावेसे कोई सम्वन्ध है। यह पत्र-लेखकका स्वतन्त्र विचार है। यह पत्र गत २५ अप्रैलका है। सम्पादकने कई पुराने पत्र अपने पास रख छोड़े थे, जो आज मेरे सामने लाये गये है। यह उन्हीं पत्रोंमे से एक है। मालूम नही कि विद्वान पत्र-लेखकने अपने विचार तवसे कुछ वदले हैं या वे अव भी वैसे ही हैं। पर इस प्रकारके विचार अकसर मेरे सामने आये है। इसलिए भ्रम-निवारण जरूरी है। सनातनी सज्जनकी विचारधारामे जो परिवर्तन हुआ, उसपर मैं सन्तोष प्रकट करता हूँ। पर मैं यह कहे विना नही रह सकता कि हरिजनोंके मन्दिर-प्रवेशपर वे जो शर्तं लगाना चाहते हैं, उससे तो उनका उद्देश्य ही विफल हो जाता है। वह यह भूल जाते है कि हरिजनोंकी वर्त्तमान दुर्दशाके जिम्मेवार सवर्ण हिन्दू है। इसलिए हमें तो उन्हे, जिस रूपमे वे हैं, उसी रूपमे अपनाना चाहिए और यह विश्वास रखना चाहिए कि हमारे संसर्ग और प्रेमसे — अगर हम सच्चे होंगे तो — सभ्य-समाजके लिए अरुचिकर उनकी तमाम बुरी आदतें आप ही छूट जायेगी। हरिजनोंको उनकी वर्त्तमान दशापर धिक्कारना ठीक वैसा ही है, जैसेकि कोई गुलामोंका मालिक अपने गुलामोंकी दुर्दशा और गन्दगीके लिए उन्हे ही दोषी ठहराये। गुलामोंका मालिक अगर यह शर्त रखे कि गुलामीसे छुटकारा मिलनेसे पहले गुलामोंको अपनी गन्दगी खत्म करनी चाहिए, तो इस वातपर किसे हँसी न आयेगी। यही नही, वल्कि यह भी कहा जायेगा कि गुलामोंके मालिकका यह सव ढोंग है और गुलामोको मुक्त करनेकी उसकी नीयत ही नही है। यह वात भी ध्यानमें रखनी चाहिए कि मन्दिरोंमे जानेके लिए जो शर्तं दूसरे सव हिन्दुओंपर लागू है, वह हरिजनोंपर भी लागू होगी। हरिजनों और सवर्ण हिन्दुओंमें कोई प्राकृतिक जाति-भेद होता तो वे तुरन्त पहचान लिये जाते। प्रकृतिने उनकी पहचानके कोई खास निशान नही वनाये हैं। आज भी हजारों नहीं, तो सैकड़ो हरिजन विना पहचाने मन्दिरोंमे जाते हैं। जनगणनाकी रिपोर्टोंपर इस पत्रमे जो विचार हुआ है[1] उससे यह समझमे आ सकता है कि उनमे जिन लोगोंको 'अस्पृश्य' वर्गमे नहीं रखा गया है उन सवने विना रोक-टोक मन्दिरोंमें प्रवेश किया होगा। नई जनगणनामे कुछ जातियोंको पहली वार अस्पृश्योंकी सूचीमें शामिल किया गया है और कुछको उसमे से निकाल दिया गया है। केवल इसीसे किसी जातिकी स्पृश्यता या अस्पृश्यता सिद्ध नहीं होती। इस प्रकार विना पहचाने जो तथाकथित राज्य-रचित अस्पृश्य मन्दिरोमे चले जाते हैं उसका श्रेय हिन्दुओंको कदापि नही मिल सकता। चाहिए तो यह कि सवर्ण हिन्दू

१. देखिए पृ० ६५-८ और ११८-२१।

अस्पृश्यताको पाप समझकर स्वेच्छासे त्याग दें और इस प्रकार अपनेको शुद्ध करें। सच्चा श्रेय उन्हें इसीमें मिलेगा। यह बात मैं अनेक बार कह चुका हूँ कि अस्पृश्यता जिस रूपमें आज बरती जा रही है, उसी रूपमें उसी अर्थमें मैं उसे ले रहा हूँ। प्रोफेसर तथा उनके ही समान विचारवाले सज्जनोंको यह समझ लेना चाहिए कि अस्पृश्यता-निवारणका यह आन्दोलन केवल हरिजनोंको खुश करनेके लिए नहीं चलाया जा रहा है। इसका लक्ष्य हिन्दू-समाजके चलनमें आमूल परिवर्तन करना है। प्राणिमात्र समान हैं और भेद-भाव मिथ्या है, गाया है — हिन्दू-धर्मकी यह उच्च और असदिग्ध घोषणा होते हुए भी, उसमें जो ऊँच-नीचका भेदभाव घर कर बैठा है उसको नष्ट करना ही इसका लक्ष्य है। इस विश्वासका सीधा परिणाम कम-से-कम यह होना चाहिए कि मनुष्यमात्रके साथ समान व्यवहार किया जाये। और यह विश्वास केवल संन्यासियोंके लिए नहीं है, यह मनुष्य-मात्रके लिए है और नित्य व्यवहारके लिए है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १५-७-१९३३

३२२. तार : सी० एफ० एन्ड्रयूजको[1]

१५ जुलाई, १९३३

एन्ड्रयूज
इसूहोस्ट
लन्दन

अनौपचारिक सम्मेलन[2] कल रात समाप्त हो गया। सर्वसम्मतिके अनुसार वाइसरायको शान्तिकी सम्भावनाका मार्ग खोजनेकी दृष्टिसे भेंटकी माँग करते हुए तार दे दिया।[3]

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एम० एन० २१५२७) से।

१. तार एन्ड्रयूजके १४ जुलाई, १९३३ को लन्दनसे भेजे गये तारके उत्तरमें था जिसमें लिखा था: "कृपया यहाँकी ठीक-ठीक मौजूदा हालतके बारेमें अपनी भाषामें एकदम तार दें। (एस० एन० २१५२७)

२. कांग्रेसके कुछ प्रमुख नेताओंका, जो कि पूनामें १२ जुलाईसे १४ जुलाईतक हुआ; देखिए पृ० २७४-५ और २७६-८।

३. देखिए पृ० २७८।

३२३. पत्र : कृष्णस्वामीको

पर्णकुटी, पूना,
१६ जुलाई, १९३३

भाई कृष्णस्वामी,

आपका खत मिला। आपका श्री राजगोपालाचारीसे परिचय है यह भी मुझे राजाजी से मालूम हुआ। आपके विवाहपर मेरा आशीर्वाद है।

मोहनदास गांधीके आशीर्वाद

श्रीयुत कृष्णस्वामी
दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार
ट्रिप्लिकेन
मद्रास[1]

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ६५८०) से। सी० डब्ल्यू० ४४०५ से भी।

३२४. प्रमाण-पत्र : परशुराम मेहरोत्राको

१६ जुलाई, १९३३

श्री परशुराम मेहरोत्राका मुझे कई वरसोका परिचय है। उसको मैंने उत्साही, उद्यमी और प्रामाणिक युवक पाया है। उसकी अभिरुचि सम्पादन कार्यकी ओर है। मेरी उमीद है कि उसको ऐसा कार्य शीघ्र मिल जायगा और उसमें उसको सफलता मिलेगी।

मोहनदास गांधी

प्रमाण-पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ५८४८) से। सी० डब्ल्यू० ३०७१ से भी, सौजन्य : परशुराम मेहरोत्रा।

१. पता सी० डब्ल्यू० साधन-सूत्रसे लिया गया है।

३२५. तार: वाइसरायके निजी सचिवको

[१७ जुलाई, १९३३][1]

वाइसरायके निजी सचिव
शिमला

इसी तारीखके आपके तारसे मुझे दुःख और आश्चर्य हुआ। सरकार एक अनौपचारिक सम्मेलनकी गुप्त कार्यवाहीके अनधिकृत प्रकाशनपर सरकारी तौरपर ध्यान देगी और उसके आधारपर भेंटकी प्रार्थनाको अस्वीकार कर देगी, मुझे ऐसी आशा नही थी। यदि भेंटकी स्वीकृति मिल जाती तो मैं यह दिखा सकता था कि उस कार्यवाहीका उद्देश्य, कुल मिलाकर, एक सम्मानपूर्ण सुलहपर पहुंचना था। सम्मेलन निस्सन्देह सुलहके पक्षमे था, बशर्ते कि वह आत्मसम्मानको क्षति पहुँचाये बिना कायम हो सके। परन्तु यदि सरकारकी यह धारणा हो कि जो सगठन राज्यके कानूनोंको, वे चाहे कितने ही दमनकारी क्यों न हो, तोडनेकी कार्रवाइयोंमे लगा है उसके प्रतिनिधियोके साथ, सुलहतक के लिए भी, वह तबतक बातचीत नही कर सकती जब तक कि वह सगठन पहले उन कार्रवाइयोंको, उन्हे मानव परिवारके सहज अधिकारके अनुरूप मानते हुए भी, छोड न दे, तो मेरे लिए कहनेको कुछ नही रह जाता। फिर भी मैं अपने बारेमे एक बात कहना चाहूँगा। मेरा जीवन शान्तिपूर्ण उद्देश्योंमे शामिल है। मैं सच्ची शान्तिके लिए लालायित हूँ। पर मैं यह स्वीकार करता हूँ कि मैं कामचलाऊ शान्तिसे सन्तुष्ट नही हो सकता। यदि मैं असहयोग या सत्याग्रहका सहारा लेता हूँ, तो वह जबरदस्तीके सहयोगकी जगह सच्चा और स्वैच्छिक सहयोग स्थापित करने और कानूनोके जबरन पालनकी जगह उनका स्वेच्छासे पालन करानेके लिए होता है। अत मैं यह आशा करता हूं कि भेंटकी मेरी प्रार्थना स्वीकार कर ली जायेगी।[2]

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० २१५२६) से। बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्राच, फाइल स० ८०० (४०) (१४), पृ० ४२ से भी।

१. वाइसरायके निजी सचिवके १७-७-१९३३ के तारके उल्लेखसे।
२. गाधीजी को इसका उसी दिन निम्नलिखित उत्तर (एस० एन० २१५२६) भेज दिया गया था:

३२६. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

१७ जुलाई, १९३३

चि० अमला,

मैं दूसरी जंजीर[1] भेजनेकी कोशिश करूँगा। किसी बातकी चिन्ता न करो, मेरी भी नही। आखिर तो परमेश्वर हम सबका पालन करता है और सर्वसमर्थ संरक्षक है।

तुम्हारा हिन्दी-पत्र तुम्हारे लिए बहुत अच्छा था। अक्षर अभी ठीकसे नही उतरे। मूल अक्षरोंसे उन्हें मिलाकर देखना चाहिए।

अगर तुम यह सुनो कि मैं यरवदा या ऐसी ही किसी अन्य जेलमे ले जाया गया हूँ, तो परेशान न होना।

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल कागजात; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय।

३२७. पत्र : जमनालाल बजाजको

१७ जुलाई, १९३३

चि० जमनालाल,

मुझे जरा भी फुरसत नही मिलती। इससे लिखनेकी इच्छा होते हुए भी नही लिख पाता। आश्रमको लिखे पत्रकी नकल इसके साथ है। मेरे विचार इस तरह उड़ते रहते हैं। आखिर कहाँ जाकर ठहरेंगे, यह पता नही। मुझे आज-कलमे ठिकाने लगा दिया गया तो फिर ऐसे विचारोंका आदान-प्रदान नही हो सकेगा। परन्तु तुम स्वयं तो विचार करने ही लग जाओ। जो ठीक लगे, वैसी सलाह नारणदासको देना। मेरा पत्र विनोबा पढ़ेंगे ही। उनको लिखनेका समय मिला ही नही और आज भी मिलनेकी आशा नहीं।

"महामहिमको आशा थी कि सरकारकी स्थिति स्पष्ट है। वह यह है कि सत्याग्रह ऐसा आन्दोलन है जिसका उद्देश्य गैर-कानूनी कार्रवाइयों द्वारा सरकारपर दबाव डालना है और कि जिस संगठनने उस आन्दोलनको छोड़ा नहीं है उसके प्रतिनिधिके साथ सरकारके बातचीत करनेका कोई सवाल पैदा नहीं होता।"

१. देखिए पृ० २७१।

कमला[1] के उपवास चल रहे हैं। सम्भवतः आज छूटेंगे। मेहता ध्यान रखते हैं। मुझे रोज रिपोर्ट देते हैं। उसवासमें खूब हिम्मत रखी है।

तुम्हारा शरीर ठीक रहता होगा।

तुम्हे कूद तो पड़ना ही है। परन्तु जल्दी न करो। शरीर और सुधर जाये तभी आना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९१८) से।

३२८. पत्र : भगवानजी पी० पण्ड्याको

१७ जुलाई, १९३३

चि० भगवानजी,

तुम्हारा पत्र मुझे मिला था। सतारासे पत्र नहीं आया। नारणदासको तुम्हारे बारेमें लिखना मैं भूल ही गया। आज याद आनेपर फौरन उसे लिखा है। अब तुम्हारे साथ बात करेगा। बाकी सब उसे लिखे पत्रसे मालूम हो जायेगा।

बापू

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ३६०) से, सौजन्य : भगवानजी पी० पण्ड्या।

३२९. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

१७ जुलाई, १९३३

चि० प्रेमा,

मेरा पत्र तो तुझे मिला ही होगा। मेरी आशाएँ तू जानती है। नारणदासको लिखे मेरे पत्रसे अधीर नहीं होना चाहिए। अभी तो ऐसे कदमके लिए तैयारीकी जरूरत है। वह समय कब आयेगा, यह तो दैव ही जानता है।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३४९) से। सी० डब्ल्यू० ६७८८ से भी, सौजन्य प्रेमाबहन कंटक।

१. जमनालाल बजाजकी पुत्री।

३३०. तार: जमनालाल बजाजको

किरकी,
१८ जुलाई, १९३३

जमनालाल बजाज
वर्धा

कल आश्रम पहुँच रहा हूँ। रेवा कल रवाना हो रही है। गंगाधर राव दो दिन बम्बई रहेंगे।

बापू

[अंग्रेजीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० १११

३३१. भेंट: पत्र-प्रतिनिधियोंको

पूना,
१८ जुलाई, १९३३

अपने आसन्न कार्यक्रमके बारेमें पूछे जानेपर उन्होंने कहा कि मैं साबरमती आश्रम केवल इसलिए जा रहा हूँ कि आश्रममें लोगोंसे मिल-जुल लूँ।

यदि मैं गिरफ्तार होनेसे पहले आश्रम नहीं गया तो इसका मुझे दुःख रहेगा। चाहे आज या चाहे कुछ दिनों बाद मेरा गिरफ्तार होना निश्चित है।

वाइसरायके उत्तर[1] के बारेमें आपका क्या विचार है?

मेरी रायमें वाइसरायके उत्तरसे स्थिति खेदजनक बन गई है; इसमें गम्भीर खतरा निहित है। उस उत्तरमें जो सिद्धान्त रखा गया है, वह मेरी रायमें बिलकुल नया है। मुझे नहीं मालूम कि सभ्य देशोंने अपनी विद्रोही प्रजाके साथ शान्तिके लिए बातचीत करना कभी अस्वीकार किया है। अबतक वे सिरसे पाँवतक शस्त्रोंसे लैस विद्रोहियोंसे भी बातचीत करते आये हैं, फिर यह तो स्पष्ट ही उन सत्याग्रहियोंसे सम्बद्ध मामला है जो अहिंसक हैं।[2] शान्ति-स्थापनाके लिए भेंट करनेकी

१. देखिए पाद-टिप्पणी संख्या ४, पृ० २७८।
२. यह वाक्य हिन्दू, १९-७-१९३३ से लिया गया है।

मामूली प्रार्थनाका उत्तर देते समय महामहिमका समाचारपत्रोंमें प्रकाशित गोपनीय कार्यवाहियोंकी अनधिकृत रिपोर्टोंकी ओर ध्यान देना भी महान खेदका विषय है। मेरी रायमें यह भी एक खतरनाक सिद्धान्त है। मेरी जानकारीमें तो राज्योंके प्रमुखोंने इस तरहकी स्थितियोंमें समाचारपत्रोंकी रिपोर्टोंकी ओर कभी शायद ही ध्यान दिया हो। इसलिए स्वाभिमानी भारतीयोंका कर्त्तव्य बिलकुल स्पष्ट है। किसी व्यक्तिको अपना धर्म-पालन करनेसे रोका जाये तो इससे ज्यादा अवनति और अपमानकी कल्पना मैं नहीं कर सकता।

सम्मेलनके वास्तविक उद्देश्यके बारेमें प्रश्न किये जानेपर गांधीजी ने सम्मेलनको अनौपचारिक बताया और कहा :

किसी प्रतिवादके भयके बिना मैं कह सकता हूँ कि इस सम्मेलनका आयोजन केवल यह निश्चय करनेके उद्देश्यसे किया गया था कि कांग्रेसी शान्ति चाहते हैं या नहीं। यदि देशकी हालतसे मैं पूरी तरह अनभिज्ञ न होता तो इस अनौपचारिक सम्मेलनको बुलानेमें मेरा हाथ न होता। इसलिए यह सम्मेलन मेरा पथ-प्रदर्शन करनेके लिए बुलाया गया था। यह स्वाभाविक था कि मेरे सहयोगी मुझे जेलके बाहर पाकर मुझसे यह आशा करते कि मैं इस सम्बन्धमें उन्हें सलाह दूँ कि काम किस तरीकेसे किया जाये। देशकी हालतको बिना जाने मैं कोई निश्चित राय नहीं दे सकता था। इसलिए सम्मेलन बुलाना इसका एकमात्र उपाय था। मुझे प्रसन्नता है कि मैं आज यह कह सकता हूँ कि यद्यपि सम्मेलन एक मतसे सविनय अवज्ञा छोड़ देने या बन्द कर देनेके लिए तैयार नहीं था, फिर भी इसमें कोई शक नहीं कि सम्मानजनक शर्तोंपर आन्दोलन वापस लेनेकी उसकी पूरी इच्छा थी। परन्तु वाइसरायके तार इस तथ्यके प्रमाण हैं कि सरकार सम्मानजनक समझौता नहीं चाहती, बल्कि यह चाहती है कि कांग्रेस अपमानजनक ढँगसे पूर्ण आत्मसमर्पण कर दे।

यह मेरी भविष्यवाणी है कि जो आज असम्भव है वह कल सम्भव होगा। वह कल कब आयेगा यह मैं नहीं जानता। परन्तु वह कल आ रहा है और लोगोंकी आशासे कहीं ज्यादा जल्दी आ रहा है। यह बात मेरे विचारसे उतनी ही निश्चित है जितनी मेरी-आपकी यह भेंट।

यह पूछे जानेपर कि क्या सम्मेलनमें बहुमत आन्दोलन वापस लेनेके पक्षमें था और वर्त्तमान निर्णय सम्मेलनपर थोपा गया है, गांधीजी ने कहा :

यह सही नहीं है; यदि यह सही होता तो मैं अपनी राय थोपनेका दोषी नहीं बनता। पर मैं निस्संकोच यह स्वीकार करता हूँ कि सम्मेलनमें काफी लोगोंका मत [आन्दोलन] पूरी तरह वापस लेनेके पक्षमें था परन्तु उस रूपमें नहीं जैसाकि सरकार चाहती है।

कांग्रेस-नीतिके भविष्यके बारेमें गांधीजी ने कहा :

श्री अणे एक वक्तव्य देंगे। यदि मैं यह कहूँ कि उनके वक्तव्यमें देशको फिल-हाल आन्दोलन स्थगित कर देनेकी सलाह दी जायेगी तो यह कोई रहस्योद्घाटन

नही होगा। यह कदम उठाये जानेके भी कारण हैं; उनकी गहराईमे जानेकी इस वक्त जरूरत नही है। वे यह सलाह भी देंगे कि कांग्रेसके उन सारे संगठनो और उन गुप्त तरीकोको बन्द कर दिया जाये केवल जिनके सहारे वे चल रहे हैं।

जैसीकि श्री अणेने घोषणा की है, यह आन्दोलन इस महीनेके अन्ततक मेरी खातिर स्थगित रहेगा; और यद्यपि वाइसरायकी मनाहीसे स्थिति बहुत-कुछ बदल गई है, तो भी इस बातको ध्यानमे रखते हुए कि मुझमे थोड़ा-बहुत काम करने योग्य ताकत आ गई है, और किसी तरहकी गलतफहमी न हो, इस दृष्टिसे यह निश्चय किया गया है कि आन्दोलन स्थगित रखा जाये।

यह पूछे जानेपर कि क्या वे सारे भारतके एकमात्र नेता बनेंगे उन्होंने कहा:

अभी तो मैं विनम्र सलाहकारकी भूमिका निभा रहा हूँ। अभी मैं ऐसा नही मानता कि मैं यरवदासे पूरी तरह और सचमुच छूट आया हूँ। मुझे अकल्पित परिस्थितियोके पैदा हो जानेपर छोड़ा गया था। उस परिस्थितिका अनुचित लाभ उठानेकी मेरी कोई इच्छा नही है। आन्दोलन स्थगित रखनेकी अवधि समाप्त होनेतक और सरकारको पहले बताये बिना मैं सविनय अवज्ञाका कोई काम नही करूँगा।

तब हरिजन आन्दोलनका क्या होगा, यह पूछे जानेपर उन्होंने कहा:

बहुत-से लोगोने आशा की थी कि मैं अपना सारा समय हरिजन आन्दोलनमे लगाऊँगा। वे मुझे नही समझते, और उनमे से किसीके प्रति किसी अनादरकी भावनाके बिना मैं यह कहूँगा कि वे यह नहीं जानते कि वे जो-कुछ सोचते हैं उसमे क्या उलझने हो सकती हैं। पहली बात तो यह है कि मेरा जीवन किन्ही अलग-थलग भागोमे नही बँटा है, बल्कि वह एक अविभाज्य इकाई है। इसलिए मैं अपने जीवन-भरके उन कामोंको सम्भवतः नही छोड़ सकता जो मुझे उतने ही प्यारे हैं जितना हरिजन-कार्य। मेरे काम अन्योन्याश्रित हैं। इसलिए यदि मै दूसरे कामोको छोड़ दूँ तो इससे मेरी हरिजन-सेवा की ही हानि होगी। और फिर मैं चौबीसो घंटे तो हरिजन-कार्य कर नही सकता। यह असम्भव है। यदि यह सुझाव दिया जाये कि मैं हरिजन-कार्यके लिए जेल-जीवनका त्याग कर सकता हूँ — जो सविनय अवज्ञा आन्दोलनमे भाग लेनेसे बिताना पड़ता है, तो इसका मतलब यह होगा कि मैं अपने जीवन-सिद्धान्तका ही त्याग कर दूँ। इसलिए मैं यह सेवा अपनी योग्यतानुसार केवल तभीतक कर सकता हूँ जबतक यह मेरे जीवनको प्रभावित करनेवाले सिद्धान्तोके अनुकूल रहे।

अन्तमे, जैसाकि मैं पहले कह चुका हूँ, हरिजन-कार्यके लिए आत्मशुद्धिके निमित्त बहुत ज्यादा व्यक्तिगत प्रयत्नोंकी जरूरत होती है। सम्भवत. उस मामलेमे इसे अन्य सामाजिक, राजनीतिक या अर्ध-राजनीतिक आन्दोलनोसे अलग किया जा सके। अभी हालके मेरे उपवाससे मेरा दृष्टिकोण शायद स्पष्ट हो जाता है। इसलिए मुझे पक्का

भरोसा है कि दूसरे कामोंमें मेरा ध्यान रहनेसे हरिजन सेवा-कार्य करनेकी मेरी क्षमतामें किसी भी तरहकी कमी नहीं आती।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १९-७-१९३३, हिन्दू, १९-७-१९३३ भी।

३३२. भेंट : 'हिन्दू' के प्रतिनिधिको[1]

बम्बई,
१८ जुलाई, १९३३

चूंकि वाइसरायने मेरी साधारण-सी प्रार्थनाको, जिसमें कोई शर्त नहीं थी, ठुकरा दिया है, इसलिए शान्तिकी फिलहाल कोई आशा नहीं है। आदमी जो-कुछ कर सकता है मैंने उतना करनेकी कोशिश की। परन्तु बातचीतका द्वार इस तरह बन्द कर दिये जानेपर मैं लाचार हूँ।

अनौपचारिक सम्मेलन शान्तिके पक्षमें था। सम्मानजनक शान्तिका आधार क्या होता, यह कहना कठिन है। परन्तु यह निश्चित है कि उसका आधार कम-से-कम गांधी-इर्विन समझौते[2] को फिरसे बहाल करना होता। क्योंकि मैं यह दिखा सकता था कि समझौता कांग्रेस द्वारा नहीं, सरकार द्वारा भंग किया गया है।

कोई भी दल 'श्वेत पत्र' से सन्तुष्ट नहीं है। उससे कांग्रेसको तो कभी सन्तोष होगा ही नहीं। परन्तु भेंटके दौरान मैं तो 'श्वेत पत्र' की चर्चा भी नहीं छेड़ता। मेरी नजरमें एक बिलकुल ही अलग योजना थी। जिसपर सरकार और कांग्रेस दोनों रजामन्द हो सकते थे।

आन्दोलन स्थगित रखनेकी अवधि समाप्त हो जानेके बाद सविनय अवज्ञा निश्चय ही फिरसे आरम्भ कर दी जायेगी। यदि सरकार अटकलें लगाकर जल्दबाजीमें कोई कार्यवाही करे तो दूसरी बात है। परन्तु कांग्रेसके कार्यवाहक अध्यक्ष सामूहिक सविनय अवज्ञाको, जिसमें कर न देनेका अभियान भी सम्मिलित है, बन्द कर रहे हैं। वे गुप्त तरीकोंका भी बहिष्कार कर रहे हैं और चूंकि कांग्रेससे सम्बन्धित संगठन गुप्त तरीकोंसे ही चल सकते हैं, इसलिए वे फिलहाल कांग्रेससे सम्बन्धित सभी संगठनोंको समाप्त कर रहे हैं। इसलिए सविनय अवज्ञा व्यक्तिगत प्रयत्नतक ही सीमित रहेगी। लोग व्यक्तिगत रूपमें, आर्थिक या दूसरी सहायताकी आशा किये बिना, अपनी ही जिम्मेदारीपर सविनय अवज्ञा करेंगे।

आप पूछते हैं कि यदि आन्दोलन हिंसात्मक हो उठा तो मुझे क्या करना चाहिए। मैं केवल यही कह सकता हूँ कि बड़ी-से-बड़ी उत्तेजनाके बावजूद यह आन्दोलन अहिंसात्मक रहा है। अतः अब इसके हिंसात्मक होनेकी सम्भावना नहीं है।

१. बॉम्बे क्रॉनिकल, २१-७-१९३३ में यह "लन्दनके डेली हेरॉल्ड द्वारा पूछे गये कुछ प्रश्नोंके गांधीजी द्वारा दिये गये उत्तर" के रूपमें छपा था।

२. देखिए खण्ड ४५।

और यदि यह हिंसात्मक हो ही जाता है, तो मैं जानता हूँ कि इसका तात्कालिक उपाय मेरे हाथमें है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १९-७-१९३३

३३३. तार : बम्बई सरकारके गृह-सचिवको

साबरमती,
१९ जुलाई, १९३३

सरकारके सचिव
गृह-विभाग, पूना

मैं चाहूँगा कि जबतक मैं यहाँ हूँ, साबरमती जेलकी कैदी मीराबाई स्लेडको सप्ताहमें एक पत्र लिखने और उसका उत्तर प्राप्त करनेकी जो अनुमति प्राप्त है, उसके बदले मैं उससे मिल लिया करूँ।

गांधी

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) (११), भाग २, पृ० २९।

३३४. बातचीत : अहमदाबादके हरिजनोंसे[1]

[१९ जुलाई, १९३३][2]

यह तो आपका काम है कि आप अपने कामके वर्तमान तरीकोंमें सुधारोंके लिए सुझाव दें। यह काम पूरी तरह सफाई और स्वास्थ्यकी दृष्टिको ध्यानमें रखकर

१. यह महादेव देसाई द्वारा लिखित "अहमदाबाद लेटर" शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था। इसके साथ भूमिकामें निम्नलिखित टिप्पणी थी : "कोई लगभग एक सौ व्यक्ति — उनमें से बहुतोंने शुद्ध सफेद खादी पहन रखी थी — सेठ रणछोड़भाईके आंगनमें गांधीजी के इर्द गिर्द इकट्ठे हो गये। उन्होंने जो प्रश्न पूछे वे इस बातके प्रमाण थे कि अब उनमें जागृति आ गई है, और उनसे उनकी प्रतिभा और निर्भयताका पता चलता था जिससे कि वे अपनी समस्याओंकी चर्चा कर सकते थे। गांधीजी ने पहले भंगियोंकी समस्याको लिया, क्योंकि दुर्भाग्यग्रस्त जनोंमें बेचारा भंगी सबसे अधिक दुर्भाग्यग्रस्त हैं।"

२. बॉम्बे क्रॉनिकल, २०-७-१९३३ की रिपोर्टसे, जो "अहमदाबाद, १९ जुलाई" की तिथि-पंक्तिके अन्तर्गत प्रकाशित हुई थी और जिसमें लिखा था : "पूर्वाह्नमें गांधीजी स्थानीय दलित वर्गके लोगोंके प्रतिनिधि मंडलसे मिले।"

किया जाना चाहिए। मैं इस कामसे परिचित हूँ। मैंने दक्षिणी आफ्रिकाकी जेलोंमें यह काम किया है। गन्दगीको उठाकर ले जानेके लिए टोकरियाँ ठीक नहीं हैं। आपके पास मजबूत बाल्टी होनी चाहिए जिसे दो आदमी उठाकर ले जायें। आपके तरीके इतने रूढ़ और पुराने हैं कि हो सकता है आपको यह नया तरीका पसन्द न आये। परन्तु आपको मेरा यह सुझाव है कि बाल्टियाँ कहीं ज्यादा सुविधाजनक, साफ और उपयोगी हैं। यदि आपको मेरा सुझाव पसन्द हो, तो मैं यह मामला स्थानीय नगर निगमके सदस्योंके सामने रखनेके लिए तैयार हूँ। आप सार्वजनिक स्नानागार चाहते हैं। इस बातकी मुझे खुशी है। परन्तु मैं आपको सचेत कर दूँ कि आपके ही कुछ लोग दूसरी जगहोंपर मुहैया की गई सुविधाओंका उपयोग करनेके लिए तैयार नहीं हैं। आप स्वयं जागृत हों और जो आपका कल्याण कर रहे हों उन लोगोंके हाथ मजबूत करें।

इसके बाद सब हरिजनोंको सम्बोधित करते हुए उन्होंने कहा :

ऐसा लगता है कि आप सवर्ण हिन्दुओंकी अपने प्रति हृदयहीनतासे चिन्तित हैं। जितना मुझसे हो सकता है उतना मैं उनसे निबटनेकी कोशिश कर रहा हूँ। परन्तु यह अवसर उन्हें सन्देश देनेका नहीं है। मैं आपके माध्यमसे उनतक सन्देश कैसे पहुँचा सकता हूँ? मैं आपसे कहूँगा कि आप उनके बारेमें न सोचकर अपने बारेमें सोचें। यह हिन्दू-धर्मके शुद्धिकरणका आन्दोलन है। आप सोचिए कि इसमें आपका क्या योगदान हो सकता है। सवर्ण हिन्दू क्या करते हैं इस बातकी परवाह किये बिना यदि आप अपने-आप प्रयत्न करें, यदि आप अपनी गन्दी आदतें छोड़ दें, यदि आप अपने रहन-सहनका तरीका बदल डालें, तो मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि जन्मजात उच्चताकी बात अपने-आप समाप्त हो जायेगी। उच्चता शुद्ध और पवित्र जीवनमें निहित है। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि आप अपने अस्वच्छ कामके बावजूद हम लोगोंकी निस्बत ज्यादा साफ और पवित्र जीवन-यापन कर सकते हैं। आपकी सेवा ऐसी है जिसके विना समाज चल नहीं सकता। मैं चाहता हूँ कि आप अपने व्यवसायका महत्त्व समझें। इसे सफाईसे करना सीखें और मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि तब लोग आपकी शर्तें माननेपर बाध्य हो जायेंगे। आप अपने ऊपर निर्भर रहें, अपने पैरोंपर खड़े हों और अपनी मुक्ति अपने-आप प्राप्त करें।

परन्तु आपकी शिकायत है कि आपके लोग हरिजन सेवक संघके सदस्य नहीं बनाये जा रहे। आपका यह भी सुझाव है कि आप लोगोंको इसके प्रशासनमें भाग दिया जाये। यदि संघके सवर्ण हिन्दू सर्वाधिपति बनते, या आपपर हुकुम चलाना चाहते तो मैं आपका सुझाव समझ सकता था। तब मैं उनसे कहता कि वे सारे अधिकार त्याग दें। परन्तु वे सर्वाधिपति नहीं ऐसे सेवक हैं जिन्होंने युगोंतक अपने पूर्वजों द्वारा की गई गलतियोंके लिए पश्चात्ताप करनेका संकल्प किया है। उनके प्रायश्चित्तमें आप हिस्सा कैसे बँटा सकते हैं? वे जो-कुछ कर सकते हैं, प्रायश्चित्तके रूपमें कर रहे हैं। आपको कोई प्रायश्चित्त नहीं करना है। आप विश्वास मानिए, जिस क्षण आप संघके प्रशासनमें भाग माँगने लगेंगे, बोझ आपपर आ पड़ेगा और सवर्ण

हिन्दू घोषित कर देंगे कि अब उनकी कोई जिम्मेदारी नही है। पैसा इकट्ठा करने और राहत देनेकी जिम्मेदारी अपने ऊपर लेनेमे शक्ति या अधिकारका कोई घमण्ड नही है। मैंने प्रशासनिक खर्चे कम करनेके लिए कठोर सुझाव दिये है और वे कार्यान्वित किये जा रहे हैं। अस्पृश्यता-विरोधी मडलके कार्यकारी पदपर होनेकी माँग करनेके बजाय, आप अपने सलाहकार मडल बना सकते हैं जो यदा-कदा अपने सुझाव अस्पृश्यता-विरोधी मंडलोंको देते रहें। इस तरह आप अपने-आपको बहुत उपयोगी बना सकते हैं।

आपने मुझसे पूछा है कि मैंने आपके साथ ठहरनेके बजाय सेठ रणछोड़लालका आतिथ्य क्यों स्वीकार किया है? अगर मैं यह कहूँ कि मै उनके पास आपके हितमें ठहरा हूँ, तो क्या आप मेरी बातका विश्वास करेंगे? आप यह तो नही चाहते है कि मैं आपके प्रति अपने स्नेहका प्रदर्शन करूँ? यदि आपके पास ठहरना ही परीक्षा होती तो वैसा करनेसे भी मुझे कोई संकोच नहीं होता। मै चाहता हूँ कि आप मेरे कहनेपर विश्वास रखें कि मैं आपके यहाँ रहनेकी निस्बत यहाँ रहकर आपके लिए ज्यादा अच्छा काम कर सकता हूँ। यदि सेठ रणछोड़लाल अस्पृश्यताके पक्षपाती होते तो बात अलग थी। तब मै उनके पास ठहरनेकी बात नही सोचता। परन्तु आप देख सकते है कि उन्होने मेरे लिए अपना घर हरिजनोका घर बना डाला है।

एक आवाज: हमें आपका रणछोड़भाईके पास ठहरना बुरा नहीं लगता है। परन्तु सनातनी लोग हमें चिढ़ा रहे है कि "देखो आपके गांधी भी आपसे किनारा करते हैं और मिल-मालिकोंके पास ठहरते हैं।"

देखिए, यदि आप इन मामलोंमें सनातनियोकी बात सुनेंगे तो आप कहीके नही रहेंगे।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २९-७-१९३३

३३५. बातचीत: अहमदाबादके अस्पृश्यता-विरोधी कार्यकर्त्ताओंसे[1]

[१९ जुलाई, १९३३][2]

गांधीजी ने गुजरातमें अस्पृश्यता-विरोधी कार्यकर्त्ताओंसे मिलने और अपने सुझाव देकर उनकी मदद करनेका भी मौका निकाला। कार्यकर्त्ताओंने गाँवोंमें काम करनेकी कठिनाइयाँ बताईं। उन्होंने कहा कि उन्हें इनकी जानकारी है और सुझाव दिया कि भविष्यमें कुछ समयतक तो गाँवोंमें मुख्य रूपसे कल्याण-कार्य ही होगा।

१. यह महादेव देसाई द्वारा लिखित "अहमदाबाद लेटर" के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।
२. *बॉम्बे क्रॉनिकल*, २०-७-१९३३ से; देखिए पिछला शीर्षक भी।

हरिजन बच्चोंके लिए स्कूल और हरिजनोंके लिए कुएँ और मन्दिर बनवाने होंगे। मनमें सुधारके समर्थक सवर्ण हिन्दुओंकी सहानुभूति पानेका भी ध्यान रखना होगा। उन्हें अपने बच्चोंको इन स्कूलोंमें भेजने और केवल सवर्ण हिन्दुओं द्वारा उपयोग किये जानेवाले कुओं और मन्दिरोंके बजाय हरिजनोंके लिए बनाये कुओंका उपयोग करने और हरिजनोंके लिए खोले गये मन्दिरोंमें जानेके लिए कहना चाहिए। इसलिए यह जरूरी है कि हरिजनोंके ये स्कूल, कुएँ और मन्दिर सवर्ण हिन्दुओंके लिए बने स्कूलों, मन्दिरों और कुओंसे बेहतर हों।

कस्बों और शहरोंमें काम अपेक्षाकृत आसान है। कार्यकर्त्ता अहमदाबादमें सवर्ण हिन्दुओंसे अस्पृश्यता-विरोधी प्रतिज्ञाओंपर हस्ताक्षर करवा रहे हैं। गांधीजी ने सुझाया कि अब कार्यकर्त्ताओंको प्रतिज्ञाओंपर हस्ताक्षर करनेवाले लोगोंसे कहना चाहिए कि वे हरिजनोंके प्रति अपनी सहानुभूतिको क्रियात्मक रूप दें। इस प्रयोजनकी सिद्धिके लिए वे घर-घर जायें और ऐसे हर घरमें जो निश्चित रूपसे सुधारका विरोधी न हो, चन्दा इकट्ठा करें। चन्देकी रकम बहुत कम ही क्यों न हो। हजारों घरोंसे इस तरह इकट्ठे किये गये तांबेके पैसोंका मूल्य मुट्ठी-भर अमीर लोगोंसे इकट्ठे किये गये रुपयोंसे बहुत ज्यादा होगा।

हरिजन सेवक संघकी स्थानीय शाखा द्वारा एक हरिजन कन्या छात्रावास खोला गया था। परन्तु भंगी लड़कियोंको छात्रावासमें प्रवेश पानेकी प्रेरणा देनेमें कार्यकर्त्ताओंको बड़ी कठिनाई हुई, यहांतक भय था कि यदि भंगी लड़कियां वहां आ गईं तो अन्य हरिजन वर्गोंकी लड़कियां वहांसे चली जायेंगी। इसपर गांधीजी ने स्पष्ट सलाह दी कि अन्य हरिजन वर्गोंकी लड़कियोंके वहांसे चले जानेका खतरा मोल लेकर भी, भंगी लड़कियोंको छात्रावासमें आनेकी प्रेरणा दी जानी चाहिए।

घर-घर जाकर चन्दा इकट्ठा करनेके अपने सुझावपर अमल करते हुए गांधीजी ने स्वयं सायंकालकी प्रार्थनामें आनेवाले लोगोंसे अनुरोध किया कि वे हरिजन-कार्यके लिए पैसे दें। इसकी तत्काल अनुकूल प्रतिक्रिया हुई।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २९-७-१९३३

३३६. भेंट : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको

१९ जुलाई, १९३३

मैंने हाउस ऑफ कॉमन्सकी भारत बजट-सम्बन्धी बहसमे सर सैम्युअल होरके भाषणकी रिपोर्ट देखी है। यह दूसरी आश्चर्यजनक चीज है और वाइसरायके तार जैसी ही दुःखदायी है।

मै कह सकता हूँ कि उपवास शुरू करनेके बादसे मै नियमित रूपसे अखबार नही पढ सका हूँ। उपवासके दौरान दस-बारह दिन तो मै समाचारपत्रोपर नजरतक नही डाल सका, और यह सिर्फ इसलिए कि मेरे पास वक्त ही नही था। इसलिए मै यह नही कह सकता कि समाचारपत्रोने औपचारिक सम्मेलनकी कार्यवाहियोको सही रूपमे व्यक्त किया है या नही। इससे मेरा मतलब यह नही है कि प्रकाशित विवरण अनिवार्य रूपसे गलत है, मै तो इतना ही कहना चाहता हूँ कि गोपनीय कार्यवाहियोकी अनधिकृत रिपोर्टोकी ओर कोई ध्यान नही दिया जाना चाहिए था। निस्सन्देह, अनौपचारिक सम्मेलनमे मैने या किसी औरने क्या कहा, वाइसरायके लिए इसका कोई महत्त्व नही होना चाहिए था। यदि भेंट करनेकी अनुमति दी होती तो भेंटमे वाइसराय स्वय जान लेते कि हमारा क्या कहना है। सम्मेलनकी कार्यवाही तो जान-बूझकर इसलिए गोपनीय रखी गई जिससे भेंटके लिए की गई मेरी प्रार्थनामे कोई बाधा न पडे।

मुझे कहा गया है कि मै अब भी उन रिपोर्टोके सही होनेसे इनकार कर दूँ। समाचारपत्रोंकी फाइले देखे विना मै यह कैसे कर सकता हूँ और मै कितने समाचारपत्र पढूँ? मै सूचित करना चाहता हूँ कि योजनामे सौदेबाजीकी कोई बात नही थी। इतना काफी होना चाहिए था कि भेंटकी मेरी प्रार्थनाके साथ कोई शर्त नही रखी गई थी। भेंटकी वह प्रार्थना तो केवल शान्तिकी सम्भावनाएँ खोजनेके लिए थी। मै समझता हूँ, इसपर इसी दृष्टिसे विचार किया जाना चाहिए था। लेकिन अब जो स्थिति है उसमे मुझसे शायद यह सवाल करना ही सही है कि क्या खुद मुझे देशको सविनय अवज्ञा अपनानेकी सलाह देनेका पछतावा है और क्या मै अब भी सविनय अवज्ञा वापस लेनेकी सलाह देनेको तैयार हूँ। उस प्रश्नका उत्तर[1] मै पहले ही दे चुका हूँ।

इसके बाद भेंट करनेवालेने पूछा कि क्या समझौतेका द्वार अन्तिम रूपसे बन्द हो चुका है। गांधीजी ने तत्काल उत्तर दिया :

१. देखिए पृ० २८६-९।

मेरे लिए नही। जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, द्वार कभी बन्द नही होगा और जब भी मुझे रत्तीभर भी अवसर मिलेगा, मै वाइसरायका द्वार खटखटानेमे सकोच नही करूँगा। परन्तु मै समझता हूँ कि जहाँतक अधिकारियोका सम्बन्ध है, उन्होने तो द्वार अन्तिम रूपसे बन्द कर दिया है और जबतक काग्रेस सविनय अवज्ञा पूरी तरह वापस नही ले लेती, द्वार बन्द रहेगा, और मुझे विश्वास है कि वह कभी आन्दोलन बन्द नही करेगी।

जब उनसे यह पूछा गया कि क्या ऐसी कोई सम्भावना है कि आप ३१ जुलाईसे पहले सविनय अवज्ञाको प्रोत्साहित करनेके लिए कुछ करेगे? गांधीजी ने कहा :

इस महीनेकी समाप्तिसे पूर्व, जिस अवधिमे सविनय अवज्ञा (आन्दोलन) स्थगित है, मै ऐसा कोई सार्वजनिक काम नही करूँगा।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २०-७-१९३३

३३७. भेट : 'टाइम्स ऑफ इंडिया' के प्रतिनिधिको

२० जुलाई, १९३३

सामूहिक सविनय अवज्ञा आन्दोलनमे वहुत-से लोग भेड-चाल चलते है, इसलिए वे किसीके नेतृत्वमे काम करते है और एकसाथ डूबते है या पार लगते है। व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा मे हरएक अपना नेता स्वय होता है और इसलिए एककी कमजोरीका दूसरे व्यक्तिपर असर नही होता। एक लाख व्यक्ति व्यक्तिगत रूपमे सविनय अवज्ञा कर सकते है, परन्तु इसका अर्थ यह होगा कि उनमे से हरएकने आत्मनिर्भर होकर अपनी ही जिम्मेदारीपर काम किया है। इसका यह अभिप्राय नही कि लोग एकमत नही है और वे अलग-अलग दिशाओमे काम कर रहे है। इसके विपरीत, यदि अलग-अलग लोग एक उद्देश्य सामने रखकर और एक झडेके नीचे काम करे, एक-दूसरे पर निर्भर रहे विना ही काम क्यो न करे, वे उसी एक दिशामे जायेगे। व्यक्तिगत सत्याग्रहकी खूबी यह है कि इसमे पराजय नामकी कोई चीज नही है और इसका दायरा भौतिक शक्ति द्वारा कभी सीमित नही किया जा सकता, फिर वह शक्ति कितनी ही वडी क्यो न हो।

व्यक्तिगत सविनय अवज्ञामे ऐसी हर चीज शामिल है जिसे व्यक्ति उचित समझता है और जिसके लिए काग्रेस द्वारा अहिसा और सत्यके सिद्धान्तके अनुसार अनुमति दे दी गई।

प्र० — क्या जेलमें बन्द होना देशके लिए सहायक है?

उ० — यदि मेरा वैसा विचार न होता तो मैने सविनय अवज्ञा आन्दोलन बन्द कर दिया होता। सविनय अवज्ञाके पीछे यह सत्य है कि अन्यायपूर्ण शासन

पद्धतिमे स्वतन्त्रताप्रेमी व्यक्ति अपने-आपको जेलसे बाहरकी अपेक्षा जेलमे अधिक स्वतन्त्र मानता है।

प्र०—पूना सम्मेलनके परिणामस्वरूप क्या आप ऐसा महसूस नहीं करते कि कांग्रेस दो या दोसे अधिक दलोंमें बँट जायेगी।

उ०—हालाँकि काग्रेसियोमे तीव्र मतभेद है, फिर भी मुझे किसी ऐसे परिणामकी कोई आशका नही है। पूना सम्मेलनमे अध्यक्षके प्रति जिस तरह तत्काल आज्ञाकारिताका प्रदर्शन किया गया, जितना अधिक सद्भाव और जितना कम रूखापन देखनेमे आया, वैसा मैने कही नही देखा। निस्सन्देह मुझे विश्वास है कि काग्रेस दलमे कोई विघटन नही होगा और आप देखेगे कि जब कार्यवाहक अध्यक्ष द्वारा प्रकाशित की जानेवाली सशोधित योजना सामने आयेगी तो उसमे काग्रेसके लगभग सभी मतोको स्थान मिलेगा।

प्र०—क्या आप धीरे-धीरे सविनय अवज्ञाको वापस लेंगे?

मै किसी भी आन्दोलनमे गतिरोधको प्रतिष्ठा-भग या कमजोरी कभी नही मानता। इसी कारण मैने सामूहिक सविनय अवज्ञा बन्द कर देनेकी सलाह दी है। यह स्पष्ट ही गतिरोध स्वीकार करना है। यदि मुझे ऐसा महसूस होता कि सविनय अवज्ञाका और कोई रूप नही हो सकता और यदि मेरी इस रायसे अन्य कोई भी सहमत न होता, तो भी मै उसे पूरी तरह वापस लेनेकी सलाह दे देता। परन्तु सत्याग्रहमे तो व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा अन्तिम चीज है, इसके आगे टिकनेका कोई भी उपाय कारगर नही हो सकता। इसीलिए मैने दृढतासे कहा है कि यह एक अजेय शक्ति है। जहाँतक वाइसरायसे भेटका सम्बन्ध है, यह प्रयत्न इसलिए किया गया था कि मेरी और सम्मेलनकी हार्दिक इच्छा थी कि यदि भेटसे कोई सम्मानजनक समझौता हो जाता है तो व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा आन्दोलन भी बन्द कर दिया जाये। इसलिए आप देख सकते है कि भेटके लिए की गई प्रार्थनाके पीछे ऐसी कोई जिद नही थी कि व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा किसी भी परिस्थितिमे वापस नही ली जायेगी।

जबतक सरकार चाहेगी तबतक मै यहाँ हूँ, अन्यथा कम-से-कम कैदकी स्थगन अवधिके अन्ततक यानी ३१ जुलाईतक तो हूँ ही।

मेरी समझमे इग्लैडमे हमारे जो मित्र है वे फिलहाल कुछ नही कर सकते। मेरे लिए यह बात स्पष्ट है कि वाइसरायका कहना ऐसा नही है जिससे सहमत हुआ जा सके। इस कठिनाईपर विजय पानेका सिवाय इसके कोई और तरीका नही है कि लोग और अधिक तथा शुद्ध तपश्चर्यामे जुट जाये।

[अग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी, सौजन्य: नारायण देसाई।

३३८. तार : बम्बई सरकारके गृह-सचिवको

अहमदाबाद,
२१ जुलाई, १९३३

सरकारके सचिव
गृह विभाग, पूना

मीराबाईसे मिलनेकी अनुमति तत्काल देनेके लिए आभारी हूँ।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) (११), भाग-२, पृ० ३७।

३३९. पत्र : जमनालाल बजाजको

अमृत भवन, एलिस ब्रिज,
२१ जुलाई, १९३३

चि० जमनालालजी,

इधर तुम्हारा कोई पत्र नहीं मिला। मैंने आशा रखी थी। पूनासे लिखा मेरा पत्र[1] मिला होगा। आश्रमकी आहुति देनेके सम्बन्धमें बातचीत कर रहा हूँ। लगभग निश्चित ही है। आज निश्चय हो जायेगा। उस आहुतिका अनुकरण करना जरूरी नहीं है। उसको आदर्श मानकर जो अपना आचरण बनाना चाहें, वे तो बनायेंगे ही। वर्धा आश्रमके सम्बन्धमें भी फिलहाल साबरमतीका अनुकरण करनेकी आवश्यकता नहीं। समय मिला तो विशेष रूपसे लिखूंगा।

अब्दुल गफ्फारखाँका लड़का, जो विलायतमें था और वहाँसे अमेरिका गया था, मुझसे पूनामें मिला था। अभी बम्बईमें है। अमेरिकाके शक्करके कारखानेमें काम सीखकर आया है। कितना सीखा है, सो तो भगवान जाने। खुर्शेदबहन वगैरहकी सलाह है कि वह शक्करके किसी कारखानेमें फिलहाल काम करे तो अच्छा। अपने कारखानेमें उसे आजमा देखो। उसने मुझपर अपनी होशियारीकी छाप नहीं डाली। भलमनसाहतकी डाली है। अभी तो कहता है कि आप जैसा कहेंगे, वैसा करूँगा। इस समय तो उसे वेतन देनेकी बात नहीं है। एक महीनेके बाद यदि वह काममें

१. देखिए पृ० २८६।

कुशलता दिखाये तो वेतन तय किया जा सकता है। अभी तो उसके लिए रहने-खानेका ही इन्तजाम करना पड़ेगा।

मेरी तबीयत ठीक है। रणछोड़भाईके यहाँ ठहरा हूँ। आश्रम रोज जाता हूँ। आज मीराबहनसे मिलनेकी आशा रखता हूँ। इजाजतके लिए तार दिया था, सो वह मिल गई है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९१९) से।

३४०. एक अमेरिकी आलोचना[1]

इसी पिछले उपवासके बारेमें पश्चिमसे मुझे जो पत्र मिले हैं, उनमें से ज्यादातर सद्भावनासे भरे हैं और उनमें उपवास तथा उसके पीछे निहित उद्देश्यकी सराहना की गई है। परन्तु, निम्नलिखित पत्र मैत्रीपूर्ण पत्रोंमें अभिव्यक्त मतको सन्तुलित कर देता है और यह सम्भवत: बहुसंख्याके मतका प्रतिनिधि है:

> जैसाकि दैनिक पत्रोंकी संक्षिप्त सूचनाओंमें बताया गया है, आपका इक्कीस दिनका उपवास अब समाप्त हो गया है। पर इससे क्या मिला? दुनियाको यह बताया गया था कि यह तथाकथित अस्पृश्योंके लाभके लिए है। उनके लिए आखिर इसने क्या किया?
>
> (महात्मा गांधीकी खबर अब मुखपृष्ठपर नहीं छपती। दैनिक पत्रोंमें हमें उन्हें भीतरके पृष्ठोंमें खोजना पड़ता है।)
>
> भारत, जिसकी संस्कृति और सभ्यता ऐतिहासिक कालसे बहुत पुरानी है, जिसे ईसाके शिष्य टॉमसने पहली शताब्दीमें ईसा मसीहकी नवीन वाणी दी, और जिसे पिछली कुछ शताब्दियोंमें प्रकाशके सम्मुख आनेके अनेक अवसर मिले, अभी भी अन्धविश्वासके अन्धकारमें रह रहा है। उसके समाजकी जाति-व्यवस्था आधुनिक संसारके लिए सबसे बड़ा नासूर है।
>
> इलाज क्या है? एक अकेले आदमीका — ऐसे आदमीका उपवास जिसने वृद्धावस्थामें अपने कपड़े उतार दिये हों और जो नंगे पाँव लन्दनकी सड़कों पर घूमा हो, निश्चय ही उसका इलाज नहीं है, फिर वह उपवास चाहे कितनी ही अवधिका क्यों न हो, और वह आदमी चाहे कितना ही सच्चा क्यों न हो, उसमें अमेरिकी प्रचार-पद्धतियोंके कुछ भौंडे रूपोंकी इतनी गन्ध है कि वह कारगर नहीं हो सकता।

1. लेखका सारांश बॉम्बे क्रॉनिकल, २२-७-१९३३ में "पूना, २१ जुलाई, १९३३" तिथि-पंक्तिके अन्तर्गत छपा था।

कोई एक चीज भारतकी निचली जातियोको उनकी गरीबी और अधोगति से उबार नही सकती। यदि कभी ऐसा हुआ, तो वह बहुत-से प्रभावोका कार्य होगा जिनमें प्रत्येकका एक ही लक्ष्य की ओर योगदान होगा। शुरूआत खुद उनके अन्दरसे होनी चाहिए।

बेहतर हालतके लिए एक मानसिक उत्कंठा होनी चाहिए।

कोई भी नस्ल जिसकी स्त्रियाँ पराधीन है या, जैसाकि आपके यहाँ है, 'आत्माहीन' है, मानव-प्रगतिमें कभी ऊँची नही उठी है।

धार्मिकताके बाद दूसरा स्थान स्वच्छताका ही है। आपके लाखो लोग घिनौनी गन्दगीमें रह रहे है, और जबतक वे उस कीचडसे निकलने नहीं लगते, वह उनके उत्थानमें बाधा बनी रहेगी।

स्वच्छ मन और स्वच्छ तन एक नये जीवनकी बात सोचेंगे, जिसमें 'आत्माकी खातिर शरीरको पीडित करने' जैसी कोई खुराफात नहीं रह सकती। उदाहरणके लिए, आपके 'साधु-महात्मा' किसी विकृत आसनमे वर्षो बैठे रह कर आत्माकी मुक्तिके लिए खुले आम अपने शरीरको यन्त्रणा देते है। कोई भी प्रबुद्ध व्यक्ति उनकी बातको अब गम्भीरतासे नहीं लेता, वे खुद उसे गम्भीरतासे लेते है, मुझे तो इसमें भी शक है। वे बैठकर चिन्तन करते है या बस बैठे ही रहते है?

अन्धविश्वासपूर्ण धार्मिक कृत्य, जैसेकि शरीरको कीलोसे बींध लेना, जीभमें बर्छी भोक लेना और अन्य बीभत्स यन्त्रणाएँ, जिनकी बात अमेरिका और विश्वमें अब सभीको मालूम है, मनमें केवल घृणा और यह भाव पैदा करते है कि वस्तुतः वे ही 'अस्पृश्य' है।

मैने कैथेरीन मेयोकी पुस्तक 'मदर इंडिया' तो नही पढी, पर प्रामाणिक लोगोने मुझे बताया है कि (उसके विरुद्ध भारतके आक्रोशके बावजूद) वह तथ्योका, भयानक तथ्योका सकलन है, और मै ऐसे लोगोको जानता हूँ जिनकी तबीयत उसे पढकर बहुत खराब हो गई है।

भारतके बदनसीब लोगोके लिए, जिनके ध्येयका आपने इतने गौरवपूर्ण ढगसे प्रतिपादन किया है, यदि आप सचमुच कुछ करना चाहते है, तो सस्ते प्रचारके अपने इन प्रयासोको छोड क्यो नहीं देते, एक शिक्षा-व्यवस्था स्थापित क्यो नहीं करते, एक ऐसा तरीका क्यो नहीं निकालते जिससे ज्यादा-से-ज्यादा लोग लाभ उठा सके? और तब आप देखना कि विश्वके प्रबुद्ध राष्ट्र, विशेष कर अमेरिका आपका समर्थन करेगे। यह बडा भारी काम है, क्योकि छः करोड लोगोतक पहुँचना है — और अस्वास्थ्यकर सामाजिक परिस्थितियोके कारण, जिन्हे शिक्षा ही सुधार सकती है, उनकी संख्या बड़ी तेजीसे बढ़ती जा रही है — और सदियो पुरानी परम्परापर काबू पाना है। यह कार्य कई

पीढ़ियोंको करना होगा, पर यह कारगर रहेगा। यह ऐसी ठोस नींव होगी जिसपर आप अपनी भावी महानताका निर्माण कर सकते हैं।

ज्ञान, प्रगति, महत्त्वाकांक्षा और स्वशासनकी आत्मिक इच्छासे एक सूत्रमें बँधे छः करोड़ लोगोंके एकजुट राष्ट्रको उनके अपने ही देशवासियोंकी कोई भी अल्पसंख्या या कोई अन्य शक्तिशाली राष्ट्र अपनी दासतामें नहीं रख सकता।

किसी समाजसेवी द्वारा उठाये गये कुछ कदमोंके जो लोग विरुद्ध होते हैं, वे अपना विरोध उनके आगे व्यक्त करनेका आम तौरपर कष्ट नहीं उठाते। वे उसकी अभिव्यक्ति स्थानीय समाचारपत्रोंमें करते हैं। इस महान हरिजन आन्दोलनमें मैं विश्वकी मैत्री अपने साथ रखना चाहता हूँ; इसलिए इस पत्रका उत्तर देना ठीक रहेगा।

पर इस पत्रपर ध्यान देना कठिन है, क्योंकि यह पक्षपातसे शुरू होता है और पक्षपातपर ही खत्म होता है। जाति-व्यवस्था "आधुनिक संसारके लिए सबसे बड़ा नासूर" नहीं है। उसे शायद यहाँतक पता नहीं है कि यह व्यवस्था है क्या। इसमें जो बुराई घुस गई है उसके खिलाफ मैंने खुद आवाज उठाई है। परन्तु वह बुराई मूल व्यवस्थाके लिए विजातीय है और दूर की जा सकती है जैसेकि की जा रही है। अस्पृश्यता सबसे बड़ी अपवृद्धि है। और दुनिया यह जानती है कि इस बुराईसे जूझनेके लिए भगीरथ प्रयत्न किये जा रहे हैं। पत्र-लेखक जिस उपवासको हिकारतकी नजरसे देखता है, वह इस आन्दोलनकी सहायताके लिए ही था। पत्र-लेखकने उपवास और मेरी पोशाकको "अमेरिकी प्रचार-पद्धतियोंके भौंडे रूपों" से जिस तरह मिश्रित किया है, मुझे उससे विचलित नहीं होना है। हलवेका प्रमाण तो उसे खानेमें ही मिलेगा।

परन्तु इस मतका हृदयसे समर्थन किया जा सकता है कि 'कोई एक चीज भारतकी निचली जातियोंको उनकी गरीबी और अधोगतिसे उबार नहीं सकती" और कि "शुरुआत खुद उनके अन्दरसे होनी चाहिए।'

इससे करीब-करीब अगले वाक्यमें ही भारतकी स्त्रियोंके बारेमें यह लांछन दोहराया गया है कि वे 'आत्माहीन' हैं। इस लांछनकी पोल खुल चुकी है। पत्र-लेखकको यह बताना शायद बेकार है कि बहुत-से नामी विदेशी लेखक इस बातपर आश्चर्य प्रकट कर चुके हैं कि भारतीय स्त्रियोंको अपेक्षाकृत अधिक स्वतन्त्रता प्राप्त है। इसका अर्थ यह नहीं है कि उनकी दशाको सुधारनेके लिए अभी बहुत-कुछ करना शेष नहीं है। पर यह चीज निर्विवाद है कि जहाँ पश्चिममें स्त्रियोंकी दशामें सुधार हाल ही में हुआ है, वहाँ भारतीय स्त्रियाँ आवश्यक मानलोंमें प्राचीन कालसे ही ऐसी स्वतन्त्रताका उपभोग करती आ रही हैं जो विदेशी प्रेक्षकोंकी नजरसे भी नहीं छिपी है।

यह स्पष्ट है कि पत्र-लेखकने भारतीय आदतों और प्रथाओंके बारेमें जो साहित्य पढ़ा है, वह अज्ञानवश और स्वार्थवश रचित मिथ्या वर्णनोंसे भरा है। हम लोगोंकी अस्वच्छताके बारेमें जितनी सख्तीसे मैंने लिखा है, शायद ही किसीने लिखा हो।

परन्तु उसे 'घिनौनी गन्दगी कहना' एक 'भोंडा लाछन' है। यह दूसरोंकी आदतोके प्रति उग्र असहिष्णुताका ही द्योतक है।

पत्र-लेखकने यदि अज्ञान और सनसनीसे भरे साहित्यपर विश्वास करनेकी बजाय चीजोको अपनी आँखोसे देखा होता, तो वह तथाकथित योगियो द्वारा सहन की जाने-वाली यन्त्रणाओके बारेमे इस तरहके उच्छृखल सामान्यीकरणमे न पडता। जिस तरह अकेला चना भाड नही फोड सकता, उसी तरह किसी एक तथाकथित योगीके आत्म-पीडनमे लगनेसे ही यह लाछन सिद्ध नही हो जाता कि जो लोग इन्द्रिय-निग्रह द्वारा आत्माकी मुक्तिके लिए प्रयत्न करते हैं, उनमे आत्मपीडनका आम चलन है। शरीरको आत्माके वशमे करनेके लिए इन्द्रिय-निग्रह अनिवार्य है और उसका मानव-जातिमे आम चलन हैं।

मिस कैथेरीन मेयो और उसकी लाछनोसे भरी कृति 'मदर इडिया' के पढनेसे "कुछ अज्ञात लोगोकी तबीयत बहुत खराब हो जाने" की बात मुझे छोड देनी चाहिए। यदि कुछ इस तरहके पाठक है जिन्होने उस पुस्तकको, जिसने भारतकी मोरियाँ खोल दी है और पाठकोको यह विश्वास दिलाया है कि यही भारत है, पढकर अपनी तबीयत खराब कर ली है, तो निश्चय ही वे दयाके पात्र है।

अन्तिम वाक्योमे पत्र-लेखक यह सलाह देता है कि 'अस्पृश्यों' की दशा सुधारनेके लिए क्या मार्ग अपनाना चाहिए। 'हरिजन' के पृष्ठ उसे यह बता सकते है कि हरिजन सेवक सघ भारत-भरमें किस तरहका रचनात्मक कार्य करनेकी कोशिश कर रहा है। जो अमेरिकी मित्र इस आन्दोलनका नैतिक समर्थन कर रहे हैं, उनका यह कर्त्तव्य है कि वे इन पृष्ठोमे प्रति सप्ताह निकलनेवाली कार्यकी रिपोर्टोका सार अमेरिकी जनताके सम्मुख रखे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २२-७-१९३३

३४१. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

२२ जुलाई, १९३३

प्रिय जवाहरलाल,

मैंने तुम्हे लिखनेकी कई बार इच्छा की, परन्तु लाचार था। मुझमे रत्ती-रत्तीकर शक्ति लौट रही थी और उसे मै सामनेके आवश्यक कार्यको निपटानेमे लगाता रहा।

माताजी और कमलाके साथ बहुत अच्छा समय बीता। सरूप और रणजीतसे अधिक नही मिल सका।

माताजी को कृष्णाकी चिन्ता है। उसके भविष्यके बारेमे उन्होने मुझसे लम्बी बात-चीत की। इस मामलेमें तुम्हारे पास मेरे लिए कोई सुझाव हो तो बताओ। यो मेरी गतिविधियाँ अनिश्चित है। परन्तु इसकी कोई चिन्ता नही।

देवदास और लक्ष्मीको मैंने पूनामे छोड़ा था। अब वे यहाँ आनेवाले है। बहुत करके देवदास अब दिल्लीमे बस जायेगा। महादेव, बा और प्रभावती मेरे साथ है। लगता है कि वे सब शीघ्र ही जहाँ-तहाँ चले जायेंगे।

उपवासके पहले जितनी शक्ति प्राप्त करनेमे बहुत समय लग रहा है। परन्तु मेरी हालत धीरे-धीरे बेहतर होती जा रही है।

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]
ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स, पृ० १११

३४२. पत्र: प्रेमलीला ठाकरसीको

२२ जुलाई, १९३३

प्रिय बहन,

तुम्हारे अमोघ प्रेमकी याद भूलती ही नही। सोचा भी नही था कि मैं तुम्हे इतनी परेशानीमे डाल दूँगा। किन्तु लाचार था। लिखनेसे भावनाकी कीमत कम हो जाती है, तो भी लिखे बिना नहीं रह सकता इसलिए इतना लिख डाला है। मेरी तबीयत अच्छी रहती है। छोटे-बड़ों—सबको मेरा आशीर्वाद। सेवकोंको भी आशीर्वाद। उनकी सेवा भी कुछ मामूली नही थी। मुझ-सा गरीब बदलेमे क्या दे सकता है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७९)से। सी० डब्ल्यू० ४८३१ से भी; सौजन्य: प्रेमलीला ठाकरसी।

३४३. पत्र: जमनालाल बजाजको

२२ जुलाई, १९३३

चि० जमनालाल,

तुम्हारा पत्र मिला। प्रश्न तो सब ठीक है। भरसक जवाब दे रहा हूँ। आश्रम सौंप देनेमे मतलब यह है कि जो वस्तु अन्तमे उन्हे ले ही लेनी है वह उन्हे सौंप देना अधिक अच्छा है। प्रतिवर्ष लगानके लिए माल उठा ले जायें, उससे तो शौकसे सारी जमीन ही ले लें। फिर जब हजारो लोग बिना इच्छाके बरबाद हो गये तो सत्याग्रह आश्रम कहलानेवाला आश्रम स्वेच्छासे आत्मत्याग करे, यह इष्ट है और धर्म भी मालूम होता है। परन्तु इसका अर्थ यह नही कि अभीसे वहाँके आश्रमको

भी ऐसा ही करना है। इसके विपरीत मुझे लगता है कि वहाँसे जो भी व्यक्ति निकल सके, उन्हीसे सन्तोष मान ले। विनोबा तो अब नही निकल सकते। उन्हे हरिजन-सेवाके लिए रहना है। महिला आश्रमका पूरा उपयोग करना चाहता हूँ। क्या वहाँ बच्चे भी आ जाये? कितनी ही बहने तो वहाँ आयेगी ही। नी० और अमला बहनका प्रश्न है ही। उन्हे वहाँ भेजे बिना दूसरा उपाय नही है। दोनोसे हरिजन-सेवाका काम लेना ही है। अभी तो दोनोको तैयार होना है। नी० का पुरुषोसे सम्बन्ध कम होना चाहिए। जगम सम्पत्ति यदि सरकार न ले तो कही खुलेमे रखेंगे। गायोका प्रश्न बडा है। विचार कर रहा हूँ।

तुम्हे अभी कूद पडनेकी जल्दी नही करनी है। समय आनेपर कूदना। अभी इतना ब्यौरा काफी है न? बहुत काम है, किसी तरह समय निकालकर लिख रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९२०) से।

३४४. पत्र : देवदास गांधीको

२२ जुलाई, १९३३

चि० देवदास,

तुम्हारा पोस्टकार्ड मिल गया है। आश्रमका बलिदान कर देनेका निर्णय हो चुका है। यहा आनेके बारेमे बात तो हो चुकी है, ऐसा मुझे याद है। अब जैसा तुम्हे ठीक लगे, वैसा करना। यदि तत्काल दिल्ली जाना आवश्यक हो तो अवश्य चले जाओ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २०१९) से।

३४५. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

शनिवार [२२ जुलाई या उसके पश्चात्] १९३३[1]

चि० प्रेमा,

अकल्पित बाधा न आई तो आज तीन बजे पहुँचूंगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०३५०) से। सी० डब्ल्यू० ६७८९ से भी, सौजन्य प्रेमाबहन कंटक।

१. बापुना पत्रो–५: कु० प्रेमाबहन कंटकने में प्रेमाबहनने कहा है कि उन्होंने गांधीजी को आश्रम पुस्तकालयमें आनेका निमंत्रण "संभवत जुलाई, १९३३" में उस समय दिया था जब गांधीजी रणछोड लालके बगलेमें ठहरे हुए थे। १९३३ में गांधीजी अहमदाबादमें २० से ३१ जुलाईतक ही थे।

३४६. तार : श्रीमती सेनगुप्तको

२३ जुलाई, १९३३

श्रीमती सेनगुप्त
मार्फत "एडवांस", कलकत्ता

अभी-अभी सेनगुप्तकी[1] आकस्मिक मृत्युकी बात सुनी। आपकी क्षति राष्ट्रकी भी क्षति है। अपने प्रति संवेदना रखनेवाले अनगिनत लोगोंमें मुझे भी एक मानिए।

गांधी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एन० एन० २१५३०) से।

३४७. पत्र : रमाबहन जोशीको

२३ जुलाई, १९३३

चि० रमा,

तुम्हारे अच्छे होनेकी खबर रोज मिलती रहती है। अब थोड़े दिनोंमें बिलकुल स्वस्थ हो जाओगी। मन्दिरमें पहुँचनेसे पहले एक बार मिल पानेकी आशा करता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५३५४) से।

१. राँचीमें कैद यतीन्द्रमोहन सेनगुप्तकी २२ जुलाई, १९३३ की रातको अचानक पक्षाघातके दौरेसे मृत्यु हो गई थी।

३४८. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

२४ जुलाई, १९३३

प्रिय सतीशबाबू,

आपका छोटा-सा, मधुर और महत्त्वपूर्ण पत्र मिला। काश, मैं उसके उत्तरमें आपको एक लम्बा प्रेमपत्र भेज सकता। पर वैसा मैं कर नहीं सकता। समय ही नहीं है।

हाँ, मैं और आश्रमके बहुत-से सहवासी चले जायेंगे। आश्रम भंग किया जा रहा है और सरकारको सौंप दिया जाना है, या मूक सृष्टिके लिए छोड़ दिया जाना है कि वह उसपर अधिकार कर ले। चल सम्पत्ति, जबतक सरकार उसे नहीं चाहेगी, मित्रोंके पास धरोहर रहेगी। उचित समयपर आपको कागजात मिल जायेंगे। मेरे लिए सिर्फ यही रास्ता रह गया था। परन्तु आश्चर्यकी बात यह है कि आश्रमके बच्चोंको मेरे द्वारा सुझाये गये कदमका औचित्य समझमें आ गया। इस कदमका आपपर, प्रतिष्ठानपर, या साबरमतीके ढंगपर व्यवस्थित किसी अन्य संस्थानपर कोई असर नहीं पड़ता। उनका वक्त अभी नहीं आया है, शायद कभी न आये। व्यक्तिगत रूपमें आप हरिजन-ध्येयके लिए और हेमप्रभा दादीके लिए पूर्णतया समर्पित हैं। आपकी चाहे कैसी भी आलोचना क्यों न हो, पर फिलहाल किसी भी हालतमें उसमें विदा नहीं लेनी है। यदि आवश्यकता पड़े तो आप इस पत्रका उपयोग कर सकते हैं। मेरे पास इस बहसमें पड़नेका समय नहीं है, और न यह आवश्यक ही है, कि जो नियम साबरमतीपर लागू किया जा रहा है, वह मैं आप और अन्य लोगोंपर भी क्यों नहीं लागू करता।

मुझे आशा है कि यदि 'बंगला हरिजन' की बिक्रीसे खर्चा न निकलता होगा तो आप निस्संकोच उसे बन्द कर देंगे। बस्तियोंमें आप जो अद्वितीय कार्य कर रहे हैं, उससे किसी और चीजके लिए आपके पास सचमुच समय ही नहीं बचता होगा। आपको बंगालमें अंग्रेजी संस्करणका और देशी भाषाके समाचारपत्रोंका उपयोग करना चाहिए।

मुझे इसमें जरा भी सन्देह नहीं है कि मैं जेलमें बन्द कर दिये जानेपर भी हरिजन-कार्य करता रहूँगा। परन्तु क्या होना है, यह ईश्वर ही ज्यादा अच्छी तरह जानता है।

स्नेह।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९०७१) से।

३४९. पत्र : अमृतलाल वी० ठक्करको

२४ जुलाई, १९३३

भाई ठक्कर बापा,

'हरिजन' शास्त्री बीमार पड़ गया है। ज्वरसे परेशान है। पूनाकी खुराक माफिक नहीं आई। अभी तो किसी प्रकार निभा रहा हूँ। मलकानीको भेज सको तो काम चल जायेगा। किन्तु न भेज सको तो भी कोई हर्ज नहीं। वहाँका काम बिगाड़ना नहीं चाहता।

मलकानीके वेतनका क्या फैसला हुआ है? उसे आश्रमसे ही वेतन मिलता है, इतना निश्चित है। किन्तु अब आश्रम भंग कर दिया गया है। यह समाचार अखबारोंमें देखोगे। इसलिए अबसे वेतन वहीं देना होगा। ये हरिजन-कार्य-सम्बन्धी प्रवृत्तियाँ जेलसे चलेंगी ही। राम-राम।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११२३) से।

३५०. पत्र : नानाभाई आई० मशरूवालाको

२४ जुलाई, १९३३

भाई नानाभाई,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। मुझे भी फिनिक्ससे पत्र आता रहता है। सुशीला और मणिलाल एक-दूसरेमें ठीक-ठीक ओतप्रोत हो गये हैं और सुखी हैं।

आश्रमको भंग करनेका निर्णय किया है। इसके बारेमें अधिक जानकारी अखबारोंमें मिल जायेगी। ज्यादा लिख सकूँ, इतना समय नहीं है।

अपने स्वास्थ्यका ध्यान रखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६८८) से। सी० डब्ल्यू० ४३३३ से भी; सौजन्य : कनुभाई मशरूवाला।

३५१. पत्र : हेमप्रभा दासगुप्तको

२४ जुलाई, १९३३

चि० हेमप्रभा,

तुमारा खत मिला था। मुझे उत्तर लिखनेका समय नहि रहता है। शक्ति काफी आई है तो भी इतनी नहि जिससे मैं अपरिमित उद्यम कर सकु। मेरा कुछ भी हो तुमारे लिये खादी काम ही है। मैंने सब हाल सतीश बाबुके खत[1] मे बताये हैं इसलिये यहां नहि लिखता। अरुण अच्छा होगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १७०३) से।

३५२. भेंट : एम० एस० अणेके वक्तव्यके बारेमें[2]

अहमदाबाद,
२४ जुलाई, १९३३

मैं यह कह सकता हूँ कि कुछ स्थानोंपर वह गलत ढंगसे पेश किया गया है और कुछ महत्त्वपूर्ण अंश बिलकुल छोड दिये गये हैं। श्री अणेके वक्तव्यकी एक नकल मेरे पास है। उसका मसौदा पूनामें तैयार किया गया था, और मुझे पूरा यकीन है कि उसके कटे-छँटे रूपसे जैसा अनुमान होता है, वैसा श्री अणेने उसे बदला नहीं है।

यह पूछनेपर कि श्री अणेके वक्तव्यसे कौंसिलमें प्रवेश-सम्बन्धी स्थितिपर क्या असर पडेगा, गांधीजी ने कहा कि कौंसिलमें प्रवेशके बारेमें स्थिति बिलकुल वही है जो श्री अणेके वक्तव्यसे पहले थी। यदि कांग्रेसी कौंसिलमें प्रवेश चाहते हैं तो कोई भी एक व्यक्ति उसे रोक नहीं सकता।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २५-७-१९३३

१. देखिए पृ० ३०५।
२. देखिए परिशिष्ट ९।

३५३. पत्र : अ० भा० चरखा संघको

अहमदाबाद,
२५ जुलाई, १९३३

अवैतनिक मंत्री
अखिल भारतीय चरखा संघ
मिर्जापुर, अहमदाबाद

प्रिय महोदय,

इसी २० तारीखके आपके पत्रके सन्दर्भमे मुझे यह कहना है कि, मेरी रायमे, 'हैंडलिंग' का अर्थ है, सफरी, जिसे एक छोटी झोंपड़ीमे रखा जा सके, और आसानीसे एक जगहसे दूसरी जगह ले जाया जा सके।

पाँचवीं शर्तके बारेमे कहना यह है कि यदि विशेष पूनियाँ आवश्यक हो तो मूल्यमें यन्त्रके साथ लगनेवाले धुनाई-यन्त्रका मूल्य भी शामिल होगा। परन्तु, मैं यह स्पष्ट कर दूँ कि शर्तोंका जो अर्थ मैं कर रहा हूँ उसका प्रभाव निर्णायकोपर डाला नहीं जा सकता। शर्तोंके बारेमे मेरी किसी भी रायका प्रभाव उनपर कतई पड़ने नहीं देना चाहिए। इसलिए, यह केवल मशीनोंके चुनावमे और आविष्कर्त्ताओंको क्या करना है यह बतानेमे आपके मार्गदर्शनके लिए ही है।

हृदयसे आपका,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० १९१२२) से।

३५४. भेंट : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको

२५ जुलाई, १९३३

महात्मा गांधीने आज एसोसिएटेड प्रेसके प्रतिनिधिको बताया कि उन्होंने साबरमती आश्रमको, जो लगभग १८ वर्षसे चला आ रहा है, भंग करनेका फैसला कर लिया है। इस तरहका गम्भीर कदम उठानेका कारण जब उनसे पूछा गया तो महात्मा गांधीने कहा :

कारण मेरे लिए बिलकुल स्पष्ट है। संघर्षमे भाग लेनेवाले सैकड़ों या हजारों लोग अपना सब-कुछ गँवा चुके हैं। ग्रामवासियोंने बहादुरीसे जो कष्ट सहे हैं, उनकी कहानी सुननेके बाद मुझे लगा कि मेरी ओरसे कोई सख्त कार्यवाही जरूरी है। ऐसी क्या चीज थी जिसका मैं त्याग कर सकता। इस पृथ्वीपर ऐसी कोई चीज मेरे पास

नही है जिसे मैं अपनी कह सकूँ। परन्तु मेरे पास कुछ चीजे ऐसी है जो, जो-कुछ मेरा माना जा सकता है, उससे अधिक मूल्यवान है। इन मूल्यवान चीजोमे आश्रम शायद सबसे अधिक मूल्यवान है, और मुझे लगा कि मेरे लिए जो जीवनका नया और पवित्र सेवाव्रत है उसे शुरू करनेसे पहले मुझे आश्रमके अपने साथी कार्यकर्त्ताओको उसमे मेरे साथ भाग लेनेको और इन सब अमूल्य वर्षोंमे जिन गतिविधियोमे वे लगे रहे है, उन्हे फिलहाल छोड देनेको आमन्त्रित करना चाहिए। मुझे यह कहते हुए खुशी होती है कि उनमे से किसीको भी यह विश्वासकरने मे जरा भी झिझक नही हुई कि आश्रमके लिए यह त्याग करनेका समय आ गया है।

यह पूछनेपर कि आश्रमकी बहुत-सी गतिविधियोका क्या होगा, गांधीजी ने कहा :

यह ऐसा प्रश्न है जिसका उत्तर देना कुछ कठिन है। परन्तु, आम तौरपर मैं यह कह सकता हूँ कि यदि ये गतिविधियाँ सच्ची थी और भारतकी कुछ वास्तविक आवश्यकताओको पूरा करती थी, तो ये आश्रमके भग हो जानेके बाद भी जीवित रहेगी। उदाहरणके लिए, खादीकी सारी गतिविधि निश्चित रूपसे आश्रम भग होनेके बाद भी जारी रहेगी। वस्तुत आश्रम जो काम कर रहा था वह केवल यही था कि नई तरहके चरखोका आविष्कार कर और जो चालू है उन्हे परिपूर्ण बनाकर खादीके निर्माणमे नये प्रयोग करना, बहुत-से हरिजन परिवारोकी सहायता करना, और रुई खादी बनकर बाहर आनेसे पहले जितनी हस्त-प्रक्रियाओमे से गुजरती है, शिक्षार्थियोको उनकी शिक्षा देना। यह निस्सन्देह आवश्यक और बहुत ही महत्त्वपूर्ण काम है। परन्तु मुझे विश्वास है कि आश्रमके एक सस्थाके रूपमे न रहनेपर भी, यह काम जारी रहेगा। यही बात कमोबेश आश्रमकी अन्य गतिविधियोके बारेमे भी कही जा सकती है।

यह पूछनेपर कि अब वे क्या करनेवाले है, गांधीजी ने कहा :

जो-कुछ मै कह चुका हूँ उससे अधिक अभी मुझे कुछ नही कहना चाहिए। मैं आशा करता हूँ कि अगले कुछ दिनोमे मै एक और वक्तव्य[1] दूंगा।[2]

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २६-७-१९३३; हिन्दू, २५-७-१९३३ भी।

१. वक्तव्यके लिए देखिए अगला शीर्षक।

२. यह वाक्य हिन्दू, २५-७-१९३३ से लिया गया है।

३५५. वक्तव्य : एम० एस० अणेके वक्तव्यके बारेमे

[२६ जुलाई, १९३३][1]

श्रीयुत अणेने जो वक्तव्य जारी किया है वह अनौपचारिक सम्मेलनमे दी गई मेरी सलाहके बहुत ही अनुरूप है। जो निर्णय लिया गया है, उसका उसमे कोई कारण नही बताया गया है। वह कार्य मेरे लिए छोड दिया गया है। इसका अर्थ यह नही है कि श्रीयुत अणे और मेरी सलाह माननेवाले अन्य मित्र आवश्यक रूपसे इन्ही कारणोमे निर्देशित थे। अत ये [कारण] केवल मेरे ही माने जाने चाहिए।

मेरी रायमे, वर्तमान परिस्थितियोमे सविनय अवज्ञाका बिलकुल वापस ले लेना खतरनाक होता। सत्याग्रहके तकनीककी, जैसाकि मैंने उसे जाना है, यह अपेक्षा है कि जबतक उसके जारी रहनेसे सत्य और अहिंसाके उद्देश्य ही विफल न होते हो, वह चाहे एक ही व्यक्ति द्वारा जारी रहे पर जारी रहना चाहिए। वह, उसमे भाग लेनेवाले लोगोकी कमजोरीके कारण, या (जो एक ही बात है) प्रतिपक्षीकी दिखाई देनेवाली विजयके कारण, छोडा नही जा सकता। दमन जितना अधिक होगा, सच्चे सत्याग्रहीकी शक्ति उतनी ही अधिक होगी। एक व्यक्ति भी यदि सत्याग्रह जारी रखता है, तो जिन लोगोने निराशा या कमजोरीके कारण उसे छोड़ दिया है उनमे उसका पुनर्जागरण सुनिश्चित हो जाता है।

परन्तु कार्यक्रममे आमूल परिवर्तन नितान्त आवश्यक थे।

श्रीयुत अणेके आदेश गुप्त तरीकोको निषिद्ध ठहराते हैं। उनमे अपने-आपमे कोई दोष नही है। आन्दोलनको गुप्त तरीकोसे चलानेमे उद्देश्य पवित्र हो सकता है और कार्यकर्त्ता सरकारकी दमनकारी कार्यवाहियोसे उत्पन्न परिस्थितिका सामना करनेमे बहुत ही दक्षता दिखला सकते है, यह बात मैं पूर्णतया मानता हूँ। परन्तु गोपनीयता सत्याग्रहके प्रतिकूल है और उसकी प्रगतिमे बाधा डालती है। लोगोमे आज जो पस्तहिम्मती है, उसमे निस्सन्देह इसका बड़ा योग रहा है। मै यह जानता हूँ कि गोपनीयतापर प्रतिबन्ध लगनेसे कुछ ऐसी गतिविधियाँ रुक जायेगी जो कांग्रेसको आम जनताकी आँखोके सामने रखती लगती थी। परन्तु इस सन्दिग्ध लाभसे बहुत ज्यादा अच्छा यह रहेगा कि एक ऐसा तरीका जो सत्याग्रहकी भावनाके प्रतिकूल है और जिससे उसकी प्रभावकारितामे विघ्न पड़ता है, निश्चित रूपसे समाप्त हो जायेगा।

एक और परिवर्तन यह किया गया है कि जन-आन्दोलन रोक दिया गया है। जनताने जहाँ भी राष्ट्रीय आह्वानका उत्तर दिया, वहीं बड़ी वीरता दिखलाई और बहुत कष्ट सहा। परन्तु इस बातका पर्याप्त प्रमाण मिल रहा है कि अध्यादेश राज्यकी

१. समाचारपत्रोंकी तत्कालीन रिपोर्टों और *दि इंडियन एनुअल रजिस्टर*, खण्ड २, पृ० ३३३ के अनुसार।

जिसे अब तथाकथित विधानसभाओंने विधानका स्थायी रूप दे दिया है, लम्बी यातनाको वह अब और नही सह सकती। कांग्रेसको, एक संगठनके रूपमें, उसकी कारगर ढंगसे मदद करनेमें रोज ज्यादा कठिनाई महसूस हो रही है। जो थोडी-बहुत राहत सम्भव थी, गोपनीयताको समाप्त कर देनेसे वह भी रुक जायेगी। जनताने अभी बिना मार्ग-दर्शनके एकजुट होकर काम करना नही सीखा है। व्यक्तियोंके उदाहरणमें उसे अभी और प्रशिक्षण और अनुभव प्राप्त करना होगा।

सत्याग्रह, इसलिए, उन व्यक्तियोंतक सीमित रहना है जो, कांग्रेसकी ओरसे और उसके नामपर काम करते हुए भी, अपनी खुदकी जिम्मेदारीपर सत्याग्रह करेंगे। जो ऐसा करेंगे वे कांग्रेससे आर्थिक या किसी अन्य सहायताकी अपेक्षा नही रखेंगे। उन्हें, बीमारी हो या स्वास्थ्य, हर स्थितिमें अनिश्चित कालतक कारावासके लिए तैयार रहना चाहिए। वे अपनी सजाकी मियाद पूरी हो जानेपर या जनताकी शक्तिसे ही जेलसे बाहर आ सकते हैं, और किसी तरह नही। सजा पूरी हो जानेपर उन्हें पहला अवसर मिलते ही फिर जेल जानेकी कोशिश करनी चाहिए। उन्हें अपने कार्यसे जुड़े सभी खतरोंका, जिनमें बेहद गरीबी और चल व अचल सारी सम्पत्तिका नुकसान या लाठी-प्रहार-जैसी शारीरिक यन्त्रणाएँ शामिल होंगी, सामना करनेको तैयार रहना चाहिए।

स्वभावत: उस तरहके कार्यकी, खासकर शुरूमें, केवल थोड़े-से लोगोंसे ही अपेक्षा की जा सकती है। बहुतेरे लोग उन कठिनाइयोंको सुनकर ही भयभीत हो सकते हैं। परन्तु संसार-भरके देशभक्तों और सुधारकोंका अनुभव यह दिखाता है कि कष्टको जब सच्ची भावनासे ग्रहण किया जाता है, तो प्रकृति हमें उसे सहनेकी क्षमता प्रदान कर देती है।

इससे निष्कर्ष यह निकलता है कि उस तरहकी अनुकूल प्रतिक्रिया, यदि हुई तो, सबसे पहले बुद्धिजीवियोंमें ही होनी है। उनका उदाहरण अन्तत: संक्रामक सिद्ध होगा और सारे राष्ट्रमें फैल जायेगा, जिसके फलस्वरूप जनतामें ऐसी जागृति आयेगी जो कैसे-भी क्रूर दमनसे कुचली नही जा सकेगी। इसके अलावा, जनतामें से व्यक्ति अभी भी निश्चित रूपसे यह कार्य कर सकते हैं। केवल उन्हें व्यक्तिगत सत्याग्रहके फलितार्थोंको समझ लेना चाहिए।

मुझे विश्वास है कि ये नर-नारी राष्ट्रीय भावनाका और पूर्ण स्वाधीनताके राष्ट्रके दृढ़ संकल्पका प्रतिनिधित्व करेंगे। यहाँ यह आपत्ति की जा सकती है कि थोड़े-से व्यक्तियोंका वीरतापूर्वक कष्ट सहना अपने-आपमें चाहे कितना ही प्रशंसनीय क्यों न हो, पर उसका कोई व्यावहारिक मूल्य नही है और ब्रिटिश नीति उससे प्रभावित नही हो सकती। इस तरहके विचारसे मैं असहमत हूँ। मेरी रायमें, जिस प्रक्रियाकी रूपरेखा मैंने रखी है वह, लम्बी और अनन्त दिखाई देते हुए भी, व्यवहारमें सबसे छोटी सिद्ध होगी। कारण, कि मेरी यह धारणा है कि सच्ची स्वाधीनता अर्थात्, जनताके अर्थोंमें और उसके लिए स्वाधीनता, भारतके मामलेमें, किसी और तरीकेसे अप्राप्य ही सिद्ध होगी। अहिंसा कांग्रेस-संविधानका अभिन्न अंग है, और अहिंसाका तरीका उसी मार्गकी माँग करता है जो मैंने सुझाया है।

यह बात अत्यन्त मंदबुद्धि व्यक्तिकी भी समझमे आ सकती है कि ब्रिटिश नीति किसी ऐसे संविधान द्वारा जो ब्रिटिश इच्छाको अभिव्यक्त करता हो और राष्ट्रकी इच्छा और उसके कल्याणकी उपेक्षा करता हो, बदली नही जा सकती। कोई भी संविधान यदि वह ब्रिटिश इच्छासे भारतपर थोपा गया है और भारतमे तथा भारत द्वारा की गई हर कार्यवाहीसे अप्रभावित है, तो स्वाभाविक रूपसे ब्रिटिश नीतिको और कठोर बनायेगा और कायम रखेगा। वह नीति तो केवल ब्रिटिश दमनके विरोधमे की गई भारतकी समुचित कार्रवाईसे ही बदली जा सकती है और बदली जायेगी। दूसरे शब्दोमे, ब्रिटेन वह कार्य सम्पन्न नही कर सकता। वह हमे स्वयं सम्पन्न करना है। हमारी स्वाधीनताका अर्थ ब्रिटेनकी इच्छाकी नही बल्कि हमारी इच्छाकी अभिव्यक्ति होना चाहिए। मैंने जो मार्ग सुझाया है, केवल वही हमारी इच्छा अर्थात्, करोडो मूक लोगोकी इच्छाकी अभिव्यक्तिके लिए आवश्यक समर्थन तैयार करेगा। कारण, कि व्यक्तिगत कार्यवाही अन्तत जनताको अवश्य प्रभावित करती है।

हमे यह नही भूलना चाहिए कि भारतका मामला असाधारण है। इतिहासमे इस तरहका कोई और दृष्टान्त मुझे नहीं मालूम। भारतमे ब्रिटिश इच्छा भारतके अपने नर-नारियो द्वारा थोपी गई है। भारत अपनी जनताके दमन और शोषणके लिए अधिकारी और सैनिक प्रदान करता है और अन्य साधन प्रदान करता है। यदि यह घोर अनैतिक स्थिति एक दिनमे या एक शताब्दीमे भी न बदले तो कोई आश्चर्य नही होना चाहिए।

परन्तु, जैसे ही हम अपने लक्ष्यकी ओर सही मार्ग अपनाते है, हमारी सफलता सुनिश्चित हो जाती है। मेरा यह दावा है कि हमने वह मार्ग १९२० मे अपनाया और यद्यपि यह चीज स्पष्ट रूपसे प्रदर्शित नही की जा सकती, पर हमने तबसे पूर्ण स्वराज्यकी ओर बडे-बडे डग रखे है। किसी भी दूसरे तरीकेसे हम अपने लक्ष्यके इतने निकट नही पहुँच सकते थे। उस बातमे कौन इनकार कर सकता है कि पिछले तेरह वर्षोमे हमने जनतामे जैसी जागृति देखी है, वैसी सितम्बर १९२० से पहले सौ वर्षोमे कभी नहीं देखी गई थी।

मेरी सलाह निराशा या पराजयकी भावनाकी उपज नही है। मुझमे इनमे से एक भी नही है। मै तो यह देखकर उल्लाससे भरा हूँ कि राष्ट्रीय प्रतिक्रिया इतनी जबरदस्त रही। उल्लासका सबसे बडा कारण यह है कि व्यक्तियो तथा जनताने, अपनी इच्छा और कल्पनातीत उत्तेजनाके बावजूद, अपनी कार्यवाहीमे अहिंसाका पालन किया। सीमाप्रान्तके पठानोने अहिंसाका पालन किया, इसके महत्त्वको हम पूरी तरह समझे नहीं हैं, क्योंकि हम इस घटनाके बहुत ही समकालिक हैं। हो सकता है, उन्होंने हिंसात्मक भाषाका प्रयोग किया हो। परन्तु हिंसात्मक कार्यवाहीसे वे इस तरह दूर रहे हैं जैसेकि पहले, जहाँतक हमे याद है, कभी नही रहे थे — ऐसा कई गम्भीर स्वतन्त्र साथियोंका कहना है। यदि अहिंसा पठानके दिलमे जड़े जमा लेती है, तो वह हमारी कई कठिन समस्याओको सुलझा देगी। जो चीज सीमाप्रान्तके पठानके बारेमे सच है, वह भारत-भरके सत्याग्रहियोके बारेमे भी ज्यादातर सच है।

मुझे गलत नही समझना चाहिए। मेरा दावा बहुत मामूली है। जबतक दिलसे हिंसा नही मिटती, तबतक हिसाके अचानक विस्फोटका खतरा सदा रहेगा। मुझे यह कहते दु ख होता है कि हमारे दिलोमे काफी हिंसा है। हमने, असहाय होनेके कारण, नीतिके तौरपर अहिंसात्मक ढगसे कार्य किया है। यदि हम कारगर ढगसे कर सकते, तो हम हिंसा ही करते। मै चाहूँगा कि भारत हिंसाकी शक्ति रखते हुए भी हिंसाका त्याग करे। मै चाहूँगा कि इस तथ्यको अच्छी तरह समझ लिया जाये कि जन-साधारणको अपनी स्वाधीनता खुद प्राप्त करनी है, और उनकी सख्या इतनी अधिक है कि यदि वे हिंसात्मक उपायोसे कुछ प्राप्त करेगे तो वह स्वाधीनता नही होगी, बल्कि एक दानव होगा जो उन्हे निगल जायेगा और शायद सारी दुनियाको तबाह कर देगा। एक शिक्षा, जो पश्चिमी राष्ट्र ज्वलन्त अक्षरोमे ससारको दे रहे है, यह है कि हिंसा शान्ति और सुखका मार्ग नही है। हिंसाके पथने उन्हे या उनके सम्पर्कमे आनेवालोको अधिक सुखी या पहलेसे बेहतर नही बनाया है। यदि हम कभी, एक राष्ट्रके रूपमे, अहिंसाकी जीवन्त आस्थापर पहुँच गये और हमने हिंसाको अपने दिलोमे से निकाल दिया, तो हमें सत्याग्रहका सहारा लेनेकी भी जरूरत नही पडेगी। उसकी जरूरत तभीतक है जबतक हम अहिंसाको मात्र एक नीति या उपायके रूपमे आजमा रहे है। नीतिके रूपमे भी यह हिंसासे सदा बहुत अधिक कारगर रहती है। अधिनायकके आदेशोपर गुप्त सगठन स्वभावत खत्म हो जायेगे। हर सत्याग्रही स्वय अपना नेता होगा। काग्रेसका भार वह खुद अपने कन्धोपर वहन करेगा। इस तरहके सत्याग्रही राष्ट्रीय सम्मानके ट्रस्टी होगे।

काग्रेसियोकी सख्या जहाँ करोडोमे गिनी जा सकती है, वहाँ, नई योजनाके अधीन, सत्याग्रहका प्रतिनिधित्व केवल कुछ हजार या इससे भी कम लोग करेगे। यदि ये नर-नारी सच्चे हुए, तो मुझे पक्का विश्वास है कि इनकी सख्या बढकर लाखो हो जायेगी। इस बीच, बाकी काग्रेसी काग्रेसकी अन्य विविध रचनात्मक गति-विधियोमे जुटे रहेगे — जैसे हरिजन-सेवा, साम्प्रदायिक एकता, खादीका उत्पादन और वितरण; पूर्ण मद्य-निषेध; विदेशी कपडे और अन्य ऐसे मालका बहिष्कार जिसकी देशी वस्तुओसे स्पर्धा है या जो और किसी तरह राष्ट्रके हितो, देशी वस्तुओके उत्पादन, देशी उत्पादन-पद्धतियोके सुधार और ग्रामोद्योगोके विकास या पुनरुत्थानके लिए हानिकारक है, कृषि और पशु-पालनमे सुधार, श्रमिक सघोका सगठन जिसका उद्देश्य श्रमिकोका राजनैतिक शोषण नही, बल्कि उनकी दशाको सुधारना और पूंजी-पति और श्रमिकके सम्बन्धोको सुधारना होगा। वस्तुत, राष्ट्रीय गतिविधिकी कोई भी शाखा काग्रेससे अछूती नही रह सकती। यह तभी सम्भव होगा जब हम इस मिथ्या धारणासे मुक्ति पा लेगे कि सत्याग्रहके सिवा काग्रेसकी कोई और गतिविधि नही है या वह [सत्याग्रह] अन्य सब गतिविधियोमे बाधक है। यह धारणा शायद तब सच रहेगी जब सामूहिक सत्याग्रह हो और आन्दोलन तीव्र और प्रचण्ड होना हो। परन्तु जबतक वह समय नही आता, तबतक राष्ट्रनिर्माणकी हर गतिविधिको उचित महत्त्व दिया जाना चाहिए और किसीकी भी उपेक्षा नही होनी चाहिए।

सत्याग्रही राष्ट्रकी अहिंसक सेनाके प्रतिनिधि है। जिस तरह हर नागरिक सक्रिय सैनिक नही हो सकता, उसी तरह हर नागरिक सक्रिय सत्याग्रही नही हो सकता। जब सैनिक केवल इसलिए कि वह प्राणोंको बाजी लगाकर अपने राष्ट्रके लिए लडता है, अपनेको औरोसे श्रेष्ठ नही समझता, तो सत्याग्रहीको तो, जो अपने राष्ट्रके लिए केवल कष्ट सहता है, कदापि ऐसा नही समझना चाहिए। जो लोग योद्धाओकी पाँतसे बाहर है, वे यदि अपनेको राष्ट्रके सेवक मानकर अपनी प्रतिभाको पूर्णतया राष्ट्रीय कल्याणमे लगाते है और किसी भी ऐसी व्यक्तिगत या सार्वजनिक कार्यवाहीमे भाग नही लेते है जो राष्ट्रीय हितके प्रतिकूल है, तो वे भी उतने ही महत्त्वपूर्ण है।

इसके अलावा, जहाँ काग्रेस, एक सगठनके रूपमे, सत्याग्रहियोकी खुलेआम सहायता नही कर सकती, और मेरी योजनाके अनुसार उसे सभी गुप्त तरीके छोडने होगे, वहाँ काग्रेसियों और काग्रेसके तरीको और उद्देश्यसे सहानुभूति रखनेवाले अन्य लोगोका भी यह कर्त्तव्य होगा कि वे, जहाँतक सम्भव हो, सत्याग्रहियो, खासकर लगानबन्दी आन्दोलनमे भाग लेनेवाले बहुत ही निर्धन किसानोके दीन परिवारोकी सहायता करे। उन्हे यह विश्वास दिलाना चाहिए कि आन्दोलनके दौरान (मेरे खयालसे अवैध और गलत ढगसे) जब्त की गई एक-एक इच जमीन राष्ट्रके स्वतन्त्र होनेपर, जैसाकि उसे किसी दिन होना ही है, उन्हे या उनकी सन्तानको वापस मिल जायेगी। मुझे पता चला है कि जिन किसानोने राष्ट्रीय स्वाधीनताके लिए अपना सब-कुछ दाँवपर लगा देनेका मार्ग चुना है, काग्रेस उनकी गुप्त रूपसे सहायता करनेमे सफल रही है, यद्यपि इस काममे लगे कार्यकर्त्ताओंको व्यक्तिगत रूपसे इसके लिए भारी जोखिम उठानी पड़ी है। इस तरहकी सहायता देना भविष्यमें सम्भव नही होगा, न केवल इसलिए कि गुप्त तरीकोको छोडनेका निश्चय कर लिया गया है, बल्कि इस-लिए भी कि काग्रेसके पास आयका कोई अनवरत स्रोत नही है। इस तरहके परि-वारोकी, यदि और किसी खयालसे नही तो मानवताके खयालसे ही, खुलेआम सहा-यता करनेका भार अब उन लोगोके कन्धोंपर होगा जो सत्याग्रहमे भाग नही ले रहे है। सरकारको चुपडी और दो-दो नही मिल सकती। यदि वह व्यक्तिगत और खुली सहायताको भी रोकेगी, तो उसे सत्याग्रहियोंके आश्रितोको जेलमे बन्द करना होगा अन्यथा उनका पालन करना होगा। जो लोग अच्छी हालतोंमे एक बार खुद बरबादी मोल ले चुके है और अब प्रति व्यक्ति प्रतिमास तीन या चार रुपयेकी सहायतापर जीवन-निर्वाह कर रहे है, उनकी सख्या यदि दुनियाको पता चले तो वह हैरान रह जाये। मै समझता हूँ कि उनके घरतक जब्त हो जानेका खतरा है।

कौसिलके कार्यक्रमको मैंने यहाँ छुआ नही है। जो सुधार होनेवाले है उनके प्रवर्तनके बारेमे सोचना अभी, मेरे विचारमे, सर्वथा असामयिक है। हमे नही मालूम कि वे यदि होने है तो किस तरहके होने है और कब होने है। जिनका उनमे भाग लेनेकी ओर झुकाव हो, उनके लिए यह उचित होगा कि वे अपनी कोई नीति निश्चित करनेसे पहले सुधारोकी प्रतीक्षा करे। अब मौजूदा विधानसभाएँ रह जाती है। जिस तरह मै सत्याग्रहपर निर्णायक राय दे सकता हूँ, उस तरह इस प्रश्नपर नही दे

सकता। स्वाधीनताकी प्राप्तिके लिए कौसिलोमे प्रवेशके विचारसे ही मेरा सिर चकराने लगता है। उनसे कुछ विशिष्ट मामलोमे कुछ राहत मिल सकती है, पर वह राष्ट्रको उसके लक्ष्यसे दूर रखनेवाली दूषित वायु है। यद्यपि मैंने श्रीयुत राजगोपालाचारी और अन्य लोगोके जरिये अस्पृश्यता-सम्बन्धी विधेयकोके मामलेमें विधानसभाओ और सरकारका सहयोग प्राप्त करनेकी कोशिश की थी, पर वे मेरे लिए कोई प्रलोभन नही हैं। उसे प्राप्त करनेकी कोशिशकी मुख्य जिम्मेदारी उनके कन्धोपर नही, मेरे कन्धोपर है। अपनी उस कोशिशपर मुझे क्षमायाचना नही करनी है। असहयोगके सिद्धान्तके वह बिलकुल अनुकूल है।

एक ऐसी चीज है जिसपर श्रीयुत अणेका मुझसे और कुछ अन्य मित्रोसे मतभेद था। मेरा यह दृढ विचार रहा है कि अखिल भारतीय अधिनायक और प्रान्तीय अधिनायकोके पद भी समाप्त कर देने चाहिए। परन्तु, उतना ही दृढ उनका यह विचार था कि यह पद चाहे प्रतीक रूपमें ही रहे, पर कायम रहना चाहिए। लेकिन मुझे इस मार्गमे गम्भीर कठिनाइयाँ दिखाई दे रही है। अधिनायकोको, नई योजनाके अधीन, औरोकी तरह अपनी नियुक्तिके तुरन्त बाद ही सत्याग्रह करना है। उच्च कोटिके सभी स्त्री-पुरुषोको शीघ्र ही जेलकी राह पकडनी है। इसलिए शीघ्र ही वह समय आ जाना है जब अधिनायकत्वकी वस्तुत योग्यता रखनेवाले स्त्री-पुरुष उपलब्ध नही होगे। तब केवल नाम मात्रके अधिनायक ही रह सकेगे, जैसेकि पहले रहे है। वे आसानीसे परेशानी पैदा करनेवाली स्थितियाँ उत्पन्न कर सकते है। और आखिरी बात यह है कि जब प्रत्येक सत्याग्रहीसे स्वय अपना नेता होनेकी अपेक्षा की जाती है, तो अधिनायक बनानेका कोई औचित्य ही नही रहता। वस्तुत, उनका केवल अस्तित्व ही व्यक्तिगत सत्याग्रहियोके प्रवाहको रोक सकता है। क्योकि वे अधिनायकोके आदेशोकी प्रतीक्षा कर सकते है, जबकि नई योजनामे किन्ही और आदेशोकी व्यवस्था नही है। श्रीयुत अणे द्वारा जारी किये गये अन्तिम आदेशोके अनुसार, कांग्रेस को केवल अपने आदर्शमे ही सगठनके रूपमे रहना चाहिए। इसलिए, मेरा अभी भी यह विचार है कि यदि मेरा तर्क उन्हे जँचे तो अधिनायकोको अपने-आपको खत्म कर देना चाहिए।

वाइसरायने सुलहकी सम्भावनाओकी खोजतकके लिए मुझसे मिलनेसे इनकार कर दिया है। इसलिए उन स्थितियोकी जाँच जिनमे पूर्ण स्वराज्यके बिना भी किन्तु उसकी ओर बढते हुए सत्याग्रह स्थगित किया जा सकता, अनावश्यक हो जाती है। परन्तु मै उस बातको, जो मै प्राय कहता आया हूँ, फिर दोहरा सकता हूँ कि सारा असहयोग इसीलिए है कि जबरदस्तीके सहयोगकी जगह सच्चा सहयोग सुनिश्चित हो सके, और कानूनोकी सारी सविनय अवज्ञा इसीलिए है कि उनका पालन जबरदस्तीकी बजाय स्वेच्छासे हो। इसलिए, मुझे इसमे कोई सन्देह नही है कि कांग्रेस सम्मानपूर्ण सुलहके लिए सदा तैयार रहेगी।

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २००२५) से।

३५६. पत्र : बम्बई सरकारके गृह-सचिवको

अहमदाबाद,
२६ जुलाई, १९३३

बम्बई सरकारके सचिव
(गृह-विभाग)
पूना

प्रिय महोदय,

सन् १९१५ मे जब मै हिन्दुस्तान लौटा, तो सत्यकी सेवाके उद्देश्यसे सत्याग्रह आश्रमकी स्थापना मेरा पहला रचनात्मक कार्य था। आश्रमवासी सत्य, अहिसा, ब्रह्मचर्य, अस्वाद, अपरिग्रह, अभय, अस्पृश्यता-निवारण, खादीपर केन्द्रित स्वदेशी, सर्वधर्म-समभाव और शरीर-श्रमका व्रत लिये हुए है। आश्रमकी मौजूदा जगह १९१६ मे खरीदी गई थी। आश्रमवासियोकी मुख्यतया अपनी मेहनतसे ही आजकल आश्रमकी कई गतिविधियाँ चल रही है। पर मजदूरी देकर वाहरके मजदूरोकी मदद लेनेकी भी जरूरत पडती है। वहाँकी मुख्य गतिविधियाँ ये है: विजलीसे चलनेवाले यन्त्रोकी मदद विना ग्रामोद्योगके रूपमे खादीका उत्पादन, गोशाला, खेती, वैज्ञानिक ढगसे पाखाना-सफाई और लिखना-पढना सिखाना। आश्रममे इस समय १०७ आदमी (४२ पुरुष, ३१ स्त्रियाँ, १२ लडके और २२ लडकियाँ) है। अभी जो जेलमे है और जो आश्रमके वाहर दूसरे कामोमे लगे हुए है, उन्हे इनमे नही गिना गया है। अवतक आश्रमने लगभग एक हजार आदमियोको खादी तैयार करनेका प्रशिक्षण दिया है। जहाँतक मै जानता हूँ, उनमे से ज्यादातर लोग उपयोगी रचनात्मक काम कर रहे है और ईमानदारीसे रोजी कमा रहे है।

आश्रम एक रजिस्टर्ड ट्रस्ट है। उसका रुपया विशेष-विशेष कामोके लिए निर्धारित है। प्रत्येक विभागको स्वावलम्वी वनानेका उद्देश्य होते हुए भी, सभी दायित्वोको पूरा करनेके लिए आश्रमको अवतक मित्रोसे दान भी लेना पडा है। अनुभवने हमे वताया है कि जवतक आश्रम शिक्षाका (उसके विशाल अर्थमे) काम करेगा और उसके लिए न केवल फीस नही लेगा, वल्कि पढ़नेवालोको रोटी-कपड़ा भी देगा, तव तक वह पूरी तरह स्वावलम्वी नही वन सकता।

आश्रमकी अचल सम्पत्तिका अन्दाज लगभग ३,६०,००० रुपये होता है और चल सम्पत्तिका अन्दाज, नकदी-सहित, ३,००,००० रुपयेसे ऊपर[1] पहुँचता है। आश्रम तथाकथित राजनीतिमे भाग नही लेता। पर वह यह मानता है कि सत्य और अहिसाके पालनके लिए खास परिस्थितियोमे असहयोग और सत्याग्रह अनिवार्य है।

१. बादमें इसे सुधार कर "लगभग २,००,००० रुपये" कहा गया था; देखिए अगला शीर्षक।

इसीलिए १९३० का सत्याग्रह आन्दोलन लगभग ८० आश्रमवासियोके दाडी-कूच से शुरू किया गया था।

वर्तमान परिस्थितिमे, जब एक तरफ सरकारका दमनचक्र तेज होता जा रहा है और दूसरी तरफ लोगोकी हिम्मत उतनी ही टूटती जा रही है, आश्रमके लिए अधिक बडा बलिदान करनेका समय आ पहुँचा है।

उपवास तोडनेके बाद जो बयान मेरी नजरसे गुजरे है उनसे मालूम होता है कि :

१ देशके विभिन्न भागोमे व्यक्तिगत सत्याग्रहियोको त्रस्त करनेके लिए पुलिसकी तरफसे यातनाएँ देनेके तरीके अख्तियार किये गये है,

२ स्त्रियोका अपमान किया गया है,

३ लोगोका आजादीसे चलना-फिरना लगभग असम्भव हो गया है,

४ देशके बहुत-से भागोमे काग्रेसियोके लिए ग्राम-सेवा करना प्राय असम्भव हो गया है,

५ बहुत-सी हवालातो और जेलोमे सत्याग्रही कैदियोपर अपमानजनक और शारीरिक यन्त्रणा देनेवाले अत्याचार किये गये है,

६. लोगोपर उनके बूतेसे बाहर भारी जुर्माने किये गये है और वे बहुत ही नाजायज तरीकोसे वसूल किये गये है,

७ भूमि-कर या लगान रोकनेवाले किसानोको उनके अपराधसे कही अधिक सजाएँ दी गई है, जिसमे उद्देश्य साफ-साफ उन्हे और उनके पडोसियोको आतंकित कर घुटने टिकवाना रहा है,[1]

८ अखबारोका मुँह बन्द कर दिया गया है,

९. सार यह कि देशमे एक सिरेसे दूसरे सिरेतक आत्मसम्मानके साथ स्वतन्त्रता मे रहना असम्भव हो गया है।

निस्सन्देह, इन सब बयानोको सरकारी हलकोमे गलत ठहराया जायेगा, या किसी-न-किसी तरहके स्पष्टीकरणसे उडा दिया जायेगा। सम्भव है कि ये अतिशयोक्तिसे मुक्त न हो। परन्तु अधिकाश काग्रेसियोके साथ मै इनपर यकीन करता हूँ। इसलिए ये हमे कार्यवाहीके लिए मजबूर करनेको काफी है।

अत. मुझे केवल कारावाससे सन्तोष नही होगा। इसके अलावा, मुझे साफ दिखाई दे रहा है कि जबतक आश्रम इस आन्दोलनके साथ अपना सम्बन्ध बिलकुल खत्म न कर दे, आश्रमका विशाल रचनात्मक कार्यक्रम सही-सलामत चल नही सकता। यह स्थिति स्वीकार करना मूल सिद्धान्तको नकारनेके बराबर है। अबतक मुझे आशा थी कि कुछ आश्रमवासियोके सत्याग्रह करनेके साथ-साथ आश्रम भी बना रह सकता है और चाहे काग्रेसका ध्येय तुरन्त सिद्ध न हो सके, तो भी निकट भविष्यमें सरकार और काग्रेसके बीच सम्मानपूर्ण समझौता हो जाना है। पर काग्रेसने मेरे

१. "घुटने टिकवाना" शब्द बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्टससे लिये गये है।

जरिये ईमानदारीसे जो सुलहका हाथ बढाया, उसे वाइसरायने दुर्भाग्यसे ठुकरा दिया है। यह चीज साफ बताती है कि सरकार न शान्तिके लिए प्रयत्नशील है और न शान्ति चाहती है। वह तो यह चाहती है कि देशका सबसे बडा और, यदि एकमात्र नही तो, अधिक-से-अधिक लोकप्रिय राजनैतिक सगठन दाँतोमे तिनका लेकर उसकी शरणमे जाये। जबतक काग्रेसको अपने वर्तमान सलाहकारोपर विश्वास है, यह होना असम्भव है। इसलिए यह सघर्ष जरूर लम्बा चलेगा, और लोगोने जितना बलिदान अबतक किया है, यह उससे बहुत बडा बलिदान उनसे माँगेगा। इस आन्दोलनके जनककी हैसियतसे, स्वाभावत मुझसे अधिक-से-अधिक बलिदानकी अपेक्षा की जाती है। वह बलिदान मैं उस चीजको कुरबान करके ही कर सकता हूँ जो मेरे लिए सबसे निकट हैं, सबसे प्रिय है, और जिसकी रचनाके लिए मैंने और दूसरे बहुत-से आश्रमवासियोने अटूट धीरज और अपार सावधानीसे अठारह सालतक मेहनत की है। आश्रमके एक-एक पशु और एक-एक पेडका अपना इतिहास है और उससे पवित्र सस्मरण जुडे हुए हैं। वे सभी एक विशाल कुटुम्बके सदस्य है। जो कभी बिलकुल वीरान जमीन थी, मानव प्रयत्नोसे उसे एक काफी बड़ी बाग-बगीचेवाली आदर्श बस्ती बना लिया गया है। इस कुटुम्ब और इसकी विविध गतिविधियोको भग करनेका काम हममे आँसू बहाये बिना नही हो सकेगा। आश्रमवासियोके साथ मैंने भक्तिभावमे खूब बाते कर ली है। और उन्होने, भाइयो और बहनो दोनोने, उसकी वर्तमान गतिविधियोको बन्द करनेके मेरे सुझावका एकमतसे स्वागत किया है। जो थोडे-बहुत भी सशक्त हैं, उन्होने सघर्ष स्थगित रखनेकी अवधि पूरी होते ही व्यक्तिगत सत्याग्रह करनेका निश्चय किया है।

यहाँ यह बता देना जरूरी है कि आश्रमने पिछले दो सालसे जमीनका लगान चुकानेमे इनकार कर रखा है और उसके कारण उसकी काफी कीमती चीजे जब्त कर ली गई हैं और बेच डाली गई हैं। इस कार्यवाहीकी मैं कोई शिकायत नही करता। परन्तु ऐसी खतरनाक परिस्थितियोमे एक बड़ी सस्थाका चलाना आनन्ददायक या लाभदायक नही हो सकता। मैं यह पूरी तरह समझता हूँ कि राज्यके साथ, वह चाहे न्यायी हो या अन्यायी, लोकसत्तात्मक हो या विदेशी, उसके किसी नागरिक का यदि संघर्ष होता है, तो वह उसकी जमीन-जायदाद किसी भी समय जबरदस्ती ले सकता है। इसलिए अनिश्चित कालतक चलनेवाले इस सघर्षमे जो होना अनिवार्य है, उसे पहलेसे ही मान लेनेमे मुझे समझदारी ही दिखाई देती है।

परन्तु आश्रमको भग करनेका निर्णय कर लेनेपर भी हम चाहते है कि उसकी हर चीजका उपयोग सार्वजनिक कामोमे हो। इसलिए जबतक सरकार, किसी भी कारणसे, उसकी किसी या तमाम चल सम्पत्तिपर — नकदी सहित — कब्जा करना न चाहे, तबतक मेरा विचार उसे ऐसे मित्रोंको सौप देनेका है जो उसका उपयोग लोक कल्याणके लिए और जिन कामोके लिए वह निर्धारित है उनके लिए करेंगे। इस प्रकार खादीका माल और कारखाने और बुनाईघरका सारा सामान अखिल भारतीय चरखा सघको सौंप दिया जायेगा, जिसकी तरफसे कि यह काम किया जा रहा है। गाय और दूसरे पशु, गोसेवा संघको सौप दिये जायेंगे, जिसकी तरफसे कि

यहाकी गोशाला चलाई जा रही है। पुस्तकालय सम्भवत एक ऐसी सस्थाको सौंप दिया जायेगा जो उसे सभालनेके लिए तैयार होगी। रुपया और दूसरी चीजे जिन-जिन लोगोकी होगी, उन्हे लौटा दी जायेगी या जो मित्र उन्हे सभालनेको तैयार होगे, उन्हे सौप दी जायेगी।

अब रह जाते है, जमीन, मकान और खडी फसले। मेरा सुझाव है कि सरकार उनपर कब्जा कर ले और उनका जो-कुछ करना हो करे। ये चीजे भी मै खुशीसे मित्रोको सौप देता, परन्तु उन्हे लगान चुकाना पडे, इसके लिए मै तैयार नही हो सकता। साथी सत्याग्रहियोको ये चीजे स्वाभाविक रूपमे, सौपी ही नही जा सकती। इसलिए मै इतना ही चाहता हूँ कि जमीन, मकान, कीमती पेड और खडी फसले बरबाद होने न दी जाये, जैसाकि बहुत-सी दूसरी जगहोपर हुआ है, बल्कि उनका सदुपयोग किया जाये।

जमीनके एक हिस्सेके मकानोमे कुछ हरिजन परिवार रहते है। अबतक उनसे कोई किराया नही लिया जाता था। उन्हे सत्याग्रहमे शामिल होनेको कहनेकी मेरी इच्छा नही है। वे अबसे आश्रमके ट्रस्टियोको नाममात्रका, एक रुपया वार्षिक, किराया देगे और जितनी जमीन उन मकानोने रोक रखी है उसके लगानके लिए जिम्मेदार होगे।

यदि, किसी भी कारणसे, सरकार उपरोक्त सम्पत्तिपर कब्जा न करे तो भी आश्रमवासी सघर्ष स्थगित रखनेकी अवधि पूरी होनेपर, यानी ३१ तारीखके बाद, आश्रम छोडकर चले जायेगे। हाँ, सरकार उससे पहले ही आश्रमपर अधिकार कर ले तो बात दूसरी है। मेरी प्रार्थना है कि इस पत्रका जवाब मुझे तारसे दिया जाये। खास तौरपर मुझे यह बता दिया जाये कि चल सम्पत्तिके बारेमे सरकारकी इच्छा क्या है, ताकि उसका निपटारा यदि मुझे ही करना हो तो मै समय रहते कर सकूं।

आपका विश्वस्त,

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१५३५) से। बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्टस, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्राच, फाइल स० ८००(४०), भाग २, पृ० १७१-८१ से भी।

३५७. पत्र : बम्बई सरकारके गृह-सचिवको

२६ जुलाई, १९३३

बम्बई सरकारके सचिव
(गृह-विभाग)
पूना

प्रिय महोदय,

आपके नाम अपने आजके पत्रमे एक वक्तव्यको सुधारना है। पृष्ठ २, पंक्ति ३ मे "३,००,००० रुपये से ऊपर" के बजाय "लगभग २,००,००० रुपये" पढिए।

आपका विश्वस्त,

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १९१२३) से। बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) भाग २, पृ० १८३ से भी।

३५८. पत्र : सैयद महमूदको

२६ जुलाई, १९३३

प्रिय डॉ० महमूद,

आपके दो पत्र मिले।

आपने जिस घोषणाका सुझाव रखा है, वह मुझे करनी नही चाहिए। ऐसी किसी घोषणाका जिसके साथ तुरन्त कोई कार्यवाही नही होनी हो, इस समय कोई मूल्य नही है। कर्त्तव्यकी भावना और अत्यन्त शुद्ध उद्देश्योसे की गई कार्यवाहीतक का बिलकुल गलत अर्थ लगाया जाता है। पर मै आपके आगे अपने इस विश्वासको फिर दोहरा सकता हूँ कि मुसलमान मित्रोको साथ लिये बिना मै स्वर्गमे भी जाना नही चाहूँगा। सचाई यह है कि मै जितना अधिक आत्मनिरीक्षण करता हूँ, उतना ही मुझे यह अनुभव होता है कि मेरे मनमे हिन्दू, मुसलमान, ईसाई और अन्य लोगोके बीच कोई भेदभाव नही है। उन्हे हानि पहुँचाकर फूलना-फलना मेरे लिए घृणित होगा।

बनारस हिन्दू विश्वविद्यालयके बारेमें आपके दूसरे सुझावका जहाँतक सम्बन्ध है, मालवीयजी जहाँ बहुत त्याग कर सकते है, वहाँ वे विश्वविद्यालयका त्याग नही करेगे। वे इतने दार्शनिक है कि यदि वे उसे आत्मसम्मानके साथ रख नही सकेंगे, तो जाने देगे। परन्तु वे, यदि मै उन्हे ठीकसे समझा हूँ तो, विश्वविद्यालयके जान-

बूझकर त्यागको एक भारी गलती समझेंगे। इससे भी बडी बात यह है कि उसके मह-ट्रस्टी उन्हे कभी भी वैसा कदम उठाने नही देंगे। और इससे भी वडी बात यह है कि छात्रोकी अपना प्रशिक्षण रोकनेकी कतई इच्छा नही है। इसलिए, आप और मैं चाहे कुछ भी चाहे, जो कदम आपने सुझाया है वह मुझे सम्भव नही लगता।

आपके दूसरे पत्रका जहाँतक सम्बन्ध है, आप जो कहते है वह अर्थ सत्य हो सकता है अर्थात्, मैं यह चाहता हूँ कि विरोधका रूप बनाये रखनेके लिए कुछ व्यक्ति जेल जाये। परन्तु वे जेल जाये, यह मैं इसलिए चाहता हूँ कि कुछ खरे सत्याग्रहियोका कारावास एक असदिग्ध और दुर्निवार प्रदर्शन हो सकता है।

वेगम महमूद अब पहलेसे अच्छी है, यह जानकर खुशी हुई और मुझे आशा है कि वे बिलकुल स्वस्थ हो जायेंगी। आपके अपने स्वास्थ्यके बारेमे मेरी वडी इच्छा है कि आप डॉ० मेहताके सेनिटोरियममे प्राकृतिक चिकित्सा कराये। मुझे इसमे जरा भी सन्देह नही है कि आप बिलकुल स्वस्थ हो सकते है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[पुनश्च]

महादेवका सलाम।

डॉ० सैयद महमूद
फरीदी मजिल
दरगाह शरीफ
अजमेर

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५०९०) से। एस० एन० १९१२४ से भी।

३५९. पत्र : प्रेमलीला ठाकरसीको

२६ जुलाई, १९३३

प्रिय बहन,

तुम्हे एक पोस्टकार्ड लिखा था, वह मिल गया होगा। आश्रमको तोड देनेके निर्णयके बारेमे तुमने पढा ही होगा। मुझे कुछ लडकियोको कही रखना पडेगा। आनन्दी और मणिको तो तुम जानती ही हो। उन्हे और तीन दूसरी लडकियोको तुम्हारी शालामें रखनेकी इच्छा है। दूसरी लडकियोमे एक महादेवकी बहन, दूसरी यहाँके उपमन्त्रीकी लडकी शारदा और तीसरी नरहरिकी लडकी वनमाला है। उसे भी तुमने देखा तो है ही। उन्हे लेनेमे तुम्हे कोई असुविधा न हो और लीलाबहन भी राजी हो तो पत्र लिखना। तुम्हारी अनुमति मिले तो मुझे उन्हे फौरन रवाना कर देना पडेगा। पहली तारीखको मेरा क्या होगा, यह कहा नही जा सकता। हो

सके तो मुझे तारसे जवाव देना। आश्रमके पतेपर तार भेजोगी तो हो सकता है मुझे जल्दी मिल जाये। पत्र 'अमृत भवन' मे जल्दी मिलेगा क्योकि मै आश्रम दोपहरके एक वजे पहुँचता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ४८३२) से, सौजन्य : प्रेमलीला ठाकरसी।

३६०. पत्र : अमृतलाल नानावटीको

२६ जुलाई, १९३३

चि० अमृतलाल,

काकासाहवको लिखा तुम्हारा पत्र पढ़ा और हँस पड़ा। तुममे विनोदकी समझ, सेंस ऑफ ह्यूमर'[1] कम है। मै तुम्हारी जगह होता तो हँस देता। तुम्हे मथुरादाससे हँसकर यही कहना चाहिए था कि तुम मुझे पहचान लो तो तुम यही कहो कि जितना अधिकार तुम्हे है उतना ही मुझे भी है। मथुरादास तुम्हे स्नातकके रूपमे पहचान नही पाया। उसने तुम्हे उत्तरका कोई अनजान व्यक्ति समझा और हिन्दीमे वात करनी शुरू की। तुम मेरे पास आ सकते थे। मैंने भी तुम्हे नही पहचाना था, किन्तु मेरे इस गुनाहकी सजा देना ठीक तो नही था।

शिकायत तो मुझे करनी चाहिए। किन्तु उलटा चोर कोतवालको डाँटे वाली वात तुमने की है।

अव दुःख किसलिए[2]?

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९६५२) से; सौजन्य : अमृतलाल नानावटी।

१. गांधीजी ने इन्हीं शब्दोंका प्रयोग किया है।

२. देखिए अगला शीर्षक।

३६१. पत्र : द० बा० कालेलकरको

२६ जुलाई, १९३३

चि० काका,

तुम्हारा पत्र मिला।

जो-कुछ अमृतलाल[1] के साथ हुआ है, ऐसा बहुत लोगोके साथ हुआ होगा। यह घटना दुःखद अवश्य है, पर इसमे दोष किसीका नही है। या सिर्फ बाल[2] का ही दोष मानना चाहिए और उसके बाद, या उससे भी अधिक, खुद अमृतलालका। मथुरादासने जो कहा मेरी रक्षाके लिए ही कहा। मुझे तो मालूम ही कैसे होता। मथुरादासने किसीको बाहर जानेके लिए कहा, यह मैने देखा, किन्तु अमृतलालको मै कैसे पहचानता। उसने तुम्हारा नाम लिया हो तो मुझे इसकी खबर नही। किन्तु यदि वह इस घटनापर हँस पडता तो दूसरे सब भी हँसते। मैने यहाँ कनुके साथ भी ऐसा ही किया था। जब वह पाँव छूनेके लिए बढा तो उसे पहचाने बिना दूर हटा दिया। किसीने अमृतलालको पहचानकर जान-बूझकर ऐसा नही किया है। उसे क्यो नही पहचाना, ऐसा कहो तो किसीको ज्यादा दोष नही दिया जा सकता। अमृतलालको हँसकर हिन्दीके बजाय गुजरातीमे जवाब दे देना चाहिए था।

बाल मथुरादासको भले ही कुछ न कह सका हो लेकिन उसे मुझसे तो कह ही देना चाहिए था। मै मथुरादासको पत्र नही भेज रहा हूँ। भेजनेसे बात बढेगी।

तुम्हे 'हरिजन' मे लगाये बिना छुटकारा नही था। अब आनन्द[3] को भेजा है। जब समझो कि वह तैयार हो गया है, तभी खिसक आना। जिसमे तुम-जैसी लेखन-शक्ति हो, वह अपनी अंग्रेजी तो सहज ही शुद्ध कर सकता है। तुम्हारी अंग्रेजी मजी हुई नही है किन्तु विचारोमे प्रवाह न हो, ऐसा नही है।

तुम यहाँ आ सको तो मुझे तो अच्छा ही लगेगा। मैने बालको खूब लम्बा पत्र लिखनेके लिए कहा ही है। किन्तु अपने-आप देखना अलग बात है।

महादेवने पत्रमे जो निराशा व्यक्त की है, वह अनुचित है। लेकिन तुम्हारी बात मै समझता हूँ। मेरे पास रहनेके बारेमे भी समझ गया हूँ। मुझे तुम भार लगने लगे थे, ऐसा मानना भूल ही है। किन्तु यह किस प्रकार मान लेते हो कि हम जो सकल्प करेगे उसे पूरा कर ही पायेगे? जिसे मेरे पास भेजा जायेगा, वह

१. अमृतलाल नानावटी।
२. द० बा० कालेलकरका पुत्र।
३. आनन्द हिंगोरानी।

आयेगा। मैं तो मानता ही हूँ कि सरकार महादेवको भेजेगी। वह [मेरी अपेक्षाको] जानती है।

आ सको तो आना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९४७७) से; सौजन्य : द० बा० कालेलकर

३६२. भेंट : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको[1]

२६ जुलाई, १९३३

मेरा खयाल है कि मेरे शब्द बिलकुल स्पष्ट और सुनिश्चित थे। मैंने केवल यह कहा था कि यदि भेंटकी स्वीकृति मिल जाती, तो मैं कुछ ऐसा रख सकता था जो सरकार और जनता दोनोंको स्वीकार होता। यदि आप मुझसे यह पूछें कि मैं वाइसरायके आगे क्या रखता, तो वह मैं आपको बता नहीं सकता। इसका कारण यह नहीं है कि वह कोई रहस्य है, बल्कि यह है कि वह मुझे मालूम नहीं है। मैंने जब वह बयान दिया था तो मुझे अपनी प्रत्युत्पन्नमतिपर भरोसा था। वह समझौतेके ऐसे सुझाव रखनेमें जो स्वीकार किये जा सकें, अभीतक कभी चूकी नहीं है।

लॉर्ड इर्विनके पास मैं कोई पहलेसे सोचे-साचे सुझाव लेकर नहीं गया था। परन्तु बातचीत[2] के दौरान जैसे ही वे मेरे मनमें आये मैंने उन्हें उनके आगे रख दिया। और क्योंकि दोनों पक्ष शान्तिका संकल्प रखते थे, इसलिए एक रास्ता निकल आया। लॉर्ड विलिंग्डनके साथ भेंटमें भी, यदि उन्होंने संकल्प दिखाया होता तो, ऐसा ही होता। इसलिए मेरे मनमें कोई योजना छिपी हो, ऐसा कोई रहस्य नहीं है। यदि कोई होती तो उसे सर्वसाधारणके आगे रखनेमें मुझे कोई संकोच नहीं होता।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २७-७-१९३३

१. साधन-सूत्रके अनुसार गांधीजीसे यह पूछा गया था कि "यदि वाइसरायने आपको भेंटकी अनुमति दी होती तो आपके मनमें उनके समक्ष रखनेके लिए क्या योजना थी"।

२. देखिए खण्ड ४५।

३६३. भेंट : 'हिन्दू' के प्रतिनिधिको

२६ जुलाई, १९३३

आश्रमको भग करनेका अर्थ यह होगा कि हर आश्रमवासी एक चलता-फिरता आश्रम वन जायेगा जो, जेलमे या बाहर कही भी क्यो न हो, आश्रमके आदर्शको पूरा करनेका दायित्व वहन करेगा।

गाधीजी ने आगे बताया कि [आश्रमको] शीघ्र भंग करनेसे प्रोत्साहन खत्म या कम नहीं होगा, बल्कि और अधिक प्रयत्न, और अधिक समर्पण तथा और अधिक बलिदानके लिए और भी अधिक प्रोत्साहन मिलेगा। यह महीना पूरा होनेपर वे यथासम्भव शीघ्र ही आश्रमको भंग कर देंगे। उन्होने घोषणा की :

आश्रमके बारेमे हर कदम अधिकारियोको पूरी जानकारी देनेके बाद ही उठाया जायेगा।

यह पूछनेपर कि क्या वे आश्रमको धनाभावके कारण बन्द कर रहे हैं, गांधीजी ने कहा :

ऐसा कहना द्वेषपूर्ण और निराधार है। आश्रमके बहुत-सारे मित्र हैं, जिन्होने उसे कभी अभाव नहीं होने दिया है।

यह पूछनेपर कि क्या वे आश्रमको निराशाके कारण बन्द कर रहे हैं, गांधीजी ने कहा कि यह कहना भी उतना ही निराधार है। उन्होंने आगे कहा :

मुझे न केवल कोई गहरी निराशा नही है, बल्कि यह विश्वास है कि आश्रम-वासियोमे से अधिकतरने, मनुष्यके लिए जहाँतक सम्भव है, आदर्शके अनुरूप रहनेका पूरा प्रयत्न किया है। पर, इतना जरूर सच है कि यद्यपि आश्रमवासियोने, मुझ समेत, सिद्धान्तोके अनुरूप रहनेकी ईमानदारीसे कोशिश की, फिर भी हम सब विफल रहे हैं। परन्तु यह ऐसा कारण नही है जिससे निराशा हो। यह तो ऐसा कारण है जिससे और अधिक कोशिश होनी चाहिए।

यह पूछनेपर कि सभी कांग्रेस संगठनोंको निष्क्रिय कर देनेका अर्थ क्या यह होगा कि भारतमें अराजकता फैल जायेगी, गांधीजी ने कहा :

नही, अराजकताका अर्थ है शासन और अनुशासनका अभाव। कांग्रेस कडे अनुशासनमे रहेगी। व्यक्तियोकी गतिविधियाँ कांग्रेस-प्रस्तावोमे निर्धारित सीमाओके अन्दर ही रहेगी।

अखिल भारतीय कांग्रेस समितिकी एक बैठक बुलानेके सुझावके बारेमें गांधीजी ने कहा :

मुझे कोई आपत्ति नही होगी। पर, व्यक्तिगत रूपसे मेरा यह खयाल है कि जबतक सत्याग्रहको बिलकुल छोड देनेका ही कदम न उठाया जाये, यह असम्भव है। इस तरहके इरादेकी सरकारको सूचना देनी चाहिए। इसकी सलाह देना ठीक होगा या नही, इस सवालका जवाब हर सदस्यके अपने मिजाजपर निर्भर करेगा।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २७-७-१९३३

३६४ पत्र: रवीन्द्रनाथ ठाकुरको

अहमदाबाद,
२७ जुलाई, १९३३

प्रिय गुरुदेव,

यरवदा-समझौतेके बारेमे, जहाँतक उसका बंगालसे सम्बन्ध है, समाचारपत्रोको दिया गया आपका सन्देश[1] मैंने पढ़ा है। मुझे यह जानकर गहरा दुःख हुआ कि मुझपर हार्दिक स्नेह और मेरे निर्णयमे विश्वास होनेके कारण आप गलतीसे ऐसे समझौतेका अनुमोदन कर बैठे जिसके बारेमे [बादमे] यह पता चला कि उससे बंगालके साथ भारी अन्याय हुआ है। मेरे यह कहनेसे अब कोई लाभ नही है कि मुझपर आपका जो स्नेह है उससे आपका निर्णय प्रभावित होना नही चाहिए था, या मेरे निर्णयमे आपका जो विश्वास है उसके कारण आपको ऐसा समझौता स्वीकार करना नहीं चाहिए था जिसके बारेमे अपने स्वतन्त्र निर्णयपर पहुँचनेके लिए आपके पास पर्याप्त साधन थे। कारण, कि आपके अति उदार स्वभाव को मै जानता हूँ। आपने जो किया उससे भिन्न आप कर ही नही सकते थे और यह पता लग जानेके बाद भी कि आपने भारी गलती की है, यदि फिर अवसर आये तो आप ऐसी ही गलती फिर करते रहेंगे।

परन्तु मुझे इसपर बिलकुल विश्वास नही है कि कोई गलती हुई है। जैसे ही समझौतेमे संशोधनका आन्दोलन शुरू हुआ मैंने अपना दिमाग उधर लगाया, जानकार मित्रोके साथ उसपर विचार-विमर्श किया, और मुझे यह यकीन हो गया कि बंगालके साथ कोई अन्याय नहीं हुआ है। जिन्होंने अन्यायकी शिकायत की थी उनके साथ मेरा पत्र-व्यवहार हुआ। परन्तु वे भी, रामानन्द बाबू समेत, मुझे किसी अन्यायका यकीन नही दिला सके। निस्सन्देह, हमारे दृष्टिकोणोमे अन्तर था। मेरे विचारमें इस प्रश्नके प्रति जो रुख अपनाया गया, वह भी गलत था।

आपसी फैसलेसे हुए किसी समझौतेको, समझौता करनेवाले पक्षोंकी स्वीकृति बिना, ब्रिटिश सरकार बदल नहीं सकती। परन्तु इस तरहकी स्वीकृति प्राप्त करनेके

१. देखिए परिशिष्ट १०। रवीन्द्रनाथ ठाकुरने गांधीजी को इस सन्देशकी एक प्रति अपने एक पत्रके साथ २८ जुलाई, १९३३ को भेजी थी; देखिए "पत्र: रवीन्द्रनाथ ठाकुरको", ७-८-१९३३ ३३६-९ पा० टि० १।

लिए कोई गम्भीर प्रयत्न किया गया हो, ऐसा नही लगता। इसलिए, शिकायत करनेवालोके मचपर आपके आविर्भावका कम-से-कम मै इस आशासे स्वागत करता हूँ कि इससे ब्रिटिश सरकारमे व्यर्थ अपील करनेकी बजाय आपसमें विचार-विमर्श होगा। इसलिए, यदि आपने इस विषयका स्वय अध्ययन किया है और जो मत अब आपने घोषित किया है आप उसपर पहुँचे है, तो मै चाहूँगा कि आप मुख्य पक्षोकी एक सभा बुलाये और उन्हे यह यकीन दिलाये कि बगालके साथ भारी अन्याय हुआ है। यदि यह सिद्ध किया जा सके तो मुझे इसमे सन्देह नही है कि बगालके साथ जो अन्याय हुआ बताया जाता है, उसे दूर करनेके लिए समझौतेपर पुन विचार किया जायेगा और उसे सुधारा जायेगा। यदि मुझे यह विश्वास हो गया कि, जहाँतक बगालका सम्बन्ध है, निर्णयमे गलती हुई है, तो मै उस गलतीको ठीक करानेमे कोई कोशिश उठा नहीं रखूंगा। आपको यह मालूम ही होगा कि समझौतेकी सफाईमे सार्वजनिक रूपमे कुछ कहनेमें मैंने अभी अपने-आपको आग्रहपूर्वक रोके रखा है। यदि कुछ कहा है तो वक्तव्यके साथ प्रकट की गई अपनी इस रायको दोहरानेके लिए ही कहा है कि यदि अन्याय सिद्ध किया जा सका तो वह दूर कर दिया जायेगा। इसलिए मै पूर्णतया आपकी सेवाको तैयार हूँ।

अभी तो मै आश्रमको भग करने और सार्वजनिक उपयोगके लिए जितना-कुछ भी उपयोगी हो उसे बचानेके उपाय खोजनेमे व्यस्त हूँ। इसलिए, मेरी सेवाएँ आपको मेरे जेलमे पहुँचनेके बाद ही, जो घटना इस महीनेके समाप्त होनेपर किसी भी दिन घट सकती है, उपलब्ध होगी। आशा है, आप बिलकुल स्वस्थ होगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

डॉ० रवीन्द्रनाथ ठाकुर

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४६३९)से।

३६५. पत्र : आर० वी० शास्त्रीको

२७ जुलाई, १९३३

प्रिय शास्त्री,

जैसे ही मैंने तुम्हारे ज्वरकी बात सुनी, मै तुम्हारे लिए कुछ लिखवाना चाहता था। पर कोई फायदा न था। अभी मेरे पास कुछ मिनट है और मै उनका लाभ उठाते हुए कुछ पक्तियाँ लिखवा रहा हूँ।

बेशक, तुम्हे स्वास्थ्य-लाभके लिए मद्रास जाना है। मुझे आशा है कि श्रीमती शास्त्री और उनकी माताकी तरह, मद्रासका जलवायु-परिवर्तन ही तुमपर जादूका-सा असर डालेगा और इस पत्रके पहुँचनेतक तुम ज्वरसे मुक्त हो गये होगे। परन्तु तुम्हे जो समय मिला है उसका उपयोग तुम्हे श्रीमती शास्त्रीसे रसोईकी सीधी-सादी

कला सीखनेके लिए करना चाहिए और जब पूना लौटो तो तुम्हारे सामानके साथ अच्छी किस्मका चावल भी होना चाहिए। पूनामें रहने और पूर्ण स्वस्थ रहनेका संघर्ष तुम छोड़ नहीं सकते। सैकड़ों तमिल लोगोंके लिए जो चीज सम्भव हो सकी है, वह तुम्हारे लिए भी अवश्य सम्भव होनी चाहिए। मुझे नियमित रूपसे पत्र लिखते रहना। महादेवने तुम्हें यह लिखा ही होगा कि तुम्हारी जगहपर आनन्द हिंगोरानी भेजे गये हैं। परन्तु, जैसे ही तुममें फिरसे शक्ति आ जाये तुम्हें यहाँ लौटना है — लेकिन उससे पहले नहीं लौटना है। तुम्हें न केवल अपनी शक्ति फिरसे प्राप्त करनी है, बल्कि उसे बनाये रखनेकी कला भी सीखनी है। बेशक, तुम्हें जितनी जरूरत हो 'हरिजन' कोष से ले लो। यदि तुम चाहो तो मैं पटवर्धन[1]को इस विषयमें लिख दूँगा, या समय बचानेके लिए, तुम इस पत्र या इसके प्रासंगिक अंशका भी उपयोग कर सकते हो।

श्रीमती शास्त्री और बच्चोंको मेरी ओरसे प्यार।

हृदयसे तुम्हारा,

श्रीयुत् आर० वी० शास्त्री

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १९१२५) से।

३६६. पत्र : एस० सदानन्दको

२७ जुलाई, १९३३

प्रिय सदानन्द,

मगनभाईसे मैंने वह फाइल पढ़नेको कहा था जो आप छोड़ गये थे और उसने जल्दीमें कुछ कामचलाऊ नोट्स तैयार करके मुझे दिये हैं जो मेरे पास पिछले दो दिनोंसे पड़े हुए हैं। उनका कहना है कि शीर्षक प्रायः ऐसा भाव पैदा करते हैं जो उनके अन्तर्गत दी गई विषयवस्तुसे बिलकुल भिन्न होते हैं। अकसर ऐसी बातें निकलती हैं जिनका वस्तुतः कोई आधार नहीं होता। समाचारपत्र पढ़नेके लिए मैं अपने को जो थोड़ा-सा समय देता हूँ, उसमें अभी-अभी मैं 'फ्री प्रेस' पढ़ रहा था। मैं आपको यह बताना चाहता हूँ कि उसे पढ़कर मुझे खुशी नहीं हुई। ऐसा लगता है कि आपके रिपोर्टर वास्तविकताओंसे अधिक गपशपपर फूलते-फलते हैं। इसीलिए उनकी बतायी बहुत-सी बातें विश्वसनीय नहीं लगतीं। मैं यह चाहूँगा कि आप लोगोंको केवल ऐसे समाचार दें जिनका कोई अच्छा आधार हो, और जहाँ समाचारमें आगामी घटनाओंकी भविष्यवाणी की गई हो, वहाँ रिपोर्टरोंके पास अपनी भविष्यवाणीके लिए ठोस आधार होना चाहिए। मेरे ध्यानमें एक ऐसी भविष्यवाणी आ रही है जो यदि सच हो जाये तो मैं निश्चय ही आपको और

१. अनन्त विनायक पटवर्धन, *हरिजन* के मुद्रक एवं प्रकाशक।

आपके रिपोर्टरोंको बधाई दूंगा। हर हालतमें, आपको यह मालूम है कि पाबन्दी अब नहीं रही है।

हृदयसे आपका,

श्रीयुत एस० सदानन्द
सम्पादक 'फ्री प्रेस जर्नल'
दलाल स्ट्रीट, फोर्ट, बम्बई

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० १९१२६) से।

३६७. एक प्रमाणपत्र

२७ जुलाई, १९३३

आश्रममें अब्बास द्वारा किया गया काम सबको अच्छा लगा है। उसने मुझे सिलाई-सम्बन्धी कई बातें सिखाई हैं। और अन्य प्रकारसे भी सेवा की है। जहाँ भी रहेगा आश्रमके नियमोंका पालन करेगा और सेवा-कार्यमें जुटा रहेगा, यह मेरी आशा है और आशीर्वाद भी।

मोहनदास गांधी

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६३०८) से।

३६८. पत्र : वलीबहन एम० अडालजाको

२७ जुलाई, १९३३

चि० वली[1],

तेरा पत्र मिला है।

मैंने तो मनु[2] को बहुत समझाया, पर उसे पूना जानेमें लाभ दिखाई दिया है और वह तुम्हारे पास नहीं आना चाहती। मैं उससे जबर्दस्ती किस प्रकार करूँ? उसका मन अध्ययनमें है। पूनामें पढ़ाई ज्यादा अच्छी है, इसलिए उसे वहाँ जानेका लोभ हो रहा है। इसलिए मैं तो यह चाहता हूँ, कि तू खुश होकर उसे आज्ञा दे दे। जबतक तेरी अनुमति न मिले तबतक उसे पूना भेजनेकी हिम्मत मैं नहीं कर सकता। तुझे आना हो तो आ जाना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १५२४) से; सौजन्य : मनुबहन एस० मशरूवाला।

१. हरिलाल गांधीकी साली।
२. हरिलाल गांधीकी पुत्री।

३६९. भेंट : 'डेली हेरॉल्ड' के प्रतिनिधिको[1]

२७ जुलाई, १९३३

उपवास तोड़नेके बादसे मुझे हजारो स्त्री-पुरुषोंके जिन बलिदानों और कष्टोंकी जानकारी मिली है उनके सामने मेरा मात्र जेल जाना कोई पर्याप्त बलिदान नहीं है। आश्रमके पास तीन लाखकी अचल सम्पत्ति, यानी जमीन और मकान हैं, और कोई दो लाखकी चल सम्पत्ति है, जिसमें ११,००० पुस्तकोंका एक बड़ा पुस्तकालय भी शामिल है। इन पुस्तकोंका मूल्य, हमारे अनुमानसे, कम-से-कम ४०,००० रुपये है। आश्रमके सदस्य और मैं, इस निष्कर्षपर पहुँचे हैं कि जब अन्य लोगोंको उन चीजोंसे वंचित कर दिया गया है जो उनके लिए उतनी ही मूल्यवान थीं जितनी कि आश्रमवासियोंके लिए आश्रमकी चीजें, तो हमें भी अब इन चीजोंका उपभोग नहीं करना चाहिए। इसके अलावा, आश्रमके बहुत-से सदस्योंने क्योंकि व्यक्तिगत सत्याग्रह करनेका निश्चय कर लिया है, इसलिए सरकारसे यह अपेक्षा करना कि वह आश्रमके साथ इसी प्रकार प्रभावित अन्य सम्पत्तियोंसे भिन्न व्यवहार करेगी, गलत होगा। निस्सन्देह, एक मौलिक अन्तर है। आश्रम एक सार्वजनिक ट्रस्ट है जिसके सुस्पष्ट उद्देश्य है, और इस तरहकी सार्वजनिक संस्थाके सदस्य यदि कोई ऐसा रवैया अपनाते हैं जिससे कानून, अच्छा या बुरा, उनपर कड़ाईसे लागू होता हो, तो ट्रस्टकी सम्पत्ति उससे आसानीसे प्रभावित नहीं हो सकती। इस कारण हमने यह निश्चय किया है कि हमें सम्पत्तिपर कब्जा स्वेच्छासे सरकारको सौंप देना चाहिए। अतः आश्रमको भंग करनेका कदम उठाया गया है।

अनुपूरक प्रश्नोंका उत्तर देते हुए महात्मा गांधीने कहा :

अचल सम्पत्ति सरकारके पास चली जायेगी। चल सम्पत्ति सार्वजनिक संस्थाओंको दे दी जायेगी। पर, सरकार क्या कहती है यह देखना है।

गांधीजी ने बताया कि व्यक्तिगत सत्याग्रह करनेका अपना ढंग उन्होंने अभी अन्तिम रूपसे निश्चित नहीं किया है। उन्होंने आगे कहा :

सरकारको पहले सूचित किये बिना मैं कानून भंग करनेकी कोई खुली कार्यवाही नहीं करूँगा। मेरी योजना पहली अगस्ततक तैयार हो जायेगी।

जब उनसे आम तौरपर प्रचलित इस तरहकी खबरोंके बारेमें पूछा गया कि वे एक और कूचकी बात सोच रहे हैं, तो गांधीजी ने कहा :

वह सब गली-बाजारकी गप्प है। मैंने अभीतक कुछ निश्चित नहीं किया है। एक और कूच हो भी सकता है और नहीं भी। मैं अभी कुछ कह नहीं सकता।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २८-७-१९३३

१. यह भेंट "एक विशेष प्रतिनिधि" ने ली थी।

३७०. भेंट: 'टाइम्स ऑफ इंडिया' के प्रतिनिधिको

२७ जुलाई, १९३३

गांधीजी ने आज एक एकान्तिक भेंटमें मुझे बताया कि सी०, डॉ० स्पीगल और एक और अंग्रेज डंकन ग्रीनलीज, जो आश्रममें हैं, सामान्यतः राजनीतिमें और विशेषकर सविनय अवज्ञामें भाग न लेनेके लिए वचनबद्ध हैं। गांधीजी ने कहा:

वे सब अपनेको हरिजन-सेवाके योग्य बना रहे हैं। इसलिए मैं उन्हें, यदि सम्भव हो तो, वर्धा भेजनेकी व्यवस्था कर रहा हूँ, जहाँ वे अपना काम जारी रखेंगे। अन्य आश्रमवासी, जो सत्याग्रह आन्दोलनमें भाग नहीं लेंगे अपने घरोंको चले जायेंगे और कुछ पुराने कार्यकर्त्ता और उनके बच्चे ऐसे स्थानोंपर भेज दिये जायेंगे जहाँ उनके रहने या शिक्षण आदिमें सबसे अधिक सुविधा होगी। आश्रमकी जमीन, इमारत और चल सम्पत्तिका निपटारा ज्यादातर, जैसा सरकारका इरादा होगा, उस तरह होगा।

यह पूछनेपर कि सविनय अवज्ञा स्थगित रखनेकी अवधि समाप्त हो जानेपर वे पहले-पहल कानून किस तरह तोड़ेंगे, गांधीजी ने कहा:

सरकारको पहले सूचित किये बिना कोई कदम नहीं उठाया जायेगा। ठीक-ठीक क्या कदम उठाये जायेंगे, यह अभी मैं फैसला नहीं कर पाया हूँ। निस्सन्देह, सरकार मेरी सारी योजनाओंको, उनका पहले से ही अन्दाजा लगाकर, विफल कर सकती है। पर, यह तो १९०६ से सत्याग्रहका आविष्कार होनेके समयसे ही मेरी जिन्दगी रही है।

[अंग्रेजीसे]

टाइम्स ऑफ इंडिया, २८-७-१९३३

३७१. सन्देश : दास-प्रथा उन्मूलनकी शताब्दीपर[1]

[२८ जुलाई, १९३३ से पूर्व][2]

भारतको दास-प्रथा उन्मूलनके वीरोसे बहुत-कुछ सीखना है, क्योंकि हमारे यहाँ ऐसी दास-प्रथा है जो धर्मानुमोदित मानी जाती है और पाश्चात्य दास-प्रथासे ज्यादा जहरीली है।

गांधी

[अंग्रेजीसे]
अमृत बाजार पत्रिका, २९-७-१९३३

३७२. वक्तव्य

[२८ जुलाई, १९३३][3]

श्री डकन ग्रीनलीजने, जो इस समय आश्रममे ठहरे हुए हैं, मुझसे कहा है कि उन्हे, एक ब्रिटिश नागरिकको, नी० और डॉ० स्पीगल इन दो विदेशियोके साथ जोड़कर मैंने उनकी स्थिति[4] सही ढगसे पेश नही की है। यद्यपि मेरी प्रार्थनाको मानते हुए, आश्रमके अनुशासनके अनुसार, उनका विचार वर्तमान सविनय अवज्ञा आन्दोलनमे भाग लेनेका नहीं है, पर स्वाभाविक रूपसे वे अपनेको किसी विशेष प्रकारके भावी आचरणके लिए पहलेसे प्रतिबद्ध नहीं कर सकते। वे कहते है कि ऐसा समय आ सकता है जब वे एक नागरिककी हैसियतसे राजनीतिमे यथोचित भाग ले।

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१५४४) से।

१ और २. "कलकत्ता, २८ जुलाई", तारीखमें प्रकाशित हुआ था, और यह तथा रवीन्द्रनाथ ठाकुरका सन्देश, दोनों इंडिया एण्ड द वर्ल्ड के सम्पादक कालिदास नाग द्वारा जारी किये गये थे। इंग्लैण्डमें शताब्दीका अन्तर्राष्ट्रीय समारोह मनानेके लिए २९ जुलाईका दिन निश्चित किया गया था और उसी दिन विल्बरफोर्सकी निधन शताब्दी भी पड़ रही थी।"

३. एस० एन० रजिस्टरके अनुसार।

४. देखिए पृ० ३३०।

३७३. पत्र : हेमप्रभा दासगुप्तको

२८ जुलाई, १९३३

चि० हेमप्रभा,

तुमारा खत मिला है। मुझको मिलनेसे क्या ज्यादा हो सकता है? हम सच-मुच गरीब बन जाय तो हमारे पास एक कोडी भी न होनी चाहिये। ऐसी हालतमे हम क्या करे। हमारा धर्म इतना ही है कि हम यथाशक्ति स्वधर्मका पालन करे। तुमारा कार्य खादी सेवा और उसीके अगमे सोदपुर आश्रम बनाने है। इतना होनेसे तुमारा कार्य पूर्ण होता है और उसीमे तुमारे लिये रामदर्शन है।

अरुणको सोदपुरके बाहर कहीं नहि रख सकती है? अथवा अरुण और तुम अरुणके सोदपुरमे ही रहकर जो उपचार शक्य है इतनेसे सतुष्ट हो?

मै जो परिवर्तन कर रहा हु वह सब समजमें आये होगे। उस विषयमे अधिक लिखनेका समय नहि मिलता है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १७०४) से।

३७४. भेंट : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको

अहमदाबाद,
२८ जुलाई, १९३३

एसोसिएटेड प्रेसके एक प्रतिनिधिने गांधीजी से जब यह पूछा कि वे आश्रम किस तरह खाली करेंगे और उसका भार कौन सँभालेगा, तो उन्होंने कहा कि यह ऐसा सवाल है जिसका जवाब सरकार उनसे ज्यादा अच्छी तरह दे सकती है, क्योंकि जब आश्रमके सदस्य उस सम्पत्तिको छोड़ देंगे, तो स्वाभाविक रूपसे, वह सरकारकी देखरेखमें चली जायेगी। परन्तु यह प्रश्न अभी कुछ असामयिक है। आश्रमकी सम्पत्तिका क्या होगा, यह कुछ दिनमें ही उन्हे पता लग जायेगा।

यह पूछनेपर कि क्या यह बात चल सम्पत्तिपर भी लागू होती है, गांधीजी ने कहा कि उन्हे ऐसी आशा नहीं है। इस सवालका भी दो-तीन दिनमें फैसला हो जायेगा।

ऐसा समझा जाता है कि गांधीजी ने इस सिलसिलेमें बम्बई सरकारको एक पत्र लिखा है[1], जिसके उत्तरकी वे प्रतीक्षा कर रहे हैं।

समाचारपत्रोंमें प्रकाशित इस अफवाहके बारेमें उनका विचार पूछा गया कि यदि वे जेल गये तो सरकार इस बार उन्हें वे सुविधाएँ नही देगी जो उन्हें पहले दी गई थीं। गांधीजी ने कहा कि वे इस अफवाहपर कतई विश्वास नहीं करते। उन्हें इसमें रत्ती-भर भी सन्देह नहीं है कि सरकारने सोच-समझकर जो नीति अपनाई है — जो नीति यरवदा-समझौतेमें अर्न्तानिहित है — वह उससे पीछे नहीं हटेगी, क्योंकि, जहाँतक उन्हें मालूम है, स्वयं उन्होंने इसके लिए कभी जरा-सा भी कारण पैदा नहीं किया है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २८-७-१९३३

३७५. टिप्पणियाँ

एक उल्लेखनीय दान

एक ब्राह्मण सज्जनने, जिनकी बहन और भांजीका स्वर्गवास हो गया है, मेरे पास १७५० रुपयेका एक चेक भेजा है और मुझे लिखा है कि यह रकम पूंजीके रूपमे कही लगा दी जाये और इसका व्याज, मेरी इच्छानुसार, हरिजन-कल्याणके लिए खर्च किया जाये। पत्रमे वे लिखते है:

> अपनी बहन और भांजीका स्वर्गवास हो जानेके बाद मैंने २००० रुपयेके दानका संकल्प किया था। आजतक उसमें से २५० रुपये तो मैं इसी स्थानपर दे चुका हूँ। बाकी रुपया मैं आपके पास हरिजन-कल्याणके निमित्त भेज रहा हूँ। मेरी अपनी राय यह है कि यह रकम पूंजीके रूपमे कहीं लगा दी जाये, जिससे कि यह एक स्थायी निधिका केन्द्र बन सके और इसका केवल व्याज हरिजन-कल्याणमें खर्च किया जाये। पर आपको यह स्वतन्त्रता है कि यदि उचित जान पड़े तो मूलधनको ही हरिजन-सेवामें अपनी इच्छानुसार खर्च कर सकते हैं। एक बात और। मैं अपना नाम प्रकट करना नहीं चाहता हूँ।

दानी सज्जनकी इन दोनो इच्छाओंका आदर करते हुए मैं यह चेक हरिजन सेवक संघकी गुजरात-शाखाको दे रहा हूँ। संघको मैं यह आदेश दे रहा हूँ कि यह रकम पूंजीके रूपमे कही लगा दी जाये और इसका व्याज, जहाँतक सम्भव हो, मेरी स्वीकृति लेकर हरिजन-कल्याणमे खर्च किया जाये। मुझे आशा है कि दूसरे लोग भी इस उदाहरणका अनुकरण करेंगे।

१. देखिए पृ० ३१६-९।

एक ओवरसियरका प्रायश्चित्त

मेरे उपवासका कितने ही कार्यकर्त्ताओंपर जो परोक्ष प्रभाव पडा है, उसके सम्बन्धमे अब भी मेरे पास पत्र आते रहते है। गुजरातके एक ऐसे ही कार्यकर्त्ताने मुझे गुजरातीमे जो करुण पत्र लिखा है, उसे मै सक्षेपमे नीचे देता हूँ :

> जब आप पूनामे थे, तो आपको पत्र लिखनेके लिए कई बार मैने कलम उठाई, पर लिखनेकी हिम्मत नही पडी। लेकिन आज बडे सवेरे उठकर मैने अपने मनमे कहा कि जब आप इतने नजदीक है तो मै अपना पाप प्रकट कर ही दूं और आपको बता दूं कि मैने गरीब आदमियोको किस तरह लूटा था। बात यह थी। आपको शायद याद हो कि १९०० मे एक भारी अकाल पडा था। उस समय अकाल-सहायताका काम चल रहा था। वहाँ मै मजदूरोके कामकी देखरेख किया करता था यानी, एक ओवरसियरके पदपर था। तब मै लडका ही था, इसलिए मजदूरोकी मजदूरीमे से पैसे काट-काटकर अपनी जेब भरनेमे मै कोई पाप नही समझता था। शायद इस तरह मैने करीब १०० रुपये कमाये। वह नौकरी मैने आठ महीने की। सबसे दुःखकी बात यह है कि वे सब मजदूर हरिजन थे और उन्हे मैने ही काम दिलवाया था। वैसे मै उनपर मेहरबान था और वे लोग भी मुझसे खुश थे। लेकिन हरेककी मजदूरीमे से एक पैसा मै काट लिया करता था, जबकि उन्हे दिन-भरकी मजदूरीके सिर्फ ८ पैसे ही मिलते थे। मेरी नीचता इतनी बढ गई कि एक ६ सालके बच्चेकी मजदूरीमे से भी मैने एक पैसा काट लिया! यह सोचकर मुझे अपना अपराध और भी बडा लगता है कि वह बच्चा मजदूरोको पैसे बाँटनेमे मेरी बहुत मदद किया करता था। अपनी अन्तरात्माको मैने दबा दिया और अपने मनको समझा लिया कि इनसे पैसा लेनेमे कोई पाप नही है, क्योकि मैने ही तो इन्हे काम दिलवाया है। मेरे नीचे कुछ ऐसे भी मजदूर थे जो हरिजन नही थे। उन्हे इस तरह फी मजदूर एक पैसा कटवाना पसन्द नही था, इसलिए मुझे उन्हे बर्खास्त करा देनेकी धमकी देनी पडती थी। लेकिन गरीब हरिजनोने विरोधमे कभी मुँहसे एक शब्द भी नही निकाला, और मै बराबर, उपरोक्त ढगसे, नित्य पैसे चुरा-चुराकर अपनी जेब भरता रहा।
>
> मेरी उस पाप-कथाका यही अन्त नही होता। मजदूरनियोके साथ अपना सम्बन्ध भी मै पाक-साफ नही रख सका।
>
> यद्यपि मुझे अपने बचावमे कुछ कहना नही चाहिए, फिर भी मुझे आपको यह अवश्य बताना है कि मेरे चारो ओरका सारा वातावरण ही तब अन्तरात्माको पतनकी ओर ले जानेवाला था। हाँ, एक पारसी इजीनियर जरूर वहाँ ऐसा था जो निष्कलक कहा जा सकता था।

अपने उन पाप-कर्मोंके किंचित् प्रायश्चित्त-स्वरूप, इस पत्रके साथ मैं २५० रुपयेके नोट भेज रहा हूँ। इनमें से ५० रुपये हरिजनोंपर नीचे लिखे अनुसार खर्च किये जायें:

२० रुपये उनकी शिक्षापर,

२० रुपये उनके लिए पानीका प्रबन्ध करनेपर,

१० रुपये प्रचार-कार्यपर।

शेष २०० रुपये आप अपनी इच्छानुसार खर्च कर सकते हैं।

इस नौजवानने १९०० में जो किया, वह किसी ओवरसियरके लिए, निस्सन्देह, एक आम बात थी और मुझे भय है कि यह सब अभी भी चलता है। बेचारे हरिजनोंको जब काम नहीं मिलता, तो उन्हें मजबूरीमें चुपचाप सन्तोष करना पड़ता है। यही नहीं, बल्कि अपने लूटनेवालोंका वे एहसान भी मानते हैं। उन्हें यह भय रहता है कि अगर उन्होंने इस लूटका विरोध किया, तो उस तुच्छ मजदूरी से भी कहीं उन्हें हाथ न धोना पड़े। लेकिन उनके गाढ़े पसीनेकी कमाईमें से इस तरह नियमित लूट-खसोट एक दुःखद स्मृति छोड़े बिना कैसे रह सकती है। पत्र-लेखकको मैं उसकी स्पष्टवादिता और प्रायश्चित्तके लिए धन्यवाद देता हूँ। आशा है, यह पत्र सभी हरिजन-सेवकोंके लिए एक चेतावनी होगा और उन्हें शुद्ध करनेमें सहायक सिद्ध होगा।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २९-७-१९३३

३७६. कुछ खतरनाक बहम

अंग्रेजी भाषाके एक प्राध्यापक लिखते हैं:[1]

कोचीन और त्रावणकोरकी स्थितिके अध्ययनसे मुझे लगता है कि अगर आप इस प्रान्तमें हरिजनोंका मन्दिर-प्रवेश कराना चाहेंगे, तो यहाँ भारी फूट पड़ जायेगी। हाँ, अगर लोग यह मानने लगें कि आपमें अपने तपोबलसे हमारे मन्दिरोंका गूढ़ रहस्य समझनेकी शक्ति आ गई है, तो अलग बात है। हरिजनों तकको यह विश्वास नहीं है कि आप श्री नारायण गुरुका कार्य पूरा कर रहे हैं, क्योंकि उन्होंने तो हरिजनोंके लिए पृथक् मन्दिर बनवाये थे। आपसे मेरी प्रार्थना है कि आप स्वयं केरल प्रान्तके एक-दो मन्दिरोंको आकर देखें और हो सके तो मालवीयजी को भी अपने साथ लायें।

मैं खुद एक निष्ठावान सनातनी हूँ। सनातन धर्ममें मेरी इतनी श्रद्धा है कि मुझे अन्धविश्वासीतक कहा जा सकता है। आपके उपवाससे मैं व्याकुल

१. यहाँ उसके कुछ अंश ही दिये जा रहे हैं।

हो गया था और मैंने भी उपवास करके भगवानसे सच्ची राह दिखानेकी प्रार्थना की थी। तब मुझे लगा कि आपकी आयुके लिए मुझे चोट्टनिकारीके मन्दिरमें जाकर प्रार्थना करनी चाहिए। वहाँ मुझे एक ब्राह्मण भक्त मिले जिनके विषयमें मैं एक बार लिख चुका हूँ। उनके साथ मैं कई दिन इस विषयपर चर्चा करता रहा, पर हम एकमत न हो सके। सातवें दिन मुझे यह आभास हुआ कि आपका उपवास निर्विघ्न समाप्त हो जायेगा।

उस मन्दिरमें मैंने अपनी आँखोसे दो मनुष्योको ऐसी व्याधियोसे मुक्त होते देखा जिन्हे नवीन मनोविज्ञान उन्माद या बहुरूपी व्यक्तित्वकी सज्ञा देगा। मानसिक और स्नायविक रोगोका उपचार बहुत-से मन्दिरोमें आम बात है . . .

पुराने विचारोके लोगोको भय है कि मन्दिरोमें जो प्रथाएँ प्राचीन कालसे चली आ रही हैं, उन्हे भग करनेसे मन्दिरोकी पवित्रता कम हो जायेगी। इस प्रकारके उपचारके लिए एक कैथोलिक ईसाई गिरजाघर भी किसी जमानेमें प्रसिद्ध था। लोग यह मानते हैं कि कैथोलिक लोगोने वर्ण-व्यवस्थाका ठीक-ठीक पालन नहीं किया, इसीमे उसकी शक्ति घट गई। इस तरहकी मान्यता हास्यास्पद है, यह बात लोगोको समझाना असम्भव है। ये लोग कूपमण्डूक-जैसे हैं।

मन्दिर-प्रवेशके प्रश्नने फूट पडनेका जो भय है उसकी मुझे उतनी चिन्ता नही है। पर जिन भयानक वहमोका इन प्राध्यापकने जिक्र किया है, उनकी मुझे अधिक चिन्ता है। मुझे सिर्फ इतना ही कहना है कि फूट रोकनेका मैं पूरा-पूरा प्रयत्न करूँगा। परन्तु मेरा लक्ष्य बिलकुल स्पष्ट है। हरिजनोको हिन्दू-समाजके अन्दर या बाहर एक पृथक् समूहके रूपमे रखना मेरा लक्ष्य नही है। आजकल जैसी अस्पृश्यता चल रही है, उसका जबतक नाश नही होगा, मुझे सन्तोष नही होगा। परन्तु प्राध्यापक महोदयने जिन वहमोका जिक्र किया है, वे बहुत ही भयानक हैं। मनुष्यकी कल्पना ही उससे बहुत-से काम कराती है और उसे बहुत-से काम करनेसे रोकती है। रस्सीको सर्प मानकर भयसे मर जानेवालोके उदाहरण हमे मालूम है। पर ऐसे काल्पनिक विश्वासोको मनमे पालनेकी आदत नितान्त अयुक्त ही कही जा सकती है।

अत प्राध्यापक महोदयकी रोगियोके अच्छे होनेकी साक्षीके बावजूद, मैं उनका यह निष्कर्ष मान नही सकता कि मलाबारके कुछ मन्दिरोकी कुछ मूर्तियोमे रोगनष्ट करनेकी शक्ति होनेका मलाबारके लोगोका वहम न्यायोचित है। उन लोगोमे शिक्षाका प्रचार करके उन सारे वहमोको दूर कर देना चाहिए। इन वहमोसे मन निरोग नही रह सकता। हर हालतमे, हरिजनोके प्रवेशसे मन्दिर और उनमे प्रतिष्ठित मूर्तियाँ कैसे अपवित्र हो जाती हैं, यह मेरी समझमे नही आता। इतना तो स्पष्ट है कि रोगनष्ट करनेकी या कोई अन्य शक्ति देवी-देवताओसे नही मिलती। मन्दिरो या उनके देवताओमें मनुष्यकी अपनी श्रद्धा ही फल देनेवाली होती है। निस्सन्देह, आजतक इन मन्दिरोमे बहुत-से हरिजन अज्ञात रूपसे प्रवेश कर चुके होगे, तो भी इन मन्दिरोके देवी-देवताओकी शक्तिमे कुछ कमी नही आई। अत मलाबारके

प्रत्येक शिक्षित भाई-बहनसे मेरा नम्र निवेदन है कि पत्र-लेखकने जिन वहमोका जिक्र किया है, हिन्दू-धर्मको उनसे मुक्त करनेकी वे जी-तोड़ कोशिश करे। कैथोलिक गिरजाघरोमे भी अस्पृश्यताके जहरका प्रवेश हो गया है, यह बात कोई प्रसन्नताकी या अभिनन्दनीय नही है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २९-७-१९३३

३७७. अनुकरणीय उदाहरण

यूरोपसे एक मित्र लिखते है:[1]

. . . जिन मुद्दोंकी चर्चा 'हरिजन' में होती रहती है उनके बारेमें मैं यह पत्र नहीं लिख रहा हूँ। मै तो आपका ध्यान अमेरिकाकी हैम्पटन और टस्केजी संस्थाओंकी ओर आकृष्ट करना चाहता हूँ कि वे वहाँके नीग्रो लोगोंकी कैसी सेवा कर रही है। (अथवा मै आपको उनका केवल स्मरण कराना चाहता हूँ, क्योंकि उनके सम्बन्धमें आप सुन तो चुके ही है।) अमेरिकी नीग्रो सन् १८६५ में दासतासे मुक्त हुए थे। उस समय उनके सामने जो प्रश्न था, लगभग वैसा ही प्रश्न आज आपके भारतीय हरिजनोंके सामने है। अमेरिकाके सहृदय गोरे लोगोंने इस प्रश्नको किस प्रकार सुलझाया, इसकी कथा 'स्टोरी ऑफ हैम्पटन' में दी गई है। बुकर टी० वाशिंगटनने जो पुस्तकें लिखी है, उनमें अमेरिकाके सहृदय काले लोगोंके उन तमाम कामोंका वर्णन है जो उन्होंने अपनी जातिके लिए, और न केवल अपनी जातिके लिए बल्कि दूसरी जातियोंके लिए भी किये है। उदाहरणके लिए टस्केजीके खेतीके वैज्ञानिक प्रयोगोंसे आसपासका सारा प्रदेश लाभ उठा रहा है। मैं तो यहाँतक कह सकता हूँ कि हरिजनोंकी शिक्षा जिन लोगोंके हाथोंमें है, उनमेंसे कुछ यदि अमेरिकाकी इन संस्थाओंका निरीक्षण कर लें तो बड़ा अच्छा हो। अमेरिकाके नीग्रो लोगोंने अपूर्व उन्नति की है। निस्सन्देह, व्यावसायिक शिक्षणपर कभी इतना जोर नहीं देना चाहिए कि साहित्य और कलाकी उच्च शिक्षाकी उपेक्षा ही होने लगे। दोनों साथ-साथ चलनी चाहिए। मेरा आदर्श तो यह है कि प्रत्येक मोची विश्वविद्यालयका स्नातक हो और विश्वविद्यालयके प्रत्येक स्नातकको एक-न-एक उद्योग-धन्धा आता हो। इस तरह और केवल इसी तरह वर्णाश्रम किसीके लिए बुरा नहीं रहेगा। परन्तु, साथ ही, इस तरह वर्णाश्रमका कोई अर्थ भी नहीं रह जायेगा।

[1] केवल कुछ अंश ही दिये गये है।

मुझे मालूम हुआ है कि आपने यह सलाह दी है कि धनी लोग नये मन्दिर बनायें। पर क्या मन्दिर बनानेके लिए धनियोंका होना जरूरी है? हिन्दू-धर्मको शुद्ध करना क्या सुधारकोका कर्त्तव्य नहीं है? हरिजन और सुधारक क्या अपने-आप ऐसे मन्दिर नहीं बना सकते?

हैम्पटन सस्था या टस्केजी सस्थासे मै अपरिचित नही हूँ, पर 'हरिजन'के हिन्दुस्तानी पाठकोको शायद इनकी खबर न हो। हैम्पटन सस्थामे आर्मस्ट्रागने और टस्केजीमे बुकर टी० वाशिगटनने जो काम किया, उसका हमारे हरिजन-सेवको और हरिजनोको अध्ययन करना चाहिए। तो भी, नीग्रो लोगोका सवाल और हरिजनोका सवाल सब तरहसे एक-सा नही है। हैम्पटन सस्थामे गोरे लोगो द्वारा किया गया कार्य, हरिजनोके बीच सवर्ण हिन्दुओ द्वारा किये गये कुछ कार्यके समान है। फिर भी मेरा यह विश्वास है कि अमेरिकाके नीग्रो लोगोके प्रति वहाँके गोरे लोगोका जो कर्त्तव्य था, उससे कही बढकर यहाँके सवर्णोका हरिजनोके प्रति कर्त्तव्य है। क्योकि हमने तथाकथित उच्च वर्णोकी कृत्रिम और कल्पित श्रेष्ठताको धर्मका रूप दे रखा है। इसलिए भारतके हिन्दू सुधारकोका कार्य अमेरिकाके गोरे सुधारकोके कार्यसे कही अधिक अत्यावश्यक और कठिन है। फिर भी हमारे पास भारतमे हैम्पटन सस्था-जैसी एक भी सस्था नही है। यह सस्था एक जबर्दस्त साहसिक उपक्रम है और थोडे-से गोरे सुधारकोके अथाह उत्साह, ज्ञान और उद्योगका एक सुन्दर स्मारक है। टस्केजी सस्था हरिजनोके लिए एक आदर्श सस्था है। दलित जातिका कोई व्यक्ति अपार सकटोका सामना करता हुआ जगतकी जितनी सेवा कर सकता है, उतनी सेवा बुकर टी० वाशिगटनने की। वे अपनी अपार श्रद्धा और अपार लगनसे ही टस्केजीके भव्य भवनका निर्माण कर पाये। ये दोनो सस्थाएँ हरिजनो और हरिजन-सेवकोके लिए तो विशेष उपयोगी है ही, पर शिक्षाविद्की आम दृष्टिसे भी बहुमूल्य है। अत किसी दिन इन दोनो सस्थाओके सेवा-कार्योका साराश मै 'हरिजन' मे दूँगा। इस बीच पाठक इतना तो जान ही ले कि दोनो सस्थाओमे शारीरिक श्रमके गौरवपर बहुत जोर दिया जाता है और विद्यार्थियोकी सर्वोत्तम वृत्तियोके विकासका प्रयत्न किया जाता है।

पत्र-लेखक वर्णाश्रमके विषयमे लिखते हुए भारी भूल कर गये है, कारण कि वर्णधर्मका मैने जो अर्थ किया है, उसके अनुसार ऊँचे-से-ऊँचे मानसिक विकासपर वर्णधर्म किसी प्रकारका कोई प्रतिबन्ध नही लगाता। अधिक कमानेके लिए पैतृक धन्धेको छोडनेकी जो खराब और विनाशकारी प्रतिस्पर्धा आजकल चल रही है और जो जीवनके आनन्द और सौन्दर्यको नष्ट कर रही है, उसपर वर्णधर्म अवश्य प्रतिबन्ध लगाता है। पर वह प्रतिबन्ध केवल नैतिक है।

मन्दिरोका जहाँतक सवाल है, पाठक 'आदर्श मन्दिर'के मेरे विवरण[1] को कृपया देखे। मै यह मानता हूँ कि मेरा आदर्श मन्दिर पत्र-लेखककी अपेक्षाओसे कही अधिक सन्तोषजनक है। इस पत्रका नवीन मन्दिर-सम्बन्धी उद्धरण मैने सिर्फ यह बतानेके

१. देखिए पृ० ६२-४ और पृ० ७३-४।

लिए दिया है कि पश्चिमके विचारक अस्पृश्यता-निवारणके आन्दोलनको वडे ध्यानसे देख रहे हैं और उनकी इच्छा है कि हम केवल बाह्य रूपका नाश करके ही सन्तुष्ट न हो जाये, वल्कि वहुत-से गहरी जडोवाले पुराने विचारोमे क्रान्ति करके सर्वतोमुखी सुधार करे, और इस तरह हिन्दू-समाजको इतना शुद्ध कर दे कि उसका सत्प्रभाव समस्त मानव-जातिपर पडे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २९-७-१९३३

३७८. भेंट : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको

अहमदाबाद,
२९ जुलाई, १९३३

एसोसिएटेड प्रेसके प्रतिनिधिके यह पूछनेपर कि कुछ क्षेत्रोंमें यह भय है कि कांग्रेस समितियोंको निष्क्रिय करनेसे देशमें अव्यवस्था फैल जायेगी, इसके बारेमें उन्हें क्या कहना है, गांधीजी ने कहा कि इस प्रश्नका कारण परिस्थितिके बारेमें एक गम्भीर मिथ्या धारणा है। प्रश्नमें पहले ही यह मान लिया गया है कि देश-भरमें कानूनी ढंगसे काम करनेवाले कांग्रेस संगठन थे, जिन्हें कार्यवाहक कांग्रेस अध्यक्षने भंग कर दिया है। तथ्य यह है कि इस तरहके सभी संगठन गैर-कानूनी घोषित कर दिये गये थे। इसलिए जो काम कर रहे थे, वे गुप्त संगठन और छाया-मन्त्रिमण्डल थे, और यह चीज अव्यवस्था पैदा करनेवाली समझी गई। उस परिस्थितिका पहलेसे अन्दाजा लगा लिया गया और कार्यवाहक अध्यक्षकी कारवाईसे वह रोक दी गई। यदि अब कोई अव्यवस्था हैं तो वह व्यक्तियोंतक ही सीमित रहेगी।

गांधीजी ने कहा कि श्री अणेकी कार्यवाहीकी आलोचनाओंको वे जितना ही पढ़ते हैं उतना ही उन्हें यह विश्वास होता जाता है कि जैसे-जैसे समय गुजरेगा, लोग इस कार्यवाहीकी जरूरत और इसकी खूबसूरतीको भी समझ जायेंगे। कांग्रेस, राष्ट्रीय सम्मान और जन-साधारणमें जगी राष्ट्रीय भावनाको बचानेके लिए केवल यही एक कार्यवाही सम्भव थी।

यह पूछनेपर कि, जैसाकि समाचारपत्रोंमें संकेत है, क्या यह खबर सच है कि उन्होंने यह सोचकर ही कि आश्रम जब्त कर लिया जायेगा, सरकारसे उसे अपने अधिकारमे ले लेनेको कहा है, गांधीजी ने कहा: 'नहीं'। उन्होंने लोगोंसे अपील की कि वे घटनाओंकी पहलेसे अटकल लगानेकी बजाय धैर्यसे उनकी प्रतीक्षा करें।[1]

१. यह अनुच्छेद हिन्दुस्तान टाइम्स, ३०-७-१९३३ से लिया गया है।

यह पूछनेपर कि क्या उन्होने सत्याग्रहकी अपनी योजना निश्चित कर ली है, गाधीजी ने कहा कि बेशक, उनके दिमागमें बहुत-सी योजनाएँ घूम रही है, जिन्हे बतानेसे कोई उद्देश्य पूरा नहीं होगा। लेकिन जैसे ही कोई चीज निश्चित रूप लेगी, वे खुशीसे उसे लोगोको बतायेंगे। लेकिन पहले वे उसे सरकारको बतायेंगे। उन्होने कहा कि हरिजन उनके लिए मित्रसे कहीं अधिक है और शायद वे उन्हे अपने साथ उसमें भाग लेनेको आमन्त्रित न करे।[1]

यह पूछनेपर कि क्या वे अपना सत्याग्रह पहली अगस्तको शुरू करेगे और क्या किसीको अपने साथ उसमें भाग लेनेको कहेगे, गाधीजी ने कहा कि वह पहली अगस्तको होगा या कब होगा, वे कह नहीं सकते।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, ३०-७-१९३३, हिन्दू, ३१-७-१९३३ भी।

३७९. वक्तव्य : सेनगुप्त-दिवसपर

अहमदाबाद,
३० जुलाई, १९३३

कलकत्ताके मेयर श्री सन्तोष बसु और अन्य लोगोकी ओरसे मुझे एक सन्देश मिला है, जिसमे मुझसे ६ अगस्त अखिल भारतीय सेनगुप्त-दिवस घोषित करनेको कहा गया है। इसी सिलसिलेमे मैने श्री अणेकी अपील भी देखी है। काग्रेसके कार्य-वाहक अध्यक्षकी अपीलमे मैं अपना हार्दिक योग देता हूँ और आशा करता हूँ कि [इस अवसरपर] जो सार्वजनिक सभाएँ आयोजित की जायेंगी उनमे दिवगत देशभक्तके जीवनकी अद्भुत विशेषताओका स्मरण किया जायेगा और सब लोग उन्हे अपने जीवनमे उतारनेका प्रयत्न करेगे।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दुस्तान टाइम्स, १-८-१९३३

१. यह वाक्य हिन्दुस्तान टाइम्स, ३०-७-१९३३ से लिया गया है।

३८०. वक्तव्य : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाको[1]

३० जुलाई, १९३३

मेरे लिए जो शायद अबतकका सबसे बडा समर्पण है, उसकी इस पूर्व-सन्ध्यामे मै सभी काग्रेसियोसे यह आग्रह करना चाहूँगा कि वे अपनी शक्ति कार्यवाहक अध्यक्षके व्यक्तिगत सत्याग्रह-सम्बन्धी फैसलेपर बहस करनेमे नष्ट न करे। एक विशेषज्ञकी हैसियतसे, मै अपनी इस रायको फिर दोहराता हूँ कि यह फैसला ही अकेला सही मार्ग है जो अपनाया जा सकता है। मेरे विचारमे यह वैज्ञानिक भी है। हर काग्रेसी से मै यह आग्रह करूँगा कि वह मेरे वक्तव्य[2] को ध्यानसे पढे, और वह यह देखेगा कि यदि कार्यक्रम उत्साहके साथ अमलमे लाया जाये तो काग्रेस ऐसी शक्तिशाली सस्था बन जायेगी जैसीकि वह अबतक कभी नहीं रही थी। सत्याग्रहके बिना न सुरक्षा है और न स्वतन्त्रता। सत्याग्रह केवल मेरे बताये ढगसे ही अभेद्य बन सकता है।

गैरकाग्रेसियोसे मै कहूँगा · देशके इस सबसे बडे सगठनकी हर तरहसे, जितनी भी कर सकते हो, सहायता करो। यह किसी एक वर्गका सगठन नही है। यह पूरे अर्थोमे राष्ट्रीय है।

अग्रेजोसे, चाहे वे सरकारी नौकर हो या अन्य, मै कहूँगा यदि आप देशमे शान्ति और भारतसे सच्ची मित्रता रखना चाहते है, तो उसका तरीका आर्डिनेस राज्य नही है, काग्रेसका तरीका ही एकमात्र तरीका है। मै यह बात अग्रेजोके मित्रकी हैसियतसे कह रहा हूँ। आपमे से कुछ, हो सकता है, आज मुझे अपना शत्रु समझते हो। परन्तु मै यह भविष्यवाणी कर सकता हूँ कि एक दिन ऐसा आयेगा जब धुँध छँट जायेगी और आप मेरे दावेको स्वीकार करेगे।

मो० क० गांधी

अग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० २१५४१) से।

१. यह वक्तव्य हिन्दू, ३१-७-१९३३ और हिन्दुस्तान टाइम्स, १-८-१९३३ में प्रकाशित हुआ था।

२. देखिए पृ० ३१०-५।

३८१. तार: बम्बई सरकारके गृह-सचिवको

३० जुलाई, १९३३

सचिव
गृह-विभाग
पूना

आशा है मंगलवारको प्रातः मैं आश्रम छोड़ दूंगा। यदि स्वतन्त्र रहा तो अपने साथियों सहित, छोटी-छोटी मंजिलें तय करता, फिलहाल, रासतक जाऊँगा। उद्देश्य है, जिन ग्रामवासियोंको सबसे ज्यादा कष्ट उठाने पड़े हैं उनके साथ सहानुभूति प्रकट करना। ग्रामवासियोंको सामूहिक सत्याग्रहके लिए आमन्त्रित करनेकी [मेरी] कोई इच्छा नहीं है। परन्तु कांग्रेसके प्रस्तावके अनुसार, व्यक्तियोंसे सत्याग्रहके लिए कहा जायेगा। हम ग्रामवासियों से शराब छोड़नेको, शराबके दूकानदारोंसे शराबका धन्धा छोड़नेको, विदेशी कपड़ेके व्यापारियोंसे सिर्फ खद्दरका व्यापार करनेको, और सभीसे कांग्रेसका रचनात्मक कार्यक्रम अमलमें लानेको कहेंगे। हिन्दुओंसे अस्पृश्यताको मिटानेको कहा जायेगा। मैं और मेरे साथी बिना पैसे कूच करेंगे और ग्रामवासी जो कुछ देंगे वही खायेंगे। यदि मुझे पहले ही गिरफ्तार कर लिया गया तो मेरे ३२[1] साथी, जिनमें सोलह महिलाएँ हैं, कूच करेंगे।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० २१५४२) से।

३८२. अपील: गुजरातके लोगोंसे[2]

३० जुलाई, १९३३

आश्रमके त्यागका फैसला करना आसान नहीं था। परन्तु प्रत्येक आश्रमवासीके सामने यह चीज बिलकुल स्पष्ट थी कि यह त्याग अनिवार्य है। कर्नाटक, मिदनापुर और कैरा, यू० पी० और सीमाप्रान्तके किसानोंने जो कष्ट सहा है और जो त्याग किया है, उसके सामने यह त्याग कुछ नहीं है। अबतक उन्हें गुप्त सहायता दी जा रही थी, जो अब बन्द हो गई है या हो जायेगी और हो जानी चाहिए। पर

१. "अपील: गुजरातके लोगोंसे", ३०-७-१९३३ में यह संख्या ३३ है। देखिए अगला शीर्षक।
२. समाचारपत्रोंकी रिपोर्टोंमें इसका पहला और तीसरा अनुच्छेद नहीं दिया गया था।

इसका अर्थ यह नहीं है कि जो भूखों मर रहे हैं उन्हें, केवल इसलिए कि वे सत्याग्रही हैं, सार्वजनिक सहायतासे वंचित कर देना चाहिए। मुझे आशा है कि जो भी किसान संकटमें हैं उन सबको जन-साधारणसे आवश्यक सहायता मिलेगी, और यदि सरकार इस तरहकी सहायतापर प्रतिबन्ध लगाती है तो सहायता देनेवाले उसका प्रतिरोध करने और उसके परिणामोंको भोगनेकी क्षमता दिखायेंगे। लेकिन उनमें वह क्षमता चाहे हो या न हो, मेरे सामने रास्ता साफ है। मैंने अपना सब-कुछ त्याग दिया है।

मंगलवारको प्रातः, यदि ईश्वरने चाहा तो, मेरा इरादा ३३ साथियोंके साथ आश्रमसे कूच करनेका है। इनमें से कुछ शारीरिक रूपसे मुझसे भी कमजोर हैं, क्योंकि इस बार मेरे साथ जितने पुरुष हैं लगभग उतनी ही स्त्रियाँ हैं। लेकिन मैं उन लोगोंकी आत्मत्यागकी इच्छाका प्रतिरोध नहीं कर सका। उनके लिए यह ऐसा आह्वान था जिसका वे प्रतिरोध नहीं कर सके। हमारी यही आशा और प्रार्थना है कि ईश्वर अपना प्रण पूरा करनेमें सहायता करे। फिलहाल हमारा लक्ष्य रास है। यदि हमें वहाँ पहुँचने दिया गया तो हम और आगे जायेंगे। पर यह बिलकुल सम्भव है कि कूच करते हुए हम सभी गिरफ्तार कर लिये जायें। यदि हमें इस तरह गिरफ्तार नहीं किया गया, तो हमारी योजना गाँवके घर-घरमें निर्भयताका सन्देश ले जानेकी है।

हम उनसे सामूहिक सत्याग्रह करनेको नहीं कहेंगे। परन्तु हम ऐसे लोगोंसे जो तैयार हों निश्चय ही व्यक्तिगत सत्याग्रह करनेको कहेंगे। जो शराब पीते हैं उनसे हम उसे छोड़नेको कहेंगे, शराबके दूकानदारोंसे हम वह धन्धा छोड़नेको कहेंगे, विदेशी कपड़ेके व्यापारियोंसे हम केवल खद्दरका व्यापार करनेको कहेंगे, और हम घर-घरमें हाथ-कताईका सन्देश ले जायेंगे। तथाकथित उच्च वर्गके लोगोंसे हम कहेंगे कि वे अस्पृश्यताका त्याग करें और हरिजनोंसे मित्रता स्थापित करें। हरिजनोंसे हम कहेंगे कि वे स्वच्छताके नियमोंका पालन करें और मुर्दा पशुओंका मांस न खायें, और हम सभी सम्प्रदायोंसे यह अपील करेंगे कि वे साम्प्रदायिक एकता कायम करें और इस प्रकार कांग्रेसके समूचे रचनात्मक कार्यक्रमको पूरा करें[1]।

जिन गाँवोंमें हम जा रहे हैं उनसे हम क्या अपेक्षा रखते हैं, यह मैं संक्षेपमें बता दूँ। हमारे पास एक भी पैसा नहीं होगा। ग्रामवासी हमें जो भी रूखा-सूखा देंगे वह हम प्रसन्नतासे और कृतज्ञताके साथ स्वीकार करेंगे। प्रेमसे परोसा गया रूखा-सूखा भोजन भी हमारे लिए सर्वोत्तम व्यंजन होगा। यह बरसातका मौसम है, इसलिए हमें ठहरनेको यदि छतवाली कोई झोंपड़ी मिल जाये तो हम आभारी होंगे। हम थोड़ा-थोड़ा रास्ता तय करते हुए कूच करेंगे, क्योंकि हममें बहुत-से व्यक्ति शरीरसे तगड़े नहीं हैं, और हमारा कार्यक्रम कड़ा नहीं होगा। हमारी टाँगें जब भी हमें आगे ले जानेमें असमर्थ हो जायेंगी, तभी हम रुक जायेंगे। परन्तु हमारा इरादा एक स्थानपर एक रातसे ज्यादा ठहरनेका नहीं है।

१. इससे आगेका अंश फोटो-नकलसे लिया गया है।

यह सम्भव है कि सरकार मुझे मंगलवारसे पहले ही पकड़ ले। तो भी जब तक कूच करनेवाला एक भी साथी स्वतन्त्र रहेगा, कूच जारी रहेगा। मुझे विश्वास है कि हम जो त्याग कर रहे हैं यदि वह शुद्ध है, तो उससे अहिंसाकी शक्ति उत्पन्न होगी जो हमें स्वराज्यके निकट पहुँचायेगी, जिसके लिए कि हम लाखों-करोड़ों लोग लालायित हैं।

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्म (एस० एन० २१५४९) से। फोटो-नकल (एस० एन० २१४१६) से भी।

३८३. पत्र : आनन्द टी० हिंगोरानीको

३० जुलाई, १९३३

प्रिय आनन्द,

आपके पत्रकी प्राप्ति-स्वीकृतिमें मात्र एक पंक्ति लिख रहा हूँ। मैं विद्या[1] के बहुत पास आ गया हूँ। वह जानती है कि उसे क्या करना चाहिए, परन्तु उसमें इतना हौसला नहीं है कि वह उस कामको खुशीसे शुरू कर दे। फिर भी वह बड़ी बहादुरीसे संघर्ष कर रही है और मेरा विचार है कि उसमें उसे सफलता भी मिल रही है। जितनी देर मैं आश्रममें रहता हूँ वह मेरे पास बैठी रहती है। परन्तु कल उसके मुझसे मिलनेकी सम्भावना नहीं है। और सम्भवतः वह कल रात वर्धाके लिए रवाना हो जायेगी। आपको उसके बारेमें चिन्ता करनेकी जरूरत नहीं है।

मुझे नहीं मालूम कि अगले हफ्ते आपको क्या भेजा जा सकता है। किसी भी हालतमें अगर मुमकिन हुआ तो मैं कुछ तो जरूर ही भेजूँगा।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे, सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द टी० हिंगोरानी।

१. विद्या हिंगोरानी, आनन्द टी० हिंगोरानीकी पत्नी।

३८४. पत्र : ग० वा० मावलंकरको

३० जुलाई, १९३३

भाई मावलंकर,

तुम्हारा नाम तो रोज जपता ही रहता हूँ, पर पत्र किस समय लिखूं! आज इतना लिखनेका निश्चय कर ही लिया है। तुम्हारे सकुशल होनेके समाचार मिलते रहते हैं। तुम्हारा अपनी जगह छोड़कर वहाँ चले जाना मैंने ठीक माना है। इतना आराम तुम्हें कभी नहीं मिल सकता था। यों दुनिया तो हमारी परवाह किये विना चलती ही रहेगी। इसलिए जो समय आसानीसे मिल गया है उसका उपयोग अपना स्वास्थ्य सुधारनेमें करना।

वापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १२३७) से।

३८५. पत्र : मैत्री गिरिको

३० जुलाई, १९३३

चि० मैत्री,

तुम्हारा पत्र मिला। उससे बहुत प्रसन्नता हुई। अब तो आश्रमकी शोभा खूब बढ़ाना। बचुभाई[1] तो त्यागी है ही। उससे बहुत-कुछ सीखा जा सकता है। खूब सीखना।

वापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६२४१) से।

१. बचुभाई रामदास, गंगाबहन वैद्यका भतीजा।

३८६. पत्र : कृष्णमैयादेवी गिरिको

३० जुलाई, १९३३

चि० कृष्णमैया देवी,

तुम्हारा पत्र मिला। प्रसन्नता हुई। तुम वहाँ जो परिश्रम करती हो, उसमे भलाई ही है। अब तो आश्रमको भग कर रहे हैं, इसलिए तुम सबपर आश्रमको शोभान्वित करनेका भार आ पडा है।

अब तुम सब नियमोका पालन करके शोभा बढाना।

दुर्गा और सत्यदेवीको भेज रहा हूँ। ध्यान रखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६२१८) से।

३८७. पत्र : खुशालचन्द गांधीको

३० जुलाई, १९३३

पूज्य भाई,

चि० नारणदास आन्दोलनमे शामिल हो रहा है इसके लिए आप, भाभी या अन्य व्यक्ति दुखी होनेके बजाय प्रसन्न ही हो, यही मैं चाहता हूँ। मेरी दृष्टिमे यह कार्य अत्यन्त पवित्र है। आपके सभी लडके इस बलिदानमे भाग ले रहे है, यह तो आपका सौभाग्य है। इसके बारेमे मेरे मनमे तनिक भी शका नही है। नारणदास जहा भी रहेगा वहाँ कुशलसे ही रहेगा, मनमे ऐसा विश्वास रखे। फिर वह अकेला नही है, बहुत-सी बहने भी इस यात्रामे भाग ले रही है, और उनमे से कितनी ही तो अपग-सी हैं। हम सबके जानेसे हजारो लोगोका दुख दूर होगा और उनके जीवनमे प्रसन्नताका सचार होगा, ऐसा निश्चित माने और नारणदास तथा सारे दलको आप दोनो अपना आशीर्वाद भेजे।

आप दोनोको
मोहनदासके दण्डवत् प्रणाम

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से।

३८८. पत्र : महावीर गिरिको

३० जुलाई, १९३३

चि० महावीर,

तू अच्छा काम करता दिखाई देता है। इसी प्रकार काममे सुधार करते जाना और सच्ची लगनसे कामकर सबपर अच्छा प्रभाव डालना। आश्रमकी शोभा बढाना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६२४०) से।

३८९. पत्र : तोताराम सनाढ्यको

३० जुलाई, १९३३

भाई तोतारामजी,

तुम्हारा और चि० हरिप्रसादका खत मिला है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि जहाँ होंगे वहाँ आश्रमके नियमोंका पालन करते हुए रहोगे।

आश्रमकी जमीनका कब्जा सरकार न लेवे तबतक देखते रहो और फलादिका उपयोग करते रहो। वणकर भाइयोंको भी देना।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २५३६) से।

३९०. भेंट : पत्र-प्रतिनिधियोंको

३० जुलाई, १९३३

समाचारपत्रोंके प्रतिनिधियोंसे अपनी भेंटमें गांधीजी ने कहा कि समाचारपत्रोंकी इस रिपोर्टमें कोई सचाई नहीं है कि उन्होंने वाइसरायको भेजनेके लिए एक पत्र तैयार किया है। उन्होंने कहा कि वे जीवनमें केवल एक ही चीज ऐसी जानते हैं जिसपर उनकी अन्धश्रद्धा है, और वह है सत्य, और उसपर अंधश्रद्धा रखनेके लिए उन्हें कोई खेद नहीं है।

उनके विचारमें मन, वचन और कर्मकी शुद्धतासे प्रतिष्ठा अपने-आप और बिना माँगे आती है। जबसे उन्होंने सार्वजनिक जीवनमें पाँव रखा है, उनकी कोशिश उसे इन तीन स्वर्णनियमोंसे ही शासित करनेकी रही है।

इस प्रश्नका उत्तर देते हुए कि क्या वाइसरायसे भेंट की उनकी प्रार्थनामें सत्याग्रहकी धमकी भी थी, गाधीजी ने घोषणा की कि भेंटकी प्रार्थनामें प्रत्यक्ष या परोक्ष, खुली या छिपी, किसी भी तरहकी कोई धमकी नहीं थी।

धमकीका जरा-सा भी सन्देह न हो, इसी आशयसे अनौपचारिक सम्मेलनकी कार्यवाहियाँ गुप्त रखी गई थीं। यह जन-साधारणका दुर्भाग्य ही है कि समाचारपत्रोकी आजकलकी आचार-संहिता उन्हे न केवल गुप्त सूचनाको उल्टे-सीधे सभी तरीकोसे पाने और प्रचारित करनेकी अनुमति देती है, वल्कि वह उसकी सराहना करती भी लगती है।

भेंटकी स्वीकृति न मिलनेपर या यदि स्वीकृति मिल गई तो उसके विफल होनेपर क्या-क्या सम्भावनाएँ हो सकती है, इस सिलसिलेमें यदि एक अनौपचारिक सम्मेलनमें वहुत-सी वातें कही गईं, तो उसका अर्थ किसी भी तरह धमकी नहीं लगाया जा सकता। संगत तथ्य यह है कि भेंटकी उनकी प्रार्थनामें कोई शर्त नहीं थी।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ३१-७-१९३३

३९१. पत्र: मीराबहनको

३० जुलाई, १९३३

चि० मीरा,

यह पत्र आश्रममे लिख रहा हूँ। इस समय रातके पौने नौ वजे है। आशा है, तुम मुलाकात[1] के बाद वहुत ज्यादा परेशान नही रही होगी। तुम्हे स्वस्थ रहकर वजन वढाना होगा।

अव चूंकि आश्रम तोड दिया गया है, तुम्हे अपनी जरूरते रणछोडभाईसे पूरी करानी होगी। मैने उनसे कह दिया है।

मै अधिक नही लिखूंगा, क्योकि मेरे पास समय नही है और मेरी उगलियाँ अव ज्यादा काम नही देती।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६२८४) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९७५० से भी।

१. कुछ दिन पहले गाधीजी मीराबहनसे साबरमती जेलमें मिले थे।

३९२. तार : सीलमको

[३१ जुलाई, १९३३ से पूर्व][1]

श्री सीलम

मत्री, लोकमान्य स्मारक समिति

हार्दिक खेद है कि मूर्तिका अनावरण स्वय नही कर सकता। जिसने हमे स्वराज्य मन्त्र दिया आज उसके लिए कोई भी श्रद्धाजलि बहुत बडी नही है।

गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० २१४१७) से।

३९३. पत्र : न० रा० मलकानीको

३१ जुलाई, १९३३

प्रिय मलकानी,

मै एकदम न तो 'हाँ' कह सकता हूँ और न 'ना'। तुम्हे खुद तय करना होगा कि कब आगमे कूदे बगैर रहा नही जा सकता। इसलिए तुम्हे हमेशा अपना स्थान ले सकनेवाला एक योग्य व्यक्ति तैयार रखना चाहिए। क्या मेरी बात पूरी तरह समझ गये?

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८९९) से।

१. यह तार *गुजरात समाचार*, ३१-७-१९३३ में प्रकाशित हुआ था।

३९४. पत्र : अब्बास तैयबजीको

३१ जुलाई, १९३३

प्रिय भुर्रर्र[1],

यह क्या बकवास है! तुमने खंडन किया सो ठीक है। तुम्हें उसका पूरा हक था। वाद-विवाद जरूर इतना लम्बा था कि किसीको भी परेशान कर देता। परन्तु समय पड़नेपर सहन करनेकी तुम्हारी क्षमता और उच्छापर मुझे कभी सन्देह नहीं था। पूरा आराम लो और जब समय आये कूद पड़ो। इस बार यह मसला लम्बा खिंचेगा। उसकी कोई परवाह नहीं। इससे व्यक्तिको दम ले लेनेका मौका मिल जाता है। एक बार मैदानमें उतरे कि फिर कोई आराम नहीं लेना चाहिए। यही आदर्श बात है।

तुम सबको स्नेह।

तुम्हारा,
मो० क० गांधी

[पुनश्च]

अलविदा। उम्मीद है कि कल सुबह होनेसे पहले ही मैं महामहिमका मेहमान होऊँगा।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९५८५) से।

३९५. पत्र : नारणदास गांधीको

[३१ जुलाई, १९३३][2]

चि० नारणदास,

तुम्हारी जिम्मेदारीकी कोई सीमा नहीं। किन्तु ईश्वर तुम्हें शक्ति दे रहा है।

भाई आप्टेका पत्र इसके साथ भेज रहा हूँ। शारजाके साथ कुछ पत्र-व्यवहार चल रहा है, इतना मुझे मालूम था। शारजाने स्वतन्त्र होनेकी माँग की है। शारजाके साथ बात करके यदि उसकी जिम्मेदारी ले सको, तो ले लो। यदि वह नियमोंका पालन करती हो तो उसकी जिम्मेदारी लेनेमें मुझे कोई हानि नहीं दिखाई देती।

१. यह गांधीजी और अब्बास तैयबजीके बीच अभिवादनकी पद्धति थी।

२. बापुना पत्रो – ९: श्री नारणदास गांधीने, भाग २ के अनुसार गांधीजी ने यह पत्र उसी दिन मध्यरात्रिको गिरफ्तार होनेसे पूर्व लिखा था।

महादेवके भी मेरे साथ ही पकड़े जानेकी सम्भावना है। ऐसा हो तो भी जो कार्यक्रम है वह तो रहेगा ही। कल जो भी [बाहर] रहे वह जमनालालके साथ पूरी बात कर ले। जमनालालको अभी आन्दोलनमें नहीं पड़ना है। वह आश्रमके धनको अपने हाथमें ले ले। छुपा हुआ कुछ धन हो और वह उसके हाथमें आ जाये तो वह उसे खुले तौरपर रखे। हिसाबकी जाँच करनेपर देखता हूँ कि ऐसी एक भी रकम नहीं है जिसे जब्त किया जा सके। जो धन जब्त किया जा सकता था, वह सारा खर्च हो चुका है और वह था सत्याग्रहियोंका कोष। तो भी सरकारको जो जब्त करना हो मजेसे करे। सारा धन किसी-न-किसी कार्यके लिए निश्चित है।

बली आये तो उसके साथ स्पष्ट बात कर लेना। अनसूयाबहनको तनिक भी संकोच हो तो मनु वर्धा जाये। यदि उसे राजकोट जाना ही हो तो जरूर जाये।

जहाँतक मैं समझ पाया हूँ, केशु तो वर्धा जायेगा ही। संतोककी भी वहीं जानेकी इच्छा है। राधाको साथ ले जाकर वह वहाँ, जमनालालजी जो काम सौंपें, उसे यथाशक्ति कर पानेकी आशा करती है। उसके साथ बात कर लेना।

बलभद्रको दक्षिणामूर्ति भेज देना। धीरू जोशीको रमा जोशीने आज्ञा नहीं दी, इसलिए उसे जहाँ रखना ठीक हो, वहीं रखो। शायद तबतक रामनारायण देखभाल कर पायेगा। रमा जोशीको पूना जानेके लिए पैसा देना होगा और आनेका भी देना चाहिए। उससे पूछ लेना चाहिए, वह नाराज न हो।

तोतारामजी कुछ दिन आश्रमकी देखभाल करें। बादमें सरकार कब्जा न भी करे तो भी छोड़ दें।

प्रभावतीको बनारस या बिहार जानेके लिए जितने धनकी जरूरत हो उतना दे देना है।

इसके अतिरिक्त इस समय और कुछ याद नहीं आता। तुम्हें पूछना हो तो पूछ लेना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३९१ से भी; सौजन्य: नारणदास गांधी।

३९६. वक्तव्य : अहमदाबादके जिला-मजिस्ट्रेट[1] के समक्ष

१ अगस्त, १९३३

मैं समझता हूँ, सार्वजनिक शान्ति भंग करनेकी मेरी कभी कोई इच्छा नही रही है। मेरी अपनी रायमें मैंने जान-बूझकर कभी ऐसा कोई काम नही किया है जिससे जनताकी शान्ति भंग हो। बल्कि मैं तो यह कहनेका साहस करता हूँ कि मैंने जनताके बीच यथा सम्भव शान्ति बढ़ानेके लिए अधिक-से-अधिक प्रयत्न किया है और मैं ऐसे कई दृष्टान्त दे सकता हूँ जब मैंने जनतामें शान्ति कायम रखने और उसे बढ़ानेमें सफलता हासिल की है। जीवन-भर शान्तिका प्रेमी होनेके नाते शान्ति भंग करनेके विचारसे ज्यादा दूर कोई बात मेरे लिए हो ही नही सकती।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) (११), भाग २, पृ० २६३-५

३९७. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

सैन्ट्रल जेल,
साबरमती,
१ अगस्त, १९३३

चि० अमला,

तुम्हें अपने विचित्र और परेशानीमें डाल देनेवाले तौर-तरीके बिलकुल छोड देने चाहिए। भावुकताका प्रदर्शन सच्ची लगनका लक्षण नही है। सच्ची लगन तो चुपचाप काम करती रहती है। यदि तुम ध्यान नही लगाओगी और ठीक तरहसे अपने हाथोंसे काम लेना नहीं सीखोगी, तो तुम हरिजन-कार्यके लिए उपयुक्त नही हो पाओगी। तुम्हारी कताई बहुत भद्दी है। आशा है कि मैं जैसा महसूस करता हूँ मेरे वैसा ही कहने या लिखनेका तुम बुरा नही मानोगी। शुद्ध स्नेहको कभी-कभी कठोर होनेकी जरूरत पड़ती है।

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल कागजात, सौजन्य नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय

१. जे० बी० इर्विन, यह वक्तव्य १९३२ के बम्बई अधिनियम १६ की धारा ३ (२) के अन्तर्गत दिया गया था।

३९८. पत्र : एफ० मेरी बारको

१ अगस्त, १९३३

आशा है कि अब तुम ठीकसे अपने काम[1]मे लग गई हो। तुम परिवारके लोगोके समीप आनेका इन्तजार न करके स्वयं उनके समीप जाना और सभीके साथ सहज आत्मीय नाता बना लेना। मै सोचता हूँ कि तुम्हारा नलिनीबहनको अपनी जरूरते बताना ठीक होगा। तुम अपने स्वास्थ्यपर तो किसी भी हालतमे आँच मत आने देना।

स्नेह।

बापू

[पुनश्चः]

यह पत्र डकनको भी पढ़वा देना।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६००४) से। सी० डब्ल्यू० ३३३० से भी; सौजन्य : एफ० मेरी बार।

३९९. पत्र : अडवानीको[2]

१ अगस्त, १९३३

प्रिय मेजर अडवानी,

आप शायद जानते होंगे कि पिछली मईमे अपने उपवासके कारण यरवडा सैन्ट्रल जेलसे जब मैं छूटा, उससे पहले मुझे हरिजन-कार्य करने दिया जाता था और उस सिलसिलेमे मैं आजादीके साथ मुलाकातियोंसे मिल सकता था, पत्र प्राप्त कर सकता था और पत्र लिख सकता था। मुझे टाइपिस्ट रखनेकी अनुमति दे दी गई थी और अखबार, पत्रिकाएँ तथा अन्य साहित्य भी मुझे दिया जाता था। मैं आशा करता हूँ कि ये सब सुविधाएँ मुझे अब भी दी जायेंगी। मैं आपको बता दूँ कि पूनासे 'हरिजन' नामका एक साप्ताहिक पत्र निकलता है, उस पत्रके लिए सामग्री भेजना और उसके सम्पादकको दूसरी हिदायते देना मेरे लिए जरूरी है। पूनासे

१. साबरमती आश्रमके भंग होनेपर एफ० मेरी बार वर्धा आश्रममें चली गई थी।

२. अहमदाबाद सैन्ट्रल जेलके सुपरिंटेंडेंट।

जिस टाइपिस्टको मैं लाया था, उसे मैंने अहमदाबादमे ही रखा है। आपसे मुझे मालूम हुआ कि इस मामलेमे अभीतक सरकारकी तरफसे आपको कोई आदेश नही मिला है। क्या आप तारसे आवश्यक आदेश मँगानेकी कृपा करेंगे[1]?

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८९३) से। बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) (१४), भाग ५, पृ० ८५ से भी।

४००. पत्र : रमाबहन जोशीको

१ अगस्त, १९३३

चि० रमा,

तुमसे दूसरी बार मिल नही सका, इसका मनमे दु:ख रह गया। आश्रममे बहनें नहीं हैं, इसलिए वीणाबहन[2] से तुम्हारी सेवाके लिए पक्का बन्दोबस्त करनेके लिए कहा और आशा है, इसलिए सब काम ठीक चल रहा होगा। मुझे पत्र लिखवाना। धीरूके बारेमें मैंने जो सन्देश भेजा है वह कुछ कठोर अवश्य था, किन्तु और कोई उपाय नही था। अपने यात्रा-सम्बन्धी खर्चके बारेमे चिमनलालसे पूछना। मुझे आशा है कि कोई कठिनाई नही होगी।

बीरू और बलभद्र भावनगर गये हैं। वहाँ अच्छी तरह रहेंगे, ऐसी आशा तो करता ही हूँ।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च:]

आनन्दी, बचु, शारदा और वनमालाको भी तुम्हे देख आनेके लिए सदेश भेजे हैं।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५३५५) से।

१. यह पत्र और इसके बाद १६ अगस्त, १९३३ तक जो पत्र-व्यवहार हुआ, वह सारा हिन्दू, १९-८-१९३३ में प्रकाशित हुआ था।

२. एक जर्मन महिला जो वी० एस० अस्पताल, अहमदाबादमें एक नर्सके रूपमें काम कर रही थीं।

४०१. पत्र : बम्बई सरकारके गृह-सचिवको

यरवदा सैन्ट्रल जेल,
३ अगस्त, १९३३

बम्बई सरकारके सचिव
गृह-विभाग

प्रिय महोदय,

इसी २ तारीखके 'टाइम्स ऑफ इंडिया' में प्रकाशित एक रिपोर्टमें, जो प्रामाणिक बताई जाती है, कहा गया है कि मुझे यह आदेश[1] जारी करनेके बाद रिहा कर दिया जायेगा कि मेरी हलचलें पूनामें ही सीमित रहनी चाहिए और मुझे सविनय अवज्ञा आन्दोलनसे सम्बन्धित किसी भी गतिविधिमें भाग नहीं लेना चाहिए। उसमें आगे कहा गया है: "यदि वे इस आदेशकी उपेक्षा करेंगे तो उन्हें फिर गिरफ्तार कर लिया जायेगा।" यदि यह रिपोर्ट सही है तो मैं, सरकारको सम्भावित अनावश्यक परेशानीसे बचानेके लिए और उपवास तोड़नेके बादसे मुझमें फिरसे जो शक्ति आती जा रही है उसे बचानेकी दृष्टिसे, यह कहना चाहूँगा कि सविनय अवज्ञामें अपने विश्वासके अनुरूप, मैं इस आदेशका, जो विचाराधीन बताया गया है, पालन नहीं कर सकूँगा। यदि इसका उद्देश्य मेरे विश्वासको जकड़ना हो तो निस्सन्देह सरकार, उपरोक्त रिपोर्टमें बताई गई कष्टदायक प्रक्रियाको अपनाये बिना भी, जो व्यापक अधिकार उसके हाथमें हैं उन्हींसे ऐसा कर सकती है।

सरकारने श्रीयुत महादेव देसाईको मेरे साथ रखा है, यह बात मैं कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार करता हूँ। इसीलिए वे मेरे द्वारा यह कहना चाहते हैं कि सविनय अवज्ञा उनका भी उतना ही जीवन-सिद्धान्त है जितना कि मेरा है, और मेरी तरह वे भी उसके प्रचार या पालनसे बाज नहीं आ सकते।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८९४) से। बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) (१४), भाग ५, पृ० ३७ से भी।

१. देखिए परिशिष्ट ११; अगला शीर्षक।

४०२. वक्तव्य : पूनाके जिला-मजिस्ट्रेटके समक्ष[1]

३ अगस्त, १९३३

मैं इस विषयपर गृह-विभागके सचिवके नाम एक पत्र[2] आज सुबह यरवदा सैन्ट्रल जेलके सुपरिंटेंडेंट, कर्नल मार्टिनको दे चुका हूँ। उसमें इस विषयपर मेरे विचार दिये गये हैं। मुझे उससे अधिक कुछ नही कहना है।

मो० क० गाधी

अग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९७२४) से। बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्राच, फाइल स० ८०० (४०) (१४), भाग ५, पृ० ७५ से भी।

४०३. वक्तव्य :[3] प्रतिबन्ध आदेशको अमान्य करते हुए

४ अगस्त, १९३३

मुझे उस आदेश[4] की प्रति मिली है। खेद है कि मैं इसका पालन नही कर सकूँगा।

मो० क० गांधी

[अग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्राच, फाइल स० ८०० (४०) (१४), भाग ५, पृ० ६७।

१. पूनाके जिला-मजिस्ट्रेट डी० मैकलाखलनने गांधीजीको १९३२के अधिनियम १६ की धारा ४ पढ़कर सुनाई थी। इसके अन्तर्गत जारी किये जानेवाले आदेशोंको सुननेके बाद गांधीजी ने उक्त वक्तव्य दिया था।

२. देखिए पिछला शीर्षक।

३. यरवदा सैन्ट्रल जेलके सुपरिंटेंडेंट आर० वी० मार्टिनके समक्ष दिया गया था।

४. देखिए परिशिष्ट ११। गांधीजी ने तुरन्त आदेशका उल्लंघन किया और वे फिर गिरफ्तार करके यरवदा जेल वापस भेज दिये गये। देखिए अगला शीर्षक भी।

४०४. पूनामें मुकदमा[1]

४ अगस्त, १९३३

मजिस्ट्रेट जब मुकदमेकी परिस्थितियोंपर प्रकाश डाल चुके, तो गांधीजी ने यह सुझाव रखा कि वे अपनेको दोषी स्वीकार कर लेना चाहते हैं, इसलिए गवाहियाँ न ली जायें। परन्तु मजिस्ट्रेटने गांधीजी को बताया कि कानूनी कार्यविधिके लिए कुछ गवाहियाँ जरूरी हैं।

गांधीजी: १९२२ मे जब मैंने अपनेको दोषी स्वीकार कर लिया था तो, मेरा खयाल है, गवाहियाँ छोड दी गई थी।

मजिस्ट्रेट: यह आपकी शालीनता है। आप जो कह रहे हैं, वह मैं समझता हूँ। निस्सन्देह, इससे काम आसान हो जायेगा। पर मेरा यह कर्त्तव्य है कि कुछ गवाहियाँ लूं। लेकिन मैं उन्हें, यथासम्भव, कम ही रखूँगा . . .[2]

अदालतके यह पूछनेपर कि क्या वे गवाहसे कुछ पूछना चाहते है, गांधीजी ने कहा: नहीं . . .[3]

गांधीजी ने इस गवाह[4] से भी कुछ पूछना नहीं चाहा और कहा: नही, धन्यवाद।

अदालतके पूछनेपर गांधीजी ने बताया कि उनकी उम्र ६४ साल है और उनकी जाति हिन्दू है।

मजिस्ट्रेट: आपका पेशा क्या है?

गांधीजी: [सकुचाते हुए] मैं पेशेसे कताई करनेवाला, बुनकर और काश्तकार हूँ।

१. गांधीजी को प्रातः ९ बजे रिहा होनेपर यह आदेश मिला था कि वे पूना शहरकी सीमाओंके अन्दर ही रहें। इस आदेशको तोड़नेपर उन्हें एक घंटेके अन्दर ही फिर गिरफ्तार कर लिया गया और मुकदमा चलानेके लिए यरवदा जेल भेज दिया गया। मुकदमा तीसरे पहर सवा तीन बजे पूनाके अतिरिक्त जिला-मजिस्ट्रेट श्याम एस० इजरेलके सामने शुरू हुआ।

२. इसके बाद अभियोग पक्षके पहले गवाह और पुलिसके जिला-सुपरिंटेंडेंट एफ० डब्ल्यू० ओ'गोर्मनने वे घटनाएँ बताईं जिनके कारण गांधीजी को गिरफ्तार किया गया था।

३. दूसरे गवाह यरवदा जेलके सुपरिंटेंडेंट, लेफ्टिनेंट कर्नल मार्टिनने बताया कि गांधीजी को सरकारी आदेश उन्होंने ही सुनाया था। इसके बाद तीसरे गवाह, पुलिसके सहायक सुपरिंटेंडेंटने बताया कि गांधीजी और महादेव देसाई प्राइवेट टैक्सीमें जेलसे बाहर जानेके बाद प्रातः ९.४० पर भी यरवदाकी सीमाओंके अन्दर ही थे। उनसे तुरन्त वहाँसे चले जानेको कहा गया, पर उन्होंने ऐसा करनेसे इनकार कर दिया। दस मिनट बाद उन्हें फिर उस आदेशकी याद दिलाई गई। उसे माननेसे इनकार करनेपर, उन्हें फिर गिरफ्तार करके यरवदा जेल वापस ले आया गया।

४. जिस टैक्सीमें गांधीजी गोल्फ लिंक गये थे, उसका ड्राइवर आखिरी गवाह था। उसने अन्य गवाहोंके बयानकी पुष्टि की।

मजिस्ट्रेट : आपका निवास-स्थान ?

गांधीजी . इस समय यरवदा जेल है। (हँसी)

मजिस्ट्रेट : इस समय तो जरूर है, पर वैसे ?

गांधीजी वैसे अहमदाबादमें साबरमती।

मजिस्ट्रेट : अभियोग-पक्षकी ओरसे जो गवाहियाँ हुई हैं, क्या उनके विषयमें आपको कुछ कहना है ?

गांधीजी अभियोग पक्षके कई गवाहोंने जो बयान दिये हैं, मैं समझता हूँ कि वे बिल्कुल ठीक हैं।

गांधीजी ने आगे कहा कि उन्होंने आदेश क्यों तोड़ा, इस बारेमें वे एक छोटा-सा बयान देना चाहते हैं। अदालतकी स्वीकृति मिल जानेपर उन्होंने तभी धीमे और संयत स्वरमें एक छोटा-सा बयान दिया। उन्होंने कहा :

बम्बई सरकारका आदेश मैंने जान-बूझकर और इरादतन ही तोड़ा है। मैंने ऐसा क्यों किया, यह मैं थोडेमें बताऊँगा। वैधानिक रूपसे गठित किसी सत्ताके आदेशोंको तोडनेसे मुझे कोई खुशी नहीं होती। मैं शान्ति चाहनेवाला व्यक्ति हूँ। और अपने-आपको, जिस राज्यमें रहता हूँ, उसके कानूनोंका स्वेच्छासे पालन करनेवाला एक अच्छा नागरिक मानता हूँ। पर एक नागरिकके जीवनमें कुछ अवसर ऐसे आते हैं जब राज्यके कानूनों और आदेशोंको तोडना उसका दुःखद कर्त्तव्य हो जाता है। सभी जानते हैं कि १९१९में मेरे सिरपर ऐसा ही दुःखद कर्त्तव्य आ पडा था। मुझे तब न केवल स्वयं सत्याग्रह करना, बल्कि औरोंको भी वैसा करनेके लिए कहना अपना कर्त्तव्य जान पडा था।

जिस कानून या अधिनियमके मातहत मुझपर मुकदमा चलाया जा रहा है, वही प्रत्यक्ष रूपसे मेरे इस आक्षेपको सिद्ध कर देता है कि भारतमें इस समय जो शासन-व्यवस्था है वह केवल अन्यायी ही नहीं है, बल्कि देशका आर्थिक और नैतिक अधःपतन करनेवाली भी है।

इन दिनों मुझे थोडा समय जेलसे बाहर रहनेको मिला। उस अरसेमें मैं बहुत-से स्त्री-पुरुषोंके सम्पर्कमें आया। इस बीच मैंने जो खोज की, वह मुझे अत्यन्त दुःखद लगी। मुझे लगा कि इस देशमें रहनेवाले तमाम लोग — बड़े और छोटे, पढे-लिखे और अनपढ, गरीब और अमीर, सभी — दब गये हैं, और उन्हें अपनी आजादी तथा जमीन-जायदादके छिन जानेका सदा भय रहता है।

ऐसे वातावरणमें रहना मेरे लिए एक कडी परीक्षा थी। बचपनसे ही स्वभावतः मैं अहिंसात्मक तरीकोंमें दृढ विश्वास रखता आया हूँ। इसलिए मैंने इस तरीकेका सहारा लिया कि अपने भाग्यमें जो कष्ट सहना लिखा हो उसे स्वेच्छासे सहन किया जाये। जिस वेदनासे मेरा अन्तर जल रहा था, उसे किसी हदतक कम करनेका मेरे पास यही एक उपाय था।

इन्हीं कारणोंसे मैं इस शासन-व्यवस्थाका, जितना मुझसे हो सकता है और जितना मेरे-जैसा शान्ति चाहनेवाला मनुष्य कर सकता है, विरोध कर रहा हूँ।

एक बात और। मेरा खयाल है कि आप या सरकार मुझे सजा देनेके बाद जेलमे किसी खास श्रेणीमे रखेगी। मै यह कह देना चाहता हूँ कि कैदियोंको 'ए', 'बी' और 'सी' श्रेणीमे रखनेकी पद्धति मुझे बहुत ही नापसन्द है। जो विशेष सुविधाएँ दूसरे कैदियोको न मिल सकती हों, उन्हे भोगनेकी मेरी कतई इच्छा नही है। इसलिए सरकार जिन्हे नीचे-से-नीचा मानती हो, ऐसे कैदियोंकी श्रेणीमे ही रहना मै चाहूँगा। अन्तमे मै यह कहना चाहता हूँ कि इन दो-तीन दिनोमे मै जिन अधिकारियोंके सम्पर्कमें आया हूँ, वे मेरे साथ बहुत ही विनय और आदरसे पेश आये है। इसके लिए मै उनका आभारी हूँ।

उपरोक्त बयान दे चुकनेके बाद, गांधीजी ने मजिस्ट्रेट द्वारा अभिलिखित अपने बयानको पढ़ा और बताया कि वह बिलकुल ठीक है।

मजिस्ट्रेटने तब बॉम्बे विशेष अधिकार अधिनियम, १९३२ की धारा १४ के अधीन यह अभियोग लगाया कि सरकारने इसी अधिनियमके अधीन उन्हें यह आदेश दिया था कि वे, अन्य बातोंके अलावा, प्रातः ९.३० से पहले-पहले यरवदा गाँवकी सीमाके बाहर चले जायें, जिस आदेशको उन्होंने जान-बूझकर तोड़ा है। मजिस्ट्रेटके यह पूछने पर कि क्या वे अपना दोष स्वीकार करते है, गांधीजी ने 'हाँ' में जवाब दिया।

गांधीजी ने यह भी कहा कि वे अपने बचावमें कोई गवाह पेश करना नहीं चाहते। तब पुलिस अभियोक्ताने कहा कि गांधीजी की उम्रका खयाल रखते हुए वे उनके वास्ते निवारक दण्डके लिए आग्रह नहीं करेंगे।

मजिस्ट्रेटने अपना फैसला सुनाते हुए कहा कि यह सिद्ध हो गया है कि गांधीजी ने सरकारके आदेशको तोड़ा है। इसलिए बॉम्बे विशेष अधिकार अधिनियम, १९३२ के अधीन वे उन्हें दोषी ठहराते है और एक सालकी साधारण कैद की सजा देते है . . .

मजिस्ट्रेट: आपकी उम्र और सेहतका खयाल रखते हुए और इसलिए भी कि अभियोग-पक्षने निवारक दण्डके लिए आग्रह नहीं किया है, मै आपको हल्की सजा दे रहा हूँ।

इस तरह मुकदमा समाप्त हो गया और गांधीजी मजिस्ट्रेटका अभिवादन करनेके बाद उठ गये। जेलर उन्हें उनकी कोठरीमें ले गया। गांधीजी को 'ए' श्रेणीमें रखा गया है।[1]

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ५-८-१९३३

१. इसके बाद महादेव देसाई मजिस्ट्रेटके सामने लाये गये। उन्हें एक सालकी साधारण कैदकी सजा दी गई और 'बी' श्रेणीमें रखा गया।

४०५. पत्र : बम्बई सरकारके गृह-सचिवको

यरवदा सैन्ट्रल जेल
४ अगस्त, १९३३

सरकारके सचिव
गृह-विभाग

प्रिय महोदय,

अहमदाबाद सैन्ट्रल जेलमें जिस दिन मुझे लाया गया उसी दिन मैंने, वहाँ के सुपरिटेंडेंटकी मारफत, यह प्रार्थना की थी[1] कि अपने पिछले उपवाससे पहले मैं जिस ढंगसे अस्पृश्यता-निवारणका काम कर रहा था, उसी तरह फिर करनेकी मुझे इजाजत दी जाये। उसका मुझे अभीतक कोई जवाब नही मिला है। सरकार जानती है कि साप्ताहिक पत्र 'हरिजन' और उसके गुजराती-संस्करण तथा किसी हदतक हिन्दी-संस्करणकी भी नीतिका मैं संचालन करता हूँ। यरवदा-समझौतेके एक अभिन्न अंगके रूपमें मैंने अपने-आपसे और हरिजनोंसे जो प्रतिज्ञा की है उसके पालनके लिए किये जा रहे अस्पृश्यता-निवारण कार्यका यह केवल एक अंश है। मेरे जीवनको खतरेमें डाले बिना यह कार्य रोका नही जा सकता। इसलिए मैं प्रार्थना करता हूँ कि अगले सोमवारतक मुझे जवाब मिल जाये, ताकि मैं अगले सप्ताहके 'हरिजन' का काम और दूसरे कई जरूरी मामले, जो मेरी गिरफ्तारीके समयसे लटके हैं, निपटा सकूँ।[2]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८९५) से।

१. देखिए पृ० ३५४।
२. देखिए पृ० ३६५-६ भी।

४०६. उपवासकी नैतिकता

पश्चिमके एक विद्वान् मेरे हालके उपवासके बारेमे लिखते है:

> अपने उपवासकी नैतिकताके सम्बन्धमें एक पत्र-लेखकके प्रश्नका आपने जो उत्तर दिया था,[1] वह मै पढ़ चुका हूँ। आपका आशय मै भली-भाँति समझ नहीं सका। आपके कष्ट-सहनसे इस तरहके कार्यका तमाम दोष दूर हो जाता है, ऐसा आपका विचार प्रतीत होता है। परन्तु हर दोषीको कष्ट तो सहना ही पड़ता है, अतः आपके तर्कानुसार दोष-जैसी कोई चीज ही नहीं है। यदि अपनेको और अपने शरीरको एक समझनेके बजाय, आप एक क्षणके लिए अपने शरीरको वस्तुपरक दृष्टिसे देखें, तो क्या यह स्पष्ट नहीं हो जाता कि उस शरीरके साथ हिंसा अथवा अस्वाभाविक बर्ताव करनेसे अहिंसाका नियम उतना ही भंग होता है जितना कि किसी अन्यके साथ अस्वाभाविक अथवा हिंसाका बर्ताव करनेसे हो सकता है? यह कहना कोई तर्क नहीं है कि प्राचीन कालमें अनेक साधु पुरुष ऐसे उपवासोंकी मीमांसा कर चुके हैं और उन्होंने ऐसे उपवास किये भी है।

यह तर्क पहले भी दिया गया है, किन्तु इस पत्र-लेखककी तरह किसीने इसे इतनी गम्भीरतासे नही रखा था। मै मानता हूँ कि उपवास शुद्धिका जबरदस्त साधन है और मानव-समाजके जीवनमे इसका महत्त्वपूर्ण स्थान होना चाहिए। अतः इस तर्ककी जाँच उचित है।

दोषीके उपवास करनेपर भी उसका दोष मिट नही जाता, और जब उपवास दूसरोंके लिए होता है, तब तो वह और भी कम मिटता है। उपवास दोषकी पुनरावृत्ति रोकनेमे ही सहायक होता है। अगर सब नही तो ज्यादातर दोष शरीरकी आसक्तिसे ही उत्पन्न होते है। अत. देह-दमनसे आसक्तिका घटना सम्भव है। निस्सन्देह, आसक्तिका घटना उपवासके प्रयोजनपर निर्भर करता है। इस सूत्रमे बहुत-कुछ सत्य है कि मनुष्य जैसा आहार लेता है, वैसा ही बनता है। जितना स्थूल आहार होगा उतना ही स्थूल शरीर हो जायेगा। सादा जीवन और उच्च विचार साथ-साथ चलते हैं। लेकिन सादा जीवन और उपवासके बीच बहुत ही थोड़ी दूरी है। सादा जीवन स्वयं एक प्रकारका उपवास कहा जा सकता है। 'हम लोग सिर्फ भोजन करनेके लिए ही दुनियामे नही आये है', इस बातका ठीक-ठीक भान करना हो तो पूर्ण अनशन एक प्रभावोत्पादक साधन है।

१. देखिए पृ० २९८-३०१।

पत्र-लेखक पूछ सकता है कि—"मान लीजिए दोषीके उपवासकी आपकी दलीलमें कुछ दम हो भी, लेकिन दूसरोके लिए किये गये उपवासके बारेमें आप क्या कहेंगे?" इसका उत्तर यह है कि जैसे आत्मा एक ही है, वैसे ही प्रकृति भी एक ही है और, तत्त्वत, ये दोनो पृथक् नही किये जा सकते। सूक्ष्मातिसूक्ष्म प्रकृति ही आत्मा है। अत एक शरीरपर जो-कुछ होगा, उसका प्रभाव अखिल प्रकृति और अखिल आत्मापर अवश्य पडेगा। हम सबको इसका अनुभव है कि कुमार्गियोपर मित्रो और सम्बन्धियोके स्नेहपूर्ण कृत्योका प्राय प्रभाव पडता है, खासकर तब जब वे अपने मित्रो और सम्बन्धियोको अपनेसे श्रेष्ठ समझते हैं। प्रियजनोके लिए किया गया उपवास प्रेमकी एक जबर्दस्त और अचूक अभिव्यक्ति है, और इसीलिए जिन लोगोके लिए वह किया जाता है उनपर उसका असर पडता है। जिनका प्रेम समस्त प्राणियोके लिए है, वे अपने प्रेमके सर्वोच्च कृत्य द्वारा समस्त सृष्टिको प्रभावित करते हैं।

उपवासकी उपयोगिता एक बार स्वीकार कर ली जाये, तो यह दलील कि उपवास अप्राकृतिक है और अपने शरीरके प्रति हिंसाका एक कृत्य है, चूर-चूर हो जाती है। गिरे हुए स्वास्थ्यको पुन प्राप्त करनेके लिए जैसे उपवास न तो अप्राकृतिक है और न पापपूर्ण आत्मयन्त्रणा ही है, उसी प्रकार अपनी और दूसरोकी आत्मशुद्धिके लिए किया गया उपवास भी अप्राकृतिक और पापपूर्ण आत्मयन्त्रणा नही है।

किन्तु व्यवहारसे यदि यह सही सिद्ध न होता हो तो मेरा सारा तर्क बेकार है। और अगर इस तर्कमें कुछ सार है, तो ऋषियो और दूसरे लोगो द्वारा अनादि कालसे निरन्तर किये जाते रहे प्रयोगोसे वह और भी दृढ हो जाता है। परन्तु सशयात्माओंको तर्क और प्राचीन कालके प्रमाणोपर विश्वास करनेकी जरूरत नही है। आत्मशुद्धिके लिए उन्हे उपवासके नियमो और विज्ञानसे परिचित होकर उसको स्वय कसौटीपर कसना चाहिए। जो लोग चकाचौध पैदा करनेवाले भौतिकवादमे पले हैं, उन्हे उपवास आकर्षित नही करता। परन्तु इसलिए यह और भी वाछनीय है कि पत्र-लेखक-जैसे व्यक्ति आत्मशुद्धि और प्रायश्चित्तके इस अत्यन्त शक्तिशाली साधनको इस तरह सरसरी नजरसे ही रद्द न करे।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ५-८-१९३३

४०७. पत्र : आर० बी० मार्टिनको

५ अगस्त, १९३३

प्रिय कर्नल मार्टिन,

आपने आज प्रात. मुझे यह बतानेकी कृपा की कि कैदियोंके लिए आम तौरपर निर्धारित स्तरसे बाहरके किसी खाद्य पदार्थकी यदि मुझे जरूरत हो, तो नियमानुसार मुझे उसके लिए पैसे देने होंगे। इसलिए मैं आपको यह बता देना चाहता हूँ कि अपनी कम-से-कम जरूरतें मैं क्या समझता हूँ। पहली बात तो मैं यह कह सकता हूँ कि अपने लिए जरूरी किसी अतिरिक्त खाद्य पदार्थके लिए मैं पैसे खर्च करना नही चाहता। १९२२ मे मुझे दंडितकी हैसियतसे जेलमे दाखिल किया गया था और मुझसे खानेकी या किसी अन्य चीजके लिए पैसे देनेको नही कहा गया था। परन्तु मैं यह स्वीकार करता हूँ कि सरकार इस बार एक भिन्न नीति अपना सकती है, और यदि वह ऐसा करती है तो वह मेरे लिए शिकायतका कारण नही होगा। कई वर्षोंसे मैं जिन [भोजन-सम्बन्धी] प्रतिबन्धोंका पालन करता आ रहा हूँ यदि उनमे बाधा न पड़े, तो जो भी भोजन मुझे दिया जायेगा उसीसे मैं सन्तुष्ट रहूँगा। जिस भोजनकी मुझे जरूरत है और जो अभीतक जेल अधिकारियों द्वारा मुझे दिया गया है, वह है — बकरीका दूध, ताजे और सूखे फल, हरी सब्जियाँ और, जब भी मुझे जरूरत पडी है तब, रोटी।

आपने मुझसे यह भी पूछा है कि समाचारपत्रों आदिके रूपमे मुझे क्या सुविधाएँ चाहिए, यह मैं आपको बताऊँ। इस मामलेमे चुनावकी मुझे कोई स्वतन्त्रता है, मुझे नहीं मालूम। इसलिए सरकार किस-किसकी अनुमति देगी यह फैसला मुझे सरकारपर ही छोड़ देना चाहिए। परन्तु, पत्र-व्यवहार और मुलाकातोंका जहाँतक सम्बन्ध है, मुझे आश्रम भंग करने, स्वर्गीय डॉ० पी० जे० मेहताकी जागीरके मामलो और अन्य सामाजिक व धार्मिक दायित्वोंके सिलसिलेमे कुछ कारोबारी पत्र लिखने है और सम्बन्धित लोगोंसे मुलाकात करनी है। मैं चाहूँगा कि सरकार मुझे वही सुविधाएँ दे जो वह अबतक देती आई है।

परन्तु दो चीजें ऐसी हैं जो उतनी ही जरूरी है जितना कि शरीरके लिए भोजन। उनमें से एक अस्पृश्यता-निवारण आन्दोलनका सचालन है, जिसके बारेमे मैं सरकारको पहले ही लिख चुका हूँ। दूसरी है, मेरे साथ कैद अपने साथियोंसे मानवीय सम्पर्क। यह अन्तिम सुविधा दण्डितकी हैसियतसे मेरे पहले कारावासमे भी मंजूर कर

ली गई थी और तबसे बराबर जारी रही है। मुझे आशा है कि यह इस कारावासमें भी उसी तरह जारी रहेगी।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८९६) से। बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) (१४), भाग ५, पृ० ८७-९ से भी।

४०८. पत्र : बम्बई सरकारके गृह-सचिवको

६ अगस्त, १९३३

सरकारके सचिव
गृह-विभाग
पूना

प्रिय महोदय,

अस्पृश्यता-निवारणका काम फिर शुरू करने देनेकी मेरी प्रार्थना[1] पर सरकार विचार कर रही है, पर अगले सोमवारतक वह उसका निर्णय नहीं कर सकेगी, सरकारका यह उत्तर अभी-अभी (सवेरे १० बजे) मेरे पास पहुँचाया गया है।

सरकारको इस उत्तरके लिए धन्यवाद देते हुए मैं इतना बता देना चाहता हूँ कि मेरे कामको गम्भीर हानि न पहुँचने देना हो, तो तीन बातें ऐसी हैं जिनके बारेमें देर करनेसे काम नहीं चलेगा। 'हरिजन' पत्रके प्रधान सम्पादक श्री शास्त्री अभी बीमार हैं और बीमारीकी छुट्टी लेकर मद्रास गये हैं। यह पत्र अभी इस कामका अनुभव न रखनेवाले दो व्यक्तियोंके सुपुर्द है। पिछले सप्ताहके अंकके लिए तो मैंने पहलेसे व्यवस्था कर दी थी और पिछले सोमवारको साबरमतीसे कुछ लेख भेज दिये थे। इसलिए जबतक सरकार मेरी प्रार्थनापर विचार करे मुझे जिन दो व्यक्तियोंके सुपुर्द यह पत्र है उनमें से श्री आनन्द हिंगोरानी या काका कालेलकर, किसी एकसे मिलनेकी और आगामी सप्ताहके अंकके लिए लेख भेजनेकी अनुमति मिलनी चाहिए।

दूसरी बात डॉ० टैगारके पत्र[2] के सम्बन्धमें है जो मुझे पिछले सप्ताह दिया गया था। वह मैं इसके साथ भेज रहा हूँ। उसका तुरन्त उत्तर देना जरूरी है।

तीसरी बात उन चार यूरोपियनोंके बारेमें है जो मेरी देखरेखमें हरिजन-सेवाका प्रशिक्षण पा रहे हैं। वे साबरमती आश्रममें थे। उनके नाम हैं: मिस मेरी बार, नी०, डॉ० मार्गरेट स्पीगल और मि० डंकन ग्रीनलीज। उन्हें वर्धा भेजा गया है,

१. देखिए पृ० ३५४।
२. २८ जुलाई, १९३३ का; देखिए पाद-टिप्पणी १, पृ० ३६७।

जहाँ का परिवेश उनके लिए अपरिचित है। नी० और डॉ० स्पीगल हिन्दुस्तानमे अपेक्षाकृत अजनवी है और वैसे भी उनकी सावधानीसे देखरेख जरूरी है। मै चाहूँगा कि उन्हे और श्री विनोवाको, जो वर्धा आश्रमके सचालक है और उनकी देखरेख करनेवाले है, पत्र लिखनेकी मुझे स्वीकृति मिले।

और भी कई वाते है जो कम महत्त्वकी नही है, पर उनके वारेमे थोड़ी देर हो तो चल सकती हे। इसलिए मै आशा करता हूँ कि जहाँ सरकारके निर्णयमे कुछ देर है, वहाँ उपरोक्त तीन वातोके लिए तो मुझे कलतक ही सुविधाएँ दे दी जायेगी।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८९७) से। वॉम्वे सीक्रेट एक्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेट, स्पेशल व्राच, स० ८०० (४०) (१४), भाग ५ पृ० ८९-९१ से भी।

४०९. पत्र : आर० वी० मार्टिनको

यरवदा सैन्ट्रल जेल,
७ अगस्त, १९३३

प्रिय कर्नल मार्टिन,

कल रात सरकारका जो उत्तर मुझे पढ़कर सुनाया गया, क्या आप मुझे उसकी एक नकल देने या करने देनेकी कृपा करेगे?

पहली प्रार्थनाके उत्तरके अनुरूप, अव 'हरिजन' की पाण्डुलिपि मेरे पास तैयार है। इसलिए क्या आप सर्वेण्ट्स ऑफ इंडिया सोसाइटीके श्रीयुत कोदण्डरावको टेलीफोनपर यह कहनेकी कृपा करेंगे कि वे काकासाहव कालेलकरको, और यदि वे मौजूद न हों तो श्रीयुत आनन्द हिंगोरानीको, आज ३ वजे भेज दे, जिससे कि मैं पाण्डुलिपि और हिदायते उन्हे दे सकूँ?

हृदयसे आपका,

[अंग्रेजीसे]

वम्वई सरकार, होम डिपार्टमेट, आई० जी० पी० फाइल सं० २०-१३, १९३३

४१०. पत्र : रवीन्द्रनाथ ठाकुरको

७ अगस्त, १९३३

प्रिय गुरुदेव,

आपका २८ जुलाईका पत्र,[1] जिसके साथ यरवदा-समझौतेके बारेमें सर नृपेन सरकारके नाम आपके तारकी एक नकल भी थी, यहाँ मुझे इसी ४ तारीखको दिया गया है। जाहिर है कि आपका पत्र और मेरा पत्र, जो मैंने अहमदाबादमे रहते हुए लिखा था,[2] दोनो एक ही समय चले थे। परन्तु अभी मैं केवल उसकी प्राप्तिकी स्वीकृतिके सिवा आपको और कुछ नही भेज सकूँगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४६४०) से।

४११. पत्र : बम्बई सरकारके गृह-सचिवको

८ अगस्त, १९३३

सरकारके सचिव
गृह-विभाग, पूना

प्रिय महोदय,

६ तारीखके अपने पत्रमे मैंने जो तीन प्रार्थनाएँ की थी, उनका तुरन्त उत्तर देनेके लिए मैं आपका आभारी हूँ। हरिजन-कार्य-सम्बन्धी मेरी साधारण प्रार्थनाके बारेमें सरकारका आदेश आनेतक, मेरी पहली प्रार्थना मान ली गई है और दूसरी

१. रवीन्द्रनाथ ठाकुरने लिखा था : "यह उस सन्देशकी नकल है जो मैंने बहुत ही पीड़ा और अनिच्छाके साथ सर नृपेनको भेजा है। इससे आप यह जान लेंगे कि पूना-समझौतेके बारेमें मैं क्या महसूस करता हूँ। मुझे पूर्ण विश्वास है कि यदि यह बिना किसी परिवर्तनके स्वीकार कर लिया गया, तो यह हमारे प्रान्तमें बराबर साम्प्रदायिक ईर्ष्याका स्रोत बना रहेगा, शान्तिमें निरन्तर बाधक होगा और पारस्परिक सहयोगकी भावनाके लिए घातक सिद्ध होगा।" (गृह-विभाग, मुद्रित राजनैतिक फाइल सं० ३/१७/३३, १९३३, पृ० १६-७; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार)। सर नृपेन्द्रनाथ सरकारको भेजे गये रवीन्द्रनाथ ठाकुरके तारके लिए देखिए परिशिष्ट १०।

२. देखिए पृ० ३२६-७।

और तीसरी प्रार्थनाओके बारेमे मुझे बहुत सीमित अनुमति दी गई है। मैंने उनसे साभार लाभ उठाया है। पर मैं इतना बता दूँ कि मैंने ये प्रार्थनाएँ इसलिए नही की है कि मुझे 'ए' वर्गका कैदी माना गया है। जब मेरा मुकदमा चला तब मैंने कैदियोके वर्गीकरणपर आपत्ति की थी। इसलिए इस वर्गीकरणको मै अनावश्यक महत्त्व न तो देता हूँ और न देना चाहता हूँ। मैं जानता हूँ कि 'ए' वर्गके कैदियोंको जो रियायते दी जाती है, उनमे से किसी भी रियायतसे अगर मुझे फायदा न उठाना हो, तो वैसा करनेकी मुझे आजादी है। इसके अलावा, मै इस बातसे भी अच्छी तरह भिज्ञ हूँ कि दूसरे 'ए' वर्गके कैदियोको भी सरकार जो शारीरिक सुविधाएँ नही देती, वे सुविधाएँ मैं भोग रहा हूँ। वे सुविधाएँ मै इसलिए नही भोग रहा हूँ कि मुझे 'ए' वर्गमे रखा गया है, बल्कि इसलिए भोग रहा हूँ कि शारीरिक या डॉक्टरी दृष्टिसे वे मेरे लिए जरूरी है। पर मुझे अन्य सुविधाओकी जरूरत है, जो इनसे ऊँचे दर्जेकी है और जिनके बिना जीवन मेरे लिए असह्य भार हो जाता है। वे आत्माकी लालसासे पैदा होती है। पर कैदीकी हैसियतसे मै सरकारके साथ वाद-विवादसे बचना चाहता हूँ। इसलिए, सरकारसे मै इतनी ही प्रार्थना करता हूँ कि मेरी शारीरिक आवश्यकताओंकी वह जितनी चिन्ता करती है, उतनी ही चिन्ता वह मेरी आत्माकी आवश्यकताओंकी भी करे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८९८) से। बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) (१४), भाग ५, पृ० ९३ से भी।

४१२. पत्र : बम्बई सरकारके गृह-सचिवको

१० अगस्त, १९३३

सरकारके सचिव
गृह-विभाग
पूना

प्रिय महोदय,

हरिजन-कार्यके बारेमे मैंने आपको जो पत्र लिखे है, उनकी याद दिलाते हुए मुझे अफसोस होता है। काकासाहब कालेलकरने, जो पिछले सोमवारको मुझसे मिले थे, मुझे बताया कि डाकमे मेरे लिए कुछ जरूरी पत्र आये हुए है। कुछ जरूरी हरिजन प्रश्न भी ऐसे है जिनपर मुझे तुरन्त ध्यान देना चाहिए। इसलिए, मै आशा करता हूँ कि आप अधिक-से-अधिक अगले सोमवारतक या उससे पहले ही मुझे आखिरी निर्णय बता देनेकी कृपा करेंगे।

इसके साथ मैं इस मामलेमें भारत सरकारके आदेशोंकी नकल[1] भेज रहा हूँ। मेरी विनम्र रायमें वे असंदिग्ध हैं।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८९९) से। बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) (१४), भाग ५, पृ० ९५ से भी।

४१३. सच्ची अन्तर्दृष्टि

एक आर्यसमाजी भाईने हिन्दीमें एक लम्बा पत्र भेजा है, जिसका सारांश नीचे दिया जाता है:

(१) समाजमें उच्च स्थान प्राप्त करनेके लिए हरिजन, हिन्दू ही बने रहें अथवा मुसलमान या ईसाई बनकर भी वे ऊँचा स्थान प्राप्त कर सकते हैं?

(२) किसी व्यक्तिकी अस्पृश्यता क्या उसकी जातिके नामसे नहीं जानी जाती है?

(३) यदि हिन्दू-धर्ममें अस्पृश्यताको मिटाना है, तो अस्पृश्योंसे आर्य-समाजी बननेके लिए क्यों न कहा जाये?

(४) हिन्दू-धर्ममें ऐसी कौन-सी विशेषता है जिससे हिन्दू इसी धर्मसे चिपटे रहें?

इन प्रश्नोंसे मुझे मालूम होता है कि हम जो सुधार करना चाहते हैं, उसका सच्चा स्वरूप प्रश्नकर्त्ताकी समझमें नहीं आया है। 'हरिजन' के पृष्ठोंमें प्रति सप्ताह यह बात स्पष्ट की जा रही है कि सुधार तो तथाकथित उच्च जातियोंको अपना ही करना है। अस्पृश्यताकी भावना और ऊँच-नीचका भेद उन्हें अपने दिलसे निकाल देना है। उन्हें प्रायश्चित्त करना है और आत्मशुद्धि करनी है। उन्हें हरिजनोंके कल्याणके लिए और उनके संरक्षकके रूपमें नहीं, बल्कि अपने कल्याणके लिए और उनके सेवकके रूपमें हरिजनोंके संसर्गमें आना है। अतः हरिजनोंके हिन्दू-धर्म छोड़ देनेसे यह उद्देश्य पूरा नहीं हो सकता।

मेरे विचारमें, प्रश्नकर्त्ता जितना समझते हैं, धर्म उससे कहीं अधिक गहरी वस्तु है। धर्मका उद्देश्य सुख-सुविधा अथवा मनुष्यकी सामाजिक या आर्थिक स्थितिको सुधारना नहीं है। ऐसे लोगोंके उदाहरण मिलते हैं जो सामाजिक बहिष्कार, आर्थिक विनाश और उससे भी विकट परिस्थितियोंका सामना करते हुए भी अपने धर्मपर अटल रहे हैं। भारी-से-भारी संकटमें हमारा धर्म ही हमें सत्यपर स्थिर रखता है। इहलोक और परलोकमें मनुष्यकी आशाओंका सबसे दृढ़ आधार धर्म ही है।

१ गांधीजी को यह ३ नवम्बर, १९३२ को मिली थी, देखिए खण्ड ५१, पृ० ३५६-७।

अन्य सब अवलम्बोसे अधिक ईश्वरमे, सत्यमे धर्म ही मनुष्यकी श्रद्धा कायम रखता है। इसलिए हरिजनोका कल्याण किसमे है, यह तो हरिजन ही निश्चित कर सकते है, लेकिन उनके स्थानपर यदि मैं होऊँ, तो धर्मान्तरसे मुझे तो कभी सन्तोष न हो। व्यावहारिक दृष्टिसे विचार करनेपर मुझे प्रतीत होता है कि हरिजन और सवर्ण एक-दूसरेके साथ इतने अधिक घुले-मिले है कि अधिकाश हरिजन हिन्दू बने रहनेके सिवा और कुछ कर ही नही सकते। हरिजनोकी इस लाचारीके कारण ही सवर्णोपर इस बातकी दूनी जवाबदेही आ पड़ी है कि वे हरिजनोको, उनमे कुछ बुरी आदते होते हुए भी, हिन्दू-समाजमे प्रतिष्ठाका स्थान दे और युगोसे उनके साथ होते आ रहे अन्यायोको अब धोकर बहा दे। वास्तवमे, हरिजनोमे जो भी बुरी आदते दिखाई देती है, उनका कारण सवर्णोकी उनके प्रति उपेक्षा ही है। उन दोषोको तुरन्त दूर करनेका उपाय केवल यही है कि अस्पृश्यता मिटायी जाये और हरिजनोको, जैसे वे है वैसे ही, पूरी तरहसे हिन्दू-रूपमे अपना लिया जाये।

दूसरे प्रश्नका जवाब 'हाँ' मे दिया जा सकता है। इस प्रश्नसे यही प्रकट होता है कि अस्पृश्यता कितनी बे-बुनियाद चीज है। अगर हरिजन अपनी जातिका नाम छिपाकर अपनेको केवल हिन्दू ही बताये, तो वे अपने गाँव और पड़ोसके सिवा और सब कही बडे आरामसे सामान्य हिन्दूकी तरह रह सकते है और बहुधा वे ऐसा करते भी है। किन्तु जो दृष्टिकोण मैंने सुझाया है उसके अनुसार तो इस तरहकी चालाकी हरिजनोके सन्तापको और भी अधिक दिनोतक कायम रखेगी, क्योकि इस तरह सवर्णोके हृदयसे 'उच्चता' और छुआछूतका भूत कभी दूर नही हो सकता।

अब मै तीसरे प्रश्नपर आता हूँ। मैं जो-कुछ ऊपर लिख चुका हूँ, उससे स्पष्ट हो जाता है कि हरिजनोंको आर्यसमाजी बनानेसे कठिनाई हल नही होती। हरिजनोके आर्यसमाजी हो जानेसे, उन करोड़ों लोगोका, जो आर्यसमाजी नहीं है, हृदय द्रवित नही हो सकता। आवश्यकता इस बातकी है कि 'उच्च' हिन्दूका हृदय द्रवित हो। पूरे हिन्दू-धर्मकी शुद्धि जरूरी है। मैं जो-कुछ करना चाहता हूँ और हरिजन सेवक सघ जो-कुछ करना चाहता है, वह इस युगका महानतम सुधार है। इस कार्यमे पूरी सफलता मिलनेमे देर लग सकती है, पर उसकी कोई चिन्ता नही है। कैसी भी कठिनाईसे न घबरानेवाले और अपने आदर्शको किसी भी कारण नीचे न गिरानेवाले सुधारक यदि काफी सख्यामे हो, तो यह सुधार अवश्य सफल होगा। सुधारकोके मनमे अगर यह बात बैठ जाये कि हिन्दू-धर्मको जीवित रखनेके लिए अस्पृश्यताका अन्त अनिवार्य है, तो वे न तो कभी घबरायेगे और न अपने आदर्शको ही नीचे गिरने देगे।

चौथा प्रश्न द्वेषपूर्ण है। इसकी चर्चासे शायद कोई लाभ भी नही है, तो भी मेरे लिए इसका जवाब देना ठीक होगा। कारण, कि मैं धर्मका क्या अर्थ करता हूँ, कम-से-कम यह तो स्पष्ट कर ही सकूँगा। धर्मके लिए सबसे सही, यद्यपि बहुत ही अधूरी, उपमा मै विवाहकी दे सकता हूँ। विवाह-सम्बन्ध अटूट है या हुआ करता था। धर्मका सम्बन्ध उससे भी अधिक अटूट है। पतिकी पत्नीमे और पत्नीकी पतिमे निष्ठा

इस कारण नहीं है कि पति अपनी पत्नीको तमाम स्त्रियोंसे श्रेष्ठ मानता है या पत्नी अपने पतिको तमाम पुरुषोंमें श्रेष्ठ मानती है। उसके मूलमें कोई अवर्णनीय और अटूट आन्तरिक आकर्षण होता है। इसी प्रकार मनुष्यकी अपने धर्ममें निष्ठा होती है, जो किसी भी तरह दूर नहीं की जा सकती। ऐसी निष्ठामें ही मनुष्यको पूर्ण सन्तोष मिलता है। और जैसे पतिको पत्नीमें निष्ठा रखनेके लिए अन्य स्त्रियोंको उससे हीन माननेकी आवश्यकता नहीं होती, वैसे ही अपने धर्ममें निष्ठा रखनेवालेके लिए अन्य धर्मोंको उससे हीन माननेकी आवश्यकता नहीं है। इसी उपमाको और अधिक विस्तृत करते हुए कहा जा सकता है कि पतिको अपनी पत्नीमें निष्ठा रखनेके लिए जैसे उसके दोषोंसे अनभिज्ञ रहनेकी आवश्यकता नहीं है, वैसे ही व्यक्तिको अपने धर्ममें निष्ठा रखनेके लिए उसके दोषोंसे अनभिज्ञ रहनेकी आवश्यकता नहीं है। वस्तुत, यदि अपने धर्मपर अन्धविश्वास नहीं, बल्कि सच्ची निष्ठा रखनी हो, तो अपने धर्मके दोषोंका तीव्र बोध होना चाहिए और उन दोषोंके समुचित उपचार की उत्कट इच्छा होनी चाहिए। धर्मके विषयमें मेरा ऐसा विश्वास होनेके कारण, हिन्दू-धर्मकी खूबियोंकी जांचकी यहाँ आवश्यकता नहीं है। पाठक विश्वास रखें कि यदि मैं इस धर्मकी बहुत-सी खूबियोंसे भिज्ञ न होता तो अबतक हिन्दू न रहता। पर ये खूबियाँ मेरे ही धर्ममें हैं, अन्य धर्मोंमें नहीं हैं, यह मैं नहीं मानता। इसलिए, अन्य धर्मोंका अध्ययन मैं छिद्रान्वेषी आलोचककी दृष्टिसे नहीं, बल्कि एक जिज्ञासु भक्तकी दृष्टिसे करता हूँ। अन्य धर्मोंमें अपने धर्मकी-सी खूबियाँ देखने और जो अच्छाई अपने धर्ममें न हो और अन्य धर्मोंमें हो, उसे अपने धर्ममें शामिल करनेकी आशासे ही मैं अन्य धर्मोंका अध्ययन करता हूँ।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १२-८-१९३३

४१४. पत्र : बम्बई सरकारके गृह-सचिवको

१४ अगस्त, १९३३

सरकारके सचिव
गृह-विभाग
पूना

प्रिय महोदय,

आज सोमवारका दूसरा पहर भी हो गया और उपवाससे पहले जिन शर्तोंपर मैं हरिजन-कार्य करता था, उन्हीं शर्तोंपर वह काम करने देनेकी मेरी प्रार्थनाका अभीतक मुझे कोई जवाब नहीं मिला है। मैंने यह प्रार्थना अहमदाबाद सैन्ट्रल जेलसे १ तारीखको की थी, उसके बाद मैं और तीन बार[1] यही प्रार्थना कर चुका हूँ।

१. ४, ६, ८ और १० अगस्तको, देखिए पृ० ३६१, ३६५-६ और ३६७-८।

इस कामसे वंचित रखनेके कारण मेरे मनपर जो बोझ पड़ रहा है, वह असह्य है। इसलिए अगले बुधवारकी दोपहरतक यदि मुझे अनुमति न मिली, तो उसी वक्तसे मैं पानी और नमकके सिवाय और किसी प्रकारका आहार लेना बन्द कर दूँगा। अपनी प्रतिज्ञाका पालन करने और उपरोक्त बोझको कुछ हल्का करनेका यह एक ही रास्ता है। आहार बन्द करनेकी जो बात मैं कह रहा हूँ, मैं नहीं चाहता कि उससे सरकारपर किसी भी तरहका दबाव पड़े। हरिजन-सेवा यदि मैं बिना रोकटोकके न कर सकूँ, तो फिर जीवनमें मुझे कोई दिलचस्पी ही नहीं रह जाती। जैसाकि मैंने पहलेके अपने पत्र-व्यवहारमें स्पष्ट कर दिया है, और जैसाकि भारत सरकार स्वीकार कर चुकी है, उक्त सेवा करने देनेकी अनुमति यरवदा-समझौतेमें निहित ही है और ब्रिटिश सरकार जिस हदतक उसकी स्वीकृति जरूरी थी, उस हदतक उसे स्वीकार करनेवाला दूसरा पक्ष है। इसलिए मैं चाहता हूँ कि अनुमति मुझे तभी मिले जब सरकार यह मानती हो कि मुझे अनुमति देनेमें न्याय है। मुझे केवल इसलिए अनुमति न दी जाये कि यदि न दी गई तो मैं उपवास करूँगा। उपवास करनेकी बात तो सिर्फ मेरे अपने सन्तोषके लिए है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९०१) से। बॉम्बे सीक्रेट एक्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) (१४) भाग ५, पृ० ९७ से भी।

४१५. पत्र : आर० बी० मार्टिनको

१४ अगस्त, १९३३

प्रिय कर्नल मार्टिन,

सहपत्र[1] पढ़कर जितनी जल्दी हो सके उसे उपयुक्त स्थानपर भेजनेकी कृपा करें। निश्चय ही, अगर हरिजन-कार्यके सम्बन्धमें मेरी प्रार्थनाका अबतक कोई जवाब न मिला हो, तभी यह जरूरी है।

हृदयसे आपका,

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल सं० २०-१३, १९३३

१. देखिए पिछला शीर्षक।

४१६. पत्र : आर० वी० मार्टिनको

१५ अगस्त, १९३३

प्रिय कर्नल मार्टिन,

सरकारकी तरफसे आपको जो दो पत्र मिले हैं, उनके बारेमे मुझे यह कहना है :

(१) सरकारको मैंने १० तारीखको जो पत्र[1] लिखा था, उसके उत्तरमे 'हरिजन' के लेख उसके कार्यवाहक सम्पादकको देने और उसी सिलसिलेमे उन्हे हिदायतें देनेकी मुझे अनुमति दे दी गई है, इसके लिए मै आभारी हूँ। पर यह अनुमति मेरी तात्कालिक आवश्यकताओको पूरा नही करती। रोज आनेवाले पत्रोसे सम्पर्क रखे बिना, 'हरिजन' के लिए कुछ भी उपयोगी लिखना मुश्किल है। अस्पृश्यताके बारेमे पत्र-व्यवहार करनेवालोंके साथ सम्पर्क रखना भी 'हरिजन' के सम्पादन जितना ही जरूरी है। उदाहरणके लिए, एक हरिजन पाठशालाके विषयमे मेरी देखरेखमे एक कठिन प्रयोग चल रहा है। उस पाठशालाको सफल बनानेके लिए उसके शिक्षकके साथ मेरा बराबर सम्पर्क जरूरी है। आश्रमकी कुछ लडकियो और लडकोको मैंने एक हरिजन छात्रालयमे रखा है। इस प्रकारका शायद यह पहला ही प्रयोग है। मै इसपर बराबर ध्यान न दूं तो यह चल नही सकता। यह उसी दिन शुरू किया गया था जिस दिन कि मै पकडा गया। जिन मामलोपर मेरा खुद ध्यान देना जरूरी है उनके बहुत-से उदाहरणोमे से मैंने यहाँ सिर्फ दो ही दिये है।

इसलिए कम-से-कम इतना तो मै तत्काल चाहता हूँ :

(क) आपके पास मेरे जो पत्र हो, वे मुझे सौप दिये जाये और उनमे जितना कुछ अस्पृश्यता-सम्बन्धी हो, उसका जवाब देनेकी मुझे अनुमति दी जाये,

(ख) 'हरिजन' कार्यालयमे जो पत्र आये, वे मुझे दिये जाये और उनके सम्बन्धमे जो-कुछ कर्त्तव्य है वह करने दिया जाये,

(ग) आपके पास और 'हरिजन' कार्यालयमे मेरे लिए जो अखबार आये वे मुझे दिये जाये, ताकि उनमे अस्पृश्यताके प्रश्नोपर जो चर्चा हो, उसके बारेमे मै उचित कार्यवाही कर सकूं।

मेरी प्रार्थनाके बारेमे अन्तिम आदेश तो अभी विचाराधीन है, पर यदि इस बीच उपरोक्त तीन बातोकी अनुमति मुझे मिल जाये, तो कल सरकारको लिखे पत्र[2] के अनुसार मुझे कल दोपहरसे उपवास करनेकी जरूरत नही होगी। यह अनुमति यदि आज प्राप्त की जा सके, तो मै काकासाहब कालेलकर या आनन्द हिंगोरानीसे आज ही मिलना चाहता हूँ। काम जारी रखनेके लिए कुछ लेख तब मै उन्हे दे सकूँगा।

१. देखिए पृ० ३६८-९।
२. देखिए पृ० ३७१-२।

(२) आपके पास मेरे नाम आये जो पत्र हैं, उनको निपटानेके बारेमें सरकारके पत्रमे जो-कुछ कहा गया है उसका जवाब उपरोक्त मे ही आ जाता है। वर्गीकरणके नियमोंके अनुसार मुझे पखवाड़ेमे एक पत्र मिल सकता है, जिसे लेनेकी मेरी इच्छा नहीं है। मेरे नाम आये पत्रोमे से ज्यादातर अस्पृश्यतासे ही सम्बन्ध रखनेवाले होंगे, और उनपर मुझे खुद ही ध्यान या हिदायतें देनी होगी। मेरे नाम आये पत्र यदि मुझे दे दिये जाये तो जो अस्पृश्यतासे सम्बन्धित नही होगे, उन्हे मै खुशीसे लौटा दूँगा। इन पत्रोंमे कुछ कारोबारी हो सकते हैं। इस तरहके पत्रोंके बारेमें मैं सरकारसे हिदायतें मागूँगा। हकीकत यह है कि राजनैतिक मामलोंके अलावा मेरे बहुत-से सार्वजनिक कार्य है। इसलिए, जैसाकि मैंने आज सुबह आपको बताया था, मेरे साथ व्यवहारका न्यायोचित मार्ग यही है कि सविनय अवज्ञामे मैं प्रत्यक्ष या परोक्ष किसी भी रूपमे भाग नही लूँगा — यह आश्वासन मुझसे ले लेनेके बाद, ५ तारीखके पत्र[1] मे मैंने जो सुविधाएँ माँगी है वे सब मुझे दे दी जाये।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९०२) से। बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) (१४), भाग ५, पृ० ९९-१०१ से भी।

४१७. पत्र : आर० बी० मार्टिनको

१६ अगस्त १९३३

प्रिय कर्नल मार्टिन,

चूँकि मेरे कलके पत्रमे की गई प्रार्थनाका कोई जवाब नहीं मिला है, मेरा उपवास, जैसाकि पत्रमे पहले ही सूचित कर दिया गया है, आज दोपहरसे शुरू होता है। इसलिए दूध दोहनेके लिए बकरियाँ न भेजने और मीठे व खट्टे नीबू लानेके लिए किसीको बाजार न भेजनेके आवश्यक आदेश देनेकी कृपा करें।

मैं उपवास शुरू कर रहा हूँ, फिर भी यदि कोई आपत्ति न हो तो कृपया काकासाहब कालेलकरको फोन कर दीजिये कि आज वे जितनी जल्दी आ सकें हो आ जाये ताकि मै उन्हे 'हरिजन' के लिए वह पाण्डुलिपि जो पहले ही तैयार हो चुकी है, सौंपकर उन्हें निर्देश दे दूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९०३) से। बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) (१४), भाग ५, पृ० १०१ से भी।

१. देखिए पृ० ३६५-६।

४१८. पत्र: आर० बी० मार्टिनको

१६ अगस्त, १९३३

प्रिय कर्नल मार्टिन,

मुझे लगता है कि मैंने बेवकूफी और जल्दबाजीमे आपसे बकरियाँ मुझे फिरसे वापस कर देनेको कह दिया। इससे पता चल जाता है कि अनशन न करनेकी मेरी इच्छा कितनी प्रबल है। परन्तु आप आदेशोकी जो टिप्पणियाँ[1] मेरे पास छोड गये है उन्हे पढनेपर मुझे लगा है कि वे भारत सरकार द्वारा दिये गये पहलेके मूल आदेशो तथा मेरी अपेक्षासे बहुत घटकर है और इसलिए मुझे जल्दबाजी करके उपवास तोड नही देना चाहिए। यदि सरकार अपने उन आदेशोसे मुकरना चाहती है, तो मुझे इस बातका खेद होगा। परन्तु शायद मै इन नये आदेशोके अधीन काम नही करूँगा। ये मूल आदेशोसे स्पष्ट रूपमे भिन्न है, और फिर ऐसा लगता है कि इतना भी अनिच्छासे स्वीकार किया गया है। मै देख रहा हूँ कि जो पत्र आपके पास है, आप भी मुझे नही देना चाहते और आप यह भी नही चाहते कि पाण्डुलिपि इस सप्ताहके 'हरिजन' के लिए कार्यवाहक सम्पादकको दी जाये। यह पत्र लिखनेमे मुझे बडा दु:ख हो रहा है, लेकिन अगर मै इस वक्त उपवास तोड दूँ और फिर बहुत-से उन मामलोमे जिनके स्पष्टीकरणकी आवश्यकता है, सरकारके साथ लम्बे अरसेतक चलने-वाले झगडेमे पडूँ, तो मुझे और भी ज्यादा कष्ट होगा। जिस सावधानीसे मै जेलके अनुशासनका पालन करनेकी कोशिश कर रहा हूँ और कैदी होते हुए भी मै जो सहयोग देता हूँ, उसके प्रति सरकारकी सही प्रतिक्रियाका अभाव मुझे खटकता है। जेलकी दीवारोसे बाहर एक नागरिककी हैसियतसे इस तरहके सहयोगका हाथ न बढाना मै अपना धार्मिक कर्त्तव्य मानता हूँ। मैंने आपकी टिप्पणियाँ तीन बार पढी है और हर बार यह देखकर मुझे और ज्यादा दु:ख हुआ है कि सरकार इस बातको सही ढगसे नही समझ पा रही कि मुझे किसी सुविधा या रुकावट की परवाह किये बिना हरिजन-कार्य करनेकी कितनी ज्यादा जरूरत है। इसलिए

१. १६ अगस्तको गांधीजी को सूचना दी गई थी कि केवल अस्पृश्यता-विरोधी कामके लिए ही उन्हें निम्नांकित सुविधाएँ दी जायेंगी :

"(१) उन्हें समाचारपत्र और पत्रिकाएँ मिल सकती है परन्तु उन्हें समाचारपत्रोंमें छपनेके लिए समाचारपत्रोंके संवाददाताओंसे या किन्हीं दूसरे लोगोंसे भेंटकी अनुमति नही दी जा सकती। (२) दिनमें दो मुलाकातियोंसे मिल सकते है, दो से ज्यादा नहीं (३) वे *हरिजन* के सम्पादकको सप्ताहमें केवल तीन बार आदेश या लेख वगैरह दे सकते है और दूसरे संवाददाताओंको भी एक सीमित संख्यामें पत्र दे सकने हैं (४) जिनकी हरिजन-कार्यके लिए जरूरत हो ऐसी पुस्तकें और समाचारपत्र और एक कैदी टाइपिस्ट उनके पास रह सकता है।" (*हिन्दू*, १९-८-१९३३) देखिए अगला शीर्षक भी।

हालांकि मैं उपवास जारी रखनेका इच्छुक नही हूँ, फिर भी मैं महसूस करता हूं कि यदि मैं हरिजन-कार्य उन जबरदस्त रुकावटोके बगैर नही कर सकता जो मुझे लगता है आपके आदेशोसे पड़ रही हैं, तो मुझे उपवास-कष्टको झेलना ही पडेगा।

इसलिए मुझे जो दूध और फल मिल चुके है आप कृपया उन्हे वापस मँगवा ले और मैंने जो जल्दबाजीमे आपसे उपवास तोड़नेके लिए कह दिया था, उसके लिए मुझे क्षमा करे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९०४) से। बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्राच, फाइल सं० ८०० (४०) (१४), भाग ५, पृ० १०३ से भी।

४१९. पत्र : आर० वी० मार्टिनको

१७ अगस्त, १९३३

प्रिय कर्नल मार्टिन,

आज सुबहकी हमारी बातचीतके सन्दर्भमे, मेरे उपवास तोडनेसे पहले नीचे लिखे मुद्दोका समाधान हो जाना चाहिए.

१. काकासाहब कालेलकर या श्रीयुत आनन्द हिगोरानीसे, उन्हे पाण्डुलिपि और हिदायते देनेके लिए, आज दोपहर बारह बजेसे पहले मेरी मुलाकात होनी चाहिए।

२ आपके पास जितने भी पत्र और समाचारपत्र है वे, १५ तारीखके मेरे पत्रमे उल्लिखित शर्तके साथ, मुझे मिलने चाहिए।

३. आपने जो टिप्पणियाँ[१] मुझे दिखाई वे मुझे इस चीजके लिए बाध्य करती है कि भेटे समाचारपत्रोमे प्रकाशित नही होनी चाहिए। यह भौतिक रूपसे असम्भव है, क्योकि जो लोग मुझसे मिलने आते है उनपर मैं नियन्त्रण नही रख सकता। मैं केवल उन्हीसे मुलाकात करूँ जो मेरा अनुशासन माने, यह अपेक्षित नही है। मित्रोंकी अपेक्षा शायद कट्टर विरोधियोसे ही मुझे अधिक मुलाकात करनी होगी।

४. इन टिप्पणियोंमे प्रतिदिन दो मुलाकातियोकी बात कही गई है। यदि मुझपर इस तरह नियन्त्रण रखा गया, तो मैं आन्दोलनका कभी भी सचालन नही कर सकूंगा। यदि मुझे लोगोको प्रभावित करना है, तो जितने भी मुलाकाती आयें उन सबसे मुझे मिलना होगा।

५ एक ऐसे पत्रकारकी हैसियतसे जो इस धन्धेमे २९ वर्षसे है, मैं यह कह सकता हूँ कि सम्पादकको सप्ताहमे तीन बार हिदायते भेजनेका जो प्रतिबन्ध है वह

१. देखिए पिछला शीर्षक।

बिल्कुल अव्यावहारिक हैं। साथ ही यह चीज भी साफ नही है कि सम्पादक या सम्पादकोको खुद मुझसे मिलनेकी अनुमति है या नही।

६. इन टिप्पणियोमे यह भी अपेक्षित है कि अन्य सवाददाताओको सीमित सख्यामे ही पत्र भेजे जाये। मुझे नही मालूम की 'सीमित' शब्दसे सरकारका क्या अभिप्राय है। पिछली छूटमे मुझे औसतन प्रतिदिन कोई तीस पत्र भेजने पडते थे।

७. इन नोटोमे पत्रोके बारेमे कुछ नही है। मै यह माने लेता हूँ कि यह चीज जान-बूझकर नही छोडी गई है और मुझे सभी पत्र और समाचारपत्र, चाहे वे आपको मिले या 'हरिजन' कार्यालयको, मिलते रहेगे। पर, उनपर मेरा कार्य कडाईसे अस्पृश्यतातक ही सीमित रहेगा।

अब आप यह देख सकेगे कि मेरी अपेक्षाओ और जो रियायते सरकार मजूर करनेको तैयार है उनके बीच एक खाई रहती है। यदि सरकार मुझे अस्पृश्यता-निवारणके इस जबरदस्त आन्दोलनको, जो लाखो मानव प्राणियोको प्रभावित कर रहा है, चलानेकी अनुमति देना चाहती है, तो पिछली छूटके अधीन जारी किये गये भारत सरकारके आदेश पूरी तरह लागू होने चाहिए। उनमे मेरा निवेदन साफ-साफ स्वीकार कर लिया गया था और इसलिए उसका उनमे पूर्ण उत्तर था। इन नोटोमे वह मुझे बिलकुल नही मिलता। जहातक मुझे मालूम है, मैने इस नीति-परिवर्तनके लिए कोई कारण पैदा नही किया है। मैने जो प्रार्थना की है यदि उसकी अनुमति मुझे दे दी गई, तो मै इस बातका पूर्ण आश्वासन दे सकता हूँ कि मै उससे कोई अनुचित लाभ नही उठाऊँगा, मै अपने-आपको कडाईके साथ अस्पृश्यता-निवारणके कार्यतक ही सीमित रखूँगा और, अपनी योग्यतानुसार, जेलके कर्मचारियोकी सुविधाका अधिक-से-अधिक खयाल रखनेकी कोशिश करूँगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

[पुनश्च]

मै यह माने लेता हूँ कि कैदी टाइपिस्ट आशुलिपिक भी है और यदि हर चीज सन्तोषजनक रूपसे हल हो गई तो, पहलेकी तरह, मुझे श्रीयुत महादेव देसाई और छगनलाल जोशीकी सहायता मिलने लगेगी।

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९०५) से। बॉम्बे सीक्रेट एब्सट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेट, स्पेशल ब्राच, फाइल स० ८०० (४०) (१४), भाग ५, पृ० १०५-७ से भी।

४२०. गुण बनाम परिमाण

इसमे शक नही कि किसी ध्येयमे लगे कार्यकर्त्ता अपने परिश्रमके परिणामोमे गुणकी अपेक्षा परिमाणकी ओर ही अधिक आकर्षित होते है। हरिजन सेवक सघ द्वारा अस्पृश्यता-निवारणका जितना काम पूरे भारतमे हुआ है, वह कुल मिलाकर किसी तरह असन्तोषजनक नही है। मगर हम उसे जब प्रत्येक प्रान्तमे अलग-अलग फैलाकर देखते है, तो वह कार्य मानो 'मनमे कण' के समान दिखाई देता है। हमारा लक्ष्य हिन्दू-धर्ममे अस्पृश्यता अर्थात्, ऊँच-नीचकी भावनाका मूलोच्छेदन करना है। इस लक्ष्यकी पृष्ठभूमिमे देखनेपर तो हमारा अबतकका कार्य और भी क्षुद्र मालूम होता है। इसीलिए अपने अन्तिम-उपवासके बाद जिन दिनो मै आरोग्य लाभ कर रहा था, उन दिनो आयोजित हरिजन सेवकोकी सभाओमे निराशा साफ झलकती थी। पर मुझमे स्वय कोई निराशा नही थी। कारण कि मेरा मन केवल गुण ही देखता था, जबकि मेरे साथी, जाने या अनजाने, परिमाणका विचार कर रहे थे।

पचास उदासीन शिक्षकोकी अपेक्षा मै एक श्रेष्ठ शिक्षकको अधिक पसन्द करूँगा। यदा-कदा पाठशालामे आनेवाले पचास बालकोसे पाँच बालकोकी नियमित उपस्थिति मुझे अधिक सन्तोष देगी। चुने हुए छोटे-छोटे व्यवस्थित क्षेत्रोपर पाँच सेवकोका पूरी तरह ध्यान देना मै ज्यादा अच्छा समझता हूँ, बजाय इसके कि वे किसी विशाल क्षेत्रको लेकर तो बैठ जाये, पर उसपर पूरी तरह ध्यान न दे पाये।

किसी भी आन्दोलनमे गुणपर अधिक ध्यान देना अच्छा होता है। और अस्पृश्यता-निवारण-जैसे विशुद्ध धार्मिक आन्दोलनमे तो यह बात खास तौरपर जरूरी है। गुणकी उपेक्षासे धर्ममे विनाशतककी सम्भावना हो सकती है। यदि शिक्षक सिर्फ कामचलाऊ हो, बच्चे मनमौजी हो और कार्यकर्त्ता हरिजनोसे व्यक्तिगत सम्बन्ध स्थापित किये बिना जगह-जगह यो ही चक्कर लगाते फिरे, तो पता चलेगा कि दस वर्षके प्रयत्नके बाद भी हरिजनो और सवर्ण हिन्दुओके हृदय द्रवित नही हुए है, और उसका नतीजा यह हो सकता है कि हरिजन और सवर्ण दोनो ही इस आन्दोलनके विरोधी हो जाये।

धार्मिक आन्दोलनमे श्रद्धाका स्थान बड़े महत्त्वका होता है। अतः कई तत्त्व अज्ञात और अज्ञेय ही रहते है। धार्मिक आन्दोलनकी समय-समय पर उस तरह माप-जोख नही की जा सकती जैसेकि साधारण आन्दोलनोकी की जा सकती है, कारण कि उन आन्दोलनोके तत्त्व अधिकाशमे जाने हुए और अपने अधिकारमे होते है। अगर मुझे दस लाख गज खादी तैयार करनी हो, तो रुई और कातने-बुननेवालोंके मौजूद होनेपर मै कह सकता हूँ कि वह माल कबतक तैयार हो जायेगा। पर यदि मुझे पाँच हिन्दुओके हृदय द्रवित करने हों और उन्हे अस्पृश्यतासे मुक्त करना हो,

तो मैं नही बता सकता कि वह कार्य कबतक पूरा हो सकेगा, या कभी पूरा हो भी सकेगा या नही। मुझे तो केवल इसी विश्वाससे काम करना होगा कि मेरा कार्य न्यायोचित है और यदि इस कार्यके लिए मैं मन, वचन और कर्मसे पवित्र हूँ, तो जिन पाँच हिन्दुओके बीच मुझे कार्य करना है उनके मैं हृदय द्रवित करके ही रहूँगा। अत अपने कार्यके विषयमे मैं निराश नही हो सकता, अपना कार्यक्षेत्र भी मैं बदल नही सकता और न महत्वाकाक्षावश, अपनी शक्तिके बाहर अपना कार्यक्षेत्र ही बढा सकता हूँ। इसके विपरीत, मुझमे यह विश्वास होना चाहिए कि धैर्य और विनम्रतामे मैं केवल इन पाँच हिन्दुओको ही प्रभावित नही कर सकूँगा, बल्कि पाँचमे सफल होनेके बाद पचास लाखको प्रभावित करनेमे भी मुझे बहुत समय नही लगेगा। "श्रद्धा पर्वतोको भी हिला सकती है" अथवा "जो लोग मेरे लिए और योगयुक्त होकर काम करते हैं, उन्हे मैं सदा विजय-लाभ कराता हूँ," इन वचनोका यही अर्थ है, दूसरा नही।

इसलिए हमे जिस चीजकी आवश्यकता है, वह है अपरिमित श्रद्धा और उसे अनुप्राणित करनेवाला निष्कलक चरित्र। मलिन मन धार्मिक भावनासे मेल नही खाता। चरित्रकी निष्कलकतामे यहाँ अभिप्राय है मन, वचन और कर्ममे सत्य, प्रेम और शुचिताका होना। हममे यदि ये गुण नही है तो हमारा प्रभाव न तो सवर्णो पर पडेगा और न हरिजनोपर। अगर हममे यह त्रिविध शुद्धि नही है, तो हम दोनोमे से किसीका भी हृदय जीत नही सकेगे और इस तरह अपनेको ही नही, बल्कि अपने इस महान सेवा-कार्यको भी बदनाम करेगे।

इसलिए यह कहनेमे मुझे तनिक भी हिचकिचाहट नही है कि अपने इस अस्पृश्यता-निवारण आन्दोलनमे यदि हम गुणपर ध्यान रखे, तो परिमाण तो अपने-आप बढ जायेगा। यह बतानेकी आवश्यकता नही है कि गुणके विषयमे जो-कुछ ऊपर कहा गया है, वह सवर्ण कार्यकर्त्ताओं और हरिजन कार्यकर्त्ताओ दोनोपर ही लागू होता है। अगर हरिजन कार्यकर्त्ता अपने समाजमे नैतिक सुधार — पहले मैं क्रान्ति कहना चाहता था — करना चाहते हैं, तो वे ऐसे निष्कलक और सच्चे कार्यकर्त्ता उत्पन्न करे जो परिमित क्षेत्रोमे एकाग्रचित्त सेवाकार्य करते हुए लोगोसे निजी सम्पर्क स्थापित कर सके।

[अग्रेजीमे]
हरिजन, १९-८-१९३३

४२१. पत्र : बम्बई सरकारके गृह-सचिवको

१९ अगस्त, १९३३

सरकारके सचिव
गृह-विभाग
पूना

प्रिय महोदय,

कर्नल मार्टिनने मुझे उनके नाम १७ तारीखके मेरे पत्र[1] के उत्तरमे आपके पत्र[2] की एक नकल देनेकी कृपा की है। मुझे यह कहते दुख होता है कि आपका उत्तर मेरे बुरे-से-बुरे भयोको सच सिद्ध करता है। जहाँ मै यह सोचता था कि कुछ मुद्दोकी और भी अनुकूल व्याख्या सम्भव है, वहाँ आपके उत्तरसे अब यह स्पष्ट हो जाता है कि इस तरहकी व्याख्याका मुझे कोई अधिकार न था। इसलिए आपके पत्रके विविध मुद्दोकी चर्चा करना मेरे लिए अनावश्यक है।

लेकिन श्री एन्ड्रयूजके द्वारा मै अब यह समझा हूँ कि भारत सरकारके जिन आदेशोका मै पहले उल्लेख कर चुका हूँ, उनकी पूर्ति मे सरकारके सामने कठिनाई यह है कि मै अब राजबन्दीकी बजाय एक दण्डित बन्दी हूँ। वह [पिछली] नीति सरकारने स्पष्ट रूपसे निर्धारित की थी, और वह रियायतके तौरपर नही बल्कि, जैसा कि भारत सरकारने स्वीकार किया था, इसलिए निर्धारित की थी "क्योकि यह आवश्यक है कि उन्हे (मुझे) ऐसे मामलोंपर जो कडाईसे अस्पृश्यता-निवारण तक ही सीमित हों, मुलाकातियो और पत्र-व्यवहारकी स्वतन्त्रता होनी चाहिए," "क्योकि प्रकाशनपर कोई प्रतिबन्ध नही है।" उस नीतिको बिलकुल छोड देनेका कारण यदि यही हो, तो यह बात मेरी समझमे नही आती कि जो मेरे लिए [पहले] आवश्यक समझा गया था, वह मेरे दण्डित बन्दी होनेके कारण अब उतना आवश्यक क्यों नही रहा। मै यह कहता हूँ कि जिस तरह सरकारने, मेरे दण्डित बन्दी होनेके बावजूद, मेरी भौतिक आवश्यकताओको स्वीकार किया है और पूरा किया है, उसी तरह सरकारको अस्पृश्यता-सम्बन्धी मेरी आत्मिक आवश्यकताओको भी पूरी तरह स्वीकार करना चाहिए।

आपके पत्रके अन्तिम अनुच्छेदसे मुझे कष्ट पहुँचा है। उसमे जो बात स्मरण कराई गई है उससे मेरे आहत मनको और चोट लगी है। कारण; कि मै सरकारसे अनेक

१. देखिए पृ० ३७६-७।

२. १८ अगस्तको वाइसराय द्वारा राज्य-मंत्री, लंदनको भेजे गये तारमें इसका सारांश है; देखिए परिशिष्ट १२।

वार यह कह चुका हूँ कि सत्याग्रह, आजकी परिस्थितियोमे, मेरे धार्मिक विश्वासका अग है। परन्तु मै यह स्वीकार करता हूँ कि जिसे मैं पूर्णतया न्यायोचित और नैतिक कार्य समझता हूँ, सरकार उसे न्यायविरुद्ध और शायद अनैतिकतक समझती है। इसलिए मुझे न केवल वर्तमान कारावासकी स्वाभाविक अवधिके लिए, बल्कि जब तक भारत स्वतन्त्र न हो जाये तबतकके लिए उसका बन्दी होनेको तैयार रहना चाहिए। बेशक, यह तभी सम्भव है जब मै उस दिनको देखनेतक जीवित रह सकूँ, यानी, यदि इस बातकी कोई सम्भावना अभी भी बाकी हो कि सरकार अपने पवित्र दायित्वको पूरा करेगी और मै जिस अग्निपरीक्षामे से गुजर रहा हूँ उसमे सही-सलामत पूरा उतर पाऊँगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९०६) से। बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्राच, फाइल स० ८०० (४०) (१४), भाग ५, पृ० १०९-११ से भी।

४२२. पत्र : आर० वी० मार्टिनको

१९ अगस्त, १९३३

प्रिय कर्नल मार्टिन,

पिछले तीन-चार दिनसे आप मुझे 'टाइम्स ऑफ इंडिया' की कटी-छँटी प्रतियाँ भेज रहे हैं। मेरा अनुमान यह है कि यह काट-छाँट मेरे उपवासके उल्लेखोके कारण है। यदि मेरा अनुमान सही है तो मेरे खयालमे यह काट-छाँट मेरे प्रति न्याययुक्त नही है। सरकार द्वारा या उसकी ओर से यदि कुछ कहा गया है, तो वह क्या है कम-से-कम यह तो मुझे पता लगना ही चाहिए, ताकि समाचारपत्रोमे निकलनेवाले वक्तव्योमे यदि कुछ ऐसा हो जो मुझे अनुचित लगे, तो मै सरकारके आगे अपना निवेदन रख सकूँ। सभी सम्बन्धित पक्षोके प्रति न्याय हो, इस दृष्टिसे मै यह सुझाव रखूंगा कि मेजर भडारीके नाम २९ सितम्बर, १९३२ के मेरे पत्र[1] से, जो हरिजन-कार्य करनेकी मेरी प्रार्थनाके बारेमे है, शुरू हुआ सारा पत्राचार यदि अभीतक प्रकाशित नही किया गया हो तो अब प्रकाशित कर दिया जाये।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९०७) से। बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्राच, फाइल स० ८०० (४०) (१४), भाग ५, पृ० ११३ से भी।

१. देखिए खण्ड ५१।

४२३. एक मूक हरिजन-सेवक

सन् १९१९ मे जिन दिनो मैं मणि भवनमे बीमार होकर बिस्तरपर पड़ा था, एक हृष्ट-पुष्ट सज्जन मुझसे मिलने आये। मुझे कुछ ऐसी याद है कि वे थोड़ा पैसा भी साथ लाये थे। मैंने उनसे पूछा, "आप किसके चिरजीव है?" जवाब मिला, "मैं भावनगरके हरिप्रसादका लड़का हूँ।" सुनकर मुझे अपने पिताश्रीका समय याद आ गया। भावनगरके इस प्रसिद्ध कुटुम्बकी बात बचपनमे ही सुनी थी, इसलिए मैंने भाई यशवन्तप्रसादसे कहा, "तब तो हमारा पुराना नाता है। इसलिए मुझे आपको लूटनेका हक है?" यशवन्तप्रसादने जवाब दिया, "बेशक! मेरा जो-कुछ है उसे अपने कामके लिए ही समझिए।" उनके बारसीमे मिल आदि उद्योगोके बारेमे मैंने सुन रखा था। तबसे जो सम्बन्ध बना वह रोज-रोज बढ़ता चला गया और अन्तमे उसने पिता-पुत्र-जैसे सम्बन्धका रूप ले लिया। मेरी सभी हलचलोमे उनका भाग रहता ही था। खादी और दूसरी हलचलोमे वे अपनेको लुटाते रहते थे। मुझे किसी भी दिन उनसे भिक्षा नही मांगनी पड़ी। वे स्वय ही जब-तब मेरे हाथमे पैसे रखकर चले जाते थे।

यशवन्तप्रसाद शुद्ध हरिजन-सेवक थे। उन्होने अपने और हरिजनोके बीच कभी भेद रखा ही नही। पहले-पहल जब खादीका काम शुरू हुआ तब भी उनकी नजर एकदम हरिजनोपर गई और बुनाई कामका जीर्णोद्धार करनेका जिम्मा अपने हाथमे लिया। वे जानते थे कि काठियावाड़के बुनकरोका धन्धा लगभग नष्ट हो गया था और वे बम्बईमे रोजीके लिए भटक रहे थे। यह बात तो हरिजन-सेवा की उनके प्रारम्भिक कालकी हुई। किन्तु जैसी लगनसे उन्होने आरम्भ किया, अन्ततक वैसी ही लगनसे इस काममे जुटे रहे। अस्पृश्यता उन्होने कभी मानी ही नही। वे प्रथम कोटिके नागर-कुलके सदस्य थे, किन्तु इस बातका अभिमान या मोह उन्हे छूकर भी नही निकला था। वे लम्बी बहसमे कभी नही पड़ते थे। जो सेवा प्राप्त हो गई उसे चुपचाप कर डालना ही उनका मन्त्र था। अभी-अभी उनके निधनका समाचार मिला। उनका जाना उनके कुटुम्बकी हानि तो है ही, मैं भी एक सच्चा साथी खो बैठा हूँ और हरिजनोने एक सच्चा मूक सेवक खो दिया है। प्रभु उनकी आत्माका कल्याण करे और उनके सुपुत्र तथा अन्य कुटुम्बियोको पारमार्थिक कामोमे उनके चरण-चिह्नोपर चलनेकी सन्मति दे।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, २०-८-१९३३

४२४. गुजरातके हरिजनोंसे

पिछली बार अहमदाबादमे मुझे हरिजन भाई-बहनोसे अच्छी तरह मिलनेका अवसर प्राप्त हुआ था। उस समय मै दिल खोलकर उनके साथ बातचीत कर सका। उनसे मैंने जो आशा कर रखी है, उसे यहाँ फिरसे लिखता हूँ. (१) सवर्ण कहानेवाले हिन्दुओका आपके प्रति जो अपना धर्म है, उसका पालन तो उन्हे बगैर शर्त करना ही है, क्योकि वह उनका प्रायश्चित्त है। परन्तु वे प्रायश्चित्त करे या न करे, फिर भी आपके लिए स्वतन्त्र रूपसे और बिना किसी शर्तके बहुत-कुछ करनेको बच रहता है। क्योकि स्वय मरे बिना कोई स्वर्ग नही जा सकता। अपने बन्धन तो इहलोक या परलोकमे खुद अपने छुडाये ही छूटेंगे। इसलिए हरिजनोको चाहिए कि वे अपनेको नीच, अशक्त या अपग न माने। (२) सवर्ण हिन्दुओका प्रायश्चित्त आपके उद्धारके लिए नही, उनके अपने उद्धारके लिए है। उनके प्रायश्चित्तमे आपकी सेवा निहित है। वे जो सेवा करे, आप उदारताके साथ उसे स्वीकार कीजिए। उदार भाव रखनेसे आप उनकी सेवामे रहनेवाली त्रुटियोको सहज ही दरगुजर कर पायेंगे। पर यदि आप कृपण बनेंगे तो त्रुटियाँ-ही-त्रुटियाँ दिखाई देंगी। लेकिन, आप कृपण तो नही ही होंगे, यह मुझे विश्वास है। (३) अपने दोषोको पहाडके समान बडे माने और उन्हे दूर करनेके लिए सतत प्रयत्न करे। जो हक आप चाहते है, उनके मिलनेकी कुँजी इसीमे है। ऐसा कभी मत मानिए कि दूसरोमे भी वैसे ही दोष है, इसलिए हमे फिक्र की कोई जरूरत नही। दूसरे चाहे जो करते हो, परन्तु आपका तो यह धर्म है कि अपनेमे जो दोष दिखाई दे, उन्हे दूर किया जाये। उन दोषोकी गिनती करनेकी यहाँ मुझे जरूरत मालूम नही पड़ती। आपके सामने मै उन्हे बहुत बार रख चुका हूँ। पर मुझे या और किसीको उन्हे पेश करनेकी जरूरत ही क्यो होनी चाहिए? जिन्हे आप दोषके रूपमे नही देखेंगे, उन्हे दूसरोके कहनेसे दूर नही कर सकते। इसलिए यही कहना ठीक होगा कि जिन दोषोको आप देख सके उन्हीको दूर कीजिए।

सवर्ण हिन्दूकी हैसियतसे मै यह सब नही लिख रहा हूँ। मेरी समझमे तो आज वर्णधर्मका लोप हो गया है, और आपको वर्णके बाहर रखकर उस धर्मका उद्धार नही हो सकता है। परन्तु यदि मेरे जीते-जी वर्णधर्मका उद्धार होनेवाला है, तो जो वर्ण आपका माना जायेगा, वही मेरा भी समझियेगा, क्योकि मै अपनेको स्वेच्छासे हरिजन मानता। इस नाते मैंने आपसे जो उपर्युक्त आशा की है, उसे सफल कीजियेगा। यह आप निश्चय समझिए कि मै आपके दुःखमे दुःखी हूँ और आपके सुखमे ही सुखी होऊँगा।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, २०-८-१९३३

४२५. काठियावाड़वालोंसे

सामान्यत. यह कहा जा सकता है कि जैसे एक कुटुम्बकी आवश्यकताका भार सुव्यवस्थित समाजमे दूसरे कुटुम्बपर नही पड़ता, उसी प्रकार एक प्रान्तके कार्यका वोझ दूसरे प्रान्तपर नही पडना चाहिए। इस नियमके अनुसार काठियावाड़की आवश्यकताओका वोझ काठियावाड़-निवासियोको ही उठा लेना चाहिए — फिर वे चाहे काठियावाड़मे रहते हो, या काठियावाड़के वाहर। इसलिए काठियावाड़के हरिजन-कार्यका वोझ काठियावाड़-निवासियोपर ही पड़ना चाहिए। काठियावाड़मे चलनेवाली हरिजन-पाठशालाओ और हरिजन-आश्रमोके सिलसिलेमे, थोड़े समयके लिए मैं अहमदावाद गया था और वहाँके कार्यकर्त्ताओसे मिला था। धनाभावसे एक भी पाठशाला या आश्रम वन्द नही होना चाहिए। सुव्यवस्था और शक्ति-संग्रहके अभाव अथवा अनावश्यक खर्च रोकनेके लिए किसी संस्थाको वन्द करना पड़े, तो वह दूसरी वात है। मैं तो कई वार अपना अनुभव वता चुका हूँ कि कोई भी पारमार्थिक कार्य वस्तुत: धनाभावके कारण वन्द नही होता। जिस कार्यके पीछे तन-मन अर्पण करनेवाले सेवक हो, धन तो उसके पीछे आप ही दौड़ा चला आता है। आशा है कि हरिजन-सेवाका कार्य करनेवाले उसे ऐसी ही श्रद्धासे देखेंगे। जगतका यह निरपवाद अनुभव है कि प्रत्येक सस्था और प्रत्येक कार्य अन्ततक जुटे रहनेवाले एक मनुष्यकी तन्मयतापर ही निर्भर करता है। इसका अर्थ यह नहीं कि ऐसा मनुष्य अपने ही हाथों सव कार्य कर सकता है। ऐसा समझना तो अभिमानका चिह्न है। किन्तु विश्वकी व्यवस्था ही ऐसी है कि व्यवस्थापक एक ही व्यक्ति हो सकता है। जगतके अनेक नियन्ता नही, नियन्ता कहे या ईश्वर, एक ही है। उसके अगणित दास-दासियाँ है, पर उसने अपने लिए नाम और काम दासानुदासका रखा है। इसी प्रकार हरएक कामके लिए कहा जा सकता है कि उसका नियन्ता, मन्त्री या सम्पादक एक ही हो सकता है; और वह अपनेको यदि सवसे ऊपर न मानकर सेवकोका सेवक माने, तो उसके हाथका काम उत्तरोत्तर प्रगति करता ही जायेगा। साथ ही यह भी चाहिए कि वह सेवक उस कार्यका अनन्य भक्त हो। मैं जानता हूँ कि काठियावाड़में ऐसी लगनसे काम करनेवाले सेवक है। काठियावाड़को धनकी भी कमी नहीं है। चारो ओर फैले हुए काठियावाड़-निवासियोंमें ऐसे स्त्री-पुरुप मेरी नजरमे है जो चाहे तो अकेले ही काठियावाड़मे हरिजन-सेवाका सारा खर्च अपने ऊपर उठा सकते है। अत· यह वात मेरी समझमे नहीं आती कि हरिजन-सेवाकी संस्थाओंमें से एकको भी धनाभावसे क्यों वन्द किया जाये।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, २०-८-१९३३

४२६. मेरा जीवन-प्राण

भगवानकी लीला अपरम्पार है! इस बातकी मुझे कल्पना भी न थी कि ऐसी अनहोनी घटना[1] मेरे जीवनमे होकर रहेगी। मेरे इस लम्बे सार्वजनिक जीवनमे अनहोनी लगनेवाली अनेक घटनाएँ घट चुकी है। पर यह घटना तो सबसे अधिक अप्रत्याशित थी। अब मेरे भाग्यमे क्या है? मै नही जानता कि जेलके बाहर जीवनका उपयोग मै किस तरह करूँगा, पर इतना तो मै जरूर कहूँगा कि मै चाहे जेलके भीतर रहूँ या जेलके बाहर, 'हरिजन-सेवा' ही मेरे लिए सबसे प्रिय वस्तु रहेगी। वह मेरा जीवन-प्राण है। हरिजन-सेवा मेरे लिए भोजनसे भी अधिक आवश्यक है। भोजनके बिना मैं कुछ दिन जीवित रह सकता हूँ, परन्तु हरिजन-सेवाके बिना तो मैं एक क्षण भी नहीं जी सकता। भगवानसे मेरी यही निरन्तर प्रार्थना है कि अस्पृश्यताका यह कलक हिन्दू-धर्मसे पूरी तरह दूर हो जाये और करोडो सवर्ण हिन्दू सत्यके सूर्यका दर्शन करे। मैं एक बार नही अनेक बार कह चुका हूँ कि सत्यका सूर्य तो सदैव ही प्रकाशित रहता है। जिस समय हम अपनी आँखोपर से पर्दा हटा लेगे, उसी क्षण उसका दर्शन हो जायेगा। मै अपना जीवन इस कार्यके लिए अर्पित कर चुका हूँ। इस सत्यकी सिद्धिके लिए मुझे चाहे कितनी ही कठिन तपस्या क्यो न करनी पड़े, मैं उसे अधिक नही समझूँगा।

'पर्णकुटी', २३ अगस्त, १९३३, साय ५.३०

[अग्रेजीमे]
हरिजन, २६-८-१९३३

४२७. तार: रवीन्द्रनाथ ठाकुरको

पूना,
२३ अगस्त, १९३३

गुरुदेव
शान्ति निकेतन

ईश्वरकी कृपा। स्वस्थ हूँ। संतरा लिया[2]।

गांधी

[अंग्रेजीमे]
विश्वभारती न्यूज, सितम्बर, १९३३, पृ० १७

१. अपने उपवासके, जो १६ अगस्तसे शुरु हुआ था, ८वें दिन गांधीजी बिना शर्तके जेलसे रिहा कर दिये गये थे।

२. रवीन्द्रनाथ ठाकुरका २४ अगस्तका उत्तर इस प्रकार था: "बड़ी सान्त्वना मिली। ईश्वरकी महिमा है। चार्लीको प्यार।"

४२८. तार: जमनालाल बजाजको

पूना,
२४ अगस्त, १९३३

जमनालाल बजाज
वर्धा

बहुत ठीक चल रहा हूँ। शुश्रूषाके लिए किसी मददकी जरूरत नहीं है।[1]

बापू

[अंग्रेजीसे]
पांचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ११३

४२९. पत्र: आर० बी० मार्टिनको

२४ अगस्त, १९३३

प्रिय कर्नल मार्टिन,

जब आपने मुझे सेसून अस्पताल भेजा उस समय मैं अपने साथ कपड़े और कुछ दूसरी चीजें तो ले आया, परन्तु अपनी पुस्तकें और चरखा वगैरह नहीं लाया। आप ये चीजें और जिस दौरान मैं आपके यहाँ जेलमें रहा, उस वक्त आपको मिली ऐसी पुस्तकें जो मुझे न दी गई हों, कृपया काकासाहब कालेलकरके हाथोंमें सौंप दें।

हृदयसे आपका,

लेफ्टिनेंट कर्नल आर० बी० मार्टिन, आई० एम० एस०
सुपरिंटेंडेंट, सेन्ट्रल जेल, यरवदा

[अंग्रेजीसे]

बम्बई सरकार, होम डिपार्टमेंट, आई० जी० पी० फाइल सं० २०-१३, १९३३

१. जमनालाल बजाज द्वारा भेजे गये इस तारके जवाबमें कि उनकी परिचर्याके लिए छोटेलाल जैनको भेजा गया है; देखिए "पत्र: वल्लभभाई पटेलको", २४-८-१९३३।

४३०. पत्र : अब्बास तैयबजीको

२४ अगस्त, १९३३

प्रिय भर्रर,

मेरे जीवनमे कई अद्‌भुत घटनाएँ घटी है। परन्तु रिहाईकी यह घटना सबसे अद्‌भुत है। वहरहाल यह घट गई है और मुझे इसे इसी रूपमे स्वीकार करना है। मगर मैं समझ नही पा रहा हूँ कि मै काम क्या करूँ। ईश्वर मेरे लिए रास्ता तैयार करेगा, तबतक प्रतीक्षा कर रहा हूँ। इन परिस्थितियोमे जितना मजबूत होनेकी आशा की जा सकती है, मैं उतना मजबूत हूँ। इसमे कोई शक नही कि आठ दिनोमे जो ताकत मैंने खोई थी, कुछ दिनोमे फिरसे हासिल कर लूँगा। मै थोड़े दिन यहाँ हूँ। आशा है कि उसके बाद बम्बई चला जाऊँगा और वहाँ कुछ दिन रहूँगा। मै रैहानाको अलगसे नही लिख रहा हूँ। उससे कह दे कि उसने जो भजन मुझे भेजा था मैंने अपना उपवास उसके साथ शुरू किया था।

सबको प्यार।

भर्रर . . .

श्रीयुत अब्बास तैयबजी
कैम्प, बडौदा

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९५८६) से।

४३१. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

२४ अगस्त, १९३३

चि० अमला,

आशा है कि तुम मेरे उपवासको लेकर पागल नही हो गई होगी और तुम वहाँ सबको सन्तुष्ट रखकर पूरी गतिसे काम कर रही होगी। तुम्हारा हिन्दीमे लिखा पत्र आज ही, जिस समय मै यह पत्र बोलकर लिखवा रहा हूँ, मिला है। तुम्हारे अक्षरोंमे अभीतक काफी सुधारकी गुंजाइश है। वहरहाल, इतनी देर बाद तुम्हारा पत्र पाकर मुझे खुशी हुई। जेलमे भेजे गये पत्रोंमे से कोई भी पत्र मुझे नही मिला।

हो सकता है, अब वे पत्र मुझे मिल जायें। मैं आज तुम्हे लम्बा पत्र नही लिख पाऊँगा।

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल कागजात; सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय।

४३२. पत्र: एफ० मेरी बारको

२४ अगस्त, १९३३

चि० मेरी,

उस दिन ज्यादा बातचीत नही हो पाई और अलग होना पड़ा, इसका मुझे खेद रहा। फिर इतने दिन तुम्हे पत्र न लिख पानेका भी मुझे दु:ख है। मैं अब फिर लिखने योग्य हो गया हूँ, और अधिक-से-अधिक जितने पत्र बोलकर लिखवा सकता हूँ, लिखवा रहा हूँ। आशा है कि तुम्हे वहाँ बिलकुल घर-जैसा लग रहा होगा। मैं चाहता हूँ कि तुम वर्धा और वहाँके लोगोके अपने अनुभवके बारेमे सब-कुछ मुझे लिखो। मेरे बारेमे समाचार तो तुम्हे कई सूत्रोसे प्राप्त हुए होंगे। इसलिए मुझे कुछ कहनेकी जरूरत नही है।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६००५) से। सी० डब्ल्यू० ३३३१ से भी, सौजन्य: एफ० मेरी बार।

४३३. पत्र: मनु गांधीको

२४ अगस्त, १९३३

चि० मनु,

मुझे पत्र नियमपूर्वक लिखती रहना। वहाँ स्वास्थ्य अच्छा रहता होगा और खूब मजेसे रहती होगी। पढ़ाईका क्या बन्दोबस्त है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १५२५) से; सौजन्य: मनुबहन एस० मशरूवाला।

४३४. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

सरदार वल्लभभाईके लिए
सुपरिटेंडेंटकी कृपापूर्ण अनुमतिसे[1]

२४ अगस्त, १९३३

भाई वल्लभभाई,

मैं खुद न लिख सकूं ऐसी मेरी तबीयत नहीं है। मगर आज के दिन यो ही लिखा रहा हूं। आपको सब-कुछ पढ़नेको मिला होगा, इसलिए सब समाचार मालूम ही होंगे। यह सब स्वप्नवत् हो गया है। मगर ईश्वर जैसे रखेगा वैसे रहेंगे। हमें तो एक-एक कदम उठाकर चलना है। इसलिए चिन्ता किस बात की? वैसे इस बार यह नहीं लगता कि मार्ग जल्दीमें सूझ जायेगा। मैं कह सकता हूँ कि यरवदा मन्दिरमें तो मैं आपकी माला जपता था। इस वियोगके बारेमें सोचा ही नहीं था। रोज अनेक अवसरोंपर हम आपको बहुत याद करते थे। आपके हुक्मोंका अभाव खटकता था।

अच्छी-से-अच्छी [खाली] बोतलें[2] देखकर भेजी थीं। वे सही-सलामत पहुँची होंगी। दूसरा सामान अलग बांध दिया था। और पुस्तकें या चीजें चाहिए तो लिखें। मेरे साथ मथुरादास है। चन्द्रशंकर, बा, मीराबहन, नैयर[3] रात-दिन साथ रहते हैं। व्रजकृष्ण सारा दिन यहां बिताता है। आज गणेशचतुर्थी है, इसलिए आनन्द भी है। काका यहीं हैं। जमनालालका अभी तार आया है कि सेवाके लिए छोटेलाल को भेजा है। मगर मुझमें तो बड़ी तेजीसे शक्ति आ जायेगी। अपने-आप बिस्तरमें बैठ जानेमें कठिनाई नहीं होती। आज काफी फल खाये हैं। चौलाईका रस भी पिया है। इसलिए शक्ति काफी है। डॉक्टर गिल्डर[4] और डॉक्टर पटेल[5] शरीरकी परीक्षा कर गये हैं। उन्हें कोई दोष नहीं दिखा, इसलिए मेरे बारेमें जरा भी चिन्ता न करें। आपकी नाकका क्या हुआ? उसकी क्या हालत है? जो-कुछ लिखा जा

१ यह साधन-सूत्रमें अंग्रेजीमें है। सरदार पटेल जब नासिक जेलमें थे, तब गांधीजी सरदार पटेलको लिखे अपने सब पत्रोंमें यह लिखा करते थे।

२. शहद आदिकी खाली बोतलें, जिनके शहदका उपयोग गांधीजी और सरदार वल्लभभाई पटेल यरवदा जेलमें करते थे।

३. प्यारेलाल नैयर।

४. डॉ० डी० डी० गिल्डर, हृदयरोग-विशेषज्ञ, बादमें बम्बईके स्वास्थ्य-मंत्री।

५. डॉ० पी० टी० पटेल।

सके लिखिए। अभी थोड़े दिन तो पर्णकुटीमे ही हूँ, बादमे कुछ दिन बम्बई रहनेका विचार है। आगेकी राम जाने।

बापूके आशीर्वाद

सरदार वल्लभभाई पटेल
नासिक

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० २०-२

४३५. पत्र : विद्या हिंगोरानीको

२४ अगस्त, १९३३

चि० विद्या,

तुम्हारे हाल आनंदसे मिले हैं। मेरी उम्मीद है कि तुम्हारा शरीर अच्छा होगा और मानसिक स्थिति भी अच्छी होगी। महादेवकी प्रकृति अच्छी रहती होगी। और सब तुम्हारे साथ कैसे रहते हैं? मुझे विगतके साथ पत्र लिखा करो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी माइक्रोफिल्म से; सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनंद टी० हिंगोरानी।

४३६. पत्र : जमनालाल बजाजको

पूना
[२४ अगस्त, १९३३ के पश्चात्][1]

चि० जमनालाल,

तुम्हारा तार मिला। तुम शायद यह मान रहे हो कि मुझे किसी बड़ी सार-सँभालकी जरूरत पड़ती होगी। बात यह है कि खानेके सिवा और कोई सावधानी रखनेका सवाल नही है। इस बार शक्ति क्षीण नही हुई है। आठ दिनमे हो भी नही सकती थी। जितनी गई है, उतनी तुरन्त आ जायेगी। इसलिए छोटेलालको भेजनेकी कोई जरूरत नही थी, पर वह आ ही रहा है तो उससे उनको बड़ा सन्तोष होगा, यही सोचकर मुझे सन्तोष मिलेगा। इसके सिवा मीराबहन मेरे पास है, यह तो तुम जानते हो। ब्रजकृष्ण तो कही भी हो, आकर हाजिर हो ही जाता है।

१. छोटेलालके बारेमें दिये गये तारकी प्राप्तिके उल्लेखसे; देखिए पृ० ३८९। साधन-सूत्रके अनुसार पत्र २६ अगस्त, १९३३ को मिला था।

इसलिए वह भी है ही। दूसरी मदद भी बहुत मिल जाती है। तुम्हारी तबीयत अच्छी होगी। जो नये लोग आये है, उनके जो अनुभव तुम्हे मिले हो, लिखना। तुम्हारा केस पूरा हुआ? रामदासका क्या हाल है? केशू कैसा है?

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

छोटेलाल अभी-अभी आ गया।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९२२) से।

४३७. पत्र : मैडलिन रोलाँको[1]

२५ अगस्त, १९३३

प्रिय बहन,

आपको और ऋषि[2] को मात्र अपना स्नेह देनेके लिए ये दो शब्द लिख रहा हूँ। अभी हालमे हुई आश्चर्यजनक घटना[3] के विषयमे तुम्हे मीरा सब-कुछ बतायेगी। आशा करता हूँ, आप दोनो स्वस्थ और प्रसन्न है। एन्ड्रयूज भी आजकल यही है।

सदैव आपका,

बापू

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०५८२) से, सौजन्य . मैडलिन रोलाँ।

४३८. भेंट : पत्र-प्रतिनिधियोंको

२५ अगस्त, १९३३

गांधीजी ने, जो बहुत स्वस्थ दिखाई दे रहे थे, लेडी ठाकरसीके बंगलेके विशाल हॉलमें दिनके १० बजे पत्रकारोके एक मण्डलका स्वागत किया।

गाधीजी बहुत स्पष्ट और अकसर भावावेशमें बोलते रहे। परन्तु, लगभग एक घंटेके बाद, जब भेंट समाप्त होनेको थी, थकावटके चिह्न दिखाई देने लगे और श्रीमती नायडूके सुझावपर पत्र-प्रतिनिधियोने आगे और प्रश्न पूछने बन्द कर दिये।

१. मूल पत्र उपलब्ध नहीं है। यह उसके फ्रेंच अनुवादके फिरसे अंग्रेजीमें रूपान्तरका अनुवाद है।

२. रोमाँ रोलाँ।

३. आशय उपवास और अप्रत्याशित रिहाईसे है।

गांधीजी ने अपनी बात शुरू करनेसे पहले सिविल सर्जन कर्नल कैंडी, उनके स्टाफ और परिचारिकाओंको इस बातके लिए धन्यवाद दिया कि उन्होंने उनकी देखभाल बड़े ध्यानसे की। उन्होंने यरवदा जेलके सुपरिंटेंडेंट लैफ्टिनेंट कर्नल मार्टिन और उनके स्टाफको भी, जिनका व्यवहार उपवासकी आरम्भिक अवस्थाओंमे उनके प्रति कृपापूर्ण रहा था, धन्यवाद दिया। गांधीजी ने कहा:

मै चाहूँगा कि जनताको मेरी हालतके बारेमे तसल्ली दे दी जाये। सामान्यत एक हफ्तेका उपवास मेरे लिए कुछ भी नही है। पर क्योकि मै पानीकी अपेक्षित मात्रा नही ले सका, इसलिए इस बार इस उपवासके दौरान मुझे भयकर शारीरिक कष्ट हुआ। परन्तु मै आज उपवास तोड़नेके दूसरे दिन ही यह महसूस करता हूँ कि मै थोड़े ही समयमे अपनी खोई हुई शक्ति फिरसे प्राप्त कर लूँगा। इसलिए किसी प्रकारकी चिन्ताका कोई कारण नही होना चाहिए।

आगे बोलते हुए गांधीजी ने भविष्यकी चर्चा की और कहा:

इस बार मेरी रिहाई बिलकुल अप्रत्याशित रूपसे हुई है। इसलिए मै स्वीकार करता हूँ कि स्वास्थ्य-लाभ कर चुकनेके उपरान्त मेरी गतिविधि क्या होगी. इसका मुझे अभी कोई अनुमान नही है। इसलिए जो बात मैंने अकसर पहले भी कही है, उसे ही मै ज्यादा जोर देकर कहूँगा — मै प्रकाश और निदेशन के लिए लगातार प्रार्थना करता रहूँगा।

मै जेल जाने या सम्भवत. फिरसे उपवास करनेकी अपेक्षा ज्यादा उत्सुक तो समझौतेकी सम्भावनाके लिए रहूँगा। इसलिए इस अप्रत्याशित रिहाईका उपयोग मै फिरसे सुलहका मार्ग खोजनेके लिए करूँगा।

बहरहाल, मै एक बात स्पष्ट कर देना चाहता हूँ। यह रिहाई मेरे लिए प्रसन्नताकी बात नही है। सम्भवत यह मेरे लिए शर्मकी बात है कि मै अपने साथियोंको जेल ले गया और स्वय उपवास रखकर बाहर आ गया। उपवासके बारेमे सरकारके वक्तव्यका पूरी तरह अध्ययन करनेका मुझे वक्त नही मिला है। उपवासके दौरान और उससे कुछ दिन पहले इसके बारेमे समाचारपत्रोमे जो समाचार छपे उनसे मै वचित ही रहा।[1]

एक प्रश्नका उत्तर देते हुए गांधीजी ने इस बातपर और ज्यादा प्रकाश डाला और कहा कि इस दौरान उन्हें 'टाइम्स ऑफ इंडिया' दिया जाता था, किन्तु उसमें उपवाससे सम्बन्धित अंश कटे हुए होते थे।[2] गांधीजी ने आगे कहा:

१. टाइम्स ऑफ इंडिया, २६-८-१९३३ में लिखा था कि २४ अगस्तको शिमलामें विधानसभामें गांधीजी के उपवाससे सम्बन्धित प्रश्नोंका उत्तर देते हुए यह कहा गया था कि "गांधीको छोड़नेका निर्णय इसलिए लिया गया कि "यह स्पष्ट दिखाई दे रहा था कि गांधीजी ने आत्महत्या करनेका निश्चय कर लिया है। सरकार उन्हें जेलमें मरने देना नहीं चाहती थी और उनके जीवनको बचानेके लिए उन्हें जबरदस्ती खिलानेका आदेश देनेको भी वह तैयार नहीं थी।"

२. देखिए "पत्र: आर० वी० मार्टिनको", पृ० ३८१।

इसलिए उपवासके बारेमें समाचारपत्रोंमें जो-कुछ कहा गया, वह सब मैं नहीं जानता। रही-सही ताकतके बलपर कल मैं जो-कुछ पढ़ सका उससे पता चलता है कि सरकारने मेरे साथ न्याय नहीं किया है।

यह याद रखना चाहिए कि पिछले सितम्बरमें यरवदामें मैंने जब उपवास रखा था तब सरकारने मुझे लोगोंसे मिलने, भेंट देने और अस्पृश्यता-विरोधी कार्यके मामलेमें पत्र लिखनेकी पूरी सुविधाएँ दी थीं — इसलिए नहीं कि तब मैं राजनीतिक कैदी था, परन्तु इसलिए कि सरकार ऐसा मानती थी कि यदि वह मुझे अपनी देखरेखमें रखती है तो मुझे ये सुविधाएँ देना न्यायोचित है। इसलिए यदि सरकारने कोई गलती की तो उस पहले उपवासके अवसरपर की थी। यदि सरकार चाहती तो, जैसाकि उसने २१ दिनके उपवासके दौरान या इस बार किया, उस वक्त भी मुझे बिना किसी शर्त रिहा कर सकती थी। जेलके अनुशासनका प्रश्न उस वक्त भी उतना ही महत्त्वपूर्ण था जितना कि अब है। परन्तु तब उसने ऐसा नहीं किया। सरकारने इस नीतिको ज्यादा अच्छा समझा कि वह मुझे अपनी देखरेखमें रखकर वे सारी सुविधाएं दे जिनका मैंने उल्लेख किया है।

पूना-समझौता हो जानेके बाद, दो दिनके अन्दर ही हरिजन-कार्य करनेके लिए दी गई सुविधाएं अचानक बन्द कर दी गई। तब मैंने तत्काल सादर अपना विरोध प्रकट किया। परन्तु जब इस विरोधकी कोई सन्तोषजनक प्रतिक्रिया नहीं हुई तो मुझे मजबूर होकर इस आशयका पत्र[1] भेजना पड़ा कि जबतक सरकार मुझे बिना किसी प्रतिबन्ध व रोकटोकके हरिजन-कार्य करनेकी सुविधा नहीं देती, मैं जीवनको बनाये रखने योग्य नहीं मानूंगा। उसके उत्तरमें गत ३ नवम्बरको मुझे निम्नलिखित आदेश[2] दिये गये थे।

ये आदेश मेरी अपेक्षाओंको पूरी तरह ध्यानमें रखते हुए और सितम्बरमें उनसे क्या अभिप्रेत था इसे पूरी तरह जानते हुए पास किये गये थे।

मैं एक बार फिर कहता हूँ कि जब सरकारने २१ दिनके उपवासके बाद मुझे फिर कैद किया तो, चाहे सरकारने मुझे राजनीतिक कैदी माना हो या कोई और, उसे बिना किसी बाधाके हरिजन-कार्य करनेकी मेरी प्रार्थनाका सामना करना पड़ा। मेरी रायमें वर्गीकरणका इस प्रश्नसे कोई सम्बन्ध नहीं है। सितम्बरमें, नवम्बरमें और आज भी एकमात्र प्रश्न यही है कि यदि मेरा जीवन है तो मुझे हरिजन-कार्य भी करना है, और यदि जेलमें हरिजन-कार्य न करने दिया जाये तो मेरी मृत्यु निश्चित है। जबतक मैं जीवित हूँ यही प्रश्न मेरे सामने, सरकारके सामने और जनताके सामने रहेगा। यदि मेरा इस तरह सोचना गलत हो कि चाहे मैं जेलके अन्दर रहूँ या बाहर मुझे अस्पृश्यता-विरोधी कार्यक्रम जारी रखनेकी, जिसे मैं अपना पवित्र दायित्व मानता हूँ, पूरी आजादी होनी चाहिए, तो मेरा उपवास धृष्टतापूर्ण

१. देखिए खण्ड ५१ पृ० ३०६-९।
२. देखिए खण्ड ५१, पृ० ३५६ की पाद-टिप्पणी संख्या १।

समझा जाना चाहिए और सरकार या जनताको उसे कोई महत्त्व नहीं देना चाहिए। परन्तु यदि मैं सही हूँ, तो मेरा उपवास बलिदानकी मुहर माना जाना चाहिए।

एक बात और है। सरकारकी ओरसे यह कहा गया है कि २१ दिनके उपवास के कारण जब मुझे रिहा कर दिया गया था, तो मैंने हरिजन-कार्यकी निस्बत राजनीतिक कार्यकी ओर ज्यादा ध्यान दिया था। मैं कल्पना नहीं कर सकता कि तथ्यों को, जो अब सिद्ध किये जा सकते हैं, इससे ज्यादा भी तोड़ा-मरोड़ा जा सकता है। परन्तु मैं कुछ प्रमुख दृष्टान्त ही दूँगा। पूरे २१ दिन और उसके बादके दिनोंमें जब मैं कुछ भी करनेमें असमर्थ था, मैं केवल प्रार्थना और चिन्तन ही कर सका था और लिखने या बात करनेका कोई काम नहीं कर सका था। और मैं कह सकता हूँ कि उस दौरान सिवाय ईश्वर और ईश्वरके बच्चों — हरिजनोंके अलावा, मैंने और कोई बात नहीं सोची। जब मैं लोगोंसे लगातार वार्तालाप करनेकी स्थितिमें हुआ, तब पहला काम मैंने यही किया कि इसी हॉलमें बिस्तरपर लेटे हुए हरिजन-कार्यकर्ताओंकी सभामें भाषण[1] दिया। जब मैं आम जनताके लिए कुछ लिखनेका कार्य करनेमें समर्थ हुआ, तो मेरा पहला लेख[2] 'हरिजन' के लिए था।

यह सच है कि जब मैं पूनामें था तो मैंने अनौपचारिक सम्मेलन[3] में भाग लिया और सविनय अवज्ञाके विषयपर राजनीतिक कार्यकर्ताओंसे कई बार बातचीत की। उनमें कोई रहस्य नहीं था और उनकी मुझे कोई शर्म भी नहीं है। सविनय अवज्ञा मेरे जीवनका अभिन्न अंग है। परन्तु तथ्य यह है कि मेरे समयका अधिकांश भाग सविनय अवज्ञाके काममें नहीं लगा। वास्तविकता यह है कि सम्मेलनको दी गई सलाहको ध्यानमें रखते हुए यह जरूरी भी नहीं था। लोगोंका यह विचार हो सकता है कि जब मैं अहमदाबाद गया, तो आश्रमके त्यागके काममें मेरा बहुत ज्यादा वक्त लगा होगा। परन्तु मैं फिर यह कह सकता हूँ कि मेरे वक्तका बहुत ज्यादा अंश हरिजन-सेवामें ही लगा।

प्रार्थनाके समय हर बार हजारों लोग इकट्ठे हो जाते थे और यदि मैं कभी उनके आगे भाषण देता था तो वह भाषण अस्पृश्यता-विरोधपर ही होता था। हर बार उन सभाओंमें मैं पैसा इकट्ठा करता था और लोग प्रायः उदारतासे दान देते थे। उसका एक-एक पैसा हरिजन-निधिमें ही गया। यदि मुझे चुनौती दी जाये तो मैं इस तरहके कई उदाहरण गिना सकता हूँ। इसलिए, मेरी रायमें, यह बात किसी भी व्यक्तिको और किसी सरकारी अधिकारीको तो बिलकुल ही शोभा नहीं देती कि वह मुझपर ऐसा काम करनेका आरोप लगाये जो मैंने कभी नहीं किया, और उसके बाद उस प्रक्रियाको उचित ठहराये जो मेरे-जैसे सीधे-सादे आदमीकी नजरमें स्पष्ट और गम्भीर प्रतिज्ञा-भंग है — उस प्रतिज्ञाको तोड़ना है जो अपनी हिरासतमें रखे कैदीके साथ सोच-समझकर की गई थी।

१. देखिए पृ० २४८-९।
२. देखिए पृ० २६६-७०।
३. देखिए पृ० २७४-५ और २७६-८।

जब गांधीजी का ध्यान इस ओर आकृष्ट किया गया कि गृहमन्त्रीने विधान सभामें यह वक्तव्य दिया है कि गांधीजी दो असंगत नीतियोंको एक-साथ मिलाना चाहते हैं, वे जान-बूझकर कैदी बनना चाहते हैं और साधारण व्यक्तिकी तरह सामाजिक कार्य करनेकी पूरी स्वतन्त्रता भी चाहते हैं, तो गांधीजी ने उत्तर दिया :

मैं नहीं समझता कि इसमें कुछ भी असगति है। यदि मैंने जेलकी दीवारोंके अन्दरसे सविनय अवज्ञा चलानेकी स्वतन्त्रताकी माँग की होती, तो मेरी माँगमें असगति होती।

महात्मा गांधीसे तब यह पूछा गया कि क्या उनकी रायमें पिछले कुछ महीनोंके दौरान किये गये राजनीतिक आन्दोलनसे कुछ लाभ हुआ है।[1]

गांधीजी ने उत्तर दिया कि वह इस प्रश्नका उत्तर नहीं दे सकते, क्योंकि लोगोंपर उनके आन्दोलनकी क्या प्रतिक्रिया हुई है इसका अनुमान लगानेका उन्हें अवसर नहीं मिला है। परन्तु उन्होंने कहा कि उनका यह दृढ़ विश्वास है कि इस आन्दोलनसे, जो अन्यायका प्रतिरोध करनेके लिए लोगोंके हाथोंमें अत्यन्त पवित्र शस्त्र है, लोगोंका हित ही हुआ होगा।

यह पूछे जानेपर कि सरकार द्वारा दी गई रियायतें क्या काफी नहीं हैं, गांधीजी ने नहीं में उत्तर दिया और कहा कि अस्पृश्यता-विरोधी कार्यके सम्बन्धमें अभी बहुत काम किया जाना बाकी है। इसका राजनीतिक अंश अत्यन्त कम है। सुधारकोंके समक्ष यह काम है कि हिन्दुओंका हृदय-परिवर्तन किया जाये।

गांधीजी ने अपनी बात जारी रखते हुए कहा कि उन्हें इस बातसे जो दुःख हुआ है उसका वे वर्णन नहीं कर सकते — इस किस्मके मामलेमें, जिसके बारेमें पिछले नवम्बरमें सरकारके आदेश इतने स्पष्ट थे, उन्हीं अधिकारियोंने पहले तो उन्हें उपवास करनेके लिए बाध्य किया और फिर यह कहा कि मैं डिक्टेटर बनना चाहता हूँ। यह अत्यन्त निर्दय आघात है।

यह पूछे जानेपर कि क्या उदाहरणके तौरपर श्री राजगोपालाचारी, जो पूना-समझौतेमें साथ थे और अब जेलमें हैं, उनकी [गांधीजी की] तरह हरिजन-कार्य करनेकी अनुमति नहीं माँग सकते, गांधीजी ने 'नहीं' में उत्तर दिया और कहा :

श्री राजगोपालाचारीका प्रतिरोध करनेमें मैं सरकारका साथ दूंगा, क्योंकि श्री राजगोपालाचारी गोलमेज परिषदमें उपस्थित नहीं थे। वहाँ मैं श्री राजगोपालाचारी और दूसरे कांग्रेसजनोंके एकमात्र प्रतिनिधिके रूपमें उपस्थित था और मैंने यह घोषणा[2] की थी कि मैं अपना जीवन बलिदान करके भी दलित वर्गोंके लिए अलग निर्वाचनका प्रतिरोध करूँगा। इसलिए यह मेरा पवित्र कर्त्तव्य हो जाता है कि मैं जेलके भीतरसे भी इस आन्दोलनको चलाता रहूँ।

१ यह और अगला अनुच्छेद ट्रिब्यून, २७-८-१९३३ से लिया गया है।

२. देखिए खण्ड ४८, पृ० ३३१।

राजनीतिक स्थितिके बारेमें गांधीजी से पूछा गया कि सुलह-शान्तिके लिए किये जानेवाले उनके प्रयत्नोंका रूप क्या होगा। गांधीजी ने उत्तर दिया कि वह क्या होगा यह फिलहाल उन्हें मालूम नहीं है। वह अभी भविष्यके गर्भमें है। इस वक्त तो उनके लिए गहन अन्धकारके सिवाय और कुछ नहीं है। परन्तु यदि सरकारकी इच्छा सुलह-शान्तिकी हो — और वे यह जानते हैं कि कांग्रेस सुलह-शान्ति चाहती है — तो सुलह-शान्ति हो सकती है। सारे सूत्र आज उनके हाथमें नहीं हैं, इसलिए सुलह-शान्ति किन शर्तोंपर हो सकती है वह कुछ नहीं कह सकते।

यह पूछे जानेपर कि क्या वे वायसरायको फिर भेंटके लिए कहेंगे, उन्होंने उत्तर दिया कि वह निश्चित रूपसे कुछ नहीं कह सकते, परन्तु यह सम्भव है।

गांधीजी ने अन्तमें कहा कि उन्हें आशा है कि एक हफ्ते या कुछ और दिनोंमें उनकी सेहत पहले-जैसी हो जायेगी। अब वह दूधका आहार ले रहे हैं और उन्हें कोई पीड़ा या कष्ट अनुभव नहीं होता।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २६-८-१९३३, ट्रिब्यून, २७-८-१९३३ भी।

४३९. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

पर्णकुटी, पूना,
२६ अगस्त, १९३३

चि० अमला

अब जेलमें सब पत्र मुझे मिल गये हैं।

हाँ तुम जब चाहो मुझे लिख सकती हो, सिर्फ इतना करना कि दूसरा जो व्यक्ति मुझे लिख रहा हो उसे पत्र दे देना, ताकि डाक खर्च बचे। नियमानुसार, वर्धामें मुझे रोज डाक आती रहती है। अत: तुम्हारे लिए सबसे ज्यादा ठीक यही होगा कि तुम अपने पत्र द्वारकानाथजी[1] को या लक्ष्मीबहन[2] को दे दिया करो।

जब तुम कहती हो कि 'गीता' तुम रोज पढ़ती हो तो मैं सोचता हूँ कि तुम्हारे ऐसा कहनेका क्या अर्थ है। तुम 'गीता' को समझने और उसके अनुरूप आचरण करनेके खयालसे पढ़ो। तुम्हें अब पिछली बातें भूल जाना चाहिए, जो सामने है उस-पर ध्यान देना चाहिए। तुमने कैसा आचरण किया है, इस बातकी बिलकुल चिन्ता न करो। इस बारेमें मैं सब-कुछ भूल चुका हूँ और मैं समझता हूँ कि वैसा आचरण अत्यधिक प्रेमके कारण हुआ। अनैतिकताकी उसमें कोई बात नहीं थी।

१. द्वारकानाथ हरकरे, एक आश्रमवासी।
२. लक्ष्मीबहन ना० खरे।

मीराके नाम तुम्हारा पत्र नहीं मिला है। हरिजनोंमें सच्चा कार्य करनेके लिए विनोबाका तुमसे भोजन बनाना, हिन्दी और रूईकी सभी प्रक्रियाओंको अच्छी तरह सीखनेके लिए कहना ठीक ही है।

आशा है कि तुम बिलकुल ठीक और तन्दुरुस्त होगी।

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल कागजात; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय।

४४०. पत्र : रमाबहन जोशीको

२६ अगस्त, १९३३

चि० रमा,

तुम्हारा पत्र और निर्मलाका भी पत्र मिल गया है। निर्मलाको अलग पत्र नहीं लिख रहा। तुम चिन्तित नहीं हो, इससे मुझे खुशी हुई है। वीणाबहनने तुम्हारे स्वास्थ्यके बारेमें खबर दी है। धीरूने भावनगरसे पत्र लिखा है। लगता है, वह मजेमें है। इस बार छगनलालसे मिल ही नहीं पाया। इस बार तो सारा रंग ही बदला हुआ था। किसीको भी पत्र लिखनेकी मुझे अनुमति नहीं थी। मेरा स्वास्थ्य सुधरता जा रहा है। शक्ति बढ़ती जा रही है। छगनलालको थाना ले गये हैं। वहाँसे कोई पत्र मिला हो तो मुझे लिखना। विमु[1] का कोई समाचार हो तो लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५३५६) से।

१. रमाबहन जोशीकी पुत्री।

४४१. पत्र : मीठूबहन पेटिटको

२६ अगस्त, १९३३

चि० मीठूबहन,

तुम्हारा पत्र मिला। मेरी चिन्ता बिलकुल न करना। शक्ति बराबर आती जा रही है। दूध ले सकता हूँ।

आशा है, तुम्हारी तबीयत ठीक रहती होगी। तुम्हारे कामका तो पूछना ही क्या। वह तो चल ही रहा होगा।

बापूके आशीर्वाद

श्रीमती मीठूबहन पेटिट
कोलाबा, बम्बई

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २७०५) से।

४४२. वह जैसा नचायेगा वैसा नाचूँगा

ईश्वरकी लीला कोई नहीं जान पाया। मैंने स्वप्नमें भी नहीं सोचा था कि अपने इक्कीस दिनके उपवासके बाद तीन महीनेके भीतर ही दूसरा उपवास करना पड़ेगा और उस उपवासके परिणामस्वरूप मुझे जेलसे बाहर आना पड़ेगा। इस लीलामें ईश्वरकी मर्जी क्या रही होगी, यह कौन जान सकता है। मैं तो नहीं जानता। लेकिन मैं इतना जरूर जानता हूँ कि मैं जेलसे बाहर होऊँ या जेलके अन्दर, अपने विचार, वाणी और व्यवहारमें अस्पृश्यताका मैल भारतसे धो-निकालनेका जितना भी प्रयत्न मैं कर सकता हूँ उतना अवश्य करूँगा। अपने इस प्रयत्नमें जब मैंने बाधा डाली जाती अनुभव की तो तत्काल अनशन कर दिया। इतने महँगे दामों खरीदी हुई वस्तु मैं सहज ही हाथसे नहीं जाने दूँगा। किन्तु मैं कोई प्रयत्न कर पाऊँगा, यह तो ईश्वर ही जानता है। वह जैसा नचायेगा मैं वैसा ही नाचूँगा। जिस रास्ते चलायेगा उसीपर चलूँगा। मुझे पूर्ण आशा है कि सभी भाई-बहन इस प्रयत्नमें मेरी सहायता करेंगे।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, २७-८-१९३३

४४३. पत्र : विट्ठलदास वी० जेराजाणीको[1]

२७ अगस्त, १९३३

प्रिय विट्ठलदास,

आप खादीपर मुझसे सन्देश चाहते हैं। मैं क्या सन्देश भेजूं? जब मैं सुनता हूं कि खादी और चरखेके प्रति लोगोका प्रेम घट रहा है तो इनके प्रति मेरा प्रेम और बढ जाता है।

मोहनदास गांधी

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९७८४) से।

४४४. पत्र : गुलाब ए० शाहको

२७ अगस्त, १९३३

चि० गुलाब,

तू घबराती तो नही होगी। मुझे नियमपूर्वक पत्र लिखती रहना। दैनन्दिनी लिखती है न? किसीसे बहनापा हुआ है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १७३६) से।

१. यह बॉम्बे क्रॉनिकल, १६-९-१९३३ में, "महात्माजी का सन्देश" शीर्षकसे निम्नलिखित टिप्पणीके साथ प्रकाशित हुआ था: "अखिल भारतीय चरखा संघके एजेंट श्रीयुत जेराजाणीने गांधी जयंतीके विशेष अवसरपर महात्मा गांधीसे सन्देश देनेके लिए निवेदन किया था। यह उन्होने गुजरातीमें भेजा था जिसका नीचे अनुवाद दिया जा रहा है।"

४४५. पत्र : मनु गांधीको

२७ अगस्त, १९३३

चि० मनुडी,

तुझे अब ज्वर विलकुल नहीं होता होगा और मजेसे रहती होगी। मुझे ब्यौरेवार पत्र लिखना। अपना कार्यक्रम बताना।

बा मजेमें है। प्रभावतीवहन आज यहाँ आई है।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती की नकल (सी० डब्ल्यू० १५२६) से, सौजन्य मनुवहन एस० मशरूवाला।

४४६. पत्र : हीरालाल शर्माको

२७ अगस्त, १९३३

भाई शर्मा,

दस दिनके वाद अवश्य आइये। मैं कहाँ हूगा उसका पता नहि है। अखबारमें देखोगे। ठहरनेका अलग प्रबन्ध कर लेना। तुमारी तकलीफे दूर हुई होगी।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष (१९३२–४८), पृ० ५२ और ५३ के वीचके अनुचित्रसे।

४४७. पत्र : जमनालाल बजाजको

२८ अगस्त, १९३३

चि० जमनालाल,

मुझमें ताकत ठीक आती जा रही है। ज्ञानसे मिलनेकी तीव्र इच्छा है। वह मुझे मिल जाये तो अच्छा हो। उसका पता लिखना।

कमलाको तो सुन्दर लाभ हुआ लगता है। महामारीका भय न रखकर अभी यहीं रहनेकी सलाह जानकीवहनको दे दी है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९२२) से।

४४८. पत्र : डॉ० मनोरमाबाई थत्तेको[1]

२९ अगस्त, १९३३

केवल अपने गुण लेकर जाओ और उन देशोंमें, जहां तुम जाओ, जो अच्छा हो केवल वही लेकर आओ। ईश्वर तुम्हे सुखी रखे और तुमको सेवाका अधिक उपयुक्त साधन बनाये।

मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८६८०) से।

४४९. तार : जमनालाल बजाजको

पूना,
३० अगस्त, १९३३

जमनालाल बजाज
वर्धागंज

वर्धा जानेको उत्सुक हूं लेकिन सितम्बरके अन्तिम सप्ताहसे पहले पहुंचना सम्भव नहीं।

बापू

[अंग्रेजीसे]
पांचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ११४

४५०. पत्र : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको

३० अगस्त, १९३३

प्रिय भाई,

मैं आपके पत्रको बहुमूल्य मानता हूं।[2]

आपने जो-कुछ कहा है, मैं उसका बुरा नही मानता। बल्कि आपने जो-कुछ कहा है, उसकी मैं सराहना करता हूं। तथापि, इसके बाद मैं यह जरूर कहूंगा कि आपने सरकारके आदेशोकी जो व्याख्या की है, उससे मैं बिलकुल असहमत हूं। यदि आप सारा पत्र-व्यवहार देखेंगे तो सम्भवतः अपना विचार बदल देंगे। जान-बूझकर

१. यह पत्र श्रीमती थत्तेके इंग्लैंडके लिए रवाना होनेसे एक दिनपूर्व लिखा गया था।
२. २७ अगस्तका, देखिए परिशिष्ट १३।

किसीकी खास वकालत करनेकी मेरी आदत नही है। आपने शायद ध्यान नही दिया कि सरकारने "शर्तोकी दूसरी किस्त" का विचार अपने-आप छोड दिया है। इसके विपरीत, जिसेकि आप "पहली बार दी गई रियायत" कहते है, उसके बारेमे सरकारने कहा कि वह देना ही भूल थी, और इस भूलका सम्बन्ध गुणावगुणसे नही, उनकी अपनी सुविधासे था।

बहरहाल, मै अपने वक्तव्यपर आपकी घोषणाके सम्बन्धमे आपसे झगड़ा नही करूँगा। परन्तु, यदि आप ध्यानसे सारे मसलेका अध्ययन करे तो मै खुशीसे सारा पत्र-व्यवहार आपको भेज दूँगा। मुझे उम्मीद है कि आप स्वय यह नही मानते कि मै केवल दोषारोपणके विचारसे सरकारपर दोष लगाना चाहूँगा या वह कार्य मुझे हरिजन-सुधारके कार्यसे भी ज्यादा प्रिय हो सकता है। मै समझता हूँ कि मै सही ढंगसे बातोमे अन्तर देख सकता हूँ, और इसलिए मै जानता हूँ कि सरकारका कब व्यवहार उचित या अनुचित होता है। परन्तु इस सबका इस मामलेसे कोई सम्बन्ध नही है। जो अब महत्त्वपूर्ण नही रहा, उसको लेकर मैने इतना अधिक आपको यह बतानेकी दृष्टिसे लिखा कि आपने मुझपर जो आरोप लगाया है, मै उसका दोषी नही हूँ।

अब मै आपके पत्रकी मुख्य बातपर आता हूँ। मै आपसे पूरी तरह सहमत हूँ कि मै वर्तमान स्थितिमे सविधान बनानेके लिए बिल्कुल अनुपयुक्त हूँ। मेरी रायमे अभी वह समय भी नही आया है। वह समय तभी आयेगा जब राष्ट्र उसके लिए उपयुक्त शक्ति अर्जित कर लेगा। इसलिए अभी मै खुशीसे कांग्रेससे हट जाऊँगा और कांग्रेससे बाहर सविनय अवज्ञा चलानेके काममे और हरिजन-कल्याण कार्यमे लग जाऊँगा। सवाल यह है कि यह काम किया कैसे जाये? क्या मै यह काम कांग्रेससे अलग होकर कर सकता हूँ? अनौपचारिक सम्मेलनके अवसरपर भी मै इसीके कारण परेशान था और यही सवाल अब भी मेरे सामने है। मै प्रकाशकी खोजमे रहा हूँ। जैसे ही मुझमे फिरसे काफी ताकत आ जायेगी है, मै कांग्रेसियोसे इस विषयमे कहूँगा। और यदि कांग्रेससे मेरा अलग होना सम्भव हुआ तो मै खुशीसे अलग हो जाऊँगा। बहरहाल, मेरी धारणा यह है कि कांग्रेसकी विचारधारा नही बदली है। हालाँकि यह सही है कि कांग्रेसियोमे से बहुत लोग परेशान हो चुके है, फिर भी बहुत कम लोग श्वेत-पत्रसे सहमत होगे या बहुत कम लोग इसमे कुछ सशोधन करवानेका प्रयत्न करेगे। वे तो आमूल परिवर्तन चाहते है। परन्तु किसी निर्णयपर पहुँचनेकी मुझे कोई जल्दी नही है। मै आपको यह आश्वासन दे सकता हूँ कि जो कदम राष्ट्रके सर्वोत्तम हितमे हो, उन्हे उठानेमे मै किसी चीजको बाधक नही मान सकता। अपने-आपको मिटा देनेका कोई प्रश्न नही है। कर्त्तव्य-पालनको मैने सदैव सुन्दर और आनन्ददायक माना है। फिर भी कर्त्तव्य क्या है, यह जानना बहुधा कठिन होता है।

आप मुझे छोडे नही, बल्कि मेरा निदेशन करते रहे। यदि आपका आनेको मन हो तो आनेमे भी सकोच न करे। मै भी जब मुझे आपसे व्यक्तिगत सम्पर्क

और सतत विचार-विनिमयकी जरूरत महसूस होगी, आपको आनेके लिए कहनेमे सकोच नही करूँगा।

स्नेह।

मो० क० गाधी

[अग्रेजीसे]

लैटर्स ऑफ श्रीनिवास शास्त्री, पृ० २६०-२

४५१. पत्र : मार्गरेट स्पीगल

३० अगस्त, १९३३

चि० अमला,

तुम्हारे पत्र मिले। जमनालालजी तुम्हे अच्छे लगे, इसकी मुझे खुशी है। तुम्हे उनकी बात माननी चाहिए और जैसा वे कहे वैसा करना चाहिए। तुम्हारी जो भी परिचर्या की जाये और जो तुम्हारे शरीरके लाभके लिए जरूरी हो, उसे कृतज्ञतापूर्वक करवा लो। आशा है कि तुम्हे अब अपने फोडे-फुसियोसे छुटकारा मिल गया होगा।

स्नेह।

बापू

[अग्रेजीसे]

स्पीगल कागजात, सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय और पुस्तकालय।

४५२. पत्र : जमनालाल बजाजको

३० अगस्त, १९३३

चि० जमनालाल,

तुम्हारे तारका जवाब दिया है।[1] तुरन्त आना अच्छा तो बहुत लगता, पर आ नही सकता। बम्बई होकर आना ठीक लगता है। वहाँके वातावरणकी जानकारी प्राप्त करनी है। वहाँका हरिजन-कार्य भी कुछ मन्द-सा है। उसमे तेजी लाई जा सके तो लानी है।

मेरी तबीयत ठीक होती जा रही है। खुराक ठीक लेता हूँ। अपनी तबीयत सँभालना। नी० और अमलाके पत्र साथ है। लगता है, नी० थोडी अव्यवस्थित हुई है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९२३) से।

१. देखिए पृ० ४०१।

४५३. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

३१ अगस्त, १९३३

प्रिय जवाहरलाल,

तो तुम अपने समयसे पूर्व वाहर आ गये। आशा है कि तुम्हें मेरा तार मिला होगा। मैंने सोचा था कि माँ इलाहावाद वापस जा रही हैं। मैं तुमसे आशा करता हूँ कि पूरे हाल लिखोगे।

इन्दु अक्सर मेरे साथ रही है। वह आज शाम फिर आनेवाली है।

यदि हो सके तो हमें अवश्य शीघ्र मिलना चाहिए। यदि माँ की तवीयत खराव वनी रही, तव तो निश्चय ही तुम्हें वहाँ रुकना पडेगा। मैं तुमसे पूर्ण पत्रकी आशा करूँगा। उसे रजिस्ट्री द्वारा भेजना वेहतर होगा।

मैं खोई हुई ताकत धीरे-धीरे फिर हासिल कर रहा हूँ। मैं उपवासके विषयमें कुछ नहीं लिख रहा हूँ, क्योंकि मैं आशा करता हूँ कि तुम अव उसके विषयमें सव जानते होगे। अधिक मिलनेपर।

स्नेह।

वापू

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू कागजात, १९३३; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय।

४५४. पत्र : तोताराम सनाढ्यको

पर्णकुटी, पूना,
३१ अगस्त, १९३३

भाई तोताराम,

तुम्हारा पत्र मिला है। आश्रमको वेहाल देखते हुए भी वरदाश्त करना हमारा कर्त्तव्य है। यदि ईश्वर चाहता है तो उसी जगहका कवजा हम दुवारा लेंगे, और जो कुछ रहा होगा उनमें वास करेंगे। मेरी उम्मीद तो है कि आश्रमका कुछ-न-कुछ उपयोग हो जायगा। तुम्हारी और हरिप्रसादकी शरीरप्रकृति अच्छी होगी। मुझको शक्ति आ रही है। कोई चिंताका कारण नहीं है।

वापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २५२८) से।

४५५. एच० के० हेल्सको लिखे पत्रका अंश

[३१ अगस्त, १९३३ के पश्चात्][1]

मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि अपनेको नाहक कैद करवानेकी मुझे कोई इच्छा नही है। फिर भी यदि शान्तिकी खोज करते हुए गिरफ्तारी मेरे हिस्सेमें आती है, तो मैं उसे प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार करूँगा।[2]

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, १७-९-१९३३

४५६. पत्र : अगाथा हैरिसनको

१ सितम्बर, १९३३

प्रिय अगाथा,

मी० एन्ड्रयूजने उसके नाम लिखे तुम्हारे पत्र मुझे भी दिखाये है। तुम्हे मैं यह पत्र केवल यह समझानेके विचारसे ही लिख रहा हूँ कि और ज्यादा काम कर सकनेके लिए काफी आराम जरूरी है। 'काल करे सो आज कर' वाली कहावतमे काफी सचाई है।

मुझे अपने शरीरके बारेमें या आशाके प्रतिकूल हुई अपनी रिहाईसे उत्पन्न परिस्थितिके बारेमें कुछ कहनेकी जरूरत नही है। मैं जानता हूँ कि दीनबन्धुने इस सबके बारेमें तुम्हे विस्तारसे लिख दिया है।

स्नेह।

बापू

[पुनश्च:]

बेचारा महादेव! वह बेलगाँव जेलमे अब अकेला है। लेकिन इस अकेलेपनसे उसे लाभ होगा।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १४६७) से।

१. श्री हेल्सके जिस पत्रका यह जवाब है वह ३१ अगस्त का था।

२. ब्रिटिश संसदके कंजर्वेटिव दलके सदस्य श्री हेल्सने लिखा था: "अपने जीवनकी सन्ध्यामें आपको चाहिए कि आप हर मूल्यपर जेलके बाहर ही रहें। आपका एक-एक घंटा बहुमूल्य है। अन्य किसी भी व्यक्तिके मुकाबलेमें आपका महीनों बन्दी रहना, वह भी ऐसे समयमें जब आपकी सलाह इतनी जरूरी है, मुझे तो पाप-जैसा लगता है।" उन्होंने पत्रके अन्तमें प्रार्थना की थी कि "इस बार यदि अपने लिए नहीं, तो अपने मित्रोंकी खातिर बन्दी होनेका लोभ संवरण कीजिए।"

४५७. पत्र : एडमंड और युवान प्रिवाको

१ सितम्बर, १९३३

प्रिय आनन्द और भक्ति,

यह पत्र तुम्हारे प्रेमपत्रकी प्राप्ति स्वीकार करनेके लिए और तुम्हें यह बतानेके लिए लिख रहा हूँ कि मैं यथासम्भव स्वस्थ हूँ। शेष हाल तुम्हे मीराके पत्रमे मिलेगा।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८७९६) से।

४५८. टिप्पणी

दोनोमें भेद

दीनबन्धु एन्ड्रयूजने पिछले सप्ताह दक्षिण आफ्रिकाकी अस्पृश्यतापर लिखा था और वहाँ भी कैसे मन्दिर-प्रवेशका सवाल सामने है, इसपर प्रकाश डाला था। तथापि, इन दोनो जगहोकी अस्पृश्यताओमे जो अन्तर है वह ध्यान देने योग्य है। दक्षिण आफ्रिकामे यह रंगभेदपर आधारित है तथा न इसे धर्मकी मान्यता प्राप्त है न कानूनकी। भारतमे दुर्भाग्यवश हिन्दुओकी बहुत बड़ी संख्याका दावा है कि इसे धार्मिक मान्यता प्राप्त है, और हम देखते है कि इसे कानूनी मान्यता भी प्राप्त है। इसलिए, भारतमे प्रचलित अस्पृश्यता दक्षिण आफ्रिकाकी अस्पृश्यतासे कही ज्यादा बदतर है। जहाँतक उससे पीडित जनोका सवाल है, निस्सन्देह, दोनो देशोंमे [अस्पृश्यता] समान रूपसे हानिकर है। दोनो समान रूपसे निन्दनीय है। ऐसा लगता है कि भारतमे यह लड़ाई दक्षिण आफ्रिकासे कही ज्यादा कठिन होगी।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २-९-१९३३

४५९. मन्दिर-प्रवेश बिल[1]

यह दुःखकी बात है कि विधानसभाने अस्पृश्यता-निवारक बिलको एक वर्षके लिए रोक दिया है, और सरकारने इस कदमका समर्थन किया है। पर जबतक विधि संहितासे अस्पृश्यता उड़ नहीं जाती, सुधारकोंको चैन नहीं लेना चाहिए। इस बीच ट्रस्टियों और मन्दिर जानेवालोंकी रायसे तथा मन्दिर-प्रवेशके सामान्य प्रचार द्वारा मन्दिरोंको खुलवानेका काम बराबर जारी रखना चाहिए।

मगर मुझे मालूम हुआ है कि आगरेके एक हरिजन सम्मेलनने निम्नलिखित प्रस्ताव पास किया है:[2]

> . . . इस जाटव सम्मेलन . . . का यह विचार है कि इस [हरिजन] आन्दोलनकी कार्य-पद्धति सन्तोषजनक नहीं है। हरिजन-आन्दोलन आर्थिक और शिक्षा-सम्बन्धी समस्याओंकी अपेक्षा मन्दिर-प्रवेशपर अधिक जोर देता है। . . . इससे दासताकी मनोवृत्ति पैदा होगी . . .। अतः . . . आर्थिक और शिक्षा-सम्बन्धी उन्नतिपर अधिक जोर देना चाहिए। आन्दोलनके कार्यक्रममें अन्तर्जातीय विवाह और भोजको अवश्य स्थान मिलना चाहिए। . . . .

आर्थिक और शिक्षा-सम्बन्धी उन्नति, निस्सन्देह, सवर्ण हिन्दुओंके सच्चे प्रायश्चित्तका मुख्य अंग होगी। यह उनके वचनोंकी सचाईकी कसौटी है। पर मन्दिरोंको खोले बिना पूरी उन्नति हो ही नहीं सकती। मन्दिरोंको खोल देना इस बातका प्रमाण होगा कि हरिजनोंकी धार्मिक समानता मान ली गई है। यह इस बातका निश्चित चिह्न होगा कि हरिजन, आजकी तरह हिन्दू-समाजसे अब और बहिष्कृत नहीं रहेंगे।

यह कहना असंगत है कि हजारों हरिजन मन्दिरोंमें जाना नहीं चाहते। इस बातकी यदि ठीक-ठीक जाँच की जाये, तो वस्तुस्थिति बिलकुल उल्टी ही निकलेगी। हजारों हरिजन मन्दिरोंमें जाना चाहते हैं, किन्तु प्रतिबन्धके वे इतने आदी हो गये हैं कि मन्दिरोंमें प्रवेशकी उनकी आशा-लता मुरझा गई है। उनका खयाल है कि अन्य हिन्दुओंके समान उनका मन्दिर-प्रवेश असम्भव है।

परन्तु हरिजन मन्दिर-प्रवेशका आश्वासन चाहें या न चाहें, मन्दिरोंके खुल जानेके बाद वे उन्हें प्रयोगमें लायें या न लायें, सवर्ण हिन्दुओंको तो अपना कर्त्तव्य पूरा करना ही है। उन्हें हरिजनोंके लिए मन्दिर पूजार्थ ठीक उन्हीं शर्तोंपर खोल देने चाहिए, जिन शर्तोंपर कि वे उनके खुदके लिए खुले हुए हैं। महाजन अगर

१. अस्पृश्यता-निवारक बिल सी० एस० रंगा अय्यर द्वारा २४ मार्च, १९३३ को पेश किया गया था; देखिए खण्ड ५३, पृ० १५ की पा० टि० संख्या १।

२. प्रस्तावके कुछ अंश ही यहाँ दिये गये हैं।

कर्जेकी अदायगीकी परवाह नही करता या उसे भूल जाता है, तो देनदार कर्जा चुकानेके कर्त्तव्यसे मुक्त नही हो जाता।

जब मन्दिर हरिजनोंके लिए खुल जायेंगे, तो पाठशालाएँ, कुएँ और अन्य सुविधाएँ तो अपने-आप ही उन्हें मिल जायेंगी। यह समझना बिलकुल आसान है कि आर्थिक उन्नति हो जानेपर भी अस्पृश्यता बनी रह सकती है। त्रावणकोरके बहुत-से एजुआ लोगों और बंगालके नामशूद्रोंके पास अच्छी धन-दौलत है, फिर भी वे समाजसे बहिष्कृत ही समझे जाते हैं। आर्थिक स्थिति अच्छी होनेके कारण, उन्हे यह प्रतिबन्ध और भी अधिक खलता है। डॉक्टर अम्बेडकर उच्च शिक्षा-प्राप्त व्यक्ति है और उनकी आर्थिक स्थिति भी अच्छी है, फिर भी अस्पृश्यताके अभिशापसे उन्हे वेदना पहुँचती रहती है। अस्पृश्यताके-अपमानसे उन्हें अधिक पीड़ा होना स्वाभाविक ही है। किन्तु यदि सवर्ण हिन्दू, ठीक अपने ही समान, हरिजनोंको मन्दिर-प्रवेशकी अनुमति देकर अस्पृश्यताके अन्तकी घोषणा कर दे, तो यह कलंक उसी क्षण अपने-आप दूर हो जायेगा। तब यदि किसी हरिजनकी मन्दिरमे जानेकी इच्छा न होगी, तो उसके लिए मन्दिरमें जाना आवश्यक नहीं होगा। अन्य हरिजनोंके साथ-साथ, मन्दिरोंके खुल जानेकी घोषणा उसके लिए भी होगी। यह बात दासताके मूलोच्छेदन-जैसी ही होगी। हिन्दू-धर्ममे शुद्धिकी बहुत आवश्यकता है और यह शुद्धि आजसे बहुत पहले हो जानी चाहिए थी। अतः शुद्धिके मार्गपर हमारा यह बड़ा ही सुन्दर कार्य होगा।

मन्दिर-प्रवेशकी अनुमति तभी उपयोगी हो सकती है जब सवर्ण हिन्दू स्वेच्छासे यह बात मान जायें। इसलिए वह सवर्ण हिन्दुओंके सच्चे हृदय-परिवर्तनकी द्योतक होनी चाहिए। पर कानूनकी तो फिर भी जरूरत रहेगी, क्योंकि सवर्ण हिन्दुओंके मन्दिरोंमें हरिजनोंके प्रवेशकी कानूनन मनाही बताई जाती है। कानून विशाल हिन्दू समाजकी सम्मतिकी मोहर होगा। सवर्ण हिन्दुओंके सार्वजनिक विरोधके रहते हुए मैं, व्यक्तिगत रूपसे, कानून बनवाना नही चाहूँगा। पर मेरा विश्वास है कि सवर्ण हिन्दू सामूहिक रूप मे हरिजनोंके मन्दिर-प्रवेशके विरोधी नहीं है। इस विषयमे अगर ईमानदारीसे जनताका मत लिया जाये, तो मै उसका परिणाम माननेको तैयार हूँ। हर हालतमे, सुधारकोंको समझ लेना चाहिए कि दिल्लीकी धारासभामे चाहे जो हो, मन्दिर-प्रवेश और तत्सम्बन्धी आवश्यक कानून बनवानेका आन्दोलन जारी रहना ही चाहिए।

ऊपर उद्धृत प्रस्तावमें कुछ और बातें भी हैं जिनकी व्याख्या या आलोचना आवश्यक है। पर उनपर 'हरिजन' के किसी और अंकमे विचार किया जायेगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २-९-१९३३

४६०. पत्र : डॉ० मोहम्मद आलमको

पर्णकुटी, पूना,
२ सितम्बर, १९३३

प्रिय डॉ० आलम,

ईश्वरकी लीला अपरम्पार है। वह अक्सर हमे चकित कर देता है। मुझे भान भी नही था कि मुझे इस ढगसे रिहा होना पडेगा जैसाकि हुआ। अगला कदम क्या उठाना चाहिए, अब मै इसके लिए प्रकाश पानेकी प्रार्थना कर रहा हूँ। मुझे खेद है कि मैंने अभीतक आपका लेख नही पढा है, लेकिन अब जरूर पढूँगा। आपको अपनी जॉच अवश्य करवानी चाहिए और स्वस्थ बने रहनेका उपाय करना चाहिए। मै खोई हुई ताकत फिरसे हासिल करनेकी दिशामे बराबर आगे बढ़ रहा हूँ।

बेगम आलमके लिए पत्र।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

डॉ० एस० मोहम्मद आलम
१ लिटन रोड
लाहौर

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३१) से।

४६१. पत्र : न० रा० मलकानीको

२ सितम्बर, १९३३

प्रिय मलकानी,

तुम्हारा ११ तारीखका पत्र मिला।

लक्ष्मी[1] मुझे पहले ही बता चुकी थी कि किस प्रकार आप तथा आपकी पत्नी उसकी देखभाल कर रहे हैं। यह जानकर कि वह आपकी छत्रछायामे है, मै पूरी तरह बेफिक्र हो गया। देखता हूँ कि अब वह वर्धा चली गई है। मेरी समझमें नही आया कि वह, इससे पहले कि देवदास दिल्लीसे हटाया जा सके, क्यों चली गई। उसके पहले पत्रसे मुझे विदित हुआ था कि वह तबतक दिल्ली रहेगी जबतक

१. च० राजगोपालाचारीकी बेटी और देवदास गांधीकी पत्नी।

देवदास दिल्लीमे है। मैने राजाजी को पत्र लिखा है। मै धैर्य रखनेके लिए उनका कहना समझ सकता हूँ क्योकि उन्हे अपने बच्चोंके प्रति और विशेष रूपसे लडकियोके प्रति पिता-माता दोनों ही बनकर रहना है। मै यह भी जानता हूँ कि भीतर उनके मनमे शोभनीय शान्ति बनी रहती है।

मै आशा करता हूँ कि वहाँका काम प्रगति कर रहा होगा। यदि तुम्हे हरिजन-कार्यके सम्बन्धमे अथवा 'हरिजन'के सम्पादनके बारेमे कोई सुझाव देने हों तो जब तक मै उन्हे पा सकनेकी स्थितिमे हूँ, भेजनेमे सकोच मत करना।

स्नेह।

बापू

श्रीयुत न० रा० मलकानी
सर्वेन्ट्स ऑफ अनटचेबल्स सोसायटी, बिड़ला मिल्स
दिल्ली

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९०१) से।

४६२. पत्र : चारुप्रभा सेनको

२ सितम्बर, १९३३

प्रिय चारुप्रभा,

तुम्हारा छोटा-सा पत्र पाकर मुझे खुशी हुई।

मै समझता हूँ कि तुम्हारा कहना बिलकुल ठीक है। मेरा सहयोगी बनना किसीके लिए भी मजाक नही है। लेकिन मै जानता हूँ कि परमेश्वर सभी सहयोगियोको और मुझे वह शक्ति देता है जिसकी उन्हे या मुझे जरूरत पड़े। इसलिए तुम्हे मेरी दया या सहानुभूति नही मिलेगी; तुम्हे अपने सेवाभावका सच्चा परिचय देना पड़ेगा।

आशा है कि तुम ठीक चल रही होगी। मै धीरे-धीरे लेकिन बराबर फिरसे ताकत हासिल कर रहा हूँ।

स्नेह।

बापू

श्रीमती चारुप्रभा सेन
राजबाड़ी, जिला फरीदपुर
(बगाल)

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८७०२) से।

४६३. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

२ सितम्बर, १९३३

चि० अमला,

तुम्हारे पत्र मिले। तुम्हे मुझसे पत्रोके तत्काल उत्तरकी आशा नही करनी चाहिए। मै जब कभी तुम्हे लिख सकूँगा, निश्चय ही लिखूँगा।

मैंने अपने स्वास्थ्यके बारेमे तुमसे कुछ नही कहा था, क्योकि कुछ अन्य पत्रोमे मैं उसका उल्लेख कर चुका था।[1] मै जितना हो सकता है उतना ठीक हूँ। ताकत धीरे-धीरे बराबर लौट रही है। इसलिए चिन्ताका कोई कारण नही है। मै दूध, फल और सब्जियाँ ले रहा हूँ।

आशा है कि तुम अपने-आपको लगातार योग्य बनाती जा रही होगी।

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल कागजात, सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय और पुस्तकालय।

४६४. पत्र : बनारसीदास चतुर्वेदीको

२ सितम्बर, १९३३

भाई बनारसीदास,

तुम्हारा पत्र मिला। आनद हुआ। बगालमे हिंदी प्रचारके लिये वेतन देकर अच्छे शिक्षक रखने चाहिये। रामानद बाबुने, हिंदी भाषाकी बडी सेवा की है इसमे कोई सदेह नही है। 'विशाल भारत'[2] स्वावलबी करनेके लिये तुमको धन्यवाद। मद्रासके दोरेका वर्णन मैंने देख लिया है। अच्छा है। तुमारी शारीरिक प्रकृति अच्छी होगी।

बापूके आशीर्वाद

पण्डित बनारसीदास चतुर्वेदी
सम्पादक, 'विशाल भारत'
१२०/२ अपर सर्कुलर रोड, कलकत्ता

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २५६४) से।

१. देखिए "पत्र : जमनालाल बजाजको", ३०-८-१९३२।

२. कलकत्तासे प्रकाशित हिन्दी मासिक।

४६५. पत्र : विद्या आनन्द हिंगोरानीको

२ सितम्बर, १९३३

चि० विद्या,

तुम्हारा खत आया है। मेरा ख्याल है कि तुम्हारे वही रहना चाहिए। आगे देखा जाएगा। आजकल तो आनद यही रहेगा। इस मासके आखिरतक मे वर्धा पहुँचनेकी कोशिश करूँगा। शरीर और मन स्वस्थ रखो।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी माइक्रोफिल्मसे, सौजन्य राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द टी० हिंगोरानी।

४६६. भेंट : एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाके प्रतिनिधिको[1]

२ सितम्बर, १९३३

पहलेकी सलाह देनेमे मैंने कोई गलती की हो, इसका मुझे भान नही। फिर भी, मै मानता हूँ कि इस आकस्मिक रिहाईसे ऐसी स्थिति पैदा हो गई है जिसमे विशेष बरतावकी जरूरत है। अभी तो मै बस यही कह सकता हूँ कि इस सम्बन्धमे मैं हृदयसे प्रार्थनापूर्वक विचार कर रहा हूँ। मेरे सामने कोई बनी-बनाई योजना नही है। मै सभी मित्रोंसे विचार-विमर्श करूँगा, सभीकी राय सुनूँगा तथा जल्दबाजीमे कोई निर्णय नही लूँगा। मै फिर कहता हूँ कि शान्तिके लिए मैं हृदयसे इच्छुक हूँ। अत जहाँतक मेरा बस चलेगा मै इसके लिए कुछ उठा नही रखूँगा।

[अंग्रेजीसे]

गृह-विभाग, राजनीतिक, फाइल स० ४/११/३३, १९३३, पृ० ४; सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार।

१. साधन-सूत्रमें यह अंश नेशनल कॉल, ३-९-१९३३ से लिया गया है। नेशनल कॉलने इस समाचारके विवरणमें कहा था कि एसोसिएटेड प्रेसके प्रतिनिधिके साथ इस भेंट-वार्तामें गांधीजी ब्रिटेनके राष्ट्रीय मजदूर दलकी पाक्षिक पत्रिका न्यूज लेटर द्वारा व्यक्त की गई इस आशापर टिप्पणी कर रहे थे कि उन्हें भारत सरकारके इस मैत्रीपूर्ण कदमका वैसा ही मैत्रीपूर्ण उत्तर देना चाहिए।

४६७. सलाह: मित्रोंको[1]

[३ सितम्बर, १९३३ से पूर्व]

मेरे लिए तो यह नया जन्म ही हुआ। मैं तो आशा छोड़ चुका था। २३ की रातको जब उलटी हुई तब मुझे लगा कि अब अधिक नही टिक सकूंगा, मृत्युसे अब लड़ नही सकूंगा। २४ की दोपहरको जो-कुछ मेरे पास था, वह मैंने दूसरेको सौंप दिया।

जो बातें हमारे लिए रोजमर्राकी हो जाती है, वे यदि अच्छी लगती हों तो हमें उनसे सुख नहीं होता और अगर वे हमें खराब लगती हों तो उनसे दु:ख नही होता। मैं चाहूँ या न चाहूँ, उपवास मेरे लिए आये दिनकी बात हो गई है। आपको उसमें दु:ख क्यों मानना चाहिए? आपको समझ लेना चाहिए कि ये तो अब मेरे जीवनके अंग हो गये हैं। यह सोचकर आपको मेरी देहके प्रति अपनी आसक्ति छोड देनी चाहिए। कष्ट तो मुझे भोगना ही पडा। किन्तु बिना महान कष्ट उठाये कृष्ण किसे मिले हैं?

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, ३-९-१९३३

४६८. बातचीत: एक पारसी सज्जनसे[2]

[३ सितम्बर, १९३३ से पूर्व]

प्र० मुझे यह देखकर बड़ा दुःख होता है कि हरिजन-सेवाका काम कई जगहपर सेवा-भावनाके बजाय हरिजनोपर उपकारकी भावनासे किया जा रहा है।

उ० यह बिल्कुल ठीक है। इसीलिए मैं तो सवर्ण हिन्दुओंसे कहता ही रहता हूँ कि आप जो-कुछ करें, अपना ही स्वार्थ समझकर करें। यह आपके लिए प्रायश्चित्त है, शुद्धि है।

प्र० किन्तु आप जैसा चाहते हैं काम उस तरह नहीं होता। कण-कणमें ऊँच-नीचका भाव भरा हुआ है।

उ० मैं यह बात स्वीकार करता हूँ। जबतक यह भाव नही जाता, तबतक यह नही कहा जा सकता कि अस्पृश्यता चली गई। हरिजनोको छू लेना-भर काफी नही है।

१. यह और आगेके तीन शीर्षक, चन्द्रशकर शुक्लकी "साप्ताहिक चिट्ठी" से लिये गये हैं। उसमें ये "नया जन्म" शीर्षकसे प्रकाशित हुए थे।

२. यह "सारे जगतके लिए" उपशीर्षकसे प्रकाशित हुई थी।

प्र० हम पारसियोंमें भी ऊँच-नीच भाव है। हमारे बीचमें भी पहला दर्जा, दूसरा दर्जा, तीसरा दर्जा — इस तरहके वर्ग है। ये वर्ग परस्पर घुलते-मिलते नहीं है।

उ० आप हम लोगोके साथ इतने वर्षोसे रहते चले आ रहे है, इसलिए हमारी छूत आपको लगेगी ही। एक बार मुझसे एक पारसी भाई मिले थे। वे कहने लगे, ऊँच-नीच तो ईश्वरकी बनाई हुई है। मैंने कहा "आप पारसी होकर ऐसी बात कर रहे है? यह इसीलिए कि आपको हमारी छूत लग गई है।"

प्र० यह बात मुसलमानोमें भी है।

उ० इसी तरह ईसाइयोमे भी समझिए। अभी पिछले दिनो मद्रासके ईसाई अस्पृश्यो की सभा हुई थी। क्या कभी ससारमे 'ईसाई अस्पृश्य' जैसा शब्द आपने सुना था?

प्र० मुझे तो लगता है कि अस्पृश्यता-का नाश उसे हृदयसे निकाले बिना नहीं हो सकता। आप क्या सोचते है?

उ० जबतक यह नहीं होता तबतक सब-कुछ कच्चा है। हिन्दू-धर्मसे अस्पृश्यताका नाश हो जाये तो अन्य अनेक समस्याओंका हल निकल आये। इसके बाद हिन्दू-मुस्लिम प्रश्न भी हल हो जायेगा, ऐसा मै सोचता हूँ। क्योकि इस प्रश्नके मूलमे भी ऊँच-नीच भावना भरी है।

प्र० सच कहे तो जरथुस्तका इरादा अपना कोई अलग धर्म स्थापित करनेका नही था। धर्म तो बादमें स्थापित हुआ। अब तो पारसियोंके मनमें पारसी और दूसरोके बीच भेदकी भावना घर कर गई है।

उ० यह भी हिन्दू-धर्ममें की गई बात है। उन्हे यह भेदभाव हिन्दुस्तानकी हवामे से मिला। यदि यह भावना हिन्दू-धर्मसे समाप्त हो जाये तो दूसरे धर्मोसे भी समाप्त हो जाये। दस-पाँच कुएँ खोद दिये या थोडे-बहुत मन्दिर खोल दिये, तो मै इतनेसे ही सन्तोष मानकर थोडे ही बैठ जाऊँगा। यह तो केवल उदाहरण कहलायेगे। इतना भी न हो तो कहना होगा मुँहकी बात मुँहतक ही रह गई। हमे तो इसके बहुत आगे जाना पडेगा।

प्र० आप हरिजनोंकी सेवामें केवल हिन्दुओंका विचार रखते है या दूसरोंका भी।

उ० दूसरोका विचार उसमे निहित ही है, जिस प्रकार भारतीय स्वतन्त्रता सारे जगतके हितके लिए है। फिर भी मै ऐसा न कहकर केवल हिन्दुस्तानकी स्वतन्त्रताकी ही बात करता हूँ। इसी प्रकार मुझे पूरा विश्वास है कि हरिजन प्रश्नको हल करनेके व्यापक परिणाम होगे। सारे ससारपर इसका असर पड़ेगा। यदि ऐसी आशा न होती तो हरिजन-कार्यमे पडनेकी जरूरत ही क्या थी? मै कह चुका हूँ और मैंने लिखा भी है कि इस मार्गसे चलकर मै सम्पूर्ण मानव-जातिकी सेवा करना चाहता हूँ।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, ३-९-१९३३

४६८. सलाह : एक हरिजन कार्यकर्त्ताको[1]

[३ सितम्बर, १९३३ से पूर्व]

मुझे इसके लिए कोई योजना नहीं चाहिए। मुझे तो योजक चाहिए। योजक न हो तो योजना किस कामकी? शक्ति न हो तो योजना बनाकर भी क्या कर सकते हैं? आप चमड़ेका काम हाथमें लेना चाहते हैं। मुझे यह काम बहुत पसन्द है। किन्तु आपने इसे सीखा नहीं है। केवल चप्पल बना लेना आता है, इसीसे काम नहीं चलेगा। हमें चमड़ा कमानेका काम भी हाथमें लेना पड़ेगा। यदि आपमें इसकी शक्ति हो तो मेरा और आपका काम बन जाये। हमें कोई बड़ा कारखाना खड़ा नहीं करना है, हमें तो केवल इस बातका विचार करना है कि गाँवमें चमड़ा कमानेका काम अच्छी तरह कैसे हो। मधुसूदन दासने क्या किया था? उन्होंने उत्कलके चर्मकारोंको इकट्ठा किया और यह समझा कि वे चमड़ा किस प्रकार कमाते हैं। किन्तु उन्हें इससे सन्तोष नहीं हुआ; इसलिए वे जर्मनी गये और वहाँ चमड़ेका काम सीखा। वे एक जर्मनको साथ लेकर लौटे और एक कारखाना स्थापित किया। वह कारखाना कटकमें मौजूद है। अब वह उनके हाथमें नहीं है। आजकी उसकी स्थितिके विषयमें मुझे जानकारी नहीं है। मधुसूदन दासके समयमें बहुत-से हरिजनोंने यह काम सीखा। आपको भी चाहिए कि आप मधुसूदन दासकी तरह पहले इस कलाको हस्तगत कर लें। यह काम एक महीनेमें आनेवाला नहीं है। इसे ठीक-ठीक सीख लिया जाये तो उत्तम काम बने। सीखनेकी सुविधा मैं जुटा दूँगा।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, ३-९-१९३३

४७०. चर्चा : उपवासपर[2]

[३ सितम्बर, १९३३ से पूर्व]

जिसे हम धर्म मानते हैं, रूढ़िवादी उसे अधर्म मानते हैं। यह उनका अज्ञान है। किन्तु इसके विरोधमें आमरण अनशन नहीं किया जा सकता। यह आमरण अनशनका विषय नहीं है। आमरण अनशन तो इनी-गिनी बातोंको लेकर ही किया जा सकता है। यह एक बहुत ही सख्त इलाज है। उपवास एक पेचीदा विषय है। सशर्त उपवास सापेक्ष है अर्थात्, परिस्थितिको तौलकर ही किया जा सकता है। इसीलिए मैंने हिन्दू-धर्मकी शुद्धिके लिए, शर्तसे स्वतन्त्र उपवास[3] की कल्पना की। अभीष्ट यह

१. यह "सेवाके लिए प्रशिक्षण" उपशीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।

२. यह "उपवासकी मर्यादा" उपशीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।

३. ८ मईसे २९ मई, १९३३ तक।

है कि जिस तरह गंगाकी काँवर एक कंधे-से-दूसरे कंधेपर बदलते हुए आगे बढ़ती चली जाती है, उसी प्रकार उपवासकी शृंखला बँध जाये। धर्मकी शुद्धिके लिए सच्चे आदमी सच्चे ढगसे आमरण अनशन करें, तो जनतापर इसका प्रभाव अवश्य पड़े। यह आसुरी नही, दैवी प्रवृत्ति है। हिन्दू-धर्ममे पाप प्रवेश कर गया है। यदि कोई उसके निवारणके लिए २१ दिनोंका अथवा ४० दिनोंका भी उपवास करे, तो ऐसा कोई नही कह सकता कि यह किसी प्रकारका बलप्रयोग है। क्योंकि यह तो ऐसा उपवास हुआ जो लोग कुछ भी क्यों न करे तोड़ा नही जा सकता।

प्रश्न: मैंने जिस आमरण अनशनकी कल्पना की है, उसमें आप बलप्रयोग कहाँ देखते हैं?

उत्तर: मन्दिरके न्यासियोंसे आपका किसी प्रकारका सम्बन्ध नही है। आप जिसे अधर्म मानते है, वे उसे धर्म मानते है। फिर उसके विरोधमे उपवास कैसे किया जा सकता है? उपवासका सहारा लेकर किसीका धर्म थोड़े ही परिवर्तित कराया जा सकता है। सशर्त उपवास किन परिस्थितियोमे हो सकता है, सो मै समझाता हूँ। मान लीजिए, मेरा भाई शराब पीता है। शराब पीना वह स्वय भी बुरा मानता है, फिर भी उसे छोड़ नही पाता। यदि मै उसके शराब छोड़ देनेतक उपवास करूँ तो यह उचित है। किन्तु यदि वह हिन्दू-धर्म छोड़कर ईसाई होना चाहता हो और मै उसके इस कामको रोकनेके विचारसे उपवास करूँ, तो यह जबरदस्ती करना कहलायेगा। इसलिए आप फिलहाल तो मन्दिरके न्यासियोसे मिले, उनके साथ बातचीत करें, उनके मित्रोकी मारफत अपनी दलीले पेश कराये, लोकमत तैयार करे। अभी तो आपका यही कर्त्तव्य है। लोकमत अनुकूल हो जानेपर न्यासियोको इसकी सूचना देनी चाहिए, जैसाकि गुरुवायुरमे मतसग्रह[1] के द्वारा किया गया था। सम्भव है लोकमतको अनुकूल देखकर न्यासीगण मान जाये। सभामे हाथ उठवा कर मतसग्रह करानेसे काम नही चलेगा। घर-घर जाकर मत लिये जाने चाहिए।

प्र०: यदि इसके बाद भी वे न मानें तो फिर मै आमरण अनशन न करूँ तो क्या करूँ?

उ०: आमरण अनशन करनेकी सलाह तब भी नही दी जा सकती। हिन्दू-धर्मकी शुद्धि इस तरह सम्भव नही है। हिन्दू-धर्ममे कुछ ऐसी बाते है, जिन्हे सुधारा जाना चाहिए। फिर भी लोग उन्हे सुधारना मंजूर नही करते। मैंने कहा है कि अस्पृश्यताका नाश न हुआ तो हिन्दू-धर्मका नाश हो जायेगा। मेरा यह कथन अक्षरश: सच है। किन्तु यदि ईश्वरने ही निश्चय कर लिया हो कि हिन्दू-धर्म नष्ट हो जाना चाहिए तो फिर हम क्या कर सकते है? हम अपने प्राण अवश्य दे सकते है; किन्तु इसके योग्य अवसर होना चाहिए।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, ३-९-१९३३

१. दिसम्बर, १९३२ में; देखिए खण्ड ५२।

४७१. इसमें अतिशयोक्ति नहीं है

एक भाईने नीचे लिखा पत्र भेजा है:

मैं 'हरिजनबन्धु' नियमपूर्वक पढ़ता हूँ। २७ अगस्तके 'हरिजनबन्धु' में मैंने आपका 'मेरा जीवन-प्राण'[1] शीर्षक वह लेख पढ़ा जिसमें आप कहते हैं — अन्न बिना तो मैं कुछ दिनतक जी भी सकता हूँ पर हरिजन-सेवाके बिना एक क्षण भी जीना मेरे लिए असम्भव है।

आपके अनेक लेखोंमें, मुझे भावोंकी अतिशयोक्ति जान पड़ती है। कितनी ही बार आपको लिखकर यह बात बतानेकी मेरी इच्छा हुई है, पर इस डरसे नहीं लिखा कि कहीं ऐसा मैं आवेशमें तो नहीं कर रहा हूँ। पर अब नहीं रहा जाता। मेरा कहना यह है कि ऐसे वाक्योंसे अनेक बार लोगोंके मनमें भ्रम पैदा हो जाता है। जो आपके कहनेका अभिप्राय समझते हैं, उनकी बात मैं नहीं लिख रहा हूँ। पर आपके कितने ही भोले श्रद्धालु भक्त और अनुयायी इसका उल्टा ही अर्थ लगा सकते हैं। अगर आपके जीवनका हरएक क्षण हरिजन-सेवाके लिए अर्पित हो चुका है, तो फिर आप दूसरे कामोंके लिए कहाँसे समय निकाल लेते हैं? फिर सरकारकी भी तो यही दलील थी। एक म्यानमें दो तलवार नहीं रह सकतीं। मैं समझता हूँ कि आपके जीवनके कार्यक्षेत्रमें किसी प्रकारके विभाग नहीं हैं। आप जीवनके तमाम भिन्न-भिन्न कामोंको एक ही रूपमें देखते हैं। पर साधारण जनता आपकी यह बात नहीं समझ सकती। ऊपर लिखे हुए वाक्यको पढ़कर लोग यही अर्थ करते हैं कि अब गांधीजी हरिजन-सेवामें ही अपना सारा जीवन लगा देंगे, पर असलमें यह बात है नहीं। अवसर मिलते ही आप दूसरे काम भी करेंगे। मेरा खयाल है कि विचारोंकी आपकी इस अतिशयोक्तिसे लोगोंमें पहले भी काफी भ्रम फैल चुका है। अगर आप जैसा हो वैसा ही बोलें अथवा लिखें, तो भ्रम फैलनेकी सम्भावना बहुत कम रह जायेगी। प्रेमवश होकर ही मैंने यह पत्र लिखा है, इसलिए मुझे आशा है कि कहीं मुझसे नासमझी हो गई हो तो आप मुझे क्षमा करेंगे।

किसी तरहका फेरफार किये बिना, पत्र मैंने ज्यों-का-त्यों उद्धृत कर दिया है। पत्रसे मालूम होता है कि लिखनेवालेके मनमें जैसा सन्देह हुआ है वैसा ही दूसरोंके मनमें भी हुआ है। अगर यह ठीक है, तो यह मेरे लिए बड़े दुःखकी बात है। मैं

१. देखिए पृ० ३८५।

अपने-आपको प्रामाणिक बात लिखनेवाला ही मानता हूँ। सत्यका पुजारी होनेके कारण, मुझे अतिशयोक्ति न तो शोभा ही देती है और न अच्छी ही लगती है। मैं मानता हूँ कि हरिजन-सेवाके विषयमे मैंने जो-कुछ लिखा है वह अक्षरश. ठीक है। पर यह सेवा ऐसी नही है कि इसे करते हुए और दूसरी सेवा न की जा सके। हरिजन-सेवाके बारेमे मैंने जो-कुछ कहा है, वही दरिद्रनारायणकी सेवाके सम्बन्धमे भी कह सकता हूँ। कारण यह है कि दरिद्रनारायणकी सेवा हरिजन-सेवाकी विरोधी नही है। इन दोनो सेवाओके विषयमे जो-कुछ कह सकता हूँ, वही दूसरी वस्तुओके विषयमे भी कहा जा सकता है। मनुष्य-जीवन कोई जड़ वस्तु नहीं है। इस जीवनमे हममे से प्रत्येकको कितनी ही चीजे प्राणके समान प्यारी लगती है और उनके बिना वह जी नही सकता। इस बातकी सचाईका आधार उस समयकी निष्ठाके ऊपर निर्भर है। किसीको अमुक वस्तु प्राणके समान होनेपर भी उसके वियोगसे मरण नही होता; कितनोंको इस तरहका वियोग मृत्युदण्डके समान साबित होगा।

हरिजन आदिकी सेवाका कोई यह अर्थ नही करता कि वाह्य कार्य प्रतिक्षण सेवाके अनुकूल होना चाहिए; अवश्य इसका यह अर्थ है कि बीचबीचमे प्रसंगानुसार कार्य भी होते रहेगे। आप जमीनमे बीज बोते है, तो वह तुरन्त ही वृक्षके या पौधेके रूपमे नहीं निकल आता। पर आप यह अवश्य जानते हैं कि उपयुक्त भूमिमे बोया हुआ उत्तम वीज प्रतिक्षण विकास कर रहा है — फिर आप भले ही उसे कुछ दिन या कुछ महीने वाद पौधे या वृक्षके रूपमे देखे। भौतिक बीजके विषयमे आपको जो-कुछ अनुभव होता है, वही मानसिक अथवा आध्यात्मिक वीजके विषयमे भी कहा जा सकता है।

हरिजन-सेवाके सम्बन्धमे मेरा कथन कहाँतक सच है, यह वात बिलकुल ठीक तो मेरी मृत्युके वाद ही मालूम हो सकेगी। पूर्ण ज्ञान तो सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान ईश्वरको ही है, क्योंकि वह हमारे हेतुतक को पहचानता है। एक-दूसरेका हेतु समझनेका कोई यन्त्र तो मनुष्यके पास है नही, इसलिए पूर्ण परीक्षा तो मृत्युके उपरान्त भी नहीं हो सकती। इसीसे हरिजन-सेवाके बारेमे मैंने जो-कुछ लिखा है, उसमे तनिक भी अतिशयोक्ति नही है। मेरी इस प्रतिज्ञाके द्वारा ही पत्र-लेखक भाईको तथा उन-जैसे भ्रममे पड़े हुए दूसरे सज्जनोंको सन्तोष कर लेना चाहिए।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, ३-९-१९३३

४७२. वक्तव्य : समाचारपत्रोंके लिए[1]

३ सितम्बर, १९३३

अहिंसामें अपने पूर्ण विश्वासको और राजनैतिक अधिकारों अथवा राजनैतिक स्वतन्त्रताकी प्राप्तिके लिए हिंसाको साधन[2] बनानेमें सर्वथा अविश्वासको दोहराना मेरे लिए जरूरी नहीं है। मिदनापुरके मजिस्ट्रेट[3] की हत्यासे मेरे हृदयको बहुत आघात पहुँचा है। लेकिन साथ ही इस बातमें खेद न होना भी असम्भव है कि शासक अपनी उन बुराइयोंको जिनकी वजहसे ऐसी हत्याएँ होती हैं, दूर करनेको तैयार नहीं हैं। इतना ही नहीं, बल्कि वे बदलेमें, जैसाकि अध्यादेशोंमें साफ जाहिर है, आतंकवाद द्वारा शासन करनेका दुराग्रह रखते हैं।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ४-९-१९३३, जी० एन० १४६९ भी।

४७३. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

३ सितम्बर, १९३३

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। जाहिर है कि तुम्हारी मौजूदगीने माँके लिए पौष्टिक दवाका काम किया। यदि वे ज्वरमुक्त रहती हैं तो अब तुम्हें कुछ दिनोंके लिए बाहर निकल सकना चाहिए। यदि वे ज्वरमुक्त रहें तो तुम्हें, जितनी जल्दी हो सके, मेरे पास आ जाना चाहिए। मैं अगले शुक्रवार या शनिवारको यहाँसे बम्बईके लिए रवाना होनेको आतुर हूँ और वहाँ लगभग एक सप्ताह रहना चाहता हूँ, फिर वर्धा जाऊँगा।

जिस नवयुवक[4] का तुमने उल्लेख किया है, उसे मैं नहीं जानता। मैं उसके परिवारको अच्छी तरहसे जानता हूँ। मैं उससे मिला भी जरूर होऊँगा। लेकिन यदि मैं उसे देखूँ, तो पहचान नहीं पाऊँगा। परिवारकी परम्पराएँ उदार हैं। इसलिए कृष्णा उनके साथ शायद काफी खुश रहेगी। मैंने उसके बारेमें अनसूयाबहनको लिखा

१. वक्तव्यकी एक प्रति थोड़ा शाब्दिक फेर-बदलके साथ अगाथा हैरिसनको भेजी गई थी। (जी० एन० १४६९)

२. जी० एन० की प्रतिमें "मीन्स" की जगह "मेथड" है।

३. बी० ई० जी० बर्ग, जिनकी तीन बंगाली युवकोंने २ सितम्बरको हत्या कर दी थी। जी० एन० की प्रतिमें यहाँ भी थोड़ा शाब्दिक भेद है।

४. जी० एन० की प्रतिमें यहाँ भी थोड़ा शाब्दिक भेद है।

५. गुणोत्तम हठीसिंह।

है। वह निश्चय ही इन सव लोगोंको अच्छी तरहसे जानती है। लेकिन इस बीच तुम उसको बुला भेजो, उससे मिलो और यदि तुम उसे ठीक मानो तो माँ से मिलाओ। इस सबमे मै कोई नुकसान नही देखता। अनसूयाबहनसे जवाब आ जानेके बाद यदि जरूरी हुआ तो मै तुम्हें लिखूंगा। अन्यथा मै इस मामलेको काफी गोपनीय रख रहा हूँ। मै ऐसा मानता हूँ कि तुमने अनसूयाबहनको मेरे लिखनेका बुरा नही माना है।

कमलाको उत्तेजना और चिन्तासे मुक्त रहनेकी जरूरत है। मुझे लगता है, वह बम्बईमे नौरोजी बहनोके साथ खुश रहती है। इसलिए मेरा खयाल है कि तुम जब यहाँ आओ तो उसे लेते आओ और फिर यहाँ छोड़ जाओ।

इस आशासे कि हमे शीघ्र मिलना ही है, मै राजनीतिक स्थिति तथा अपने उपवासके कारनामोंके बारेमे कुछ नही लिख रहा हूँ। मै खोई हुई ताकतको बराबर धीरे-धीरे फिर हासिल कर रहा हूँ।

बेचारा महादेव बेलगाँवमे है। कष्टोमे से गुजरना अच्छा होता है।

माँ को जरूर बता देना कि मै उनको बराबर याद करता रहता हूँ। उन्हे यह देखनेके लिए कि बादल छँट गये है, काफी दिन जीना होगा।

तुम सबको मेरा प्यार।

बापू

[अंग्रेजीसे]

गाधी-नेहरू कागजात, १९३३; सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय।

४७४. पत्र : रुक्मिणीदेवी बजाजको

३ सितम्बर, १९३३

चि० रुक्मिणी[1],

मैं सोच ही रहा था कि तू पत्र लिखेगी या नही, इतनेमे तेरा पत्र मिला। तेरे बारेमे समाचार तो मिलते ही रहते है। बच्चेका नाम तो बहुत बड़ा रखा है। उसके सामने बेचारा माधव[2] तो नगण्य-जैसा ही लगेगा। तेरा और देवेन्द्रका स्वास्थ्य अच्छा रहता होगा। मै ठीक हूँ। मीराबहन, व्रजकृष्ण और प्रभावती सेवा कर रहे है। बहुत करके शुक्रवारको मै बम्बई जाऊँगा और वहाँसे वर्धा।

तुम दोनोको
बापूके आशीर्वाद

श्री बनारसीदास बजाज
ठठेरी बाजार; बनारस शहर

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१५४) से।

१. मगनलाल गांधीकी पुत्री।
२. गांधीजी ने रुक्मिणीदेवी बजाजको अपने पुत्रका नाम माधवदास या गोपालदास रखनेकी सलाह दी थी।

४७५. पत्र : जमनालाल बजाजको

[४ सितम्बर, १९३३से पूर्व][1]

चि० जमनालाल,

नी० फिर रास्तेसे भटक गई है। उसके पत्रोंसे उसकी अव्यवस्था स्पष्ट झलकती है। इतने दिन हिन्दू-धर्मकी धुन थी, अब ईसाई-धर्मकी लगी है। इसमें भी यदि निश्चय हो तो अच्छी बात है, परन्तु मुझे ऐसा नहीं लगता। उसकी कल्पना-शक्ति उसे इधरसे-उधर झकझोरा करती है। मौन लेनेसे उसका मन अधिक चक्कर खा गया जान पड़ता है। साथवाला पत्र पढ़कर उसे दे देना और फुरसत मिल जाये तो उससे बात भी कर लेना, अथवा विनोबा करे। द्वारकानाथसे कुछ हो सकता हो तो वह आश्वासन दे।

मेरा तार[2] तुमको मिला होगा। तुम्हारे साथ बात तो करनी ही है। परन्तु मैं तुमको यहाँ घसीटना नहीं चाहता। पहले तो ऐसा ही लगता था कि बम्बई थोड़े दिन रहकर वर्धा जाऊँ, परन्तु दो-तीन दिनसे कुछ निश्चय नहीं कर पा रहा हूँ। कदाचित् वहाँ आकर बम्बई जाना ठीक होगा। लेकिन देखूँगा। जवाहरलाल छूट गया है, सो उससे मिलना भी जरूरी है, पर उससे मुलाकात तो वर्धामें भी हो सकती है। आखिर तो जो होना होगा वही होगा। इसलिए मैं बहुत योजनाएँ नहीं बनाता।

मेरा शरीर ठीक होता जा रहा है। दो पौंड दूध, साग और फल लेता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २९२४) से।

४७६. पत्र : नारणदास गांधीको

४ सितम्बर, १९३३

चि० नारणदास,

तुम्हारा पोस्टकार्ड मिला था। उसके बाद पत्र नहीं मिला। मैंने तुम्हें एक पोस्टकार्ड लिखा था। तुम्हारा स्वास्थ्य ठीक रहता होगा। तुम सबको कैदखानेमें डालकर मैं खुद छूट गया हूँ। कितनी आश्चर्यकी बात है!

तुम्हारे बारेमें मैं चिन्ता नहीं करता, क्योंकि मैं मानता हूँ कि तुम्हारी समवृत्ति तुम्हें हर प्रकारसे सकुशल ही रखेगी।

१. साधन-सूत्रके अनुसार पत्र इसी तारीखको मिला था।

२. ३० अगस्तका, देखिए पृ० ४०१।

मै अच्छा हो रहा हूँ। अगले शुक्रवार बम्बई जानेका विचार है। वहाँ शायद एक सप्ताह रहूँगा। बादमें वर्धा जानेका विचार है।

जमनाका पत्र मुझे मिला था। अपना कार्यक्रम लिखना। चिमनलाल[1]का एक लम्बा पत्र आया था।

मेरे पास बा, मीरा, प्रभावती, मथुरादास, चन्द्रशंकर और नायर हैं। ब्रजकृष्ण सारा दिन मेरे पास रहता है। जितनी जरूरत है उससे ज्यादा सेवा मिल रही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/१) से। सी० डब्ल्यू० ८३९२ से भी, सौजन्य: नारणदास गांधी।

४७७. पत्र: परीक्षितलाल एल० मजमुदारको

४ सितम्बर, १९३३

भाई परीक्षितलाल,

चन्द्रशकरको लिखा तुम्हारा पत्र मैंने पढ लिया है। वीनाके सवर्ण हिन्दुओने विना किसी शर्तके वहिष्कार कैसे छोड दिया, यदि तुम यह मालूम कर पाये हो तो लिखना। क्या उन्हे अपने दोपका भान हो सका है?

भलाडा-सम्वन्धी आवश्यक उपाय तो अभी जारी होंगे। यदि सवर्ण हिन्दू किसी तरह न माने और तुमसे वन सके तो हरिजनोको ऐसे गाँवसे हटा लेना भी पड सकता है। और कुछ जानने लायक बात हो तो लिखना।[2]

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३९९७) से।

१. चिमनलाल शाह।
२. देखिए "बधाई" पृ०, ४४१ भी।

४७८. पत्र : शूरजी वल्लभदासको

४ सितम्बर, १९३३

भाई शूरजी,

आपको पत्र लिखनेवाला ही था कि इस बीच आपका पत्र मिला। मैं शुक्रवारको बम्बई पहुँचनेकी आशा करता हूँ। इसलिए आपको यहाँ आनेका कष्ट नही दूंगा। आपसे मिलनेके लिए उत्सुक अवश्य हूँ, किन्तु कुछ दिन धीरज रखूँगा। बच्चीका स्वास्थ्य सुधर रहा होगा। आप भी सकुशल होगे।

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०९५) से।

४७९. एक पत्र

मौनवार, ४ सितम्बर, १९३३

चि० . . .[1],

मुझे तुम्हारा करुणाजनक पत्र तीन-चार दिन पूर्व मिला। आज मौनवार है इसलिए कुछ समय निकाल यह लिखने बैठा हूँ।

तुम दो घोडोकी सवारी नही कर सकते। यदि तुम ब्रह्मचर्य व्रतका पालन करना चाहते हो तो तुम्हे अपनी पत्नी या किसी भी स्त्रीके साथ एकान्त सेवन नही करना चाहिए। फिर एक ही चारपाईपर सोनेकी बात ही कहाँ उठती है? यदि एकान्तमे मिले बिना या एक ही चारपाईके बिना काम न चल सके तो ब्रह्मचर्य व्रतको छोड देना चाहिए। आश्रम भी छोड देना चाहिए और दूसरोकी तरह केवल शुद्ध गृहस्थ जीवन व्यतीत करना चाहिए। इसमे कलककी कोई बात नही है। सभी अपनी शक्तिके अनुसार व्यवहार करे। उससे आगे जानेसे पाखण्ड तो आ ही जाता है। इसलिए मेरी सलाह है कि तुम गहरे सोच-विचारके बाद एक निश्चय कर लो। तुम्हारा वर्तमान व्यवहार तुम्हारी पत्नीके साथ भी न्याय नही करता। उसके मनमे विषय-वासना हो तो वह उसे सन्तुष्ट नही कर सकती, जबकि इच्छा होनेपर तुम ऐसा कर सकते हो और उसका सन्ताप बढ़ा सकते हो। हम स्त्रीकी

१. नाम छोड दिया गया है।

स्वतन्त्रता स्वीकार करते है, पर तुम्हारे व्यवहारमे उसका कुछ विचार नही दिखाई देता। अब गम्भीरतापूर्वक सोचनेके बाद जो तुम्हे सही लगे वही करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९५११) से।

४८०. पत्र : दूधीबहन वा० देसाईको

४ सितम्बर, १९३३

चि० दूधीबहन,

तुम्हारा पत्र मिल गया है। मै तो राह देख ही रहा था। मुझे पत्र लिखती रहना। कोई समस्या हो तो बताना। मेरी चिन्ता न करना। मेरी शक्ति बढ़ती जा रही है। कितने समय बाहर रहूँगा, यह मालूम नही है। शुक्रवारको बम्बई पहुँचनेका विचार है, और एक सप्ताह बाद वर्धा चले जानेकी आशा करता हूँ। बा, मीराबहन और प्रभावती मेरे साथ है।

बापूके आशीर्वाद

श्रीमती दूधीबहन वालजी देसाई
द्वारा : दक्षिणामूर्ति, भावनगर, काठियावाड़

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७४३४) से; सौजन्य : वालजी गोविन्दजी देसाई।

४८१. पत्र : अमतुस्सलामको

४ सितम्बर, १९३३

प्यारी बेटी अमतुलसलाम,

तुमको अब कैसा है? बा मुझे कहती थी कि तुमको अच्छा नहीं रहता था। लेकिन मेरी उम्मीद है कि अब तो अच्छी हो गई होगी। मेरे बारेमे कुछ भी फिकर करनेकी नहीं है। खुदा जब तक मुझे बचाना चाहता है मुझे कुछ नही हो सकता। जब वह मुझको ले जाना चाहेगा तब मुझे कोई यहाँ नहीं रख सकता है। इसलिए मेरे बारेमें सब डर छोड़ो।

बापूकी दुआ

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० २८८) से।

४८२. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

पूना,
५ सितम्बर, १९३३

चि० अमला,

तुम्हारी माताके एक पत्रके साथ ही तुम्हारा पत्र मिला। क्या तुम्हारी इच्छा है कि मैं उन्हें पुन पत्र लिखूं। अगर तुम चाहोगी तो मैं प्रसन्नतासे लिखूंगा।

मेरे वर्धा पहुँचनेकी तारीख अभी निश्चित नही है, लेकिन इस मासके अन्तिम सप्ताहसे पहले नहीं जाऊंगा।

तुम चपातियाँ बनानेमे झझट मानती हो। तुम उन्हे अपौष्टिक भी मानती हो। परन्तु चपातियां बनानेमे कोई झझट नहीं होता और अगर ये बिना चोकर निकाले हुए आटेकी बनी हो तो काफी पौष्टिक भी होती है।

तुम कहती हो कि ११ में से हिन्दी पहली भाषा होगी जिसे तुम सीखोगी। मुझे ११ भाषाओंकी सूची भेजो।

मैं ठीक चल रहा हूँ।

अपनी दिनचर्या लिखना।

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल-कागजात, सौजन्य नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय।

४८३. तार : जमनालाल बजाजको

पूना,
६ सितम्बर, १९३३

जमनालाल बजाज
वर्धा

लखनऊ व बनारस जाना अनावश्यक। दस दिनके लिए पहाड़पर तुरन्त हो आओ। जवाहरलाल यहाँ शायद शनिवारको पहुँचेगे। मै बम्बई अगले सप्ताह जाऊँगा और एक सप्ताह ठहरूँगा। वर्धा २३ से पहले नही पहुँच रहा हूँ। मै बिल्कुल ठीक हूँ। अखबारोकी रिपोर्टोपर विश्वास न करना।

बापू

[अंग्रेजीसे]
पाँचवे पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ११६

४८४. वक्तव्य : हरिजन दिवसपर[1]

[७ सितम्बर, १९३३][2]

हरिजन सेवक संघने २४ सितम्बरको 'हरिजन दिवस' मनानेकी घोषणा की है। यरवदा-समझौतेकी, जिसे पूना-समझौतेका गलत नाम भी दे दिया गया है, वह वर्ष-गाँठ होगी। खुशीकी बात यह है कि सयोगसे उस दिन रविवार पडता है। मै आशा करता हूँ कि हरिजन दिवस ठीक तरहसे मनाया जायेगा। हर व्यक्ति और हर हरि-जन-सस्थाको यह सोचना चाहिए कि अस्पृश्यताके अभिशापको मिटानेके लिए साल-भरमे उसने कितना काम किया। उस दिन अगले वर्षके लिए बजट बनाया जा सकता है या सकल्प किया जा सकता है। कार्यके लिए घर-घर जाकर चन्दा भी इकट्ठा किया जा सकता है। मेरा विश्वास है कि गत हरिजन दिवसोपर जो-जो कार्य हुए है, २४ सितम्बरको वे और भी अधिक उत्साहसे किये जायेगे।

मै आशा करता हूँ कि हरिजन भी इस बातपर विचार करेगे कि इस सालमे उन्होने खुद अपनी शुद्धिके लिए और इस प्रकार हिन्दू-समाजकी शुद्धिके लिए कितना काम किया। पर इसमे शक नही कि सवर्ण हिन्दुओकी जिम्मेदारी सबसे ज्यादा

१. यह "हरिजन दिवस" शीर्षकसे छपा था।
२. बॉम्बे क्रॉनिकल, ९-९-१९३३ से।

है। सुधारकोको इस बातका ध्यान रखना चाहिए कि सौजन्य, नम्रता, त्याग और चरित्रकी अधिक-से-अधिक शुद्धि द्वारा कट्टर सनातनी हिन्दुओके दिलोको जीतना उनका कर्त्तव्य है।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ९-९-१९३३

४८५. भेट : गोसेवाके विषयमे[1]

८ सितम्बर, १९३३[2]

गाधीजी सन्देश[3] देने योग्य उत्साह मुझमे नही है, क्योकि मेरे विचारोके मुताबिक गोसेवा कोई नही करता। आपके अध्यक्ष महोदयसे मैने अपने विचार कहे थे। मैने उन्हे यह भी बताया था कि आजकी गतिविधियोमे क्या-कुछ सुधार किये जा सकते है। उन्होने मेरे कहे मुताबिक करना स्वीकार किया था, यहाँतक कि आश्वस्त किया था। परन्तु तदनुसार काम नही किया। ऐसी अवस्थामे मेरे सन्देश देनेसे क्या लाभ?

भेंटकर्त्ता : यह तो गोसेवा में लगे हुए कुछ कार्यकर्त्ताओके विषयमें ही हुआ। उनके सिवाय अनेक व्यक्ति और अनेक गोशालाएँ भी इस प्रकारका काम कर रही है। वे सभी अपनी गतिविधियोके लिए आपके विचार सन्देश देनेपर ही जान सकते है। यदि आप स्वीकार करे तो अपने सन्देशमें उनकी त्रुटियो और अपेक्षित सुधारोका दिग्दर्शन कर सकते हैं।

गाधीजी यदि कोई गोरक्षा मे सम्बन्धित व्यक्ति चन्दा माँगने आये तो दो-चार पैसे देकर जिस प्रकार उसे सामान्य रूपसे विदा कर दिया जाता है, उसी प्रकार मैं भी एक-आध सन्देश दे सकता हूँ। किन्तु मुझे लगता है कि इस तरहके सन्देशसे कोई काम नही बनता।

भेंटकर्त्ता : आप ठीक कहते है। सन्देशकी बात छोड़ दें तो क्या मै आपसे पूछ सकता हूँ कि इतने वर्षोके बाद आपको गोसेवा से सम्बन्धित अपने विचारोमें कुछ फेरफार करना योग्य लगता है। आपके पहले जो विचार थे वे इस प्रकार थे — १. केवल गोसेवा का काम ही हमें स्वराज्यके निकट ले जा सकता है। २. मुझे ऐसा लगता है कि जबतक गोवध हो रहा है, तबतक मेरी ही हत्या की जा रही है। गायको बचानेके लिए मेरा प्रयत्न चलता ही रहता है। मेरा सारा प्रयत्न गो-

१ यह भेंट साधन-सूत्रमें भूमिकाके रूपमें दी गई है।
२ भेंट दो बारमें पूरी हुई थी। दूसरी बारकी तिथि निश्चित नही है।
३. सन्देश एक संस्था के प्रतिनिधिने अपने मासिक पत्रके लिए माँगा था।

वध समाप्त करनेके लिए ही है। जो गायको बचानेके लिए तैयार नहीं है, वह हिन्दू नहीं है। ३. मेरी दो भावनाएँ गहरी है: एक अस्पृश्यता-निवारण और दूसरी गो-सेवा। इन दो कामोके सफल हो जानेपर ही स्वराज्यकी प्राप्ति होगी। मुझे मोक्ष इन दोनों कामोंके सिद्ध होनेपर ही दिखाई देता है।

गाधीजी. मुझे इन विचारोमे कुछ भी फेरफार नही करना है। फिर भी इनका अर्थ करते हुए पूर्वापर सन्दर्भ और गोसेवा का जो व्यापक अर्थ मै करता हूँ, उसपर ध्यान देना चाहिए। मै गोरक्षा मे जीवमात्रका समावेश करता हूँ। शायद आप नही जानते होगे कि आपने गोरक्षा के विषयमे जो वाक्य उद्धृत किये है मै उनसे अधिक कह चुका हूँ। उदाहरणके लिए मैने तो यह भी कहा था कि गोरक्षा की भावना हिन्दू-धर्मकी मानवजातिको एक बहुत बड़ी देन है। किन्तु मेरे ये उद्‌गार गोरक्षा सम्बन्धी मेरी विशिष्ट कल्पनाको लेकर ही है।

भेंटकर्त्ता: आपने जो कहा, मै उसका अभिप्राय समझता हूँ। मै उसीसे सम्बन्धित एक और प्रश्न पूछता हूँ। कुछ लोगोंका कहना है कि गोरक्षा के कामको निरपेक्ष ढंगसे करते समय सत्य और असत्यके विधि-निषेधका आग्रह रखना आवश्यक नहीं है; गोरक्षा चाहे जिस प्रकारसे की जा सकती है। इस विषयमे आपका क्या मन्तव्य है?

गाधीजी गोरक्षा के कार्यमे सत्यकी बलि देनेका अर्थ साक्षात् गायकी बलि देना है। इसी प्रकार प्रजाके हितके काममे सत्यकी बलि देनेका अर्थ साक्षात् प्रजासे विश्वासघात करने-जैसा है। मेरे ये विशिष्ट विचार जनताको पसन्द नही आये और उसके गले नही उतरे। इसलिए आज गोरक्षा का जो आन्दोलन चल रहा है, मै उसमे नही पडना चाहता। सच कहे तो मै आज भी गो-रक्षाके लिए प्रयत्नकी पराकाष्ठा किये हूँ। सो किस प्रकार, यह एक पहेली ही है। समाचारपत्रोके बलपर यह पहेली नहीं बुझाई जा सकती। तथापि, इस विषयमे स्वयं मै तो आश्वस्त ही हूँ। सम्भव है, आप भी इस पहेलीका जवाब समझ गये होगे।

भेंटकर्त्ता: जी हाँ; मै आपका आशय समझ रहा हूँ।

गांधीजी: मैने गोसेवा-सम्बन्धित प्रश्नका खासा अध्ययन किया है। मै जितनी गोशालाओमे गया हूँ, उतनी गोशालाओंमे शायद ही कोई गया हो। मैने इनमे से हरएक संस्थाको भली-भाँति देखा और उनपर विचार किया। अपने विचार भी मैंने उन संस्थाओको लिखकर दिये।

भेंटकर्त्ता: तब क्या आप गोशालाओंमें दिखाई पड़नेवाले दोषोंके विषयमें कुछ कहनेकी कृपा करेंगे?

गांधीजी: वे लगभग वैसे ही है जैसा अभी आपने पढ़कर सुनाया।

भेंटकर्त्ता: उस हालतमें आपके विचारसे गायका रक्षण किस प्रकार हो सकता है?

गांधीजी: मै वह सभी कहूँगा, किन्तु आज तो भेंटके लिए जितना समय निश्चित किया था, वह समाप्त हो गया है। इसलिए समय निश्चित करनेके बाद

आप जब फिर मेरे पास आयेंगे, मैं अवश्य आपसे बातचीत करूँगा। तब हम और अधिक चर्चा करेंगे, और यदि आप सचमुच इस कामके प्रति उत्साह रखते होंगे तो मैं आपका सहकारी अथवा आप मेरे सहकारी होकर मिलजुल कर काम करेंगे

(२)

[८ सितम्बर, १९३३ के पश्चात्]

भेंटकर्त्ता: **यदि मैं आपकी बातका ठीक-ठीक अभिप्राय समझा हूँ तो वह है, पूर्ण सत्य और अहिंसा, जाति-द्वेषका अभाव, परम सहिष्णुता और प्रेम तथा इसके साथ-साथ सम्यक् आर्थिक दृष्टि अर्थात्, दुग्धालयों और चर्मालयोंको बढ़ाना चाहिए। और इस प्रकार गायोंकी उपयोगिताको बढ़ानेका प्रयत्न करना चाहिए। आपकी गोसेवा-सम्बन्धी कल्पनाका वैशिष्ट्य यही है न?**

गांधीजी: बिल्कुल ठीक। जो लोग गोवध करते हैं, उनमें ज्ञानका अभाव है। उन्हें मारने-पीटनेमें ज्ञानका यह अभाव दूर नहीं होगा। उसके लिए तो सहानुभूति और प्रेमके साथ दूसरे प्रकारके प्रयत्न आवश्यक हैं। फिर आर्थिक दृष्टिसे गायको अधिक सक्षम किये बगैर चारा नहीं है।

भेंटकर्त्ता: **आपका अभिप्राय ऐसा तो नहीं है कि यह प्रयत्न करते समय गायके प्रति विशिष्ट धार्मिक भावना अथवा विशिष्ट आदर रखना जरूरी नहीं है।**

गांधीजी: नहीं नहीं। इसके विपरीत, गोसेवा विषयक मेरी कल्पनाके अनुसार अमल करनेपर ही यह भावना अथवा आदर-वृत्ति कायम रखी जा सकती है।

भेंटकर्त्ता: **यदि हमें आपके ये विचार मान्य हों तो हमें काम आगे बढ़ानेके लिए क्या करना चाहिए? क्या आप कोई वार्षिक अथवा त्रैवार्षिक योजना सुझा सकेंगे?**

गांधीजी: योजना वार्षिक हो चाहे त्रैवार्षिक, इतना काम तो करना ही चाहिए: (१) गायके दूधके उपयोग पर जोर देना और दूसरे प्रकारके दूधका उपयोग बन्द करना। (२) गायके मृत शरीरके सभी अंगोंका उपयोग। उसका कुछ भी बरबाद न हो, इसकी कोशिश करना और प्रचार करना। (३) गायकी नस्ल सुधारनेकी कोशिश करना। (४) गायोंको अधिक दूध देनेवाली बनाने आदिकी कोशिश करना।

भेंटकर्त्ता: **गोसेवकोंसे इस प्रयत्नके दौरान क्या आप अस्पृश्यता-निवारण, हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य जैसे कामोंकी भी अपेक्षा करेंगे?**

गांधीजी: बिलकुल नहीं। यदि वे गोसेवाका व्यापक अर्थ समझते हों तो इतना पर्याप्त है। केवल इतना समझ लेनेसे ही काफी काम हो सकता है। उसका अर्थ केवल यही हुआ कि आपने केवल विशेष रूपसे गोसेवाका काम अपने हाथमें लिया है। मैं अस्पृश्यता-निवारणका काम करते समय भी जो यह दावा करता हूँ कि मैं गोसेवाका काम भी कर रहा हूँ, सो इसी अर्थमें।

भेंटकर्त्ता: **आपके बताये हुए ढंगसे हम लोग काम करना चाहें तो हमें आपकी ओरसे किस प्रकारका सहयोग मिल सकता है?**

गाधीजी · मैं मानता हूँ कि कार्यकर्त्ताओमे कुछ गुण आवश्यक है। यदि उस कसौटीपर आपमेसे कोई खरा उतरे तो मै उसे पैसेकी ओरसे निश्चित कर दूँगा।

भेंटकर्त्ता : क्या आपको ऐसा लगता है कि इस कामके लिए 'हरिजन' जैसा कोई अखबार जरूरी होगा?

गाधीजी अखबार निकालना वादका, वल्कि विलकुल अन्तिम काम होगा। पहले तो विशिष्ट विचारोसे प्रेरित एक सगठन होना चाहिए। उसके वाद अखवार निकालना ठीक हो सकता है। 'हरिजन' के विपयमे भी मेरी यह दृष्टि है।

भेंटकर्त्ता : हम इन दिनों गोरक्षा-सम्बन्धी संस्थाओके एकीकरणपर बड़ा जोर दे रहे है? आप इसे कहाँतक पसन्द करते है?

गाधीजी . यह एक वडा कठिन काम है, किन्तु मैं इसे पूरी तरह पसन्द करता हूँ। यदि आप लोग इसमे सफल होंगे तो आपका अभिनन्दन करूँगा।

[गुजरातीसे]

गोसेवा, पृष्ठ ५-९

४८६. क्या उसमे दबाव था?

'मॉडर्न रिव्यू' के नये अकको एक टिप्पणीमे मेरे पिछले उपवास[1] की कुछ चर्चा की गई है। 'मॉडर्न रिव्यू' की टिप्पणियाँ सदा ही पढने-योग्य होती है। गत १४ अगस्तको सरकारको जो पत्र मैंने लिखा था, उसका निम्नलिखित अश लेखकने उद्धृत किया है . .[2] और उसके वाद यह विचार प्रकट किया है.[3]

> . . . हमें . . . विवश होकर कहना पड़ता है कि अपनी शुद्धि और सान्त्वनाके लिए किये गये उपवासका सम्बन्ध यद्यपि केवल उपवास करनेवाले व्यक्तिसे ही होता है, पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूपसे राजनैतिक अथवा सामाजिक परिवर्तनोके लिए किये गये उपवासोंका प्रभाव दबाव-जैसा ही होता है, भले ही दवावकी इच्छा उनमें न रही हो। . . . दूसरे दबावोंकी तरह, इस प्रकारका अनिच्छित दवाव भी व्यापक शुद्ध आचरण और स्थायी सुधारमे सहायक नहीं हो सकता।

इस आलोचनाकी मैं चर्चा करना चाहता हूँ, क्योंकि यह उस विपयकी है जो अभी समाप्त नही हुआ है। पिछले अनेक वर्षोसे उपवास मेरे जीवनका अभिन्न अग वन गया है; और चाहे मै जेलकी चारदीवारीके अन्दर रहूँ या वाहर, मुझे पुनः उपवास करनेकी आवश्यकता हो सकती है। अत. उपवासके विज्ञानपर, यदि मैं अपने उपवासोंके बारेमे 'विज्ञान' जैसा पवित्र शब्द प्रयुक्त कर सकूँ तो, जितना भी लिखा जाये कम है। जो लोग वेसोचे-समझे मेरा अनुकरण करते हैं, उनके लिए और जो

१. १६ से २३ अगस्त, १९३३ तक।
२. वह यहाँ नहीं दिया गया है; देखिए पृ० ३७१।
३. उसके कुछ अंश ही यहाँ दिये गये हैं।

वस्तुस्थितिको पूरी तरह जाने विना ही कभी-कभी मेरी आलोचना कर बैठते है, उनके लिए भी इस विपयका स्पष्टीकरण आवश्यक है।

लेखकने जो-कुछ लिखा है, उसके वहुत-से अशसे मै सहमत हूँ। मै स्वीकार करता हूँ कि दुर्भाग्यसे मेरे सितम्बरके उपवासने कुछ लोगोको ऐसा कार्य करनेको वाध्य किया जो यदि मै उपवास न करता तो उन्होने न किया होता। मुझे यह भी स्वीकार है कि पिछले उपवासके दवावके कारण सरकारको मुझे छोडना पड़ा तथा यह भी मानता हूँ कि इस तरहके दवावसे कभी-कभी अशुद्ध आचरण भी हो जाता है। यहाँतक मेरा और लेखकका एकमत है।

किन्तु मेरी इन स्वीकृतियोसे उपवासके मूलपर कुठाराघात नही होता। इनसे तो यही पता चलता है कि सावधानीकी वहुत आवश्यकता है और जो लोग सुधार या न्यायके निमित्त उपवास करना चाहते हैं, उनमे विशेष योग्यता होनी चाहिए।

नैतिक आचरणकी जॉचमे मनुष्यका उद्देश्य ही मुख्य तत्त्व होता है। अपने कार्यकी नैतिकताका खयाल होनेके कारण, मैने कह दिया था कि उपवासका उद्देश्य सरकारपर दवाव डालना नही है। मै तो यही चाहता था कि यदि सरकारको वांछित सुविवाओकी अनुमति देना उचित न जान पडे, तो वह मेरा कथन सत्य मानकर मुझे शान्तिपूर्वक मरने दे। यदि जेलमे मेरी मृत्यु हो जाती, तो मेरे पत्रके प्रकट होनेपर वह हृदयहीनताके अपराधसे मुक्त हो सकती थी। वेशक, मै यह जानता था कि सरकारपर मेरे उपवासका कुछ प्रभाव पड सकता है, यद्यपि अपना उद्देश्य मैं इसके प्रतिकूल घोषित कर चुका था। पर इस डरसे कि अवाछनीय परिणामोंकी सम्भावना है, किसीको उचित मार्गसे डिगना नही चाहिए। इस तरह अगर मनुष्य डिग जाये, तो फिर कोई महान् कार्य किया ही नही जा सकता।

अपना आशय और अधिक स्पष्ट करनेके लिए मै सितम्बरके उपवासको लेता हूँ। जॉचके लिए यह एक अच्छा उदाहरण होगा, कारण कि सरकारका उससे कुछ सम्वन्ध नही था। उसका उद्देश्य सवर्णो और हरिजनों, दोनोपर ही प्रभाव डालना था। लेकिन जो निर्णय मै चाहता था, उसके गुण-दोषपर विचार किये विना ही वह निर्णय कर दिया जाये, यह इरादा मेरा हरगिज नही था। मेरा आशय था अपने आत्मोत्सर्गसे हिन्दुओको जागृत और सक्रिय करना। मेरा वह आशय पूरी तरह सफल हुआ और उस हदतक, व्यावहारिक दृष्टिसे, मेरे उपवासपर दोषारोपण नही किया जा सकता। उपवास उस आशयकी सीमासे भी बाहर गया और कुछ लोगोने अपने विश्वासके विरुद्ध वाध्य होकर निर्णय किया, यह बात दुर्भाग्यपूर्ण हुई। परन्तु जीवनके साधारण व्यवहारोमे मनुष्यसे ऐसी वाते तो सदा हुआ ही करती है। दूसरोसे या अपने आसपासकी परिस्थितियोसे अलिप्त रहकर मनुष्य हमेशा कव वरताव करता है? पर मै इतना कह सकता हूँ कि समझौतेसे सम्वन्धित लोगोकी बहुसख्याने उसे आजादीसे और पूरी तरह बहस और विचार किये विना स्वीकार नही किया। उन्होने समझौतेको यदि स्वीकार किया तो यह विचार करके ही किया कि वह कुल मिलाकर उचित और न्याययुक्त है। मेरे प्राण बचानेके लिए उन्होने सिद्धान्तकी बलि नही दी।

और अब, जब मैं समझौतेकी चर्चा कर रहा हूँ, प्रसंगवश मैं यह कहता हूँ कि यदि कुछ भी अन्याय हुआ है, तो वह अभी दूर हो सकता है। यदि सम्बन्धित पक्षोको यह विश्वास दिला दिया जाये कि वास्तवमे अन्याय हुआ है, तो उसे दूर करनेका समय अभी भी निकल नही गया है। मुझे यह विश्वास दिलानेकी कोई आवश्यकता नही है कि यदि सचमुच कोई अन्याय हुआ है, तो उसे दूर करनेके लिए जितना मुझसे बन पडेगा उतना प्रयत्न करना मैं अपना धर्म समझूँगा।

अब फिर मैं अपने मूल विषयपर आता हूँ। सुधारके एक साधनके रूपमे, उपवासका बड़े पैमानेपर प्रयोग मैंने १९१३ में[1] शुरू किया था। उससे पहले भी मैं बहुत बार उपवास कर चुका था, लेकिन उस ढगसे नही जिस ढगसे १९१३ मे किया। मेरा यह निश्चित मत है कि मेरे अनेक उपवासोका सामान्य परिणाम निस्सन्देह लाभदायक ही रहा है। उन उपवासोका जिनसे सम्बन्ध था और जिनपर प्रभाव डालना अभीष्ट था, उनकी अन्तरात्मा उन उपवासोसे सदा जागृत हुई। मैं नही जानता कि उन उपवासो द्वारा कभी कोई अन्याय हुआ है। यदि बगाल अन्यायको सिद्ध करता है तो वह एक अपवाद होगा। हर हालतमे, उसमे किसीपर दबाव डालने की कल्पनातक नहीं थी। वस्तुतः इन उपवासोसे जो प्रभाव डाला गया है, उसके लिए दबाव एक भ्रामक शब्द है। दबावका अर्थ है, किसीसे जबरदस्ती अपनी मर्जीका कोई काम करानेके लिए उसपर किया गया हानिकारक बल-प्रयोग। उपवासोमे तो बल-प्रयोग खुद मेरे ऊपर हुआ है। परपीड़न और आत्मपीड़न, दोनो एक ही कोटिमे नही आ सकते। यदि मैं अपने किसी ऐसे मित्रकी अन्तरात्माको जागृत करनेके लिए उपवास करता हूँ जिसने निश्चय ही गलती की है, तो मैं दबाव शब्दका सामान्यतः जो अर्थ होता है, उस अर्थमे उसपर दबाव नही डालता हूँ।

टिप्पणीकारने लिखा है कि कुछ उपवास ऐसे हो सकते है जिनका "दबावपूर्ण प्रभाव" नही पड़ता। परन्तु यदि मेरे उपवासोके लिए "दबावपूर्ण प्रभाव" शब्दोंका प्रयोग उचित हो, तो यह साबित किया जा सकता है कि सभी उपवासोमे थोड़ा-बहुत दबाव रहता ही है। वास्तविकता यह है कि आध्यात्मिक उपवासके प्रभाव-क्षेत्रमें जो भी आता है, उसका हृदय प्रभावित हुए बिना नही रहता। आध्यात्मिक उपवासको इसीलिए 'तप' कहते है। और तप जिनके हितार्थ किया जाता है, उन्हे शुद्ध किये बिना रह नही सकता।

बेशक, इस बातसे इनकार नहीं किया जा सकता कि उपवास सचमुच दबाव-पूर्ण हो सकते हैं। स्वार्थ-साधनके लिए किये जानेवाले उपवास इसी कोटिमे आते है। किसी व्यक्तिसे रुपया ऐंठनेके लिए या अपना कोई व्यक्तिगत स्वार्थ साधनेके लिए जो उपवास किया जाता है, उसे दबावपूर्ण या अनुचित प्रभाव डालनेवाला कह सकते है। ऐसे अनुचित प्रभावका विरोध करनेकी मैं निस्संकोच सलाह दूँगा। इस तरहके जो उपवास मेरे विरुद्ध किये गये हैं या करनेकी धमकी दी गई है, उनके

१. यह उपवास फीनिक्स आश्रमके एक सदस्य द्वारा हुई नैतिक भूलका प्रायश्चित्त करनेके लिए किया गया था; देखिए खण्ड १२, पृ० ४००।

अनुचित प्रभावको मैंने सफलताके साथ रोका है। यदि यह युक्ति पेश की जाये कि स्वार्थपूर्ण और नि.स्वार्थ उद्देश्योमे भेद करना प्राय. कठिन होता है, तो मै कहूँगा कि यदि कोई व्यक्ति किसी उपवासका उद्देश्य स्वार्थपूर्ण या नीचतापूर्ण समझता है, तो उसे उसके आगे झुकनेसे दृढतापूर्वक इनकार कर देना चाहिए, चाहे उसके इस इनकारसे उपवास करनेवालेकी मृत्यु ही क्यो न हो जाये। यदि लोग उन उपवासोकी उपेक्षा करनेकी आदत डाल ले जो, उनके मतमें, अनुचित उद्देश्योके लिए किये गये है, तो ऐसे उपवास दबाव और अनुचित प्रभावके कलकसे मुक्त हो जायेगे। सभी मानव-विधियोकी तरह, उपवासका भी सदुपयोग और दुरुपयोग हो सकता है। परन्तु इसे सत्याग्रहका एक महान् शस्त्र और हिंसाका एक कारगर विकल्प बनाया गया है। इसके प्रयोगका अभी आरम्भ-काल ही है, अत. यह अभी पूर्णतातक नही पहुँचा है। परन्तु आधुनिक सत्याग्रहका निर्माता होनेकी हैसियतसे, इसके अनेक उपयोगोमे से एकका भी मै त्याग नहीं कर सकता। यदि त्याग कर दूं, तो मुझे अपना यह दावा छोडना पडेगा कि मै इसका प्रयोग एक विनम्र सत्य-शोधककी भावनासे करता हूँ।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ९-९-१९३३

४८७. पत्र : वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको

पर्णकुटी;
९ सितम्बर, १९३३

प्रिय भाई,

आपका पत्र मुझे अच्छा लगा।[१]

मै चाहता हूँ कि आप मुझसे मनमे यह विश्वास रखकर झगडते रहे कि दिखने को मैं जिद्दी दिखता हूँ लेकिन जिद्दी नही हूँ और मेरा स्वभाव समझौतेकी गुंजाइश ढूंढ निकालनेका है। गोखले मेरे बारेमें ऐसा मानते थे। यह जो प्रमाणपत्र उन्होने मुझे दिया था, मैं हमेशा उसे मूल्यवान मानता आया हूँ तथा मैंने उसके अनुरूप जीवन जीनेकी कोशिश की है। आप चाहते है कि मै कांग्रेसको स्वतन्त्र छोड़ दूं। यदि यह मेरे बसकी बात होती, तो मै आपको विश्वास दिलाता हूँ कि मैं आज ही उसे स्वतन्त्र छोड देता। लेकिन यह इतनी सरल बात नही है। पटनामे मैंने सारे अधिकार स्वराज

१. ४ सितम्बरको अन्य बातोंके साथ श्री शास्त्रीने यह लिखा था : "आपका जवाब हृदयस्पर्शी था। वह पूर्ण और तर्कसंगत था। हम दोनोंमें से कोई न तो जल्दबाजीमें कोई राय बनाता है और न जल्दी उसका त्याग करता है। हमें परस्पर एक-दूसरेसे पूरा सन्तोष है। सभी परिस्थितियोंमें हम एक-दूसरेको अच्छी तरह समझेंगे और एक-दूसरेकी भावनाओंका खयाल रखेंगे। . . . कांग्रेस आपके शासनसे मुक्त हो, इस बातकी मैं पैरवी करता हूँ। अगर आप इसपर सहमतिकी प्रतीक्षा करते हैं तो बहुत ज्यादा देर हो जायेगी। कांग्रेसको फौरन मुक्त कर दीजिए। यथा ब्रिटिश राज्यकी तरह आपको यह कार्य तबतक मुल्तवी रखना चाहिए जबतक वह अनिवार्य ही न हो जाये।"

पार्टीको सौप दिये थे।[1] उस समय मोतीलालने बडी खूबीसे यह स्वीकार किया था कि यद्यपि मै हमेशा अधिकार दे देनेके लिए तैयार था, किन्तु पार्टी केवल इसी बार उन अधिकारोंको लेनेकी स्थितिमे है। सच यह है कि मै अधिकार नही चाहता। इसे मै विशेषसुविधा-युक्त सेवा मानता हूँ। जिस क्षण मुझे ऐसा लगेगा कि कांग्रेसके हितमे मै इसका त्याग कर सकता हूँ, मै ऐसा अवश्य करूँगा। फिर भी आप मुझपर यह भरोसा रख सकते है कि आपके सुझावको स्वीकार करनेकी मै पूरी कोशिश करूँगा। जवाहरलालके शनिवारको यहाँ आनेकी उम्मीद है। उनपर बहुत-कुछ निर्भर करेगा।

स्नेह।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
लैटर्स ऑफ श्रीनिवास शास्त्री, पृ० २६४-५

४८८. पत्र : धीरू सी० जोशीको

९ सितम्बर, १९३३

चि० धीरू,

अगर तू अक्षर अच्छी तरह और स्याहीसे लिखे तो और अच्छा हो। पढ़ने-लिखनेमे खूब मन लगाना। छगनलाल[2] को पत्र लिखकर उसे रमा[3] के पास भेज देना। वह उसे अपने लिफाफेमे भेज देगी।

कसरत खूब करना और मुझे पत्र लिखते रहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५८१३) से।

४८९. पत्र : भगवानजी अ० मेहताको

९ सितम्बर, १९३३

भाईश्री भगवानजी,

आपने रंगून जाकर अच्छा ही किया है। मुझे आशा है कि आपकी यात्रा सफल होगी और भाइयोंके बीच मेल हो जायेगा।[4]

मोहनदासके वन्देमातरम्

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५८१८) से। सी० डब्ल्यू० ३०४१ से भी; सौजन्य : नारणदास गाधी।

१. सितम्बर, १९२५ में हुई अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी बैठकमें; देखिए खण्ड २८ पृ० २१९-२०।
२. और ३. क्रमश : धीरू जोशीके पिता और माता।
४ आशय डॉ० प्राणजीवन मेहताके पुत्रोंमें पैतृक सम्पत्ति-सम्बन्धी झगड़ेसे है। देखिए अगला शीर्षक।

४९०. पत्र : मगनलाल प्रा० मेहताको

९ सितम्बर, १९३३

चि० मगनलाल[1],

मैं तुम्हारे और मंजुला[2] के पत्रकी आशा कर रहा था। मेरा पहला पत्र उसे मिल गया होगा। मुगल स्ट्रीटके पतेपर भेजा था।

जेकीबहन[3] का पत्र आज मिला है, इसके साथ भेज रहा हूँ। इसपर विचार करके जवाब देना।

मुझे ब्यौरेवार पत्र लिखना। अब काम अच्छी तरह कर पाता हूँ। व्यापार कैसा चल रहा है? तुम्हारा अध्ययन चलता है? क्या घूमने जाते हो? उर्मिला[4] तो खूब बड़ी हो गई होगी। कुछ समझौता हो जाये तो बहुत अच्छा है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५८१९) से। सी० डब्ल्यू० ३०४२ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी।

४९१. पत्र : भगवानजी पु० पण्ड्याको

शनिवार, ९ सितम्बर, १९३३

चि० भगवानजी,

तुम्हारे दो पत्र मिले थे। लगता है, तुम्हें मेरा पत्र नहीं मिला। धीरे-धीरे तुम बाडजमें ही बने रहना पसन्द करने लगोगे। अभी पारसी बंगला अनुकूल लगता हो तो वहीं रहो और खाना बना लिया करो। यदि वहाँ कोई ऐसा हरिजन हो जो तुम्हारे लिए खाना बना सकता हो तो उसे अपनी रुचिके अनुसार बनाना सिखा दो। अपने स्वास्थ्यका ध्यान रखते हुए काम करना। शालाको हानि न हो, यह मैंने चिमनलालको समझा दिया है। शान्तिका इलाज लीलाधर स्वयं करे तो मैं लाचार

१. डॉ० प्राणजीवन जी० मेहताके सबसे छोटे पुत्र।

२. मगनलाल मेहताकी पत्नी।

३. जयकुँवर डॉक्टर, मगनलाल मेहताकी बहन।

४. मगनलाल मेहताकी पुत्री।

हूँ। उसे कुछ समझ हो तो कोई हर्ज नहीं है। मुझे लिखते रहना। अगले गुरुवार या शुक्रवारको बम्बई जाऊँगा।

बापूके आशीर्वाद

श्री भगवानजी
द्वारा: डॉ० लीलाधर धरमशी
पुराना वाड़ज, अहमदाबाद

गुजरातीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ३६२) से; सौजन्य: भगवानजी पु० पण्ड्या।

४९२. पत्र: महेन्द्र वा० देसाईको

९ सितम्बर, १९३३

चि० मनु,[1]

तेरा पत्र मिला। लिखनेमें स्याही-कलमका उपयोग करना चाहिए। मुझे तो लगता है कि तुझे एक पत्र लिख देना था। अब फिर मुझे पत्र लिखना तेरे सिर रहा। तू अच्छी तरह अध्ययन करता दिखता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ३१५९) से; सौजन्य: वालजी गोविन्दजी देसाई।

४९३. पत्र: दूधीबहन वा० देसाईको

९ सितम्बर, १९३३

चि० दूधीबहन,

तुम्हारा पत्र मिला। मैं ठीक ही हूँ। अगले सप्ताह बम्बई जाऊँगा। इसके साथ पाँच लड़कोंके पत्र हैं। कुसुम वहाँ आये और उसका स्वास्थ्य ठीक रहे तो अच्छा है। अपने सभी [आश्रमके] लड़कोंकी देखभाल करती हो, यह अच्छी बात है। हमें यही शोभा देता है।

वालजी नासिक रोड सैन्ट्रल जेलमें है। उसका स्वास्थ्य ठीक है। खबर यही है कि सभी मजेमें हैं। मुझे पत्र लिखती रहना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ३१३५) से; सौजन्य: वालजी गोविन्दजी देसाई।

१. वालजी गोविन्दजी देसाईका बड़ा लड़का।

४९४. पत्र : मदालसा बजाजको

९ सितम्बर, १९३३

चि० मदालसा,

तेरा पत्र मिला। यह डर नही रखना चाहिए कि विनोबाके लिए तू भाररूप हो जायेगी। शिक्षकका कार्य है कि वह शिष्यकी अपूर्णताओको दूर करे। अगर तू पूर्ण होती तो तुझे शिक्षककी मददकी क्या जरूरत रहती?

वाल काट डालनेका इतना डर क्यो? वाल तो घासके समान उगते ही रहते है। मैने देखा है कि काट डालनेपर वहुत-सी लडकियोके बाल बादमें पहलेसे भी ज्यादा लम्बे हो गये। इस कारण वालोका मोह न हो तो उनको काट डालो। पोशाकमें चड्डीके अलावा और कोई दूसरा परिवर्तन करनेकी जरूरत नही। तुम्हारे समान वालिकाकी पोशाक सहज ही ऐसी वनाई जा सकती है कि उससे सहूलियत हो। पर अब तो हम थोडे समयमें ही मिलेगे।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ३१५

४९५. पत्र : विपिन बिहारी वर्माको

९ सितम्बर, १९३३

भाई विपिन,

तुमारा खत मिला। तुमारे व्याधिका सुनकर मुझे दु:ख होता है। ईश्वर तुमको शीघ्र आराम देवे। पैसेके वारेमें व्रजकिशोर वावुसे वात कर लो। मेरा कुछ निश्चय नहि हुआ है। यदि मैं वाहर रहा तो मुझे दुवारा लिखो। तुमारा खत व्रजकिशोर वावुको भेजता हूँ।

बापुके आशीर्वाद

श्रीयुत विपिन विहारी वर्मा, वार-एट-ला
शकरपुर, पो० ऑ० नरकटिया गंज
चम्पारन

पत्रकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ९६६९) से।

४९६. बातचीत : एक मित्रसे[1]

[१० सितम्बर, १९३३ से पूर्व]

आप इस तरह न घबराये। मै आपकी गहरी भावनाको समझता हूँ।

किन्तु आपको कैसी जबर्दस्त तकलीफ हुई!

यह कष्ट तो शरीरका था और इसे मैंने न्यौता था। ईश्वर जब कष्टका प्रसग लाता है तो उसे सहनेकी शक्ति भी दे देता है। जब उपवास करनेकी प्रेरणा होती है तब उसे न करूँ तो वह मेरे लिए एक बड़ी वेदना बन जाये।

किन्तु ऐसेमें आपके जीवनका क्या होगा?

जीवनका सीधा और सपाट रास्ता नही है। इसमे चक्कर और घुमाव, चढ़ाव और उतार भरे पडे है। यह कोई रेलगाड़ीका रास्ता नहीं है कि गाड़ी छोड़ी कि चलती चली गई।

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, १०-९-१९३३

४९७. सलाह : पर्णकुटी कन्याशालाकी बालिकाओंको[2]

गांधीजी : ईश्वरपर लोगोकी श्रद्धा बनी रहे और बढ़ती रहे, इसके लिए यदि इतना कष्ट उठाना जरूरी हो जाये तो उठाना चाहिए।

एक लड़की : प्रार्थना अनिवार्य होनी चाहिए या स्वेच्छा-निर्भर?

गां० : खाना अनिवार्य है कि स्वेच्छा-निर्भर?

एक लड़की : बिना खाये तो काम नहीं चलता।

तब फिर बिना प्रार्थनाके भी हमारा काम नही चलना चाहिए। जिस तरह बिना भोजनके देहका विकास नही होता, उसी तरह प्रार्थनाके बिना आत्माका विकास नही होता। जिस प्रकार अन्न देहकी खुराक है, उसी तरह प्रार्थना आत्माकी। प्रार्थनाके बिना आत्मा निस्तेज हो जाती है। मर जाती है, यह तो किस तरह कह सकते है? क्योंकि 'भगवद्गीता' मे आत्माको अमर कहा गया है। आत्मा मूढ़ अवश्य हो जाती है। ससारमे ऐसे बहुत-से लोग पड़े हुए है जो प्रार्थना नही करते। वे मूढ़ ही

१. यह और आगेके दो शीर्षक चन्द्रशंकर शुक्लकी "साप्ताहिक चिट्ठी" से लिये गये हैं।

२. पर्णकुटी कन्याशालाकी छात्राओं ने गांधीजी से ईश्वर-परायणता और प्रार्थनाके विषयमें कुछ प्रश्न किये थे।

हैं। जिसे आत्माका भान न हो वह मूढ ही है। यह कहा ही नहीं जा सकता कि आदेश हो तो प्रार्थना की जाये। वह तो स्वेच्छासे ही होनी चाहिए। यदि कोई बल-पूर्वक प्रार्थना करायेगा तो वह ढोंग बनकर रह जायेगी। फिर भी हमें यह चाहिए कि हम स्वयं इसे अपना कर्तव्य गिनें, अपने लिए अनिवार्य मानें। भोजन भी सदा धर्म नहीं होता। कुछ दिनोंतक बिना खाये भी काम चल सकता है। अजीर्ण हो गया हो तब तो न खाना ही धर्म है। किन्तु प्रार्थनाका अजीर्ण सम्भव ही नहीं है। आप लोगोंको चाहिए कि आप अपने लिए प्रार्थनाको इतना अनिवार्य बना लें कि उसके बिना एक दिन भी काम न चले। मान लीजिए, आप सब बालिकाओंने यह निश्चय किया हो कि भले ही हमें कोई राजपाट दे दे हम बदलेमें झूठ नहीं बोलेंगे, तो इसे क्या कहेंगे, हुक्म या स्वेच्छा? आप सबने यदि यह निश्चय मिल-जुलकर किया हो, ऐसा नियम बना लिया हो कि हम सवेरे चार बजे और शामको साढ़े सात बजे प्रार्थना करेंगी ही, तो क्या होगा? और यदि किसी बुजुर्गके कहनेसे ऐसा निश्चय किया हो तो? आपको ऐसी बातोंमें अपने प्रति कठोर बनना चाहिए, ऐसा नियम निश्चित करनेपर ही प्रार्थना सम्भव है। बिना नियमके संसारमें कुछ नहीं होता।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, १०-९-१९३३

४९८. सलाह : एक विद्यार्थीको[1]

[१० सितम्बर, १९३३ से पूर्व]

मैं रोज आधे घंटे कातनेको कहता हूँ। यह आपको कुछ ज्यादा लगता है? मान लीजिए कि आप रोज एक ही पैसेकी कीमतका सूत कातें। यदि इसमें तीस करोड़का गुणा करें तो तीस करोड़ पैसे हो जाते हैं। यदि भारतके तीस करोड़ लोग रोज एक-एक पैसेका सूत भी कातें तो भारतकी सम्पत्तिमें रोज तीस करोड़ पैसोंकी वृद्धि हो जाये। इस तरह एक बरसमें कितना रुपया हो जायेगा? इस गरीब देशकी राष्ट्रीय सम्पत्तिमें इतनी वृद्धि हो और उसी हदतक गरीबीका सवाल हल हो। इस तरह मैं आपसे कोई बड़ी चीज नहीं माँगता।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, १०-९-१९३३

१. यह विद्यार्थी गांधीजी से संध्याकी प्रार्थनाके बाद मिला था और यह "हस्ताक्षरनी किंमत" उपशीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।

४९९. ब्राह्मण क्या करें?

एक महाराष्ट्रीय भाई लिखते हैं:[1]

मैं आशा रखता हूँ कि जो अनुभव इस ब्राह्मणको हुआ, वैसा बहुतोंको नही होता होगा। निस्सन्देह, ऐसा अनुभव होना तो एकको भी नही चाहिए। जो लायक है, उसे नौकरी मिलनी चाहिए। इसमें जाति, वर्ण या धर्मका भेद नही होना चाहिए। देशमे देशके लोगोंको नौकरी या धन्धा मिलना एक आसान बात होनी चाहिए।

यह हुआ आदर्श। किन्तु हमारे देशमे ऊँच-नीच वगैरहके भावोंने जड़ जमा ली है। इसलिए गुण-दोपकी जाँच करते वक्त जाति, वर्ण, धर्म, वगैरहकी जाँच ज्यादा होती है। इस कारण कहीं ब्राह्मणको न रखनेका आग्रह हो और उसे न रखा जाये तो उसमें अचम्भेकी बात नही है। हमारे पापके कारण, धर्ममें पैठी हुई सड़ांधके कारण अशुभ बातें होती ही रहेगी। इसलिए प्रायश्चित्तके तौरपर हमे बाते सहन करनी चाहिए।

लेकिन जो जन्मसे ब्राह्मण है और ब्राह्मणका धर्म पालन करना चाहते है, वे नौकरी क्यों ढूंढ़े? ब्राह्मण होनेका दावा करनेवालेके लिए तो लोगोंमें ब्रह्मज्ञान फैलाकर गुजारेके लिए धर्मभावनावाले यजमानोंपर आधारित होना ही ठीक है। नौकरी ढूंढनेवाले ब्राह्मणके लिए सच्चा आश्वासन तो यही होगा कि वह अपना धर्म पाले। फिर उसके लिए निराशाका कारण ही नही रहेगा।

मैं उम्मीद रखता हूँ कि कोई यह कहकर मेरी निन्दा न करेगा कि वर्णधर्म मिट गया, ऐसा कहनेवाला मैं आफतमे फँसनेपर वर्णधर्मका आसरा कैसे लेता हूँ। वर्णधर्म मिट गया तो इसका यह अर्थ नहीं है कि किसी को उसका पालन नही करना चाहिए। वर्णधर्मको माननेवालेके लिए तो अपनी तरफसे उस धर्मको पूरी तरह पालना ही ठीक है। उक्त ब्राह्मण ब्राह्मण होनेका दावा करता है, इससे यही प्रकट होता है कि वह स्वयं वर्णधर्मको मानता है। इसलिए मेरी तो यह सलाह है कि वह उसी धर्मपर चले और नौकरीका लालच छोड़ दे।

इस कठिन कालमे भी ब्राह्मणोंने व्यक्तिगत रूपसे देशकी कुछ कम सेवा नही की है। दूसरोंके मुकाबले ब्राह्मणोंका त्याग जरूर अधिक है। लेकिन ब्राह्मणोंके लिए उत्तम त्याग तो नौकरी आदि सभी अर्थपरक बातोंको छोड़ना है। ब्राह्मण धर्मकी शोभा तो सिर्फ परमार्थमें ही है। ब्राह्मण अगर वर्णधर्मका मर्म जानकर उसके मुताबिक चले, तो वर्णधर्मका आसानीसे उद्धार हो सकता है। इसलिए उक्त ब्राह्मण और उसके

१. यहाँ नहीं दिया जा रहा है। पत्र-लेखकने शिकायत की थी कि एक पढ़े-लिखे व्यक्तिको केवल इसलिए काम नहीं मिल रहा है कि वह ब्राह्मण है।

जैसी हालतवाले दूसरे ब्राह्मणोको मेरी सलाह है कि वे ब्राह्मणका धर्म पालनेकी योग्यता पैदा करे, उसके मुताबिक अपना आचरण रखे और अर्थलाभका लालच छोड़ दे।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, १०-९-१९३३

५००. बधाई

वीना (गुजरात) गाँवमें हरिजन और सवर्ण हिन्दुओके दरम्यान जो फूट पैदा हो गई थी और फलस्वरूप आपसमें जो कटुता आ गई थी, वह अब दूर हो गई है और हरिजनोका बहिष्कार समाप्त कर दिया गया है। इसके लिए सवर्ण और हरिजन दोनो ही बधाईके पात्र है। आशा है कि अब यह प्रेम-सम्बन्ध सदा ऐसा ही निभता चला जायेगा। मै हरिजन सेवा सघकी भी उसके सफल प्रयत्नके लिए सराहना करता हूँ।

जान पडता है कि एक दूसरे गाँवमें भी कुछ ऐसी ही कटुता पैदा हो गई है। मालूम नही, इस नोटके लिखते समय वहाँ शान्ति हो पाई या नही। पर आशा है कि वहाँ शान्ति स्थापित हो गई होगी।

यह आपसी फूट हम लोगोंके लिए शर्मकी चीज है। हर गाँवमें हरिजन भाई-बहनोकी आबादी दूसरी आबादीके मुकाबलेमे बहुत कम होती है। उन गरीबोंपर जुल्म करना मानो चीटी मारनेके लिए कटक सजाना है। ढोरोंमे बीमारी फैले या वे मरने लगें, तो इसके लिए हरिजनोपर शक करना अथवा दोषारोपण करना निरा वहम है। मान लो कि इसमें किसी हरिजनका ही दोष है तो उसे मारने-पीटनेसे या उसका सामाजिक बहिष्कार कर देनेसे तो उसकी वह आदत छूट नही जायेगी। बल्कि हरिजनोके प्रति प्रेम दिखानेसे, उनमें विद्याका प्रचार करनेसे, उनके साथ अच्छा बरताव करनेसे और उन्हे भाई-बहनके समान माननेसे ही उनकी वह कुटेव छूट सकेगी। इसलिए शुद्ध और पूर्ण रीतिसे अस्पृश्यता दूर करके ही हरिजन हरिके सच्चे जन बनाये जा सकते है।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, १०-९-१९३३

५०१. पत्र : माधवदास और कृष्णा कापड़ियाको

१० सितम्बर, १९३३

चि० माधवदास और कृष्णा,

तुम दोनोंके पत्र मिले। सुख और दुख गीत और उष्णताकी तरह हमारे साथ लगे हुए हैं। एक दिन मोटर-गाडीमें तो दूसरे दिन पैदल यात्रा करनी पडे, तो इसमें सुख या दुख क्यों मानें? हिम्मत और धीरज कभी न छोड़ना। ये ही सच्चे दोस्त हैं। आशा है कि हम शुक्रवारकी शामको मणिभवन पहुँचेंगे।

बापूके आशीर्वाद

श्री माधवदास गोकुलदास
शामजी सावजीकी चाल
मनोरदास स्ट्रीट
फोर्ट, बम्बई

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू० / २२) से।

५०२. सन्देश : वर्ल्ड फेलोशिप ऑफ फेथ्सको

[११ सितम्बर, १९३३ से पूर्व][1]

यदि मैं अपने जीवन द्वारा कोई सन्देश नहीं दे पा रहा हूँ तो कलम द्वारा क्या सन्देश भेज सकता हूँ?

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १२-९-१९३३

५०३. सन्देश : स्वदेशी प्रदर्शनी व बाजारको[2]

[११ सितम्बर, १९३३से पूर्व][3]

यदि महिलाएँ स्वदेशीका कार्य आगे नहीं बढ़ायेंगी, तो अकेले पुरुष क्या कर सकते हैं? आपकी प्रदर्शनीका आयोजन महिलाओंने किया है। इसलिए वह सुव्यवस्थित और सुसज्जित होनी चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १२-९-१९३३

१. यह तथा अगला शीर्षक "शिकागो, ११ सितम्बर, १९३३" तिथिके अन्तर्गत छपे थे।
२. अखिल भारतीय महिला संघकी गुजरात तथा भडौंच शाखाओंके द्वारा आयोजित।
३. यह सन्देश "अहमदाबाद, ११ सितम्बर, १९३३" तिथिके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

५०४. पत्र : वियोगी हरिको

११ सितम्बर, १९३३

भाई वियोगी हरि,[1]

खत मिला। पहले तो हम ट्रामके कानून जान लेवे। यदि कपडोकी हि बात है तो मामला सीधा हो जाता हे। यूं भी हमारे हरिजनोको सफाईके नियम तो सीखानेके हैं ही। 'तुम कौन हो' ऐसा पूछनेका ट्रामवालोको अधिकार नहिं है इसलिये हरिजनोकी अथवा किसीका उत्तर देनेका धर्म नहिं है। समय मिलनेपर 'हरिजन सेवक' के लिये अवश्य लिखुगा।

बापूके आशीर्वाद

श्री वियोगी हरि
एस० यू० एस०[2]
बिरला मिल्स[3], दिल्ली[4]

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १०९४) से।

५०५. पत्र : रमादेवी चौधरीको[5]

११ सितम्बर, १९३३

प्रिय भगिनी,

आपका खत मिल गया है। तुमारा कार्य अच्छा चल रहा प्रतीत होता है। ऐसे हि चलता रहे। मुझे लिखा करो।

बापूके आशीर्वाद

श्री रमादेवी[6]
सर्वेन्ट्स ऑफ अनटचेबल्स सोसाइटी[7]
कटक,[8]
उड़ीसा[9]

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २७८३) से।

१. हिन्दीके कवि और हरिजन सेवक के सम्पादक।
२, ३ और ४. अंग्रेजी लिपिमें लिखे हुए हैं।
५. गोपबन्धु चौधरीकी पत्नी।
६, ७, ८ और ९. अंग्रेजी लिपिमें लिखे हुए हैं।

५०६. बातचीत : एक जापानी साधुसे[1]

[१२ सितम्बर, १९३३][2]

तुम कई तरहसे मदद कर सकते हो।[3] हरेक देशको अपनी आजादी स्वयं हासिल करनी चाहिए। किन्तु जो लोग भारतके ऋणी हैं वे कई प्रकारसे उसकी सेवा कर सकते हैं।

मैं उपदेशक नहीं हूँ। मैं तो काम करनेवाला हूँ। मैं तुम्हें काम सिखा सकता हूँ। यह चरखा उपासना-चक्र है और कर्म-चक्र भी है। इसे चलाते हुए मनुष्य काम तो करता ही है, उसके साथ प्रार्थना भी करता रह सकता है। मैं तुम्हें यही काम करनेकी सलाह देता हूँ। देखो, यह कैसा सूत निकालता है। जब तुम इसमें प्रवीण हो जाओगे तब मैं तुम्हें कोई दूसरा काम बताऊँगा। मैं कर्म सिखानेवाला शिक्षक हूँ, इसमें तो कोई शंका है ही नहीं। कातना सीखो, इसका मतलब यह है कि तुम्हें ओटना, धुनना भी आना चाहिए। इतना सीख लो तो तुम कह सकते हो कि तुम कातनेके आन्दोलनमें शामिल हो गये हो। फिलहाल इतना काफी है।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, १७-९-१९३३

५०७. वक्तव्य : पत्र-प्रतिनिधियोंको

१४ सितम्बर, १९३३

जनसेवाकी लम्बी अवधिके दौरान आम तौरपर मेरे सामने यह स्पष्ट रहा है कि अगले क्षण मेरा कदम क्या होगा। परन्तु पिछले २३ अगस्तको जब मैं जेलसे अप्रत्याशित रूपमें रिहा कर दिया गया, तभीसे मेरे चारों ओर अँधेरा है और कर्त्तव्य-पथ मेरे आगे स्पष्ट नहीं है। मेरे स्वास्थ्यकी हालत अभी ऐसी है कि अपनी खोई हुई शक्ति फिरसे हासिल करनेमें मुझे कई हफ्ते लग सकते हैं।

मेरे सामने सवाल यह था कि जैसे ही मैं शारीरिक रूपसे स्वस्थ हो जाऊँ फिरसे जेल चला जाऊँ या अपनेको उस अवधितक विरत रखूँ जबतक मैं रिहा न किये जानेकी अवस्थामें जेलमें रहता।

१. यह "चरखा — कर्म-चक्र" शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।
२. गांधी: १९१५-१९४८ — ए डिटेल्ड क्रॉनोलॉजी से।
३. जापानी साधु भारतकी सेवा करना चाहता था। इस सम्बन्धमें उसने गांधीजी से आदेश माँगा था।

प्रार्थनारत रहकर और पर्याप्त सोच-विचारके बाद मैं इस निर्णयपर पहुँचा हूँ कि जबतक मेरी सजाकी अवधि समाप्त नही हो जाती अर्थात्, आगामी ३ अगस्त तक मैं आन्दोलनके रूपमे सत्याग्रह करके जेल नही जाऊँगा। बहरहाल, पूनामे हुए अनौपचारिक सम्मेलन[1] के बाद मैंने जो वक्तव्य दिया था, उसमे दी गई सलाहपर इसका कोई प्रभाव नही पड़ता। मेरे लिए कार्यवाही स्थगित रखनेकी अनिवार्यता दुर्भाग्यपूर्ण होते हुए भी अपरिहार्य है।

अपनी रिहाईसे मैं बडी दुविधामे पड़ गया हूँ। परन्तु सत्याग्रहीके नाते यानी, सत्यान्वेषीके रूपमे मेरी विवेकबुद्धि किसी तरह भी यह स्वीकार नही करती कि रिहाईसे जो स्थिति पैदा हो गई है, मैं उस स्थितिमे जेल चला जाऊँ। रिहाईके पीछे चाहे जो उद्देश्य रहा हो, मुझे अपनी रिहाईके प्रति कोई शिकायत नही करनी है। मैं इस कार्यवाही की इसके गुणावगुणके आधारपर परीक्षा करूँगा। यह मुझे अत्यन्त ओछापन जान पड़ता है कि मैं कोई उत्तेजनात्मक कार्य करके सरकारको जेलकी अवधि समाप्त होनेसे पूर्व मुझे फिरसे कैद करनेपर मजबूर कर दूँ। यह और बात है कि ऐसी कोई असाधारण परिस्थिति पैदा हो जाये जिसका अभी मुझे अनुमान नहीं हो रहा और जिसके कारण मुझे अपना निर्णय बदलनेके लिए बाध्य होना पडे। सत्याग्रहमे ओछेपनके लिए कोई स्थान नही है।

स्वय अपनेपर लगाया गया यह प्रतिबन्ध कडवा घूँट है। कैद होनेके बाद अपने मुकदमेके दौरान मैंने यह कहा था[2] कि बाहर रहकर अध्यादेशके विनाशकारी और निराशाजनक प्रभावको असहाय बनकर देखते रहनेसे मुझे असह्य पीड़ा होती है। यह एक सीधे-सादे और सही तथ्यका बखान ही था। मुझे ४ अगस्त-जैसी पीड़ा आज भी है। परन्तु यह पीड़ा सहनेके सिवा चारा नही है।

यदि सरकारके मनमे ऐसी कोई बात हो तो मैं इस अशोभनीय बिल्ली-चूहेके खेलमें स्वेच्छासे साथ नही दूँगा। इसलिए यदि सरकारने मुझे किसी वक्त फिर कैद कर लिया और हरिजन-सेवाका हक छीन लिया, तो मैं वैसी स्थितिमे यदि आन्तरिक प्रेरणा हुई तो ऐसा उपवास जो अन्ततक चले, शुरू करनेसे नही झिझकूँगा और यदि सरकार खतरेकी घडी आ जानेपर पिछले २३ अगस्तकी तरह मुझे फिर रिहा कर देती है तो भी मैं उपवास नही तोड़ूँगा।

मैं स्पष्ट शब्दोमे अपने आत्मसयमकी सीमाओको प्रस्तुत कर दूँ। हालाँकि मैं उग्र सत्याग्रहसे दूर रह सकता हूँ, परन्तु मैं, जबतक स्वतन्त्र हूँ, जो मेरी सलाह माँगते हैं उन लोगोका निर्देशन किये बिना और राष्ट्रीय आन्दोलनको गलत रास्तेपर जानेसे रोकनेकी चेष्टा किये बिना नही रह सकूँगा। मेरा विश्वास है, और यह विश्वास बराबर बढता जा रहा है, कि सत्य हिंसात्मक उपायो द्वारा नही खोजा जा सकता।

१. जुलाई १२ से १४ तक हुआ; देखिए पृ० २७४-५ और २७६-८।

२. ४ अगस्तको; देखिए पृ० ३५८-६०।

राष्ट्रीय स्वाधीनता हासिल करना मेरे लिए सत्यकी खोज ही है। मुझे विश्वास है कि आतंकवादी तरीकोंका जवाब, चाहे वे आक्रामक द्वारा अपनाये जायें या आक्रान्त व्यक्ति द्वारा, हिंसात्मक प्रतिरोध द्वारा प्रभावपूर्ण ढँगसे नहीं दिया जा सकता। वह तो केवल सविनय प्रतिरोधसे ही दिया जा सकता है।

इसलिए यदि मैं इस वक्तव्यमें प्रतिपादित बन्धनोंसे ज्यादा बन्धन अपने ऊपर लादनेकी कोशिश करता हूँ, तो मैं अपने सिद्धान्तके प्रति निष्ठा न रखनेका दोषी होऊँगा। इसलिए यदि सरकार मुझे स्वतंत्र छोड़ देती है तो मैं यह समय हरिजन-सेवामें और यदि सम्भव हुआ तो ऐसे रचनात्मक कार्योंमें लगानेकी कोशिश करूँगा जिन्हें मेरी सेहत गवारा कर सकेगी।

यह दोहरानेकी कोई जरूरत नहीं है कि शान्ति भी मेरे लिए उतनी ही महत्त्वपूर्ण है जितना कि सत्याग्रह। निस्सन्देह, सत्याग्रही प्रतिरोध तभी करता है जब शान्तिका और कोई उपाय नहीं रह जाता। इसलिए जहाँतक मेरा सम्बन्ध है और जबतक मैं स्वतन्त्र हूँ, मैं अपनी ओरसे भरसक यही कोशिश करूँगा कि सम्मानजनक ढंगसे शान्तिका हर सम्भव मार्ग खोज निकाला जाये।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १५-९-१९३३

५०८. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

पर्णकुटी, पूना,
१४ सितम्बर, १९३३

प्रिय जवाहरलाल,

तुमने अपनी बात पूरी तरह और साफ-साफ लिखी,[1] इसकी मुझे खुशी है।

१९३१ के आखिरमें लन्दनसे लौटनेपर जब मुझे पता चला कि तुम्हें अचानक मुझसे छीन लिया गया है,[2] तो उस विछोहसे मुझे बड़ा दुःख हुआ था। इसलिए तुमसे मिलने और विचार-विनिमय करनेको मैं बहुत बेचैन था।[3]

अपने पत्रमें तुमने जो-कुछ कहा है उसके अधिकांशसे मैं पूर्णतया सहमत हूँ। कराची कांग्रेसके बादके अनुभवसे मुख्य प्रस्ताव और आर्थिक कार्यक्रम[4] में, जिसका तुमने जिक्र किया है, मेरी आस्था और दृढ़ ही हुई है। इस विषयमें मेरे मनमें रत्ती-भर भी सन्देह नहीं है कि हमारा लक्ष्य पूर्ण स्वाधीनतासे कम हो ही नहीं सकता।

१. जवाहरलाल नेहरूके १३ सितम्बर, १९३३ के पत्रके लिए देखिए परिशिष्ट १४।

२. जवाहरलाल नेहरूको गांधीजी से मिलने जाते हुए २६ दिसम्बर, १९३१ को रास्तेमें ही गिरफ्तार कर लिया गया था।

३. गांधीजी और जवाहरलाल नेहरू १० सितम्बरको मिले और उनमें लम्बी बातचीत हुई।

४. देखिए खण्ड ४५, पृ ३९२-३।

मैं तुम्हारी इस बातसे भी पूर्ण हार्दिक सहमति रखता हूँ कि निहित स्वार्थोमे ठोस परिवर्तन किये बिना जन-साधारणकी दशामे कदापि सुधार नहीं हो सकता। यद्यपि मैं उस हदतक नहीं जा सकता जहातक कि तुम गये हो, पर मेरा यह भी विश्वास है कि भारत एक समागी सत्ता बन सके, इसमे पहले नरेशोको अपने बहुत-कुछ अधिकार छोडने होंगे और जिन लोगोपर आज वे शासन कर रहे है उनका लोकप्रिय प्रतिनिधि बनना होगा। गोलमेज परिषदके बारेमे तुम जो कहते हो, उसके अधिकाशकी मैं अपने निजी अनुभवसे पुष्टि कर सकता हूँ। तुम्हारी इस बातसे भी सहमत होनेमे मुझे कोई कठिनाई नहीं दिखती कि इस जमानेमे, जब अन्त सचार इतना तेज हो गया है और सारी मानव-जातिमे एकताकी चेतना बढ रही है, हमे यह समझ लेना चाहिए कि हमारा राष्ट्रवाद प्रगतिशील अन्तर्राष्ट्रीयतासे बेमेल नहीं होना चाहिए। विश्वके दूसरे भागोमे जो-कुछ हो रहा है, भारत उससे अलग-थलग और अप्रभावित नहीं रह सकता। अत मैं तुम्हारे साथ बहुत दूरतक जा सकता हूँ और यह कह सकता हू कि 'हमे अपने-आपको विश्वकी प्रगतिशील शक्तियोके साथ पक्तिबद्ध कर देना चाहिए।' परन्तु मैं यह जानता हूँ कि आदर्शोके प्रतिपादनमे इस तरहकी सहमति होते हुए भी, हममे स्वभावगत मतभेद है। अत तुमने लक्ष्यको स्पष्ट घोषित करनेकी आवश्यकतापर जोर दिया। परन्तु मैंने, उसे एक बार निश्चित कर लेनेके बाद, उसकी पुनरावृत्तिको कभी महत्त्व नहीं दिया। यदि हमे लक्ष्यकी प्राप्तिके साधनोका पता नहीं है और हम उनका उपयोग नहीं करते है, तो लक्ष्यकी अधिक-से-अधिक स्पष्ट व्याख्या और समझ ही हमे उसतक नहीं ले जा सकेगी। इसलिए, मैंने मुख्यतया साधनोके सरक्षण और उनके अधिकाधिक उपयोगसे सरोकार रखा है। मैं जानता हूँ कि यदि हम उनका खयाल रखे, तो लक्ष्यकी प्राप्ति निश्चित है। मैं यह भी महसूस करता हूँ कि हमारे साधन जितने पवित्र होगे, लक्ष्यकी ओर हमारी प्रगति उतनी ही अधिक होगी। अपनी परम सत्यनिष्ठा और अहिंसाका यदि हम प्रत्यक्ष प्रमाण दे सके, तो मुझे विश्वास है कि राष्ट्रीय लक्ष्यकी हमारी घोषणा उन हितोकी भावनाओंको, जिनपर तुम्हारा पत्र आक्रमण करता लगता है, बहुत दिन ठेस नही पहुँचायेगी। हमे मालूम है कि यदि हम अपने तरीकोको केवल निर्दोष रख सके, तो नरेश, जमीदार और वे सब लोग जिनका अस्तित्व जन-साधारणके शोषणपर निर्भर हे, हमसे डरना और हमपर शक करना बन्द कर देंगे। हम किसीपर भी दबाव डालना नही चाहते हैं। हम तो उनका मत-परिवर्तन करना चाहते हैं। यह तरीका लम्बा, शायद बहुत लम्बा लग सकता है, पर मेरा यह विश्वास है कि यह सबसे छोटा है।

श्रीयुत अणेके आदेशो और उनपर मेरे नोट[1] का तुमने जो अर्थ किया है, मैं उससे मुख्यतया सहमत हूँ। इस विषयमे मेरा दिमाग बिलकुल साफ है कि यदि वे आदेश जारी नहीं किये जाते तो सत्याग्रहका पूरा आन्दोलन ही उत्तरोत्तर बढती भीतरी कमजोरीसे खत्म हो जाता। कारण, कि काग्रेसी यह भ्रम पाले हुए थे कि ऐसे सगठन है जो कारगर ढगसे काम कर रहे हैं और जिनसे उन्हे मार्गदर्शन मिल

१. देखिए पृ० ३१०-५।

सकता है। जबकि वस्तुस्थिति यह थी कि आर्डिनेंस राज्यमें, जिसका अर्थ संगठित आतंक है, कांग्रेस समितियोंके लिए संगठित रूपसे काम करना असम्भव हो गया था। जो संगठन अवैध और शक्तिहीन हो चुके थे, उनकी सक्रियताका झूठा विश्वास बड़ी तेजीसे निराशा पैदा कर रहा था, और उसे रोकना आवश्यक था। ठीक तरह प्रयुक्त किये गये सत्याग्रहमें निराशा-जैसी कोई चीज होती ही नहीं है। तुमने यह ठीक ही कहा है कि कुछ भी हो, "सत्याग्रह तत्त्वतः एक व्यक्तिगत विषय है।" मैं एक कदम और आगे जाता हूँ और कहता हूँ कि जबतक एक भी सत्याग्रही सत्याग्रह कर रहा है, आन्दोलन मर नहीं सकता और आखिर सफल होकर रहेगा। व्यक्तिगत सत्याग्रहियोंको किसी संगठनकी सहायताकी आवश्यकता नहीं है। आखिर संगठन उसे बनानेवाले व्यक्तियोंके बिना तो कुछ अर्थ रखता नहीं है। इसलिए श्रीयुत अणेके आदेशोंको मैं आर्डिनेंसोंका एक कारगर जवाब मानता हूँ। कांग्रेससे सम्बन्ध रखनवाले नर-नारी यदि केवल उन आदेशोंकी आवश्यकता और उनके सभी गूढ़ार्थोंको समझ लें, तो आर्डिनेंस, कम-से-कम सत्याग्रहियोंके लिए तो, नगण्य हो जायेगा। वे एक ऐसी धुरी बन सकते हैं जिसके गिर्द अजेय सत्याग्रहियोंकी एक सैना खड़ी की जा सकती है। श्रीयुत अणेके आदेशों या मेरे नोटमें ऐसा कुछ नहीं है जिससे यह माना जाये कि वे कांग्रेसियोंके संगठित कार्यको हर रूपमें निषिद्ध ठहराते हैं।

मैं चाहूंगा कि तुम यह न सोचो कि व्यक्तिगत सत्याग्रह और सामूहिक सत्याग्रहमें कोई मौलिक भेद नहीं है। मेरे खयालसे तुम्हारी इस अपनी स्वीकृतिमें ही कि "यह तत्त्वतः एक व्यक्तिगत विषय है" वह मौलिक भेद निहित है। सामूहिक सत्याग्रह और व्यक्तिगत सत्याग्रहमें मुख्य भेद यह है कि दूसरेमें प्रत्येक (व्यक्ति) एक पूर्ण स्वतन्त्र इकाई है और उसके पतनका औरोंपर प्रभाव नहीं पड़ता। सामूहिक सत्याग्रहमें एकका पतन, आम तौरपर, बाकीपर बुरा असर डालता है। सामूहिक सत्याग्रहमें नेतृत्व आवश्यक है, जबकि व्यक्तिगत सत्याग्रहमें प्रत्येक सत्याग्रही अपना नेता आप होता है। सामूहिक सत्याग्रहमें विफलताकी सम्भावना रहती है, जबकि व्यक्तिगत सत्याग्रहमें विफलता असम्भव है। और अन्तिम बात यह कि राज्य सामूहिक सत्याग्रहसे निपट सकता है, जबकि व्यक्तिगत सत्याग्रहसे जो निपट सके ऐसा राज्य अभीतक कोई देखा नहीं गया है।

मेरे इस बयानको भी, कि जो संगठन अपनेको शक्तिशाली अनुभव करता हो वह खुद अपनी जोखिमपर सामूहिक सत्याग्रहको अपना सकता है, बहुत तूल नहीं देना चाहिए। जहाँ यह, एक विचारके रूपमें, निर्विवाद है, वहाँ मैं यह भी जानता हूँ कि इस समय कोई भी संगठन ऐसा नहीं है जो इस भारको वहन कर सके। झूठी आशाएँ बँधाना मैं नहीं चाहता।

अब गुप्त तरीकोंकी बात लीजिए। मैं सदाकी तरह इस बातपर दृढ़ हूँ कि वे वर्जित होने चाहिए। मैं खुद इसमें कोई अपवाद मान नहीं सकता। गोपनीयताने बहुत गड़बड़ी की है और यदि उसे सख्तीसे दबाया नहीं गया तो वह आन्दोलनको तबाह कर सकती है। ऐसी असामान्य परिस्थितियाँ हो सकती हैं जिनमें गुप्त तरीके

जरूरी हों। पर मैं जन-साधारणकी खातिर, जिन्हें हम निर्भीकताकी शिक्षा देना चाहते हैं, उस सुविधाको छोड़ दूंगा। उनमें यह विचार पैदा करके कि कुछ परिस्थितियोंमें वे गुप्त तरीके अपना सकते हैं, मैं उनके दिमागोंको उलझनमें नहीं डालूंगा। गोपनीयता सत्याग्रहकी भावनाके विकासके लिए प्रतिकूल है। यदि कांग्रेसी यह समझ लें कि सभी सम्पत्ति किसी भी समय जब्त हो सकती है, तो वे उससे बिलकुल मुक्त होना सीख जायेंगे।

तुम्हारी इस बातसे मैं बिलकुल सहमत हूँ कि व्यक्तियोंका स्थानीय अधिकारियोंको यह सूचना देना कि उनका इरादा अमुक प्रकारका सत्याग्रह करनेका है, हास्यास्पद है। एक महान आन्दोलनको हम हास्यास्पद बनाना नहीं चाहते हैं। इसलिए, जब सत्याग्रह किया जाये तो वह गम्भीरतासे और, जहाँतक सम्भव हो, कारगर ढंगसे कांग्रेस कार्यक्रमको आगे बढ़ानेके लिए किया जाना चाहिए।

तुम्हारे पत्रमें मुझे एक चीज छूटी लगी। कांग्रेसकी विविध रचनात्मक गतिविधियोंका तुमने कोई जिक्र नहीं किया। १९२० में[1] पूरे विचार-विमर्शके बाद जो कांग्रेस-कार्यक्रम बना था, वे उसका अभिन्न अंग बन गई हैं। सत्याग्रहकी पृष्ठभूमिमें साम्प्रदायिक एकता, अस्पृश्यता-निवारण और चरखे व खद्दरके व्यापक प्रचार-जैसी रचनात्मक गतिविधियोंके बिना हमारा काम चल ही नहीं सकता। इस बारेमें सदाकी तरह आज भी मेरा दृढ़ मत है। हमें यह समझना चाहिए कि कांग्रेसियोंकी संख्या जहाँ लाखोंमें है, वहाँ कैद हुए सत्याग्रहियोंकी संख्या कभी भी ज्यादा-से-ज्यादा लाखसे ऊपर नहीं गई है। यदि बाकी लाखोंको जड़ताने घेर लिया है, तो मेरे खयालसे कोई चीज बुनियादी तौरपर गलत जरूर है। जो लोग किसी भी कारण सत्याग्रहियोंकी पंक्तिमें शामिल नहीं हो सकते, उनकी इस खुली आत्म-स्वीकृतिमें लज्जा की कोई बात नहीं है। जो लोग मेरी बताई इन रचनात्मक गतिविधियोंमेंसे — और इस सूचीको मैं और लम्बा कर सकता हूँ — किसी एकमें लगे हैं, वे भी देशकी सेवा कर रहे हैं और उसे लक्ष्यके निकट ले जा रहे हैं। कांग्रेसी नर-नारी, आर्डिनेंस है या नहीं इसकी परवाह किये बिना, व्यक्तिगत रूपसे यदि स्वाधीनताकी इमारतको खड़ा करनेमें अपने हिस्सेका काम करते रहनेकी कला सीख लें और अपने खुदके महत्वको समझ लें, तो, क्षितिजपर घटाएँ छाई होनेके बावजूद, हताशा या निराशाका कोई कारण नहीं रहेगा।

अन्तमें, यदि तुम इसे मेरा अहंकार न समझो तो, मैं यह कहना चाहूँगा कि मुझमें पराजयका कोई भाव नहीं है और यह विश्वास कि हमारा देश तेजीसे अपने लक्ष्यकी ओर बढ़ रहा है मुझमें आज भी उतना ही ज्वलन्त है जितना कि १९२० में था, क्योंकि सत्याग्रहकी प्रभावकारितामें मेरी आस्था अडिग है। परन्तु, जैसा कि तुम्हें मालूम है, पूर्ण और प्रार्थनापूर्ण विचारके बाद मैंने यही निर्णय किया है कि यरवदा जेलमें लगी अदालतने ४ अगस्तको मुझे जो सजा सुनाई थी उसके पूरा होनेतक मैं आन्दोलन नहीं करूँगा। उसके कारणोंकी चर्चा यहाँ आवश्यक नहीं है, क्योंकि

१. देखिए खण्ड १९, परिशिष्ट १।

मैं उस बारेमे एक अलग वक्तव्य दे चुका हूँ।[1] व्यक्तिगत रूपसे मेरे उसे स्थगित करनेका फिलहाल यद्यपि गलत अर्थ लगाया जा सकता है, पर उससे यह भी स्पष्ट हो जाता है कि ऐसा करना कैसे और कब एक कर्त्तव्य बन सकता है। और यदि यह कर्त्तव्य है तो इससे ध्येयको कोई क्षति नही हो सकती।

तुम्हारा,
बापू

जवाहरलाल नेहरू
पूना

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) (१४), पृ० १५३-६१। महात्मा, खण्ड ३, पृ० ३०८-११ भी।

५०९. पत्र : मणिबहन पटेलको

'पर्णकुटी, पूना'
१५ सितम्बर, १९३३

चि० मणि,

नासिकसे पत्र[2] तुझे नियमित रूपसे मिलते ही है, इस कारण मैंने कुछ भी नही लिखा। अब देखता हूँ कि मैंने पत्र लिखे होते तो वे भी तुझे मिल जाते। खैर। अगर मैं बाहर रहा तो मैं यह मान लेता हूँ कि मैं जहाँ होऊँगा तू वहाँ मुझे मिलने आ ही जायेगी। मैं जानता हूँ कि तू दो दिन बेलगाँवमे रहेगी। फिर नासिक तो जायेगी ही। तेरा स्वास्थ्य अच्छा होगा। मैं मजेमे हूँ। आज बम्बई जा रहा हूँ। २१ तारीखको अहमदाबाद, वहाँसे २३ तारीखको वर्धा।

बापूके आशीर्वाद

श्रीमती मणिबहन पटेल
सेण्ट्रल जेल, हिंडलगा
बेलगाँव

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – ४ : मणिबहन पटेलने, पृ० १०७-८

१. देखिए पृ० ३४१-२।
२. सरदार वल्लभभाईके, जो उन दिनों नासिक जेलमें थे।

५१०. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

पूनासे बम्बई जाते हुए रेलमें
१५ सितम्बर, १९३३

भाई वल्लभभाई,

आपका पत्र रेलमें मिला और यह जवाब इसी समय रेलमें लिख रहा हूँ। बम्बई जा रहा हूँ। बुधवारको अहमदाबाद जाऊँगा। गुरुवारको दो काम[1] करने हैं। यह तो आपने पढ़ा ही होगा। २३ तारीखको वर्धा पहुँचनेकी आशा है। इसके बादका निश्चय वहाँ होगा।

मेरे स्वास्थ्यकी बिलकुल चिन्ता न करें। मैं सावधानी रखकर ही चल रहा हूँ और चलूँगा। दो रतल दूध, शाक और फल लेता हूँ। वजन १०० रतल है। रोज मालिश होती है। डॉ० दिनशा[2] खूब देखरेख रखते हैं, बम्बई भी आयेंगे। प्रेमलीला-बहनने खूब प्रेम बरसाया। पर्णकुटी घर-जैसी हो गई है। आपने शहद जारी रखा है, यह मुझे बहुत अच्छा लगा। आपके लिए शहद भेजनेको उनसे कहूँ? वे कल बम्बई आयेंगी। समय-समयपर वहाँ जाती हैं। बुआजी[3] सारे समय साथ थीं। वे एक अजीब मिश्रण हैं। प्रेम तो है ही। परन्तु दिक्कतें भी पैदा करती हैं। जवाहरलालका स्वास्थ्य खूब अच्छा है। 'यथा नाम तथा गुणः' को अभीतक चरितार्थ कर रहे हैं। अब लखनऊ जायेंगे। पर्णकुटीमें ठहरे थे। साथमें उपाध्याय[4] थे। मंजरअली[5] और प्रोफेसर[6] तो थे ही। प्रोफेसरको बुखार आ गया था। चिन्ताकी कोई बात नहीं है। एन्ड्र्यूज शान्तिके लिए दो दिन पूना रह गया। देवधर[7]का शरीर बहुत सूख गया है। उन्हें तबीयतके बारेमें पत्र लिखें। शास्त्री[8] फिर अच्छे होकर पूना आ गये हैं। बहुत करके चन्द्रशंकर मेरे साथ दौरा करेगा। उसका शरीर ही इसमें बाधक है। मथुरादास[9] तो साथ है ही। वह वर्धा जायेगा या नहीं, यह तय नहीं है। अधिक सम्भावना तो उसके आनेकी है। मीराबहन साथ ही है। वह अच्छी रहती है।

१. सेठ माणेकलाल जेठालाल पुस्तकालयके भवनका शिलान्यास और चिनुभाई माधवलालकी मूर्तिका उद्घाटन, देखिए खण्ड ५६, पृष्ठ १३-९।

२. डॉ० दिनशा मेहता।

३. सरोजिनी नायडू।

४. जवाहरलालके निजी सचिव।

५. मंजरअली सोख्ता।

६. आचार्य जे० बी० कृपलानी।

७. जी० के० देवधर।

८. आर० वी० शास्त्री, अंग्रेजी **हरिजन**के एक सम्पादक।

९. मथुरादास त्रिकमजी।

प्रभावती भी अभी तो साथ ही है। महादेवका लम्बा पत्र आया था। उसे ठीक कह सकते हैं। पढ़ता है और कातता है। पन्नालाल[1] पूना था[2] अब बम्बई आयेगा। काका भी दो-तीन दिनमें बम्बई आयेंगे। बा अच्छी है। दाँत ठीक करा लेना। संस्कृत की पढाई चल रही है, किसी भी प्रकारकी चिन्ता मत करना। मणिको छूटनेपर, आपसे मिलनेके बाद, मैं जहाँ रहूँ वहाँ मुझसे मिल जानेके लिए लिखा है। कमला नेहरूको हृदयकी बीमारी रहती है। वह लखनऊमें है।[3]

साथ मिले तो क्या और न मिले तो क्या?[4] जिसे भगवानके साथका भान है, उसे और किसीके साथकी जरूरत ही क्यों हो? परन्तु आपने जो लिखा है वह ठीक ही है। और यही बात मुलाकातोंके बारेमें है।

घनश्यामदास (बिड़ला) और ठक्करबापाके साथ बैठकर हरिजन-कार्यके लिए दौरेका कार्यक्रम तैयार करना है।

आनन्दी अच्छी रहती है। नरहरिके बालक बीमार रहते हैं। उनकी देखभाल अच्छी हो रही है। बाबलो अपनी मौसीके पास गया है। उसने रोकर राजी कर लिया। निर्मला[4] अच्छी है। इसी तरह शारदा[5] भी। आनन्दीके पत्र मिलते रहते हैं। बम्बईमें मणिभवनमें ठहरूँगा। अहमदाबादमें रणछोड़भाई[6] के यहाँ।

जो चाहिए सो मँगवा ले। लिफाफे बनानेका काम महादेवने ले लिया था[7]।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो – २: सरदार वल्लभभाई पटेलने, पृ० २२-२५

१. पन्नालाल झवेरी।

२. देखिए पिछला शीर्षक।

३. श्री वल्लभभाई पटेल जेलमें अकेले रखे गये थे और उन्होंने सरकारसे एक साथीके लिए प्रार्थना की थी।

४. महादेव देसाईकी बहन।

५. चिमनलाल शाहकी पुत्री।

६. रणछोडलाल अमृतलाल शोधन, एक मिल-मालिक।

७. श्री वल्लभभाई पटेल अपनी रुचिके अनुरूप रद्दी कागजोंके लिफाफे बनाया करते थे।

परिशिष्ट

परिशिष्ट–१

बातचीत : 'टाइम्स ऑफ इंडिया' के प्रतिनिधिसे[1]

२ मई, १९३३

इग्लैंडसे मुझे अपने प्रिय मित्रोंके सन्देश प्राप्त हुए है जिन्हे पाकर मुझे बहुत आनन्द हुआ है। ऐसा लगता है कि मै जो कदम उठानेवाला हूँ उसके औचित्यकी उन्हे अन्तर्वृत्तिसे ही प्रतीति हो गयी है। यह बात उन्होने स्पष्ट शब्दोमे तो नही कही किन्तु उनके सन्देशोका मै यही अर्थ करता हूँ। मुझे डर था कि इस उपवासकी असाधारणताके कारण वे शायद इसे समझ नही सकेगे। किन्तु मेरा डर निराधार सिद्ध हुआ है। श्री एन्ड्रचूजने अपनी ओरसे और मित्रोकी ओरसे सन्देश भेजा है। एक अन्य सन्देश पोलक दम्पतिसे प्राप्त हुआ है। जब भी मेरी बात उनकी समझमे नही आयी उन्होने मेरी आलोचना करनेमे कोई सकोच नही किया। मेरे मनमे एक अस्पष्ट-सी आशका थी कि मेरा यह कदम उन्हे रुचेगा नही। भारतीय मित्रोसे भी मुझे सन्देश मिल रहे है और मै आशा करता हूँ कि अगले कुछ दिनोमे मेरे इस कार्यका औचित्य लोगोकी समझमे आ जायेगा। जो भी हो, मेरी यह प्रतीति बढती जा रही है कि यह उपवास मै टाल नही सकता था। यदि इस अभियानको शुद्ध नैतिक भूमिकापर चलाना था और उन स्वार्थी तथा अशुद्ध लोगोके मलिन स्पर्शसे बचाना था जो इसमे घुस आये है, तो दूसरा उपाय ही नही था। अब मै आशा करता हूँ कि अस्पृश्यता-निवारणमे लगे हुए सारे कार्यकर्त्ता अस्पृश्यता-निवारणकी प्रवृत्तिके विविध अगोकी — जिनमे अस्पृश्यता-निवारण-सम्बन्धी विधेयकोके पक्षमे लोकमत तैयार करना भी शामिल है — सफलताके लिए दुगुने जोरसे जुट जायेगे। यदि मैने यह कदम न उठाया होता तो निश्चित था कि प्रगति रुक गयी होती। मै चाहता हूँ कि सनातनी और सुधारक, दोनो ही, आगामी सप्ताहोमे मिल-जुलकर काम करे और मौजूदा कानूनोमे जो भी त्रुटियाँ दिखाई दे, उन्हे दूर करके किसी समझौतेपर पहुँच जाये।

आप पूछते है कि यदि मुझे रिहा कर दिया गया तो? इस प्रश्नपर अभी तो मै विचार भी नही कर सकता।

[गुजरातीसे]
महादेवभाईनी डायरी, भाग-३, पृ० २७९–८०

१. देखिए पृ० ८६।

परिशिष्ट–२

वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीका पत्र[1]

मयलापुर
७ मई, १९३३

वैयक्तिक

प्रियवर भाई,

काफी सोचने-विचारने और अनेक प्रारूपोंको फाड़नेके बाद मैंने निश्चय किया है कि आपकी 'याचना,' तथा इसी २ तारीखके आपके अत्यन्त मार्मिक पत्रका सर्वोत्तम उत्तर यहाँ संलग्न उद्धरण ही है। मेरा विश्वास है कि यह आपकी अग्निपरीक्षामें, जो इसके यरवदा पहुँचनेतक प्रारम्भ हो गयी होगी, रंचमात्र ही सहारा दे सकेगा। मेरा आपको इससे रोकनेके लिए प्रयत्न करना निरर्थक ही होता और, जैसाकि आपने अपने प्रथम वक्तव्यमें कहा था, खुद मेरे लिए एक उलझन बन जाता। 'आपके मित्रों और सहकर्मियोंके लिए तो मात्र यही कामना करना शेष रह जाता है कि आप इस अग्निपरीक्षाको न केवल अनाहत पार कर ले बल्कि अन्तहीन प्रतीत होनेवाले इस संघर्षके लिए इसमेंसे तपस्याकी नई शक्ति लेकर निकले।

मैं एक क्षणके लिए भी ऐसा कोई दिखावा नहीं करूँगा कि मैं आपके उपवाससे सहमत हूँ। मेरे-जैसा व्यक्ति, जो हिन्दू-धर्ममें जन्मा और वर्षों इसीमें पला है, [उपवासके] पक्ष या विपक्षकी दलीलोंसे भली-भाँति परिचित है। धार्मिक ग्रन्थोंके सहारे आपके वक्तव्योंमें निहित प्रायः सभी तर्कोंका खंडन किया जा सकता है। परन्तु विवेक और मानवता इन ग्रन्थों और आप्त-वचनोंसे परे हैं और आप आदतन उन्हींका सहारा लेते हैं। तथापि मुझे ऐसा अन्देशा है कि हम इस आखिरी अदालतमें भी एक ही पक्षमें नहीं पाये जायेंगे। हमारी मान्यताओंमें मौलिक भिन्नता है। यह भिन्नता मूलभूत है, इसे किसी भी वाक्छलसे दूर नहीं किया जा सकता।

हाल ही में आपने अपना दिल खोलकर रखनेके लिए जो-कुछ कहा है, उसके बावजूद मेरा विश्वास है कि आपके अत्यधिक आत्म-निरीक्षण और आन्तरिक तर्कवितर्कने आपके विवेकको क्षति पहुँचाई है। हर्षोन्मादकी ऐसी स्थिति तो, जिसमें मान्यताएँ उलट जाती हैं, दिन रात और रात दिन हो जाते हैं, आनन्द कष्ट और कष्ट आनन्द बन जाते हैं, रहस्यवादी भी कदाचित् ही अनुभव करते हैं। आदतन ऐसी स्थितिमें रहनेका प्रयास करना और तदनुरूप भाषाको अपनी दैनिक बोलचालकी भाषा बनाना तो, यदि आप ऐसा कहनेकी अनुमति दें तो नैतिक पादयष्टियोंपर चलने-जैसा

१. देखिए पृ० ९३-४।

है। कभी-कभी मुझे ऐसा लगता है कि आप, अपनी यथार्थवादिताके बिलकुल विपरीत, अपने इर्दगिर्दके आम स्त्री-पुरुषोपर भी ऐसा ही आचरण थोपते हैं। इन परिस्थितियोमे निराशा और दुखद असफलताका वातावरण तो बनना ही है। यदि आत्म-सुधार ही एकमात्र सम्भव सुधार है, तो शिक्षकको पश्चात्तापकी कोठरीमे ही वन्द रहना होगा, जो करीब-करीव आत्महत्या ही है। आपमे इस बातको समझनेके लिए दार्शनिकताकी कमी नही है कि अपने किसी विशेष कदमके समर्थनमे ईश्वरीय आदेशका दावा करनेका अर्थ है, उसको विवेचनसे परे रखना और दूसरोके लिए उसके औचित्यको समझना नामुमकिन वना देना। जब कभी मै आपके लेखोमे ऐसा दावा पाता हूँ, तो मन-ही-मन कालिदासकी यह प्रसिद्ध पक्ति उद्धृत किये बिना रह नही पाता

विचारमूढ प्रतिभासि मे त्वम्।

"मुझे तो ऐसा लगता है कि आप चिन्ताकुल विचारसे चकरा गये है।"

सदैव आपका,
वी० एस० श्रीनिवासन

सलग्न पत्र

'रेवोल्युशन एण्ड रिलीजन' रीनॉल्ड निवूहर की पुस्तक 'मॉरल मैन एण्ड इम्मॉरल सोसाइटी' की जॉन मिडलटन मरी द्वारा की गई समीक्षा है। यह समीक्षा इसी महीनेके 'आर्यन पाथ' मे छपी है। नीचे उसके अन्तिम अनुच्छेदकी नकल दी जा रही है जिसमे गावीजी का उल्लेख है।

'तव जो पाश्चात्य जगतमे सामाजिक सघर्षके लिये . . . भौतिक और आध्यात्मिक आवश्यकतामे एक-जैसा विश्वास रखते है, वे क्या है? यही हमारा दुर्भाग्य है। गाधीजीकी सवसे महत्त्वपूर्ण प्रशस्ति यह है कि वे ऐसे व्यक्ति है जिनमे निवूहरकी पुस्तककी कठिन किन्तु कल्पनाशील दलीलोकी अनिवार्य परिणति मिलती है। जहाँतक पुस्तकका सम्वन्ध है, मै केवल इतना ही कह सकता हूँ कि यह पाश्चात्य सभ्यताकी भयकर समस्यापर हुई किसी भी अन्य विवेचनासे, जिससे मै परिचित हूँ, ऊँचे स्तरकी है। यह भविष्यकी झाँकी देनेवाली पुस्तक है, और मेरा यह विश्वास है कि यदि मै यह कहूँ कि अग्रेजीभाषी जगतमे एक नये और स्थायी राजनैतिक आन्दोलनकी अग्रदूत सिद्ध होगी, तो मुझे रोमानी छलनाका शिकार नही माना जायेगा।

[अग्रेजीसे]

लेटर्स ऑफ श्रीनिवास शास्त्री, पृ० २५२-४

परिशिष्ट – ३

जवाहरलाल नेहरूका पत्र[1]

देहरादून जेल
५ मई, १९३३

प्रिय बापू,

आज ही आपका पत्र आया है। इसके आनेकी मुझे बहुत हदतक उम्मीद भी थी, क्योकि अपने विशाल हृदयके कारण आप किसीको भी भूल नही सकते। मैं पहले ही आपको एक तार भेज चुका हूँ।

जैसाकि मेरे तारसे जाहिर होगा, मुझे कुछ नही सूझ रहा है कि मै आपसे क्या कहूँ। धर्मके क्षेत्रमें मेरी कोई पहुँच नही है और जैसे-जैसे मैं बडा होता गया हूँ, निश्चय ही मैं इससे दूर होता गया हूँ। मै मानता हूँ कि मेरे पास इसके बदलेमे कोई दूसरी चीज है, कोई ऐसी चीज जो महज बुद्धि और तर्कसे भिन्न है, जो मुझे शक्ति और आशा प्रदान करती है। इस अपरिभाष्य और अनिश्चित प्रेरणाके सिवा, जिसमे सम्भव है धर्मका कुछ पुट हो लेकिन जो उससे बिलकुल भिन्न है, मैंने पूर्णतया मनकी कार्यविधियोपर ही भरोसा करना सीखा है। शायद ये भरोसेके लिए निर्बल आधार है, परन्तु इनसे अधिक मजबूत कोई आधार दिखाई भी तो नही देता। हाँ, इस दिशामे मैं खोज तो करूँगा ही। मुझे ऐसा लगता है कि धर्मसे भावावेग और भावुकता उत्पन्न होती है और मार्ग-दर्शनके लिए इनपर और भी कम भरोसा किया जा सकता है।

निस्सन्देह, अन्तर्बोध-जैसी चीज कोई है तो सही, परन्तु वह कहाँसे आती है, मै नही कह सकता! शायद मनके पीछेसे, अवचेतनसे, जहाँ अनुभवोका संचित भडार है।

हरिजन-प्रश्न बुरा — बहुत बुरा है, लेकिन यह कहना कि ऐसा बुरा दुनियामे और कुछ भी नही, मुझे तो गलत मालूम पड़ता है। मै समझता हूँ कि मैं बहुत-कुछ ऐसा ही बुरा, बल्कि इससे भी बुरा दिखा सकता हूँ। यह हरिजन-प्रश्न सारे ससारमे विभिन्न रूपोंमे मौजूद है। क्या यह खास वजहोका फल नही है? निश्चय ही इसका कारण मात्र अज्ञान और दुर्भावनासे अधिक कुछ और है। उन कारणोको हटाना अथवा उनके प्रभावको व्यर्थ करना ही इस मसलेको समूल समाप्त करनेका एकमात्र उपाय लगता है। लेकिन मैं इन मसलोके बारेमे अभी क्यो लिखूँ। इस पत्रमे मैं कोई बहस करना नही चाहता, क्योकि बहस करनेका समय तो निकल गया लगता है।

१. देखिए पृ० ९७-८।

आपसे इतनी दूर होना तो कठिन है ही, परन्तु आपके नजदीक होना उससे भी अधिक कठिन है। इस रेल-पेलवाली दुनियामे बडा अकेलापन है, परन्तु आप इस अकेलेपनको और भी बढाना चाहते है। जीवन और मरण तो तुच्छ है, अथवा तुच्छ होने चाहिए। यदि कोई चीज महत्वपूर्ण है तो वह है ध्येय, जिसके लिए कोई प्रयत्नशील है और यदि उसे यह विश्वास हो जाये कि उस ध्येयके लिए मरना ही उसकी सर्वोत्कृष्ट सेवा है, तो मृत्यु सहजसे-भी-सहज मालूम पडेगी। मैंने जीवनसे प्यार किया है—पर्वत और समुद्र, सूर्य और वर्षा, तूफान और वर्फ और पशु, पुस्तक और कला, यहाँतक कि मनुष्योंसे भी—और जीवन मेरे लिए सुखकर रहा है। लेकिन मृत्युकी कल्पनासे मुझे कभी कोई भय नही हुआ है। दूरसे यह ऐसी प्रतीत होती है मानो हमारे प्रयत्नका मुकुट ही हो, परन्तु समीपसे देखनेपर यह उतनी सुखदायी नही है।

गत चौदह या पन्द्रह वर्ष, जबसे मुझे विभिन्न गतिविधियोमे आपसे सम्बन्धित रहनेका सौभाग्य मिला है, मेरे लिए बहुत ही बढिया समय रहा है। जीवन और भी भरा-पूरा, समृद्ध और सार्थक बन गया है। यह एक प्रिय और बहुमूल्य स्मृति है जिसे मुझसे कोई भी छीन नही सकता। जब भी भविष्य अधकारमय होगा, अतीतकी यह झलक अधेरेको हटायेगी तथा शक्ति प्रदान करेगी।

आपको मेरा सम्पूर्ण प्रेम।

स्नेहाधीन,
ज०

[पुनश्च]

कमला देहरादूनमे रह रही है। आपका सन्देश मै उसतक पहुँचा दूँगा।

[अग्रेजीसे]

गाधी-नेहरू कागजात, १९३३, सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय और पुस्तकालय।

परिशिष्ट – ४

बातचीत : च० राजगोपालाचारीके साथ[1]

४ मई, १९३३

गाधीजी विधिशास्त्रमे भी आत्मघातका अधिकार माना गया है। आप मुझसे पूछेगे कि रामतीर्थ, रामकृष्ण, विवेकानन्द, आदिने भी क्या ऐसी तपस्या की थी? रामतीर्थने जान-बूझकर आत्मघात किया हो या उनकी मृत्यु समाधिमे हो गई हो, किन्तु क्या उसका कोई परिणाम निकला? ईसा सूलीपर चढ गये, क्या उसका कोई प्रभाव हुआ?

च० राजगोपालाचारी किन्तु हिन्दू-धर्म आत्मघातको मान्य नही बताता।

1. देखिए पृ० ११३।

गा० : मैं नही जानता, किन्तु महादेव मुझसे कहते थे कि गंगामे डूबकर मरनेकी प्रथा थी।

च० रा० वह तो गंगाजलसे पावन होनेके लिए रही होगी। मैं इतना स्वीकार करता हूँ कि इस पापका कारण आप हों तो आप आत्मघात कर सकते है। तर्ककी दृष्टिसे इसमे आपकी जय मानी जायेगी। किन्तु ऐसी जय तो आपको नही चाहिए न?

गा० मुझे तो प्रायश्चित्त करना है। नैतिक उद्देश्य सिद्ध करनेके लिए साधन भी नैतिक होना चाहिए। कॉर्डिनल मैनिंगको तीन बिस्कुट और पानीपर रखा गया था। उसे इस प्रकार जिस धीमी मृत्युका आलिंगन करना पड़ा, उसकी तुलनामे तो २१ दिनका उपवास बहुत आसान माना जायेगा। नैतिक सुधार तपस्या और आत्म-शुद्धि-जैसे नैतिक साधनोंमे ही हो सकते हैं। जिन वैज्ञानिकोंने इस चीजका अनुभव किया हो, हमे उनके उदाहरणोंपर विचार करना चाहिए। मेरा और मेरी मॉंका जन्म ऐसे परिवारोंमे हुआ जिनमे ऐसे व्रत रोजकी बात थे। उनका यह अनुभव है। सम्भव है, मेरी मॉंके ये कठिन व्रत मेरे पिताको नही भाते रहे हो। किन्तु उनपर इन व्रतोंका कोई अनिष्ट प्रभाव नही हुआ और उनके प्रति उनके व्रतोंके कारण मेरा आदर तो बढ़ा ही था।

च० रा० . यह उदाहरण केवल विचार-साहचर्यका है, क्या इसके बलपर यह सिद्ध किया जा सकता है कि आपकी मॉं ऐसे व्रत करती थी इसलिए आपको भी करने चाहिए। यदि कोई आदमी अपने शरीरमे सूई चुभाकर उसे कष्ट दे तो उससे लोगोंको यह समझनेमे कैसे सहायता मिलेगी है कि किसीको अस्पृश्य मानना पाप है?

गा० . तब यदि मैं कुछ ही दिनके उपवास करूँ तो? अथवा यदि इस उपवासके अन्तमे मैं न मरूँ तो?

च० रा० इन दोनोंमे कोई सम्बन्ध नही है। आप तो ऐसा मानते मालूम होते है कि देहदमनके द्वारा लोगोंको किसी सत्यकी प्रतीति कराई जा सकती है। मानो इन दोनोंमे कोई गूढ सम्बन्ध हो! ऐसे देहदमनके खिलाफ बुद्धने सबसे पहले विरोधकी आवाज उठाई थी।

गा० : सच्चा उपवास तभी माना जा सकता है जब शरीरके साथ चित्त और आत्माका सहकार हो। बुद्धका विरोध मात्र दैहिक उपवासके खिलाफ था।

च० रा० दस दिनके बाद क्या आपमे स्पष्ट विचार करनेकी शक्ति रह जायेगी?

गा० : इससे पहले तो मैं ऐसा कर पाया हूँ। शुद्ध उपवासमे विचार ज्यादा पवित्र हो जाते है। यद्यपि उनका कोई बाहरी चिह्न नही होता। एक साथीने पचपन दिनका उपवास किया था, फिर भी उसके विचार शुद्ध नही हुए क्योंकि उसका चित्त शुद्ध नही था। अपने उपवासके पहले ही दिन वह मुझसे इस बातकी चर्चा करने लगा कि उपवासके अन्तमे क्या करेगा। अभी भी उसका मन स्थिर नही है। उसने मुझे एक पत्र लिखा था जिसमे अपने मनकी मलिनताका वर्णन किया था।

किन्तु जिस मनुष्यका चित्त ईश्वरमे अथवा किसी पवित्र कार्यमे रत हो उसे तो जो वस्तुएँ पहले अस्पष्ट होती है वे धीरे-धीरे अधिकाधिक स्पष्ट होने लगती है।

च० रा० आपकी बात एक हदतक ही सच मानी जा सकती है।

गा० ऐसा कहनेमे आप एक ऐसी भूमिपर पाँव रख रहे है जिसमे गलती होनेकी बहुत सम्भावना है। वैज्ञानिकके अनुभवको तो आपको मानना ही चाहिए। जो मनुष्य पवित्र है, सत्यपरायण है और सत्यका अनुसरण करनेके लिए प्रतिज्ञाबद्ध है, वह वैसा ही वैज्ञानिक है जैसा कोई भौतिक विज्ञानवेत्ता।

च० रा० किन्तु यह तो अस्वाभाविक स्थिति कही जायेगी।

गा० पशुओके लिए अस्वाभाविक हो सकती है, मनुष्यके लिए नही। किसीको अदृश्यका दर्शन करना हो तो स्वय अदृश्य होना पडेगा।

च० रा० क्या आपको अदृश्यका दर्शन करना है?

गा० हाँ, क्योकि मुझे हरिजनोकी उत्तम सेवा करनी है। अस्पृश्यताका नाश करना हो तो हमे ऐसा कुछ करना ही पडेगा जो १६ करोड मनुष्योके हृदयोको स्पर्श कर सके।

च० रा० एक अन्धविश्वास है कि भूत-प्रेत आदिसे बचनेके लिए लकडी छू लेनी चाहिए और इसमे ईश्वरको भी सान लिया जाता है। किन्तु ऐसी गूढ बातोकी भी एक हद तो होती है।

गा० गूढ तत्त्वको मैं मानता हूँ और मुझे इस वातकी लज्जा नही है। आप ऐसा कहना चाहते है कि गूढ तत्त्वको मानना हानिकारक है।

च० रा० हाँ, यदि उसका परिणाम मृत्यु हो तो?

गा० आप तो दूध भी चाहते हो और दही भी। दलीलके खातिर मै आपकी यह बात मान लेता हूँ कि आत्मघातक उपवास गलत है। किन्तु सारे उपवास ऐसे नही होते। आपकी दलीलका अर्थ तो यह होगा कि देहदमनसे लाभ हो ही नही सकता।

च० रा० कभी-कभी हो सकता है।

गा० शारीरिक स्वास्थ्यकी दृष्टिसे?

च० रा० नही, मानसिक लाभ भी हो सकता है।

गा० तब तो आप हार गये। यदि ऐसा हो तो उपवास किया जाये या नही, यह बात उपवास करनेवालेपर ही छोड देनी चाहिए। यह उपवास मै स्वेच्छासे नही कर रहा हूँ। मुझे इसका आदेश मिला है।

च० रा० ठीक। इसके बारेमे मित्रजन आपको सलाह दे सकते है क्या?

गा० जरूर।

च० रा० यदि मृत्युकी सम्भावना अस्सी प्रतिशत हो तब तो यह जुआ कहा जायेगा। आप कहेगे कि यह एक अच्छा जुआ है। मुझे ऐसा लगता है कि जेलमे रहते हुए आपके मनमे यही एक वस्तु घूमती रही है और उसका परिणाम यह हुआ है कि आपको तारतम्यका कोई बोध नही रह गया है। आपके मनमे नये-नये प्रयोग करनेका बडा उत्साह है। इस उपवासमे आप मृत्युके साथ प्रयोग कर रहे है और

मै मानता हूँ कि गलत राहपर जा रहे है। अब मुझे कोई ऐसा आदमी बताइए जिसने आपके इस कदमको पसन्द किया हो।

गा० : डकन, एन्ड्रयूज।

च० रा० · इन लोगोकी रायकी क्या कीमत है? इनकी अपेक्षा तो मेरी राय ही कही अधिक कीमती है। एन्ड्रयूजको तो कमरेमे ताला लगानातक नही आता और वे जिन्दगीमे ताला लगानेकी बात कर रहे है। और आप भी ईश्वरके कानूनको पूरी तरह जाननेका दावा कैसे कर सकते है? मै तो आपसे कहूँगा कि आप ज्यादा सावधान हो जाये। यह तो सम्भव है कि किसी बार ईश्वरकी प्रेरणा स्पष्ट रूपसे मिल जाये, किन्तु वह हमेशा नही मिल सकती।

गा० आप ईश्वरकी प्रेरणाकी सम्भावनाको स्वीकार करते है न? यदि उसे आप स्वीकार करते है तो आप हार गये।

च० रा० . किन्तु इस प्रसगमे यह प्रेरणा गलत भी है सकती है। यदि आप वुद्धिसे काम लेना वन्द करते है तो इससे आपकी अधीरता ही सूचित होती है। ईश्वर तो अनेक रूप धारण करता है, कभी किसी दुष्टका, कभी मछलीका, कभी कछुवेका। मै तो इतना ही चाहता हूँ कि आप यह समझे कि किसी बार आपकी भूल भी हो सकती है। इस उदाहरणमे ऐसी भूल हो रही है, यह आप समझिए।

गा० किन्तु जवतक परिणामसे यह सिद्ध नही हो जाता तब तक मै अपनी भूल कैसे स्वीकार करूँ। इस उपवासका निश्चय मैंने अपनी इच्छाके विरुद्ध किया है। मेरा मन आजकल किस प्रकार काम कर रहा है यह बात आपको मेरे पत्रोंके आधारपर महादेव वतायेगा।

च० रा० . यह तो आप विचारकी क्रियाको जान-बूझकर रोक रहे है।

गा० : मै अगर आपकी दलीलको स्वीकार कर लूँ तब तो मुझे काम करना वन्द कर देना पड़ेगा।

च० रा० : लेकिन ईश्वरकी कोई ऐसी प्रेरणा नही हो सकती जो वुद्धिके विरुद्ध हो।

गा० : हो सकता है कि वह मेरी वुद्धिके विरुद्ध न हो। . . . इसमे एकमात्र हेतु शुद्धिका है — मेरी अपनी शुद्धिका और साथियोंकी शुद्धिका। इसमे से दूसरे परिणाम भी निकलेगे। मै देखता हूँ कि मेरी उपस्थितिमे भी अशुद्धि रहती है। इसका मै यह अर्थ करता हूँ कि मुझमे स्वयं कही-न-कही कोई अशुद्धि है।

दूसरे विचार ही न आये ऐसी स्थिति अभी मेरी नही हुई। जिन वस्तुओको मै अशुद्ध कहता हूँ वे शुद्ध सिद्ध हो जाये तो भी मैं उपवास करूँगा। अशुद्धियाँ तो है ही और मुझे लगता है कि उनके लिए मैं उत्तरदायी हूँ। इसके सिवा इस प्रश्नपर राजनीतिक दृष्टिसे विचार करना गलत है। मूल वात यह है कि यह आन्दोलन हमें धार्मिक वृत्तिसे ही चलाना चाहिए।

धर्म आन्तरिक समझका विषय है। धर्म हृदयकी, श्रद्धाकी, सनातन मूल्योके स्वीकारकी बात है। शरीरके रूपमे हमारा कोई सनातन मूल्य नही है। ईश्वर कहता

है कि नामरूपधारी हरेक वस्तुका नाश है। सूर्य भी सनातन नहीं है। विज्ञान भी इस बातकी गवाही देता है। किन्तु हमारे कार्यभौतिक वस्तुओंसे जुड़े हुए हैं। मेरा उपवास पूर्णतः आध्यात्मिक उद्देश्यके लिए है। बुद्धिमें जो मुझसे बहुत ज्यादा हैं उनके साथ मैं कैसे टिक सकता हूँ? किन्तु जहाँ सवाल हृदयकी प्रतीतिका है वहाँ मैं उनके विरुद्ध खड़ा रह सकता हूँ, क्योंकि उसमें संस्कृत भाषाके गहरे ज्ञानकी आवश्यकता नहीं है। गरीबोंके सौभाग्यसे ईश्वरका निवास हृदयमें है और मैं यह उपवास हृदयकी शुद्धिके लिए ही कर रहा हूँ — यद्यपि वर्षाके लिए और अन्यान्य भौतिक वस्तुओंके लिए भी उपवास करनेकी प्रथा है अवश्य। . . . अपने हृदयमें मैं जिस चीजका अनुभव कर रहा हूँ उसका आदर आपको करना ही चाहिए। आप तो मुझसे अपने हृदयकी प्रतीतिकी अवज्ञा करनेके लिए कह रहे हैं। मेरे साथ लड़िए, दलील कीजिए। यह सम्भव है कि मुझसे भूल हो रही हो। किन्तु आप तो मुझसे ऐसी वस्तुको निश्चित रूपसे माननेके लिए कह रहे हैं जो शक्य तो है पर निश्चित नहीं है। इस उपवासका परिणाम मेरी मृत्यु होगा, इस बातको यदि मैं निश्चयपूर्वक जानते हुए उपवास कर रहा हूँ तो मैं झूठा हूँ। जबतक आप मेरी कही हुई बातोंके आधारपर मुझे इस बातका यकीन नहीं दिला देते कि मैं भूल कर रहा हूँ तबतक आपको मेरे विश्वासको डिगानेकी कोशिश नहीं करनी चाहिए। कोई भी व्यक्ति ईश्वर-जैसी निश्चितता प्राप्त नहीं कर सकता। किन्तु अपनी नौकाका कर्णधार तो मैं ही हो सकता हूँ न?

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-३, पृ० २८४-९

परिशिष्ट–५

एम० एस० अणेका सविनय अवज्ञा स्थगन-सम्बन्धी वक्तव्य[1]

पूना
९ मई, १९३३

मेरा पक्का विश्वास है कि यद्यपि महात्मा गांधीके अनशनकी खबरसे पूरे देश पर चिन्ता और विषादकी काली घटायें छा जायेंगी, फिर भी देशवासियों तथा दुनिया-भरके उनके मित्रों और अनुयायियोंको यह जानकर कुछ राहत मिलेगी कि बहरहाल सरकारने उन्हें बिना शर्त रिहा कर दिया है और उन्हें एक स्वतन्त्र नागरिककी तरह अपने व्रत-पालन और अपनी महान तपस्या करनेकी छूट दे दी है। गत रात रिहाईके बाद प्रेसको दिये गये अपने वक्तव्यमें उन्होंने सविनय अवज्ञा आन्दोलनके संचालनपर अपना विचार व्यक्त किया है, जिसपर निस्संदेह प्रत्येक

१. देखिए पृ० १६६।

सविनय अवज्ञाकारी यथोचित ध्यान देगा। यह एकदम सही है कि अनशनकी अवधिमे सविनय अवज्ञाकारी दुविधाकी स्थितिमे रहेंगे, इसीलिए उन्होने मुझे अधिकृत रूपसे यह घोषणा करने और सविनय अवज्ञा आन्दोलन एक मास या छः सप्ताह लिए स्थगित करनेकी सलाह दी है।

अपने वक्तव्यमें उन्होंने उसी बातपर जोर दिया है जो मैं गत चार महीनोंसे सविनय अवज्ञा आन्दोलनके विभिन्न आलोचकोंको जवाब देते हुए बार-बार कहता आया हूँ, यानी कि सविनय अवज्ञा तबतक बन्द नहीं की जा सकती जबतक कि अनेक सविनय अवज्ञाकारी कैदमे है, और जबतक सरदार वल्लभभाई पटेल, पण्डित जवाहरलाल नेहरू, खान अब्दुल गफ्फार खाँ आदि जेलमे है तबतक कोई समझौता नही हो सकता।

"सच तो यह है कि सविनय अवज्ञा आन्दोलन बन्द करनेका अधिकार उन लोगोंको है ही नही जो इस समय जेलसे बाहर है। ऐसा करना केवल पहलेकी कार्य समितिके लिए ही सम्भव है।" जिस दृष्टिकोणको महात्मा गांधीने ऊपर इतने स्पष्ट और जोरदार ढँगसे रखा है मैं उसीको दुहराता हूँ। केवल यही एक युक्तिसंगत और संवैधानिक दृष्टिकोण है, जिसे कांग्रेसजन सविनय अवज्ञा आन्दोलन बन्द करनेके प्रश्नपर अपना सकते हैं। लेकिन किसी खास उद्देश्यकी पूर्तिके लिए सविनय अवज्ञा आन्दोलनको कुछ समयके लिए स्थगित करनेका प्रश्न निस्सन्देह एक अलग बात है। निश्चय ही यह एक महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व है जिसे निबाहनेके लिए मुझे कहा गया है। लेकिन मैं एक शस्त्रसे सुसज्जित हूँ — वह है एक ऐसे व्यक्तिकी सलाह जो न केवल वर्तमान सविनय अवज्ञा आन्दोलनके प्रवर्तक है बल्कि जो सविनय अवज्ञाके विज्ञान और प्रयोगके जन्मदाता व एकमात्र अधिकारी विशेषज्ञ हैं। उनके सुझावके अनुरूप मैं अधिकृत रूपसे घोषित करता हूँ कि मंगलवार ९ मईसे छः सप्ताहके लिए सविनय अवज्ञा स्थगित रहेगी। यह कदम मुझे भी इस समय उचित जान पड़ता है। कारण, कि यह वातावरणमे व्याप्त उत्तेजनाके सभी तत्वोंको दूर कर देगा और उसे इस तरह हम सबके लिए स्वच्छ बना देगा। इस प्रकार हम प्रार्थनामय मन.स्थितिमें होकर उस महान ध्येयके लिए जिसकी खातिर महात्मा गांधी यह तपस्या कर रहे हैं, सर्वशक्तिमान् प्रभुसे आशीर्वादकी याचना कर सकेंगे और उन्हें प्रचुर मात्रामे आध्यात्मिक भोजन प्रदान कर सकेंगे, जो उनकी जीवन-रक्षाके लिए इस अग्नि-परीक्षामे नितान्त आवश्यक है।

अन्तमें मैं प्रत्येक स्त्री-पुरुषसे फिर यह अपील करता हूँ कि वे इस समयका उपयोग जो भी काम उन्हें हरिजनोंके उत्थानके लिए सर्वोचित जान पड़े उसे अपनी योग्यता और शक्तिके अनुसार करके करें।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दुस्तान टाइम्स, १०-५-१९३३

परिशिष्ट–६

अनशनकी समाप्ति[1]

जिस दिनके लिए सैंकडो और हजारो लोगोने प्रार्थना की थी आखिर वह आ ही गया। दृश्य उतना ही भव्य था जितना कि ८ मईको था। द्वारपाल, श्रीमती सरोजिनी नायडूके निमन्त्रणपर वहाँ जो लोग उपस्थित थे, वे सभी धर्मोके स्त्री-पुरुषोका प्रतिनिधित्व कर रहे थे। श्रीमती नायडूने अपने जीवनमे एक वारके लिए अपनी अत्यधिक उदारताका त्याग कर दिया था और वे रोगीके हितमे, जिसपर उन्होने अथक चौकसी की थी, उस समय कजूस वन गई थी। कोई और खुशीका अवसर होता तो उन्होने पूरे पूना शहरको ही निमन्त्रित कर लिया होता, लेकिन उस दिन ऐसा नही किया। मुझे उस हरिजन बालककी प्रतीक्षा थी जिसने ८ मईको गाधीजी से यह आग्रह किया था कि वह २९ तारीखको ठीक दोपहरके समय वहाँ आ जायेगा। मैने द्वारपालसे प्रार्थना की कि वे उसे खोजे और अन्दर आने दे। दुर्भाग्यवश मुझे उसका पता नही मालूम था, अन्यथा मैं खुद उसे जाकर ले आता। वह नही आया और सतरेका रस गाधीजीको उसके द्वारा नही वल्कि स्नेहमयी मेजवान, लेडी ठाकरसी द्वारा पेश किया गया। वे उस दिन अपनेको शायद सबसे अधिक भाग्यशाली मान रही थी, जैसे कि डॉ० अन्सारी अपनेको सबसे अधिक गौरवान्वित अनुभव कर रहे थे। हरिजन लडका तो वहाँ नही था, परन्तु द्वारपालने सभी हरिजनोके लिए दरवाजा खुला रख छोडा था। गाधीजीको अनशन तोडनेसे पूर्व पहली और एकमात्र माला एक हरिजन लडकीने ही पहनाई, जो उसके बाद अपनी गण्य-मान्य वहनोके बीच बैठ गई। श्रीयुत अमृतलाल ठक्कर और सेठ जमनालाल वजाजके साथ हरिजन लोग बीचमे बैठे थे, जिनमे से कुछ तो अहमदाबाद तकसे आये थे। रामनामके उच्चारणके साथ हमने समारोह शुरू किया, जिसका उद्घाटन डॉ० अन्सारीने कुरानके उद्धरणोसे अनशनके आध्यात्मिक अर्थकी व्याख्या करते हुए किया और बताया कि प्रभु-कृपाके आकाक्षीको सभी अच्छाइयोका भोजन ग्रहण करना चाहिए तथा सभी बुराइयोसे उपवास रखना चाहिए। क्राइस्ट सेवा सघके भाइयोने गाधीजीका प्रिय भजन "ह्वेन आई सर्वे द वन्डरस क्रॉस" गाया। प्रो० वाडियाने पारसी भजन गाया, जो उनके विचारसे पूरे ससारकी प्रार्थना वन सकता है, और काकासाहबने वह पद्य गाया जिसमे भक्त समस्त अच्छाइयोके मूर्तरूप, सभी मनोविकारो और घृणासे मुक्त, प्रेम और करुणाकी मूर्ति भगवानकी उपासना करता है, चाहे लोग उसे किसी भी नामसे

१. देखिए पृ० १८६। यह महादेव देसाई द्वारा लिखित "स्पार्क्स फ्रॉम द सेक्रेड फायर–४" से लिया गया है।

क्यो न पुकारते हो। उसके बाद कवि [रवीन्द्रनाथ] ठाकुरके उस गीतकी बारी आइ जिसमे उन्होंने सर्वशक्तिमान्‌का आह्वान जीवन-निर्झरके सूख जानेपर अपनी दयाकी धारा बहाते हुए और समस्त माधुर्यकी समाप्तिपर अमृतमय सगीत बरसाते हुए आनेके लिए किया है। सितम्बरके उपवासकी तरह इस बार कवि उपवासकी समाप्ति पर अपना वह गीत गानेके लिए स्वयं नही आ सके थे। इसलिए मैंने ही उनके नामसे वह गाया। अन्तमे 'वैष्णव जन तो तेने कहिए' भजन, गाया गया, जो गाधीजीके लिए उनके जीवन-श्वासकी तरह है। यह सभी महत्वपूर्ण अवसरोपर गाया जाता है और हमे दु:ख और हर्षका सामना स्थितप्रज्ञतासे करनेके लिए कहता है।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ३-६-१९३३

परिशिष्ट—७

बातचीत : च० राजगोपालाचारीके साथ[1]

१ जून, १९३३

दोनो पक्षोने जो रुख लिया है, उससे हटना उनके लिए मुश्किल है। दोनोंकी स्थिति बिलकुल साफ है। सरकार अपनी अपनाई हुई नीतिपर निर्दयताके साथ पूरी तरह अमल करना चाहती है। मैं इसे अच्छी तरह समझ सकता हूँ। मेरे मनमे उसका जवाब भी बिलकुल स्पष्ट है। किसानोको और आम जनताको हमे इस लड़ाईमे शामिल नही करना चाहिए। हम उनपर जरा भी बोझ न पड़ने दें। शिक्षित वर्गमे से ही जो लोग हमारे पक्षमे आयें, सिर्फ उनपर ही आधार रखे। उन्हे भी काग्रेसकी तरफसे किसी आर्थिक मददकी आशा नही रखनी चाहिए। जिन्हे मददकी जरूरत हो, वे अपने मित्रो, पडोसियो और ऐसे ही दूसरे लोगोंसे ले ले। वे लगातार जेलमे जाते ही रहे। कोई प्रदर्शन न किये जाये। जैसे, काग्रेसके अधिवेशन करना बन्द हो जाना चाहिए। जरुरत हो तो नामको एक डिक्टेटर मुकर्रर कर दिया जाये। मगर ऐसा करनेमे मुश्किल आयेगी, यह मै जानता हूँ। इसलिये डिक्टेटर भी मुकर्रर न किया जाये।

लड़ाईमें जरा भी गुप्तता नही होनी चाहिए। करबन्दीका कार्यक्रम भी नही हो सकता। मुझे खुद तो हमेशा ऐसा लगा है कि स्वराज्यके लिए करबन्दीकी लड़ाई बहुत मुश्किल चीज है। यह चीज बड़े महत्त्वकी जरूर है, पर इसके लिए हमारी तैयारी कभी थी ही नही। अबतक हमने करबन्दीकी जो लड़ाइयाँ लड़ी है, उनके उद्देश्य मर्यादित थे, और उनके लिए वे बिलकुल जरूरी थी। पर स्वराज्यके लिए करबन्दीकी लड़ाई लड़ना खेल नही है। हम यह बात साफ तौरपर जाहिर कर

१. देखिए पृ० १८८।

दे और अपने वक्तव्यमे लोगोसे यह कह दे कि इस तरह लडाईको सीमित करनेमे हम लडाईको जरा भी छोड़ते नही है और जिन लोगोने कष्ट सहन किया है उनका मी त्याग नही करते। बल्कि लडाईको और भी ऊँची भूमिकापर पहुँचा रहे है। किसी-न-किसी दिन तो जब्त हुई तमाम जमीन वापस मिलनेवाली ही है। लोगोमे यह विश्वास होना ही चाहिए। लेकिन जिनमे यह विश्वास न हो, वे जमीनको खोई हुई समझ ले। बड़ी लड़ाइयोमे लोगोने हमेशा जान और माल गँवाया है।

अपने दावे और अपना ध्येय हम फिरसे जाहिर कर दे। देशको उस ध्येयसे दूर नही, बल्कि उसके ज्यादा नजदीक ले जानेके लिए जो-कुछ करना पडे, उसे बेझिझक करनेके लिये राष्ट्रके सामने कार्यक्रम रखे। इस चीजकी चर्चा मैंने वल्लभभाईके साथ की है। मैंने इसपर खूब विचार किया है और मै इन बड़े-बड़े निर्णयोपर पहुँचा हूँ।

राजाजी परन्तु जिन लोगोने अभीतक जमीन वगैरह गँवायी है, उनका क्या होगा? मुझे तो यह एक ही विचार — जायदाद वापस दिलानेका — सत्ता हस्तगत करनेको ललचाता है। जो विधान वे तैयार कर रहे है, उसमे मै देखता हूँ कि जायदाद वापस लेनेमे कोई बाधा नही पडेगी। मै नही जानता कि यह विचार मुझे अपनी कमजोरीसे आ रहा है या इस प्रकारकी अपनी प्रतीतिके कारण आ रहा है।

बापू. इसमे कमजोरीका सवाल ही नही है। इस और ऐसी दूसरी चीजोके लिए सत्ता लेनेका विचार मुझे भी आया है। और वल्लभभाई भी उससे सहमत हुए हैं। किन्तु आज हमे सत्ता लेनेका विचार जरा भी नही करना चाहिए। आज तो हमे लड़ाईको चरमोत्कर्षपर जारी रखनेका ही विचार करना चाहिए। उसे चलानेके लिए हम सिर्फ आधे दर्जन ही रह जाये, तो भी मुझे परवाह नही।

फिर राजाजीने नीचे लिखे सवालोपर विचार करनेका सुझाव दिया. (१) व्यक्तिगत रूपमे हम जो-कुछ कर सकते हो, उसके अलावा हम सगठित रूपमे कुछ कर सकते है या नही? (२) इस योजनामे एक-दूसरेके साथ सम्बन्ध रखना, सगठन बनाये रखना असम्भव हो जाता है।

बा० मै खुद तो व्यक्तिगत रूपमे जितना हो सके, उसीसे सन्तोष मानूंगा।

रा० आप गुप्तताकी मनाही कर देते है, तब कुछ तरहके काम तो असम्भव ही हो जाते है।

बा० · मुझे तो थोडे लोगोमे सर्वोच्च बलिदानकी भावना जगानी है। इसके लिए शुद्ध कुन्दन-जैसी देशभक्तिकी जरूरत है। उसपर हम सुन्दर इमारत खडी कर सकेगे। ऐसा नही करेगे तो ताशके महलकी तरह सब-कुछ नीचे गिर जायेगा। इसमे से हम सच्चा सत्याग्रह पैदा कर ले। जो पूरी तरह शुद्ध न हो, ऐसी बहुत-सी चीजोकी अपेक्षा बिलकुल शुद्ध एक ही चीज ज्यादा अच्छी है।

सवेरे छ. बजे २ जून, १९३३

रा० उपवासके बादके आपके वक्तव्यके अलावा और भी कुछ करनेकी इस समय जरूरत है क्या?

वा० : शुरूमें मैंने वाइसरायको मुलाकातके लिए जो अर्जी दी थी, उसे फिरसे दुहराना चाहिए। मैं गांधी-इर्विन समझौता फिरसे अमलमें लाने, नमक एकत्रित करनेकी इजाजत और विदेशी कपड़े और शरावकी दुकानोंपर शान्त धरना देनेकी छूटकी माँग करूँगा।

रा० : आपके वक्तव्यका जवाव तो वे दे चुके हैं। क्या आपको लगता है कि इस विषयमें फिर कुछ लिखा जाये?

वा० : मुझे लगता है कि वातचीत जहाँ रुक गई थी, वहाँसे फिर शुरू करनेका जो वचन मैंने दिया था, उसे हमें ईमानदारीसे पूरा करना चाहिए।

रा० : परन्तु इन लोगोंने तो कहा है कि सविनय अवज्ञा पूरी तरह वापस लेनेके वाद ही आइये।

वा० : वातचीत शुरू करनेके वाद वे ऐसा कह सकते हैं। यह चीज तो जब सुलहकी शर्तोंकी चर्चा हो तब कही जा सकती है। आज सविनय-अवज्ञा वापस लेनेके लिए जो तन्त्र चाहिए वह कहाँ है? सविनय-अवज्ञा कौन वापस ले? इसलिए कैदियोंको छोड़नेसे पहले सविनय-अवज्ञा वापस लेनेकी शर्त हो ही नहीं सकती। मुझमें हारकी भावना जरा भी नहीं है। हम यह खयाल ही वरदाश्त नहीं कर सकते कि हमने वुरा किया है या समझौतेको तोड़ा है। ऐसी शर्तोंपर सुलह हो ही नहीं सकती। ऐसी शर्त मान लें, तो हम वाजी हार जायेंगे, और खत्म हो जायेंगे। हमारा दावा तो यह है कि गांधी-इर्विन समझौतेका भंग हमारी तरफसे जरा भी नहीं हुआ। उन्हें जरूरत हो तो इसकी जाँचके लिए पंच मुकर्रर करें। निष्पक्ष पंचका फैसला माननेको मैं तैयार हूँ। लेकिन ऐसे किसी सुझावपर विचार करनेके लिए वे तैयार ही नहीं हैं। मेरा तो खयाल है कि इस वार भी वाइसरायका उत्तर पिछली वार जैसा ही मिलेगा। वे कहेंगे, हम यह मानते हैं कि सविनय-अवज्ञा विना शर्त और पूरी तरह छोड़ देनेके सिवा और किसी वातकी चर्चा करनी हो, तो आपसे मिलनेका कोई अर्थ ही नहीं। फिर भी यह जरूरी है कि कोई मार्ग सुझानेवाला नहीं, वल्कि सिर्फ उनसे मिलनेकी माँग करनेवाला पत्र लिखा जाये।

रा० : भारत-मन्त्रीको कुछ न लिखा जाये?

वा० : उनके विचार तो मैं जानता हूँ। रंगस्वामीने मुझसे कहा था कि होरने उनको मित्रतापूर्ण निजी पत्र लिखा था कि श्वेत-पत्रमें अपरिवर्तनीय कुछ भी नहीं है, इसलिए उन्हें मिलने आना चाहिए। इसपर रंगस्वामी उनसे मिलने गये। होरको लगता है कि उनका काम कुछ सुधार कर देना और दुनियाको यह बता देना है कि सब दलों, नरम दलवालों और कांग्रेसका भी पूरा सहयोग उन्हें मिल रहा है। "रंगस्वामीसे सुधारोंके पक्षमें कुछ कहलवा सकें, तो बहुत अच्छी बात है। पर वे इनकार कर दें, तो भी ठीक है।" ऐसा उनका रुख है। वैसे, [illegible] भी वही चलाते हैं। इन सब वातोंके पीछे [illegible] नहीं, वल्कि उनका [illegible] है। वर्कनहेडकी नीतिपर वे ज्यादा मीठे ढंगसे अमल कर रहे हैं। इसमें मैं आपसे कोई नई वात नहीं कह रहा हूँ। क्योंकि ये सब समाचार [illegible] ही मैं [illegible]

आया था। और इग्लैंडमे सभी — इर्विन, बॉल्डविन, केण्टरबरीके आर्चबिशप — उनकी नीतिका समर्थन कर रहे है।

रा० इर्विन यह मानते दीखते है कि समझौता इतना ज्यादा भग हुआ है कि उसको फिरसे ताजा नही किया जा सकता। इसलिए समझौतेकी जरा भी बात करना जरूरी नही है।

बा० यदि चर्चा यहाँतक पहुँचे तो हम उसकी बात चलाएँ। पर हम मिलेगे तो भी अन्तमे कोई नतीजा निकलनेवाला नही है। बर्कनहेड और रीडिंगने यही कहा था 'अगर लडाई न करनी हो, तो पार्लियामेंट जो दे रही है वह आपको ले लेना चाहिए, और पार्लियामेंट धीरे-धीरे सुधार देनेवाली है। उससे आपको सतोष होना चाहिए।'

लेकिन अभी तो आपसमे विश्वास या आदर है ही नही।

रा० इस सारे प्रकरणकी आलोचना शास्त्रीने ठीक की है। आज उनकी क्या राय है, यह हम उनसे पूछे?

बा० आपको उनसे मिलना हो तो मिलिये। यहाँ तो वे आयेगे नही। सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसायटीके वार्षिक अधिवेशनपर भी उन्होने कोई खास बात नही कही और न अपनी नीति जाहिर की।

रा० आप जो नीति सुझा रहे है, वह इतनी अधिक क्रान्तिकारी है कि उसे कुछ ही व्यक्ति अमलमे ला सकते है। लेकिन सरकारपर या लोगोपर उसका कोई असर नही होगा।

बा० मुझे उसकी परवाह नही। आप जैसा कहते है, वैसा हो सकता है। ऐसा परिणाम मुझे इष्ट है। छोटी-छोटी बातोमे लोगो को जो परेशान किया जाता है, उससे मुझे चोट लगती है। इसमे तो जो राजी-खुशीसे आगे आयेगे, उन्हे ही सहन करना होगा।

रा० तब सामूहिक लडाई तो बिलकुल बन्द ही हो जाती है।

बा० यही सारी बातोकी कुजी बन जायेगी। हमने बिना किसी योजनाके सामूहिक लडाईको चाहे जैसे चलने देनेमे भूल की है। जब शुरूसे आखिरतककी निश्चित योजना लोग दिलमे समझ लेगे, तब सामूहिक लडाई होगी। जब जिम्मेदार लोगोको यह महसूस हो जायेगा कि लोग जमीन-जायदाद गँवाने और इससे भी भारी कष्ट सहन करनेको तैयार है, तब लोग ऐसी लडाई छेडेगे।

रा० क्या आप ऐसा नही मानते कि जनवरी, १९३२ मे करबन्दीकी लडाईकी जो घोषणा की गई थी, वह असामयिक थी?

बा० थी तो जरूर। मैने तो १९३१ मे टडन वगैरहसे कहा था कि स्वराज्यके लिए करबन्दीकी लडाई चलानेकी हमारी शक्तिके बारेमे मुझे विश्वास नही है।

रा० अगर भूल हुई थी, तो क्या उसे हमे सुधार नही लेना चाहिए?

बा० भूल सुधारनेके लिए भी मै ऐसा नही कहूँगा कि यह लडाई वापस ले ली जाये।

रा० : हम लड़ाई पूरी तरह वापस ले ले, तो भी सरकार सारी जमीन-जायदाद वापस नही देगी।

बा० : सरकार ऐसी कोई बात सुनेगी ही नही।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी भाग–३, पृ० २९६-३०१

परिशिष्ट–८

प्रश्नोंके उत्तर[1]

१४ जुलाई, १९३३

बापू : मुझसे एक सवाल पूछा गया है कि जेलमे जानेके बाद क्या मै वहाँ से फिर हरिजन-कार्य शुरू करूँगा? जवाबमे मुझे इतना ही कहना है कि मुझे देखना पड़ेगा कि मुझे कैसी जेल मिलती है? किसी भी तरह की हो, मैं देखूँगा कि हरिजन-कार्य जारी रखना सभव है या नही? हमारी लड़ाईकी शुरूआत १९२० से हुई है। लाहौर और कराचीके प्रस्तावोसे हमने उसके मुद्दे ज्यादा व्यापक बना दिये है। मुझे आशा तो यही है कि जबतक आजादी नही मिल जाती, तबतक लड़ाई जारी ही रहेगी। मेरा एक पैर यरवदा जेलमे है और दूसरा यहाँ है। हमारी लडाई जारी ही रहे, यह आपको सोचना है। यह तो अवैध सभा है। यहाँ किसी को, हमारे काम-चलाऊ अध्यक्षको भी, लडाई बन्द करनेका अधिकार नही है। मै जो-कुछ यहाँ कह रहा हूँ, वह भी सलाहके तौरपर है। मान लीजिए, आपको लडाई बन्द करनी है, तो उसके लिए काग्रेसकी महासमिति बुलानी चाहिए। आप मुझे वाइसरायको पत्र लिखनेकी इजाजत दे, तो उसमे भी मेरा स्थान दूतका होगा। मै जो भी शर्ते पेश करूँगा, उन्हें मुझे कांग्रेस-महासमितिसे मंजूर करवाना पडेगा। इस तरहके समझौतेसे आजादी तो कोसो दूर होगी। हमे आजादी देना इग्लैडके हाथमे नही है। आजादी तो हमे अपनी ताकतसे लेनी है। फिलहाल अनुभवियोकी राय यह है कि सुधार १९३५ के अन्तमे आयेंगे। लेकिन आजादी मिलनेसे पहले हमे जानकी बाजी लगाकर लड़ना होगा। हरएक सत्याग्रहीको अपने लिए सविनय-अवज्ञाका कार्यक्रम स्वयं बनाना होगा। तीस करोड़ आदमी भी, हरेक अपना नेता बनकर, व्यक्तिगत सविनय-अवज्ञा कर सकते है। या एक आदमीकी सरदारीमे सौ आदमी इकट्ठे होकर भी व्यक्तिगत सविनय-अवज्ञा कर सकते हैं। व्यक्तिगत सविनय-अवज्ञामें किसी भी मनुष्यकी शक्ति या उत्साहको रोका नही जा सकता। मेरी स्थिति क्या है, यह यहाँ अप्रासगिक है। विधानके अनुसार तो सविनय-अवज्ञा जारी रखनेका मुझे पूरा अधिकार है। ऐसा हो सकता है कि काग्रेस-महासमितिकी बैठक होनेसे पहले ही मैं जेलमे पहुँच जाऊँ। जब मुझे यह मालूम हो जाये कि मै आपके साथ बातचीत नही कर सकता, या आजादीसे चल-फिर नही सकता, या मुझपर किसी भी तरहकी पाबन्दी लगानेवाला

१. देखिए पृ० २७८।

हुक्म निकाल दिया जाये, तो क्या ऐसे हुक्मको मानना मुझे या आपमें से किसीको भी शोभा दे सकता है? अपने भाषणमे मैंने जो यह कहा कि हम स्थायी बंधनमे है, उसका यही अर्थ था।

प्रश्न कांग्रेसके अधिनायककी व्यक्तिगत सविनय-अवज्ञामे क्या स्थिति होगी?

बापू व्यक्तिगत सविनय-अवज्ञा करनेवालेके लिए किसी भी अधिनायककी इजाजत लेनेका सवाल ही नही है। हरएक आदमी अपना नेता वन जाता है। व्यक्तिगत सविनय-अवज्ञामे अधिनायककी कोई जरूरत नही। किसी हुक्मकी भी जरूरत नही।

प्र० कोई एक ताल्लुका भस्मीभूत हो जाना चाहे, तो क्या वह ऐसा कर सकता है?

बा० जरूर। मैं तो चाहता हूँ कि हरएक ताल्लुका ऐसा करे। इसके लिए कांग्रेसके हुक्मकी जरूरत नही। लेकिन यह ताल्लुका कांग्रेसके नामपर और कांग्रेसके आश्रयमे ऐसा करेगा। वाइसरायको लिखनेकी मुझे कोई उतावली नही है। आप इजाजत नही देंगे तो मैं नही लिखूँगा। . गढवाल और मेरठके कैदी छूटने ही चाहिए, ऐसी शर्त समझौतेके लिए अनिवार्य नही है।

प्र० व्यक्तिगत सविनय-अवज्ञाके आपके सुझावमे क्या कोई ऐसा आदमी सम्मति दे सकता है जो थोडे महीने वाद सविनय-अवज्ञा करनेवाला हो?

बा० यह नाजुक सवाल है। मनुष्य ऐसी सम्मति तो दे सकता है, पर उसे राष्ट्रके प्रति और अपने-आपके प्रति वफादार होना चाहिए। . बचपनसे ही अपने बच्चोको मैंने अपने खिलाफ विद्रोह करना सिखाया है। मैंने यह आशा नही रखी है कि आज राय देनेवाला हरएक आदमी कल ही सीधा जेलमे पहुँच जायेगा। . किसी भी सत्याग्रहीका, जबतक वह खुद जिन्दा है, यह कहना ठीक नही कि सगठनका कोई मार्गदर्शक नही है। . . जो मनुष्य बहादुर होनेका दिखावा करता है उसमे सच्ची वहादुरी नही होती। . जिन शर्तोमे आम जनताकी रक्षा न होती हो, उन्हे मैं सम्मानपूर्ण नही मानूँगा। कांग्रेस किसी भी किसानको जमीनका लगान अदा करनेके लिए हुक्म नही दे सकती। जो लोग जेलमे जायेंगे या दूसरी तकलीफे बरदाश्त करेंगे, उन्हे कांग्रेस शाबाशी ही देगी।

[गुजरातीसे]

महादेवभाईनी डायरी, भाग-३, पृ० ३१५-१७

परिशिष्ट–९

सामूहिक सविनय-अवज्ञा बन्द करनेके सम्बन्धमे अणेका वक्तव्य[1]

२२ जुलाई, १९३३

हालमे पूनामे हुए अनौपचारिक सम्मेलनकी सिफारिशो, सम्मेलनके भीतर और वाहर हुए काग्रेसजनोके आपसी विचार-विमर्श तथा गाधीजी द्वारा दी गई सलाहपर वहुत ध्यानपूर्वक विचार करनेके वाद मैं इस नतीजेपर पहुँचा हूँ कि देशका सर्वोपरि हित निम्न हिदायतोके पालन करनेमे ही है.

पहली वात यह है कि वर्तमान परिस्थितियोमे सविनय-अवज्ञा आन्दोलनको विना शर्त वापस नही लेना चाहिए। दूसरे, सामूहिक सविनय-अवज्ञाको, जिसमे कर और लगान न देनेका आन्दोलन भी शामिल है, फिलहाल वन्द कर देना चाहिए। हाँ, जो व्यक्ति हर कष्ट सहने और अपनी ही जिम्मेदारीपर सविनय-अवज्ञा चलाते रहनेके लिए तैयार हो, उनका ऐसा करनेका अधिकार वना रहेगा।

तीसरे, जो व्यक्ति, विना किसी अपवाद के, काग्रेस-सस्थासे कोई भी सहायता लिये विना अपनी ही जिम्मेदारीपर व्यक्तिगत सविनय-अवज्ञा करनेमे समर्थ है और उसके इच्छुक हैं, उनसे आशा की जाती है कि वे वैसा करेगे।

चौथे, अवतक जो गुप्त तरीके अपनाये जाते रहे है उन्हे छोड देना चाहिए।

पाँचवे, अखिल भारतीय काग्रेस समितिके कार्यालय समेत सभी काग्रेस-सगठनोको फिलहाल विघटित कर देना चाहिए। परन्तु, जहाँ भी सम्भव हो, प्रान्तोके अधिनायक तथा अखिल भारतीय अधिनायक कायम रहे।

छठे, जो काग्रेसजन किसी भी वजहसे सविनय अवज्ञा करनेमे असमर्थ है, उनसे आशा की जाती है कि वे काग्रेसके जिन रचनात्मक कार्योके करने योग्य है उन्हे व्यक्तिगत अथवा सयुक्त रूपसे करते रहेगे।

मुझे खेद है कि अवतक आन्दोलनको खत्म करना सम्भव नही हो सका है, और मेरे लिए इन हिदायतोको जारी करना आवश्यक हो गया है। काग्रेसजनो और अन्य लोगोके साथ-साथ मुझे भी इस वातसे निराशा हुई है कि शान्तिकी सम्भावनाओ की खोज करनेके लिए गाधीजी ने विना किसी शर्तके वाइसरायसे भेटका जो एक साधारण-सा अनुरोध किया था, वह तुरन्त ही ठुकरा दिया गया। अनौपचारिक सम्मेलनकी गुप्त कार्यवाहियोको शान्ति-प्रयासोको आगे बढानेके उद्देश्यसे ही जान-बूझकर प्रकाशित नही किया गया था। परन्तु उनकी अनधिकृत रिपोर्टोसे प्रभावित होकर वाइसराय महोदयने ठीक नही किया। वाइसराय महोदयको जानना चाहिए कि सम्मेलनमे भारी वहुमत सम्मानजनक शान्तिके लिए एक ऐसी भेटके पक्षमे था। शान्ति-

1. देखिए पृ० ३०७

वार्त्ता शुरू करनेके लिए वाइसराय महोदयने हठपूर्वक जो शर्तें रखी, उन्हे स्वीकार करना, मै समझता हूँ, काग्रेसके किसी भी सगठन या प्रतिनिधिके लिए असम्भव है। मुझे आशा है कि देश अपनेमे आवश्यक शक्तिका विकास कर, चाहे उसकी कीमत कुछ भी क्यो न देनी पडे, इस रवैयेमे सुधार करवा कर रहेगा।

उक्त हिदायतोके वावजूद, इस महीनेके अन्ततक आन्दोलन स्थगित ही रखना है।

[अग्रेजीसे]

दि इडियन ऐन्युअल रजिस्टर, १९३३, खड २, पृ० ३३२-३३

परिशिष्ट-१०

सर नृपेन्द्रनाथ सरकारको भेजा गया रवीन्द्रनाथ ठाकुरका तार

मुझे याद है कि मैंने प्रधान मन्त्रीको एक तार दिया था, जिसमे मैंने उनसे निवेदन किया था कि साम्प्रदायिक पच-निर्णय-सम्बन्धी जो सुझाव महात्माजी ने उनके सम्मुख रखा है उसे स्वीकार करनेमे देर न करे। उस क्षण एक ऐसी परिस्थिति उत्पन्न कर दी गई थी जो अत्यन्त ही दु खद थी, क्योकि तव हमारे लिए न तो कोई समय वचा था और न मानसिक शान्तिकी ही गुजाइश थी कि हम पूना-समझौतेके सम्भावी नतीजोपर शान्तिपूर्वक विचार कर सकते। वह तो मेरे पहुँचनेसे पहले ही जव कि सप्रू और जयकर जा चुके थे, अन्य सदस्योकी सहायतासे, जिनमे बगालका एक भी उत्तरदायी प्रतिनिधि नही था, कार्यान्वित किया जा चुका था। इस प्रश्नके शीघ्र समाधानपर ही तव महात्माजी का जीवन निर्भर था और ऐसे सकटसे उत्पन्न असह्य चिन्ताके कारण मैंने हडवडीमे एक ऐसा वायदा कर लिया जो, अब मुझे महसूस हो रहा है, देशके स्थायी हितके विरुद्ध था। राजनैतिक दाँव-पेचका कोई अनुभव न होने और महात्माजी के प्रति अगाध प्रेम और भारतीय राजनीतिके विषयमे उनकी वुद्धिमत्तामे पूर्ण आस्था होनेके कारण, मै और अधिक विचार-विमर्शके लिए प्रतीक्षा नही कर सका और इस वातपर ध्यान नही दे सका कि वगालके मामलेमे न्यायकी हत्या की गई है। अव मुझे जरा भी सन्देह नही है कि इस प्रकारका अन्याय सभी दलोके लिए अहितकर रहेगा, जिससे हमारे प्रान्तमे तीव्र साम्प्रदायिक कलहकी मनोवृत्ति वरावर बनी रहेगी। फलस्वरूप, शान्तिपूर्ण सरकार बनाना हमेशाके लिए दुष्कर हो जायेगा। मुझे इससे न तो कोई अधिक आश्चर्य ही हो रहा है और न वहुत दु ख ही कि ब्रिटिश सरकारके मन्त्री इस विषयपर, जो हमारे लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है, विचार करनेके लिए कतई राजी नही है, जबकि वे श्वेत-पत्रमे निहित अन्य सुझावोपर निस्सकोच वार-वार विचार कर रहे है। कारण, कि क्या ये वही लोग नही है जो बार-वार उस दुर्दिनकी भविष्यवाणी करते हुए अघाते नही थे, जब हम भाई-भाई विना उनकी मददके आपसमे लडेगे और [स्वशासनमे] असफल रहेगे। इसलिए यह स्वाभाविक ही है कि वे आज साम्प्रदायिक मेल-मिलापके मार्गको

सुगम बनानेमे हमारी मदद करनेमे कतई उत्साह न दिखाये। लेकिन सम्मेलनके अन्य प्रान्तोके भारतीय सदस्योका बंगालके दुर्भाग्यके प्रति न केवल उदासीन रहना बल्कि उसको बदतर बनानेमे सोत्साह भाग लेना एक भयानक अपशुकन है, जो हमारे भावी इतिहासके लिए किसी शुभका सूचक नही है।

रवीन्द्रनाथ टैगोर

[अंग्रेजीसे]

होम डिपार्टमेंट, प्रिंटेड पोलिटिकल फाइल स० ३/१७/३३, पृ० १६–१७; सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार।

परिशिष्ट–११

गांधीजीकी गतिविधियोंपर रोक लगानेका आदेश

आदेश नं० एस० डी०, ३८०६

मोहनदास करमचन्द गांधीको,

क्योंकि गवर्नरको, सपरिषद्, यह यकीन है कि ऐसा माननेके लिए युक्तियुक्त आधार है कि आप, मोहनदास करमचन्द गांधी, कुछ ऐसा कर चुके है और करनेवाले है जिससे जन-सुरक्षा और शान्तिको खतरा है और जिससे जन-सुरक्षा और शान्तिके लिए खतरनाक एक आन्दोलनको बढावा मिलेगा, और क्योंकि पूनाके जिला-मजिस्ट्रेटने आपके वक्तव्यका जो लिखित विवरण दिया है उसपर गवर्नर, सपरिषद्, विचार कर चुके है;

इसलिए, बम्बई विशेष (आपात) अधिकार अधिनियम १९३२ की धारा ४ की उपधारा (१) द्वारा प्रदत्त अधिकारोका उपयोग करते हुए गवर्नर, सपरिषद्, इसके द्वारा यह लिखित आदेश देते है:

१. कि आप आज सुबह ९.३० बजेसे पहले ही यरवदा गाँवको छोड़ दे; कि आप पूनाके छावनी क्षेत्रमे प्रवेश न करें; कि आप आज प्रातः १०.३० बजेसे पूना नगरपालिकाके सीमा-क्षेत्रमे ही रहे, और कि आप उक्त नगरपालिका क्षेत्रसे बाहर न जाये;

२. कि आप कोई भी ऐसा कदम न उठाये जिससे सविनय-अवज्ञा आन्दोलन अथवा किसी भी ऐसे आन्दोलनको बढावा मिले जो जन-सुरक्षा और शान्तिके हितोके विरुद्ध हो;

३. कि आप किसी भी व्यक्तिको कानूनके प्रयोग या कानून और व्यवस्थाके पालनमे हस्तक्षेप करने, या कोई जुर्म करने, या सरकारको देय किसी भी मालगुजारी, कर, शुल्क, उपकर या किसी अन्य धनराशिको देनेसे इनकार करने या न देनेके लिए बढ़ावा न दे और न भड़काये।

४. कि पूनाके जिला-मजिस्ट्रेटकी पूर्व अनुमतिके बिना आप बारह या इससे अधिक लोगोकी किसी भी सभा या किसी भी आम प्रदर्शन या जुलूसमे मौजूद न रहे और भाषण न दे।

धारा ४ की उपधारा (२)के अधीन गवर्नर, सपरिषद्, यह आदेश देते है कि यह आदेश जारी होनेके समयसे लेकर अगले आदेशोके जारी होनेतक एक महीनेसे अधिक लागू रहेगा।

गवर्नर, सपरिषद्, पूनाके आदेशमे आज ४ अगस्त, १९३३ को जारी किया गया।

आर० एम० मैक्सवेल
सचिव, बम्बई सरकार
गृह-विभाग

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्राच, फाइल स० ८०० (१४) ५, पृ० ६७

परिशिष्ट–१२

वाइसराय द्वारा भारत-मन्त्रीको दिये गये तारके कुछ अंश[1]

१८ अगस्त, १९३३

५ श्री गाधीको यह स्पष्ट कर दिया गया है कि (उक्त) आदेशोके अन्तर्गत उन्हे 'हरिजन'के सम्पादकसे, अपने रोजके मुलाकातियोकी तरह, मिलने और उसे अपनी पाण्डुलिपि देनेकी छूट है और 'हरिजन' विषयक पत्र भी श्री गाधीको दे दिये जायेगे।

६ सरकारको यह जानकारी नही है कि श्री गाधीका यह कहनेसे कि जेलमे हरिजन-कार्य करनेकी छूट तो यरवदा समझौतेमे ही अन्तर्निहित है, क्या आशय है। यद्यपि यह सच है कि उक्त समझौतेके तुरन्त बादकी विशेष परिस्थितियोमे सरकारने श्री गाधीको राज्यबन्दीकी हेसियतसे वह आन्दोलन शुरू करनेकी अनुमति दे दी थी जिसपर वे तब अपना सारा ध्यान केन्द्रित कर रहे लगते थे। उस समय सनातनी हिन्दू समुदायकी ओरसे, जो इस विषयपर श्री गाधीकी नीतिसे सहमत नही था, इस बातपर एतराज किया गया था कि उन्हे जेलसे एक जन-आन्दोलन चलानेकी सुविधाएँ दे दी गई है। और अब यह तर्क दिया जा सकता है कि क्योकि श्री गाधीने अपनी रिहाईके कुछ समय बाद ही एक विशुद्ध राजनैतिक प्रश्नपर अपनेको पुन गिरफ्तार करवाया है, अत उन्हे ऐसी कोई सुविधा नही देनी चाहिए जो अन्य 'ए' श्रेणीके कैदियोको उपलब्ध नही है। तथापि सरकार ऐसी कोई कार्रवाई करनेसे हिचकिचाती रही है जिसे एक सामाजिक सुधारके कार्यमे अयुक्तियुक्त हस्तक्षेप समझा जा सके। साथ ही वह इस तथ्यके आधारपर कि श्री गाधी जान-बूझकर बन्दी बने है और

१- देखिए पृ० ३८०।

उन्हे कानून तोडनेके जुर्ममे सजा मिली है, कोई सख्त कदम उठानेसे भी हिचकिचाती रही है। यद्यपि यह बात जेल-अनुशासनके लिए असुविधाजनक थी और अनियमित थी, फिर भी सरकारने श्री गांधीको अस्पृश्यता-विरोधी काम करते रहनेकी सुविधा प्रदान की, ताकि वे इस दिशामे महत्त्वपूर्ण और प्रभावशाली योगदान कर सके। ध्यान देने योग्य बात तो यह है कि जब श्री गांधी स्वतन्त्र थे तो वे अपना अधिक समय या ध्यान इस आन्दोलनके लिए लगाते प्रतीत नही होते थे। उनकी मुख्य शक्ति राजनीतिमे और सविनय अवज्ञा आन्दोलनको जिस रूपमे भी सम्भव हो उस रूपमे चलानेमे लगी थी। अब उनका यह दावा कि उन्हें "बिना किसी रोक-टोक या रुकावटके" जेलसे अपना हरिजन-कार्य करते रहनेकी छूट होनी चाहिए, एक तरहसे यह अर्थ रखता है कि अपनी वास्तविक शारीरिक स्वतन्त्रतापर प्रतिबन्धके सिवा वे कारावासके अन्य सामान्य प्रतिबन्धोका पालन अस्वीकार करते है। वस्तुत यह अपने कारावासकी शर्तोको स्वय ही निर्धारित करनेकी माँग है।

सरकारको विश्वास है कि उसने जो सुविधाएँ प्रदान की है वे इसके लिए पर्याप्त है कि श्री गांधी अस्पृश्यता-निवारणके लिए वर्त्तमान परिस्थितियोमे जो कार्य उचित है, वह कर सके। लेकिन अगर अब श्री गांधी ऐसा महसूस करते हो कि यदि वे बिना किसी रोक-टोक या रुकावटके हरिजन-सेवा-कार्य नही कर सके तो उनके लिए जीवनमे कोई आकर्षण नही रहेगा तो सरकार उन्हे तुरन्त रिहा कर देनेके लिए भी तैयार है, ताकि वे पूरी तरहसे और बिना किसी प्रतिबन्धके सामाजिक सुधारके कार्यमे लग सके, बशर्ते कि श्री गांधी सविनय-अवज्ञाकी सभी गतिविधियोसे और उत्तेजना फैलानेसे बाज आनेको राजी हो। अतएव श्री गांधीको सूचित कर दिया गया है।

[अंग्रेजीसे]

होम डिपार्टमेंट, प्रिन्टेड पोलिटिकल फाइल सं० ३/१७/३३, पृ० ३८-३९; सौजन्य . राष्ट्रीय अभिलेखागार।

परिशिष्ट–१३

वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीका पत्र

कोयम्बटूर,
२७ अगस्त, १९३३

प्रियवर भाई,

सरकारके लिए तो आपको पहलेवाली सुविधाएँ दे देना ही अच्छा रहता। एक अभिशापने उसे उदार या समयोचित कदम उठानेके अयोग्य बना दिया है।

लेकिन उसने आपको न तो कोई अधिकार प्रदान किया है और न आपसे कोई वायदा ही किया है। एक अवसरपर और एक तरहकी परिस्थितियोमे उसने

आपको जो-कुछ दिया उसे दूसरे अवसरपर और दूसरी तरहकी परिस्थितियोंमें भी देनेके लिए वह बाध्य नहीं है। पूना-समझौतेके बाद जो आदेश जारी किया गया और जिससे आप उद्धरण दे रहे हैं, वह एक अपरिवर्तनीय और शर्त्तरहित वायदा नहीं है। जब आप उसपर वायदा-खिलाफीका आरोप लगाते हैं तो आप खास तरहका और बुरे ढंगका तर्क प्रस्तुत करते हैं। 'हिरासतमें रह रहे कैदीको दिया गया' शब्द जोड़ देनेसे उसका जो आशय अन्यथा हो सकता था वह समाप्त हो जाता है।

एक दर्शक, जिसे सरकारसे कोई द्वेष नहीं है, कह सकता है कि जहाँ हरिजन उद्धार आपको प्रिय है वहाँ सरकारपर दोषारोपण करना उससे भी अधिक प्रिय है। सद्भाव रखनेवाले लोगोंको मैंने यह कहते सुना है कि जेलमें मर जाने और उसकी जिम्मेदारी सरकारपर पड़ जानेसे अधिक आपको और कुछ पसन्द नहीं होगा।

सरकारके साथ आपके मौजूदा टकरावके पीछे और उससे परे देशके भविष्यका सवाल है। उस भविष्यकी अच्छी-से-अच्छी सुरक्षा कांग्रेस किस प्रकार कर सकती है? आपका उत्तर स्पष्ट है। लेकिन लोगोंके मनमें एक दूसरा ही उत्तर घर करता जा रहा है। वह यह है कि सामूहिक और व्यक्तिगत, दोनों तरहकी सविनय-अवज्ञा बन्द कर देनी चाहिए। कांग्रेसके तथाकथित रचनात्मक कार्यक्रमके अतिरिक्त, एक नई नीतिकी आवश्यकता बहुत दिनोंसे रही है, जिसका उद्देश्य विधान, वित्त और प्रशासनमें सर्वत्र राष्ट्रका रचनात्मक कल्याण होना चाहिए और अब इस नीतिको हमें अवश्य आजमाना चाहिए। मेरा विश्वास है कि कांग्रेससे बाहर ऐसा ही आम तौर पर महसूस किया जा रहा है और कांग्रेसके भीतर भी यह भावना जोर पकड़ती जा रही है। यह स्थिति किस प्रकार लायी जा सकती है?

यह आपकी वर्तमान नीतिसे इतनी भिन्न और विपरीत लगती है कि यह सन्देह होता है कि आप भला इसे क्योंकर अपनायेंगे? शायद आपकी पूरी तैयारी और साधना इससे विपरीत दिशामें हैं। यह कहना कि अमुक व्यक्ति हर दशा और हर दिशामें देशको नेतृत्व देनेके योग्य नहीं है, उसकी कोई निन्दा नहीं है। दुर्भाग्यवश किसी भी व्यक्तिपर, चाहे वह कितना ही महान् क्यों न हों, सदैव यह विश्वास नहीं किया जा सकता कि वह अपनी सीमाओंको समझ लेगा और जिस ध्येयके प्रति वह निष्ठावान है, उसके लिए आवश्यक होनेपर दूसरेको अपनी जगह दे देगा। उसकी महानता ही परिवर्तनके रास्तेमें दीवार बन जाती है। जैसाकि मैंने एक नहीं अनेक बार आपसे कहा है, आप अन्य नेताओंसे बहुत दिनोंसे और निश्चित रूपसे इतने ऊपर उठ गये हैं कि ऐसा कोई भी व्यक्ति नजर नहीं आता जो एकाएक आपकी जगह ले सके। यदि आप नये युगके लिए बदले जा सकते और पुनः निर्मित किये जा सकते तो यह कितना बड़ा वरदान होता! लेकिन आप इतने अच्छे हैं, अपने प्रति इतने सच्चे हैं कि अगर सिद्धान्त आपका न हो और अनुष्ठान ऐसा हो जिसका आपने कभी संचालन न किया हो, तो आप यह दिखावा कदापि नहीं करेंगे कि आप वही पहलेवाले शिक्षक हैं।

इस दारुण संकटमें देश आपकी ओर देख रहा है कि आप अवतक जो भूमिका अदा करते रहे हैं, उससे वड़ी भूमिका अदा करें। (क्षमा करें, मैं ऐसा दलोंको देखते हुए देशके लिए वड़ी भूमिकाके अर्थमें कह रहा हूँ।) आप अपनी अन्तरात्माकी रक्षा करें, सविनय अवज्ञा चलाते रहें, लक्ष्यके प्रति प्रयत्नशील रहें, सरकारको परेशान करें — लेकिन कांग्रेसको एक नया कार्यक्रम वनानेके लिए स्वतन्त्र छोड़ दें। व्यक्तिगत [सविनय] अवज्ञाको मान्यता और समर्थन देते हुए यह (कांग्रेस) ऐसा कर ही नहीं सकती। आपको याद है जव मैं आपसे पिछली वार पर्णकुटीमें मिला था तो मैंने आपसे यही रास्ता अपनानेके लिए प्रार्थना की थी। आपने मुझे वताया कि आपने इसे कार्यसमितिके सम्मुख रखा था, पर उसने इसे स्वीकार नहीं किया। यह स्वाभाविक और एक तरहसे ठीक ही था। समिति आपको त्याग देनेका लांछन सह नहीं सकती। मुझे आश्चर्य नहीं कि यह विचारतक उसे घृणित लगा होगा। अव वह समय आ गया है — मेरे विचारसे तो वहुत पहले ही आ गया था — जव आपको यह कह देना चाहिए 'मैं कांग्रेसको दूसरे तरीके आजमानेकी छूट देता हूँ। मेरे पास भगवानका वहुत-सा काम पड़ा है — हरिजनोंके साथ देशके कल्याणके लिए काम करना है।'

तो मैंने आपसे सचाई, जैसी मुझे प्रतीत होती है, कह दी है। क्या यह आशा की जा सकती है कि आप समस्याको एक नये दृष्टिकोणसे देखेंगे? मैं एक चीज जानता हूँ। कोई भी ऐसा आत्मत्याग नहीं है जो आपके सामर्थ्यसे वाहर हो। वात केवल इतनी ही है कि वह आपको आवश्यक जान पड़े।

एक दोस्त और भाई तो संकेत-भर ही कर सकता है।

सस्नेह,
वी० एस० श्रीनिवासन

[अंग्रेजीसे]
लेटर्स ऑफ श्रीनिवास शास्त्री, पृ० २५८-६०

परिशिष्ट–१४

जवाहरलाल नेहरूका पत्र

पर्णकुटी, पूना
१३ सितम्वर, १९३३

प्रिय वापू,

आपको याद होगा कि अपनी हालकी वातचीतके दौरान मैंने राष्ट्रीय लक्ष्यको फिरसे दुहराने और उसकी स्पष्ट रूपसे व्याख्या करनेपर जोर दिया था। कांग्रेसने राजनैतिक स्वतन्त्रताका लक्ष्य अन्तिम रूपसे निर्धारित कर ही दिया है और उसमें कुछ और जोड़ा या घटाया नहीं जा सकता। हम पूर्ण स्वतन्त्रताके पक्षमें हैं। कभी-कभी अस्पष्ट पदावली और भ्रामक प्रचारकी वजहसे थोड़ी भ्रान्ति पड़ी हो

जाती है। अत. अपनी राजनैतिक माँगको दुहराकर इस भ्रान्तिको समाप्त कर देना ही अच्छा हे। स्वतन्त्रता शब्दतकका प्रयोग विभिन्न अर्थोमे किया जाता है। जाहिर है कि इसमे, जैसाकि काग्रेसने स्पष्ट तथा सुनिश्चित रूपसे कह दिया है, सेना और वैदेशिक विषयोपर पूर्ण नियन्त्रण तथा वित्तीय और आर्थिक नियन्त्रण जरूर शामिल होना चाहिए।

आर्थिक विषयोके सम्बन्धमे कराची काग्रेसने 'मौलिक अधिकार और आर्थिक नीति' पर एक महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव पास करके अगुआई की और बताया कि हमे किस दिशामे बढना चाहिए।

मै उक्त प्रस्तावको बहुत ही महत्त्वपूर्ण मानता हूँ। लेकिन व्यक्तिगत रूपसे मै उससे भी आगे जाना और स्थितिको और अधिक स्पष्ट करना चाहूँगा।

मुझे ऐसा लगता है कि यदि हम आम लोगोकी दशा सुधारना चाहते है, उनका आर्थिक स्तर ऊँचा उठाना चाहते है और उन्हे स्वतन्त्रता देना चाहते है, तो भारतमे निहित स्वार्थोको अपना विशिष्ट स्थान और अपने बहुत-से विशेषाधिकार अनिवार्य रूपसे छोडने होगे। किसी और तरहसे आम जनता उठ सकती हे, यह मेरी कल्पनासे परेकी बात है। इसलिए स्वतन्त्रता-प्राप्तिका प्रश्न निहित स्वार्थोमे आम जनताके पक्षमे सुधार लानेका प्रश्न बन जाता है। जिस सीमातक यह किया जा सके, उस सीमातक ही स्वतन्त्रता आ पायेगी। भारतमे सबसे बडा निहित स्वार्थ हे ब्रिटिश सरकारका, उसके बाद आते है भारतीय रजवाडे और अन्य लोग। हम किसी वर्ग या समूहको चोट पहुँचाना नही चाहते है और उनसे उनके ये अधिकार यथासम्भव नरमीके साथ ले लिये जाने चाहिए तथा हर तरहसे ऐसा प्रयत्न करना चाहिए कि किसीको कोई क्षति न पहुँचे। परन्तु यह स्पष्ट हे कि अधिकारोके इस आहरणसे उन वर्गो या समूहोको घाटा होगा ही जो आम जनताको क्षति पहुँचाकर विशेषाधिकारका भोग करते है। यह भी स्पष्ट है कि अधिकारोके आहरणकी यह प्रक्रिया यथासम्भव ज्यादा-से-ज्यादा तेजीसे चलनी चाहिए ताकि आम जनताको, जिसकी स्थिति, जैसाकि आप जानते ही है, आखिरी हदतक खराब है, राहत मिल सके। सच तो यह है कि आज आर्थिक शक्तियाँ खुद ही आश्चर्यजनक तेजीसे काम कर रही है और पुरानी व्यवस्थाको तोड रही है। सयुक्त प्रान्तमे बडी जमीदारी और ताल्लुकेदारीकी प्रथा प्राय ध्वस्त हो चुकी है, यद्यपि बाह्य शक्तियाँ उसे कुछ और समयतक खडा रख सकती है। जमीदारोकी भी स्थिति बहुत खराब है और किसानोकी स्थिति तो उससे भी बदतर है।

हम सभी इससे सहमत है कि गोलमेज सम्मेलन और उससे उत्पन्न विभिन्न योजनाएँ भारतकी अनेक समस्याओमे से एकका भी समाधान करनेके लिए एकदम बेकार है। मै यह समझता हूँ कि गोलमेज सम्मेलन भारतके निहित स्वार्थोको ब्रिटिश सरकारके पीछे सगठित करनेका एक प्रयास था, ताकि ये उभरते हुए शक्तिशाली राष्ट्रीय और आर्थिक आन्दोलनोका, जिनसे इन स्वार्थोको खतरा है, सामना कर सके। अन्तर्राष्ट्रीय शब्दावलीमे, तत्त्वत यह निहित और अधिकार-सम्पन्न स्वार्थोका फासिस्ट जमाव था, और भारतमे राष्ट्रीय आन्दोलनको कुचलनेके लिए फासिस्ट तरीके अपनाये

गये। और क्योकि भारतके इन सभी निहित स्वार्थोंको कायम रखनेसे हमारी आर्थिक बुराइयाँ, चाहे वे आम जनताकी हो या मध्यमवर्गीय लोगोकी, दूर नही हो सकती, इसलिए इस प्रयासकी असफलता पहलेसे ही निश्चित है। प्रजातान्त्रिक राष्ट्रवादकी दृष्टिसे भी, जैसा कि आपने स्वय ही गोलमेज सम्मेलनमे कहा था, प्रजातन्त्र और निरंकुश शासन साथ-साथ नही चल सकते।

एक दूसरे पहलूको भी ध्यानमे रखना है। भारतीय स्वतन्त्रताकी समस्याको ससारकी प्रमुख अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओसे अलग नही किया जा सकता। विश्वके मामलो में जो संकट अभी वर्तमान है उसकी प्रतिक्रियाएँ भारतमे भी हो रही है। इसका नतीजा यह हो सकता है कि किसी भी समय सारी व्यवस्था ठप्प हो जायेगी या हिसक अन्तर्राष्ट्रीय ज्वाला भडक उठेगी। प्रगति और आमजनताकी भलाई चाहनेवाली शक्तियो तथा प्रतिक्रियावादी और निहित-स्वार्थोकी शक्तियोके बीच सर्वत्र कलह और सघर्ष छिडा हुआ है। हम इस भीषण सघर्षमे मात्र मूक दर्शक बनकर नही रह सकते, क्योंकि इसका गहरा प्रभाव हमपर भी पड़ रहा है। मैं समझता हूँ कि अपने निजी हितोके सकुचित आधार और अन्तर्राष्ट्रीय कल्याण और मानव प्रगतिके विस्तृत आधार, दोनो आधारोंपर हमें निश्चित रूपसे प्रगतिशील शक्तियोका पक्ष लेना चाहिए। निस्सन्देह हमारा यह पक्ष लेना अभी महज सैद्धान्तिक ही हो सकता है।

ये कुछ बडे-बडे मसले है जो मेरे दिमागमे है और मेरा विश्वास है कि जहाँ इनको नजरअन्दाज करनेसे हमे मुसीबतमे पड़ना पड़ेगा वहाँ इनका सम्यक् मूल्याकन करनेसे हमारी स्वतन्त्रताकी लडाईको, जिसे हमे निश्चित रूपसे तबतक चलाते रहना है जबतक हमारा लक्ष्य पूरा नही हो जाता, नया जीवन और नया अर्थ मिलेगा।

ये बडे-बड़े मसले तो महत्त्वपूर्ण है ही, परन्तु, जैसाकि आप जानते है, हमारे देशके अधिकाश लोगोके दिमागमे इस समय तात्कालिक राष्ट्रीय समस्याएँ, खासकर (स्वतन्त्रता-) सघर्ष जारी रखनेकी समस्या चक्कर काट रही है। कुछ समय पहले आपने और श्रीयुत अणेने देशको मार्ग सुझानेके लिए जो वक्तव्य दिये थे, उनसे मुझे लगता है कि कुछ घपला पैदा हो गया है और उनमे बताये गये कुछ खास निर्देशोके प्रति लोगोमे असन्तोष भी फैल गया है। अच्छी जानकारी रखनेवाले क्षेत्रोमे ऐसी भी कानाफूसी चल रही है कि काग्रेसको भंग कर दिया गया है। यह तो स्पष्ट है कि ऐसा कुछ नही किया गया है और सविधानके अनुसार किया भी नही जा सकता था। आपके और श्री अणेके निर्देशमे मै तो यही समझता हूँ कि एक विशेष परिस्थितिसे निपटनेके लिए, जो पैदा हो गई थी, परामर्श या सुझाव ही थे। काग्रेस पूर्ववत् चल रही है। लेकिन यह स्पष्ट है कि यदि सरकार इसकी समितियोको अवैध करार कर देती है तो यह सामान्य रूपसे काम नही कर सकती, कोई नियमित कार्यालय या खुले कार्यक्रम नही हो सकते। इस तथ्यको समझना और तदनुसार अपनेको ढालनेका अर्थ काग्रेसकी किसी भी समितिको भग करना नही है, पूरे काग्रेस सगठनकी तो बात ही छोड़िये।

उसका एक आवश्यक परिणाम इस सम्भावनाको रोकना था कि पुराने सदस्यो और अन्य विश्वसनीय कार्यकर्त्ताओंके जेल चले जानेके बाद जो थोडे-से नये लोग समितियाँ बनाये, वे अथवा अन्य व्यक्ति काग्रेसको गलत काममे न लगा दे। जैसा कि ज्ञात है, पहले भी हमें उस खतरेका सामना करना पडा है। अविश्वसनीय लोग कुछ स्थानीय क्षेत्रोमे ऊँचे पदोपर इसी उद्देश्यसे आसीन हो गये थे कि जिन कार्य-क्रमोको आगे बढानेकी उनसे उम्मीद थी, वे उन्हीको रोके या होने ही न दे। अत यह वाछनीय है कि इस तरहके अविश्वसनीय लोगोको काग्रेस समितिके नामका दुरुपयोग न करने दिया जाये। परन्तु इसका अर्थ यह नही है कि किसी भी क्षेत्रमे काग्रेसी कार्यकर्त्ताओंको सगठित रूपमे हमारे कार्यक्रमको आगे बढानेमे रोका जाये।

देशमे व्यक्तिगत और सामूहिक सविनय अवज्ञाके गूढार्थोंके सम्बन्धमे भी भ्रम पैदा हो गया है। मैं कुछ हदतक इनके अन्तरको समझता हूँ। लेकिन मुझे यह अन्तर मौलिक अन्तर नही मालूम पडता, क्योंकि हर हालतमे सविनय अवज्ञा तत्त्वत व्यक्तिगत मामला ही है। व्यक्तिगत सविनय-अवज्ञा बढकर सामूहिक सविनय-अवज्ञा हो सकती है। इसके अलावा, आपने मुझसे कहा था कि यदि कोई सगठन अपनेमे उत्तर-दायित्व और जोखिम उठाने लायक शक्ति अनुभव करता है, तो वह खुद पहलकदमी कर सामूहिक सविनय-अवज्ञा शुरू कर सकता है। वास्तवमे तो आपका यह विचार था कि कोई स्थानीय सगठन इस प्रकार किसी भी ऐसी दशामे जो काग्रेसके तरीको या सिद्धान्तोंके विपरीत हो, आगे बढ सकता है।

आपके पिछले वक्तव्यमे गोपनीयताकी अवाछनीयतापर जोर दिया गया था, यद्यपि आपने यह भी बताया था कि गुप्त तरीके स्वभावत गलत नही होते है। मेरा विश्वास है हममे से अधिकाश उससे सहमत है। मैं तो निश्चित रूपसे ऐसा विचार रखता हूँ कि हमारा आन्दोलन तत्त्वत एक खुला आन्दोलन है और गुप्त तरीके उसमे मेल नही खाते। ऐसे तरीके यदि बहुत हदतक अपनाये गये तो इस आन्दोलनके जिस स्वरूपकी कल्पना की गई है वे उसे बिलकुल बदल सकते है और उससे हिम्मत भी कुछ टूट सकती है। हममे से कुछ लोग, इससे सहमत होते हुए भी, ऐसा महसूस करते है कि कुछ हदतक, उदाहरणके लिए एक-दूसरेको सन्देश भेजने, हिदायते भेजने या सम्पर्क बनाये रखनेके लिए, थोडी गोपनीयता आवश्यक हो सकती है। शायद इन कार्यवाहियोंके लिए गोपनीयता शब्द उतना उपयुक्त नही है, अन्तरगता शब्द ही अधिक उपयुक्त है। निस्सन्देह सभी समूहो या लोगोको अन्तरगताका सदैव अधिकार है। निस्सन्देह जैसाकि आपने कहा था, गोपनीयता या उसके अभावको अन्धश्रद्धाका सिद्धान्त नही बनाया जा सकता।

किन्तु समाचारपत्रो या बुलेटिनोको मुद्रित करने या उनकी प्रतियाँ तैयार करनेमे गोपनीयता तो निश्चित रूपसे रहती ही है। पहले ये बुलेटिन मुख्यालय और जिलोमे सम्बन्ध बनाये रखने और सूचना और निर्देश भेजनेमे प्राय बहुत लाभप्रद साबित हुए थे। इन गुप्त प्रेसो और प्रतियाँ तैयार करनेवाली मशीनोके सचालनकी कठिनाइयो और उसके अवाछित परिणामोकी ओर आपने मेरा ध्यान दिलाया था।

कितने ही अच्छे कार्यकर्त्ता इसमे फँसे हुए है और उन्हे उग्र कार्यवाहीसे वचना पड़ता है। इन मशीनोमे पूंजी लगानी पडती है और प्राय पुलिस इन्हे जब्त कर लेती है। व्यावहारिक दृष्टिकोणसे भी लगातार ऐसा घाटा उठाना और कार्यकर्त्ताओको फँसाये रखना उचित नही है, और निस्सन्देह कभी-कभी इससे उत्साह टूट जाता है। आपने सुझाया था कि सबसे अच्छा तरीका बुलेटिनो आदिकी हस्तलिखित प्रतियाँ बनाना है जिनमे प्रकाशकका नाम भी अंकित हो। मोटे तौरपर मैं इस सबसे सहमत हूँ और आपकी दलीलमे बल है यह मानता हूँ। फिर भी मै यह महसूस करता हूँ कि कुछ परिस्थितियोमे स्थानीय या प्रान्तीय समिति या समूहके लिए निर्देश आदि देनेवाले बुलेटिन गुप्त रूपमे जारी करना जरूरी हो सकता है। वैसे इसको बढावा कतई नही देना चाहिए, वास्तवमे तो इसे रोकना ही चाहिए। परन्तु विशेष परिस्थितियोमे कुछ छूट दी जा सकती है।

एक और छोटी बात है जो मुझे तो हास्यास्पद-सी लगती है। यदि आप अनुमति दे तो मै कहूँगा कि अधिकारियोको अपने इरादेकी पूर्व-सूचना देकर अपनी गिरफ्तारी कराना आपके लिए तो ठीक और उचित था। परन्तु दूसरे लोगोका, कांग्रेसी स्वयंसेवको तकका, अधिकारियोके पास ऐसी सूचना या सन्देश भेजना मुझे बिलकुल बेतुका लगता है। जो भी व्यक्ति सविनय-अवज्ञा करना चाहता है उसे खुलेआम वे काम जारी रखने चाहिए जिनमे हमारा लक्ष्य आगे बढ़े और इस तरह अपनेको गिरफ्तार कराना चाहिए। उसे उन कामोको भुलाकर या उनकी उपेक्षा करते हुए महज गिरफ्तारीकी माँग नही करनी चाहिए।

यह पत्र काफी लम्बा हो गया है। इसलिए मैं यहाँ बहुत-सी अन्य बातोका जिनपर आपके साथ बातचीत करनेका मुझे सौभाग्य मिला था, जिक्र नही कर रहा हूँ।

सस्नेह,
जवाहर

महात्मा गांधी
पूना

[अंग्रेजीमे]

बॉम्बे सीक्रेट एब्स्ट्रैक्ट्स, होम डिपार्टमेंट, स्पेशल ब्रांच, फाइल सं० ८०० (४०) (११) सी; महात्मा भाग-३, पृ० ३०५-८ भी।

अवशिष्टांश

१. पत्र : नारणदास गांधीको

१७ जुलाई, १९३३

चि० नारणदासजी,

वाइसरायकी 'नहीं'[1] आ गयी है, इसलिए मुझे दो घडीका ही मेहमान मानो। मैं तैयारी कर रहा हूँ। इस अन्तिम बलिदानमें सम्पूर्ण आश्रमकी आहुति हो जाये, ऐसी मेरी तीव्र इच्छा है। मैं चाहूंगा कि आश्रमकी जगम सम्पत्तिकी देखभाल अम्बालालभाई अथवा ऐसा ही कोई और मित्र सार्वजनिक रूपसे करे। स्थावर सम्पत्ति सरकारको सौंप देनेका विचार मनमें आता रहता है।[2] बादमें जो लोग जाना चाहें, वे भले चले जायें और जो बाकी रहें, वे अपनी इच्छाके अनुसार जहाँ उनकी सुविधा हो, वहाँ रह जायें। यह विचार तुम्हें पसन्द न हो, तो मुझे जबरदस्ती कुछ नहीं करना है। आश्रमकी और उसके उद्देश्योंकी रक्षाकी जिम्मेदारी जो लोग पीछे रह जायेंगे, उनकी होगी। वे अपनी शक्तिके अनुसार आचरण करें। मैं तो केवल मार्ग-दर्शन ही कर सकता हूँ। ऐसा हुआ तो नीलाकी और अमलाकी क्या व्यवस्था की जाये, इस बातका विचार करना होगा। अमला हरिजन-सेवाके किसी कार्यमें लगना चाहे, तो वैसा करे। नीलाकी जिम्मेदारी यदि जमनालालजी ले लें, तो वह वर्धा चली जाये। दूसरी जो समस्याएँ होंगी, वे अभी मुझे एकाएक नहीं सूझ रही हैं। उगनका नाम मैं नहीं लेता, क्योंकि डकन तो पुरुष है। इसके सिवा वह यहींका रहनेवाला है। यदि वह हरिजन-सेवा करना चाहे, तो उस कार्यमें उसका समावेश आसानीसे हो सकता है।[3]

बापू

[गुजरातीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ३७१-२

१. देखिए पृ० २७८।
२. देखिए पृ० ३१६-१९ और ३४३।
३. देखिए पृ० ३४३-४५ भी।

२. पत्र : अहमदाबादके कलैक्टरको[1]

३१ जुलाई, १९३४

आप मुझे पहले ही यह अनुमति दे चुके हैं कि मैं जो भी पुस्तकें चाहूँ ले जा सकता हूँ। विद्यापीठकी इमारतमें सभी पुस्तकें और जिन शैल्फोंमें वे रखी हैं वे भी ले जाना मेरे लिए नियमित होगा न? जैसाकि आप जानते हैं, निश्चय यह किया गया है कि साबरमती आश्रमकी पुस्तकें सार्वजनिक उपयोगके लिए दे दी जायें। विद्यापीठके ट्रस्टियोंका इरादा है कि विद्यापीठके पुस्तकालयके साथ भी यही किया जाये। इसीलिए मैंने यह पूछा है।[2]

[अंग्रेजीसे]

बापुना पत्रो : २ सरदार वल्लभभाई पटेलने, भाग-२, पृष्ठ १६१

१. साधन-सूत्रमें नरहरि परीखने स्पष्ट किया है कि पत्रका यह मसौदा द० बा० कालेलकरके लिए तैयार किया गया था, जिन्होंने "३१ जुलाईको अहमदाबाद पहुँचनेके बाद" इसे कलैक्टरको भेज दिया था।

२. नरहरि परीखके अनुसार, कलैक्टरने इसके जवाबमें कहा था कि पुस्तकें और उनके जो शैल्फ इमारतमें जड़े नहीं हैं, वे हटा लेनेपर उन्हें कोई आपत्ति नहीं होगी।

सामग्रीके साधन-सूत्र

गांधी स्मारक संग्रहालय, नई दिल्ली गांधी साहित्य और गांधीजी-सम्बन्धी कागजातका केन्द्रीय संग्रहालय तथा पुस्तकालय, देखिए खण्ड १, पृ० ३५९ (प्रथम संस्करण १५ अगस्त, १९५८) तथा पृ० ३५५ (द्वितीय संशोधित संस्करण, जून, १९७०)।

नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय, नई दिल्ली।

राष्ट्रीय अभिलेखागार (नेशनल आर्काइव्ज ऑफ इंडिया), नई दिल्ली।

साबरमती संग्रहालय, अहमदाबाद पुस्तकालय तथा संग्रहालय, जिसमें गांधीजी के दक्षिण आफ्रिकी काल तथा १९३३ तकके भारतीय कालसे सम्बन्धित कागजात रखे हैं, देखिए, खण्ड १, पृ० ३६० (प्रथम संस्करण १५ अगस्त, १९५२) तथा पृ० ३५५ (द्वितीय संशोधित संस्करण जून, १९७०)।

'अमृतबाजार पत्रिका,' कलकत्तामें प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'बॉम्बे क्रॉनिकल' बम्बईमें प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'टाइम्स ऑफ इंडिया', बम्बई तथा नई दिल्लीसे एकसाथ प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'दि इंडियन क्वार्टर्ली रजिस्टर', भाग—२ १९३३ नृपेन्द्रनाथ मित्र, दि ऐन्युअल रजिस्टर ऑफिस, कलकत्ता।

'विश्वभारतीय न्यूज', शांतिनिकेतनमें प्रकशित अंग्रेजी मासिक।

'हिन्दुस्तान टाइम्स,' नई दिल्लीसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'हिन्दू' मद्राससे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'दि ट्राइबल वर्ल्ड ऑफ वेरीयर एलविन' ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, १९६४।

'पाँचमा पुत्रने बापुना आशीर्वाद' (गुजराती) सम्पादक काका कालेलकर, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५७।

'पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद', सम्पादक काका कालेलकर, जमनालाल बजाज ट्रस्ट, वर्धा, १९५३।

'ए बंच ऑफ ओल्ड लेटर्स' (अंग्रेजी) सम्पादक. जवाहरलाल नेहरू, एशिया पब्लिशिंग हाउस, बम्बई, १९५८।

'बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष' हीरालाल शर्मा, ईश्वरशरण आश्रम, इलाहाबाद, १९५७।

'बापूज लेटर्स टु मीरा' (अंग्रेजी) : नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९४८।

'बापूना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाई पटेलने' (गुजराती) : सम्पादक : मणिबहन पटेल, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५७।

'बापुना पत्रो – ४ : मणिबहन पटेलने' (गुजराती) : सम्पादक : मणिबहन पटेल, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५७।

'बापुनी प्रसादी' (गुजराती) : मथुरादास त्रिकमजी, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९४८।

'महादेव भाईनी डायरी, भाग – ३ (गुजराती) : सम्पादक : नरहरि द्वा० पारीख, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९४८।

'माई डियर चाइल्ड' (अंग्रेजी) : सम्पादक : एलिस एम० बर्नेस, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५६।

'लेटर्स ऑफ़ श्रीनिवास शास्त्री' (अंग्रेजी) : सम्पादक : टी० एन० जगदीशन, एशिया पब्लिशिंग हाउस, बम्बई, १९६३।

बॉम्बे सीक्रेट ऐब्स्ट्रैक्ट्स, १९३३ : बम्बई सरकारके सरकारी कागजात।

होम डिपार्टमेंट, बम्बई सरकार।

मैन्युस्क्रिप्ट ऑफ महादेव देसाईज़ डायरी (अंग्रेजी) : स्वराज्य आश्रम, बारडोलीमें रखी महादेव देसाईकी हस्तलिखित दैनन्दिनी।

तारीखवार जीवन-वृत्तान्त

(२३ अप्रैल से १५ सितम्बर, १९३३ तक)

२३ अप्रैल गाधीजी यरवदा सेंट्रल जेल, पूनामे थे।
बी० आर० अम्बेडकरसे हुई बातचीतपर एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इडियाको भेंट।

२७ अप्रैल 'हरिजन' मे प्रकाशित लेख "यरवदा समझौता" मे गाधीजी ने बताया कि पेनल व्यवस्थामे हेरफेर करनेका अम्बेडकरका सुझाव "किसी भी तरहसे हरिजनोके हितमे नही है।"
पी० एन० राजभोजको लिखे पत्रमे कहा कि "जिस यज्ञका श्रीगणेश सितम्बरमे हुआ था . वह अभी भी चल रहा है और उसकी पूर्णाहुति अस्पृश्यताके उन्मूलनमे ही हो सकती है।"

३० अप्रैल "अपनी तथा सहयोगियोकी आत्मशुद्धिके लिए" ८ मई से २१ दिनका शर्तहीन और अपरिवर्तनीय अनशन करनेके निर्णयकी घोषणा की।
अनशनपर वक्तव्य जारी किया।
तार द्वारा गृह-विभागको अनशन करनेके निर्णयकी सूचना दी।

१ मई रावजीभाई पटेलको लिखे पत्रमे कहा कि प्रस्तावित अनशन "उन लोगोके लिए मजाके तौरपर है जो यह सोचते है कि उन्होने जो प्रतिज्ञा की है, उसको पूरा करनेके लिए वे सक्षम नही है।"
दोपहरको मौन तोडा।
अनशन करनेके निर्णयपर समाचारपत्रोको भेंट दी और सहकर्मियोसे मुलाकात की।

२ मई जनरल स्मट्सका तार मिला जिसमे अनशन न करनेके लिए आग्रह था।

३ मई एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इडियाको भेंट।
गाधीजी की सेवा-शुश्रूषाके लिए सरोजिनी नायडू आईं।

४ मई डॉ० एम० ए० अन्सारीको भेजे गये तारमे गाधीजी ने कहा कि "ईश्वर मेरा अदृश्य परिचारक होगा।"

५ मई च० राजगोपालाचारीको लिखे पत्रमे गाधीजी अपनी डाक्टरी जाँच करानेके लिए, जिसे उन्होने एक दिन पहले अस्वीकृत कर दिया था, राजी हो गये।

६ मई या उससे पूर्व आर्यसमाज सम्मेलनको सन्देश भेजा।

६ मई : शामको मिलनेके लिए आये अनेक मित्रो और प्रशसकोको एक सन्देश दिया।

८ मईसे पूर्व . प्रस्तावित अनशनपर समाचारपत्रोको भेट।

८ मई १२ बजे दोपहरसे २१ दिवसीय अनशन शुरू किया, अनशनका स्पष्टीकरण करते हुए एक वक्तव्य दिया।

शामको ६ ४५ बजे जेलसे रिहाई, रात ९ बजे लेडी ठाकरसीकी कोठीपर पहुँचे।

एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इडियाको भेट।

सविनय अवज्ञा आन्दोलनको छ सप्ताहके लिए स्थगित करनेकी घोषणा की; सरकारसे अध्यादेशोंको वापस लेने और सभी सविनय अवज्ञाकारियोको रिहा करनेका आग्रह किया।

९ मई एम० एस० अणेने सविनय अवज्ञा आन्दोलन छ सप्ताहके लिए स्थगित करनेका वक्तव्य जारी किया।

भारत सरकारने गाधीजी की रिहाईपर विज्ञप्ति जारी की।

१० मई गाधीजी ने एक तारसे कस्तूरबाको "बहादुर बनने"के लिए कहा।

११ मई 'हरिजन' मे 'पाठकोको' सन्देश दिया।

डॉ० फाटक और घटपुरेने ९ बजे सुबहसे ९बजे राततक बारी-बारी गाधीजी की देखभाल की।

१३ मई साबरमती जेलसे कस्तूरबाकी रिहाई।

गाधीजी ने अम्लताको काबूमे रखनेके लिए 'विची' जल लेना शुरू किया।

१४ मई . कस्तूरबा और हरिलाल गाधीजी से मिलने आये।

१८ मई डॉ० एम० ए० अन्सारीने गाधीजी की डॉक्टरी जाँच की और उनकी हालत बेहतर बताई।

२० मई गाधीजी के कहनेपर महादेव देसाई साबरमती आश्रमको लौट गये।

एक तारसे गाधीजी ने सेनापति बापटको अनशन छोडनेकी सलाह दी।

सिंहगढ झरनेका जल सोडा बाइकार्बोनेट मिलाकर लेना शुरू किया, वह 'विची' जलसे मीठा था तथा शिवाजी और तिलककी स्मृतियोसे जुडा था।

'पर्णकुटी' से जारी की गई डॉक्टरी विज्ञप्तिमे लिखा था : "महात्मा गाधीकी एक और रात अच्छी तरह बीती। उनकी हालतमे, जो काफी सन्तोषजनक चल रही है, कोई परिवर्तन नही हुआ है। कुछ बहुत ही महत्वपूर्ण पत्र उन्हे आज सुबह पढकर सुनाये गये।"

२१ मई : 'पर्णकुटी' की एक और विज्ञप्ति : "गाधीजी की एक और रात अच्छी तरह बीती और प्रात· प्रार्थनाके समयतक वे आरामसे सोते रहे। मतली आनी प्राय· बिलकुल बन्द हो गई है। कल तीसरे पहरसे वे सिंहगढ झरनेका जल

पी रहे हैं। उनकी सामान्य दशा बहुत सन्तोषप्रद है और वे शान्त एव प्रफुल्लित हैं।

सेनापति बापटने अनशन समाप्त करनेका गाधीजी का अनुरोध अस्वीकार कर दिया।

२३ मई डॉ० विधानचन्द्र रायके यह पूछनेपर कि आप कैसा महसूस कर रहे हैं, गाधीजी ने कहा कि "चित भी मेरी पट भी मेरी।"

गाधीजी के विषयमे निकली डॉक्टरी विज्ञप्तिमे कहा गया था "गाधीजी को अच्छी नींद आई, उन्होंने पूरा आराम किया और वे अच्छे हैं।"

२५ मई डॉ० विधानचन्द्र राय और डॉ० एम० ए० अन्सारी गाधीजी की शय्याके पास रहे।

२६ मई आश्रमके प्रबन्धके विषयमे महादेव देसाईके साथ विचार-विमर्श किया।

२७ मई देवदासके साथ विचार-विमर्श किया।

२९ मई सन्देश दिया, जिसे महादेव देसाईने पढकर सुनाया, अनशन तोडा।

६ जून देवदास-लक्ष्मीके विवाहकी सूचना विवाह-पजीयक, पूनाको दी गई।

१० जून देवदास गाधी और लक्ष्मीने विशेष विवाह अधिनियमकी धारा १० के अधीन घोषणापत्र दाखिल किये।

१६ जून 'पर्णकुटी', पूनामे देवदास और लक्ष्मीका विवाह हिन्दू-रीतिसे सम्पन्न हुआ। गाधीजी ने वर-वधूको आशीर्वाद देते हुए कुछ शब्द कहे।

१७ जून दक्षिण भारतीयोको दिये एक सन्देशमे यह इच्छा व्यक्त की कि हर गाँवमे हिन्दीका प्रचार होना चाहिए।

१८ जूनसे पूर्व एक सन्देशमे इच्छा व्यक्त की कि आश्रमवासी "पहलेसे भी अधिक पवित्र जीवन बितायें।"

२१ जून विवाह-पजीयक, पूनाने देवदास-लक्ष्मीके विवाहको १८७२ के अधिनियम ३ के अधीन पजीकृत किया।

२६ जून. आसफ अलीके खुले पत्रके उत्तरमे गाधीजी ने कहा "... अहिंसा मेरे लिए केवल प्रयोग नहीं है। यह मेरे जीवनका अग है मेरा यह विश्वास और दृढ हो गया है कि भारतके सामने जो जटिल स्थिति है, उसमे सच्ची स्वतन्त्रता पानेका कोई दूसरा उपाय नही है।"

२ जुलाई १२ जुलाईको होनेवाले नेताओके सम्मेलनके लिए काग्रेसजनोको आमन्त्रित किया।

हरिजन कार्यकर्त्ताओसे बातचीत की।

८ जुलाई 'हरिजन' मे "अनशनके बारेमे" लिखा।

११ जुलाई पूनामे एम० एस० अणे, म० मो० मालवीय, च० राजगोपालाचारी, भूलाभाई देसाई, डॉ० आलम तथा अबुल कलाम आजादसे बातचीत की।

१२ जुलाई: नेताओंके सम्मेलनमें भाषण दिया।

सम्मेलनने सविनय अवज्ञा आन्दोलनको बिना शर्त स्थगित करनेका सुझाव दिया। गांधीजी ने सम्मेलन-स्थल, तिलक मेमोरियल हॉलके छज्जेसे सार्वजनिक भाषण दिया।

१४ जुलाई: नेताओंके सम्मेलनके समापन अधिवेशनमें बोले। अधिवेशनने उन्हें वाइसरायसे भेंट करनेका अधिकार दिया।

वाइसरायसे भेंटके लिए तार दिया। तिलक स्मारक मन्दिरमें भाषण दिया।

१७ जुलाई: वाइसरायने भेंटकी प्रार्थना अस्वीकृत कर दी; गांधीजी ने पुनः आग्रह किया, वह भी अस्वीकृत कर दिया गया।

१८ जुलाई: समाचारपत्रोंको भेंट।

अहमदाबाद जाते हुए बम्बई पहुँचे।

बम्बईमें 'हिन्दू' और 'बॉम्बे क्रॉनिकल' के प्रतिनिधियोंको भेंट।

१९ जुलाई: अहमदाबाद पहुँचे; सेठ रणछोड़लालके अमृत भुवनमें ठहरे: हरिजन और अस्पृश्यता-विरोधी कार्यकर्त्ताओंसे बातचीत की।

हाउस ऑफ कॉमन्समें सैम्युअल होरके भाषणपर एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियाको भेंट।

तीसरे पहर साबरमती आश्रम गये।

अहमदाबादके डॉक्टरोंने गांधीजी की जाँच की: स्वास्थ्य 'अच्छा' बताई।

२० जुलाई: 'टाइम्स ऑफ इंडिया' के प्रतिनिधिके साथ भेंटमें व्यक्तिगत सविनय अवज्ञाका स्पष्टीकरण किया।

२१ जुलाई: कस्तूरबा गांधीके साथ साबरमती जेल जाकर मीराबहनसे मुलाकात की।

२२ जुलाई: 'हरिजन' में "एक अमरीकी आलोचना" का उत्तर प्रकाशित किया।

जमनालाल बजाज और देवदास गांधीको लिखे पत्रोंमें साबरमती आश्रमको भंग करनेका निर्णय व्यक्त किया।

एम० एस० अणेने सामूहिक सविनय अवज्ञा आन्दोलन स्थगित करनेके सम्बन्धमें वक्तव्य दिया।

२३ जुलाई: आश्रमकी प्रार्थना-सभामें महादेव देसाईने अस्पृश्यता-निवारणके लिए गांधीजी की चन्देकी अपील पढ़कर सुनाई; सभा-स्थलपर चन्दा इकट्ठा किया गया।

२४ जुलाई: सतीश चन्द्र दासगुप्तको लिखे पत्रमें गांधीजी ने सुझाया कि यदि बंगाली 'हरिजन' लाभकारी नहीं है तो उसका प्रकाशन बन्द कर देना चाहिए।

एम० एस० अणेके वक्तव्यपर 'बॉम्बे क्रॉनिकल' के प्रतिनिधिको भेंट।

२५ जुलाई सावरमती आश्रमको भग करनेके निर्णयपर एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इडियाको भेट।

२६ जुलाई एम० एस० अणेके वक्तव्यपर अपना वक्तव्य जारी किया।
बम्बई सरकारके गृह-सचिवको एक पत्र लिखकर सावरमती आश्रमको भग करनेके निर्णयकी सूचना दी।
एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इडियाको भेट।
आश्रमको भग करनेके विषयपर 'हिन्दू'के प्रतिनिधिको भेट।

२७ जुलाई रवीन्द्रनाथ ठाकुरको लिखे पत्रमे कहा कि यरवदा समझौतेमे "बगालके साथ कोई अन्याय नही हुआ है।"
आश्रमको भग करनेके विषयपर 'डेली हेरॉल्ड'के प्रतिनिधिको भेट।
'टाइम्स ऑफ इडिया'के प्रतिनिधिको भेट।

२८ जुलाई आश्रमको भग करनेके विषयपर एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इडियाको भेट।

२९ जुलाई काग्रेस-समितियोके स्थगनपर एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इडियाको भेट।
शारदा मन्दिरके स्थापना-दिवसपर गाधीजी वहाँ गये।

३० जुलाई ६ अगस्तको सेनगुप्त दिवस मनानेकी अपीलके समर्थनमे वक्तव्य दिया।
एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इडियाको दिये एक वक्तव्यमे काग्रेसजनोसे आग्रह किया कि वे सविनय अवज्ञा-सम्बन्धी निर्णयपर वाद-विवादमे अपनी शक्ति न गँवाये। अग्रेजोको यह बात याद दिलाई कि "भारतसे सच्ची मित्रताका तरीका अध्यादेश शासन नही है . काग्रेसका तरीका ही एकमात्र तरीका है।
बम्बई सरकारके गृह-सचिवको तार देकर रासतक कूच करनेके निर्णयकी सूचना दी।
गुजरातके लोगोसे अपील करते हुए यह घोषणा की कि अपने ३३ साथियोके साथ वे १ अगस्त, १९३३को आश्रमसे रासतक के कूचके लिए निकलेगे।
समाचारपत्रोको भेट। जमनालाल बजाज गाधीजी से मिलने आये।
अहमदावाद नगरपालिकाके अध्यक्षको एक पत्र लिखकर सावरमती आश्रम तथा गुजरात विद्यापीठके पुस्तकालयोको भेट करनेका प्रस्ताव रखा।

१ अगस्त प्रार्थनाके बाद कस्तूरवा और महादेव देसाई सहित गिरफ्तार कर लिये गये।
सावरमती जेल जानेवाली सडकपर एकत्रित हरिजनोसे विदाई ली।
अहमदाबादके जिला मजिस्ट्रेटके समक्ष वक्तव्य दिया।
अहमदाबाद सैंट्रल जेलके अधीक्षकको पत्र लिखकर हरिजन-कार्य करनेकी अनुमति मागी।
अहमदाबादमे हडताल रही।

२ अगस्त . गांधीजी यरवदा जेल भेजे गये।

३ अगस्त : बम्बई सरकारके गृह-सचिवको पत्र लिखकर अपनी गतिविधियोंपर लगाये जानेवाले प्रस्तावित प्रतिबन्धको माननेसे इनकार किया।

पूनाके जिला मजिस्ट्रेटके समक्ष वक्तव्य देते हुए उसी दिन कुछ देर पहले बम्बई सरकारके गृह-सचिवको लिखे अपने पत्रका जिक्र किया।

४ अगस्त : यरवदा जेलसे रिहा किये गये और यरवदा गाँवसे चले जानेका आदेश दिया गया।

उक्त आदेशका उल्लंघन करनेपर पुन गिरफ्तार कर लिये गये और मुकदमा चलानेके लिए उन्हें यरवदा जेल भेजा गया।

मुकदमेकी सुनवाईके समय "बम्बई सरकारके आदेशको जान-बूझकर तोड़ने" की अपनी कार्यवाहीका स्पष्टीकरण करते हुए छोटा-सा वक्तव्य दिया।

एक सालकी साधारण कैद हुई और 'ए' क्लास दी गई।

महादेव देसाईको भी एक सालकी साधारण कैदकी सजा मिली, उन्हें 'बी' क्लास दी गई।

बम्बई सरकारके गृह-सचिवको पत्र लिखकर "अस्पृश्यता-विरोधी कार्य फिर करने" देनेकी अपनी प्रार्थना फिर दोहराई और सोमवार, ७ अगस्त से पहले ही सरकारी निर्णय देनेकी माग की।

५ अगस्त : 'हरिजन' में प्रकाशित लेख "उपवासकी नैतिकता" मे गांधीजी ने लिखा . "जिस तरह खोई हुई शक्तिको पुनः प्राप्त करनेके लिए किया गया अनशन अस्वाभाविक या दण्डनीय आत्मपीड़न नहीं है, उसी तरह अपनी तथा दूसरोंकी आत्मशुद्धिके लिए किया गया अनशन भी नहीं है।

आर० बी० मार्टिनको पत्र लिखकर "किसी भी अतिरिक्त भोजनके लिए दाम चुकाने" से इनकार किया तथा सरकारसे वही सुविधाएँ माँगी जो उन्हें पहले मिली हुई थी।

६ अगस्त : बम्बई सरकारके गृह-सचिवको पत्र लिखकर यह अनुरोध किया कि सुविधाएँ देनेकी उनकी प्रार्थनापर जल्दी ही निर्णय दे दिया जाये।

८ अगस्त : बम्बई सरकारके गृह-सचिवको पत्र लिखकर कुछ मुद्दोंपर "सीमित अनुमति" देनेके लिए धन्यवाद व्यक्त किया और सरकारसे यह कहा कि [उनकी] "आत्माकी आवश्यकताओ" से सम्बन्धित कुछ मुद्दोंपर भी वह उसी तरह ध्यान दे।

१० अगस्त : बम्बई सरकारके गृह-सचिवको पत्र लिखकर सोमवार, १४ अगस्तको या उससे पहले निर्णय दे देनेकी अपील की।

१४ अगस्त बम्बई सरकारके गृह-सचिवको पत्र लिखकर अपने इस निश्चय की सूचना दी कि यदि मांगे बुधवार, १६ अगस्तसे पहले न मान ली गई तो वे कोई भी पौष्टिक आहार स्वीकार नही करेंगे।

१५ अगस्त आर० बी० मार्टिनको लिखे पत्रमे प्रस्तावित अनशनको रोकनेके लिए अन्तिम आदेश निकलने तक तीन मुद्दोपर मजूरी देनेका अनुरोध किया।

१६ अगस्त कुछ सुविधाएँ प्राप्त हो जानेके बावजूद, जिन्हे उन्होने "अनिच्छासे दी गई" बताया, तीसरे पहर अनशन शुरू कर दिया।

१७ अगस्त आर० बी० मार्टिनको लिखे पत्रमे समझौतेके मुद्दोका उल्लेख किया।

१९ अगस्त बम्बई सरकारके गृह-सचिवको लिखे पत्रमे यह विचार व्यक्त किया कि सविनय अवज्ञा, जो "पूर्णतया वैधानिक गतिविधि" है, यद्यपि सरकार अवैध मानती है, परन्तु वह उनका धर्म है।

२० अगस्त 'हरिजनबन्धु' मे भावनगरके हरिप्रसाद देसाईके प्रति श्रद्धाजलि देते हुए उन्हे "हरिजन-आन्दोलनका मूक कार्यकर्त्ता" बताया।

२१ अगस्त दशा बिगड जानेके कारण ससून अस्पताल, पूना लाये गये। एण्ड्रयूज और कस्तूरबा मिलने आये। गाधीजी ने यह मानकर कि मृत्यु सन्निकट है, अपनी चीजे अस्पतालके उन कर्मचारियोमे बाँट दी जो उनकी परिचर्या कर रहे थे।[1]

२३ अगस्त सरकारी हिरासतमे बिना शर्त रिहाई। सतरेका एक ग्लास रस ग्रहण कर अपराह्न, ३-४५ पर अनशन तोडा। अस्पतालकी गाडीसे "पर्णकुटी" मे लाये गये, डॉ० दिनशा मेहताने उनकी देख-भालकी जिम्मेदारी ली।

२४ अगस्त विधानसभाने "मन्दिर-प्रवेश विधेयक" को एक साल रोके रखनेका फैसला किया।

२५ अगस्त समाचारपत्रोको भेट।

२८ अगस्त विधानसभामे वाइसरायने घोषणा की कि सुधारके प्रश्नपर उनकी नीति सदा एक-सी रही है "ताकि भारतकी उत्तरदायी सरकार, स्वशासन या डोमिनियन स्टेटस" की ओर बढनेमे सहायता की जा सके।

३० अगस्त वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको लिखे पत्रमे गाधीजी ने कहा कि वे खुशीसे काग्रेससे अलग हो जायेंगे और अपनेको पूर्णतया सविनय अवज्ञाके विकासमे लगा देंगे।

१. पृष्ठ ४१३ पर गाधीजी ने यह घटना २४ तारीख की बताई है, जो याददाश्त की भूल लगती है। महात्मा (भाग-३, पृष्ठ २६४) में इस घटना की तारीख २१ अगस्त ही दी गई है।

२ सितम्बर: एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडियको भेंट।

गृह-सचिव, हालेटने सी० एफ० एन्ड्रयूजसे भेंट की जिन्होंने, गांधीजी से उनकी रिहाईके बाद हुई अपनी दैनिक मुलाकातोंके आधारपर, उन्हें गांधीजी की चिन्ता-धारासे अवगत किया।

३ सितम्बर: 'हरिजनबन्धु' में प्रकाशित लेख "अतिशयोक्ति नहीं है!" में गांधीजी ने लिखा: "हरिजन सेवा मेरा जीवन-श्वास है, इसलिए मैं इसके बिना एक क्षण भी जिन्दा नहीं रह सकता।"

समाचारपत्रोंको दिये वक्तव्यमें मिदनापुरके मजिस्ट्रेट बी० ई० जी० बर्गकी हत्याकी भर्त्सना की।

७ सितम्बर: २४ सितम्बरको मनाये जानेवाले 'हरिजन दिवस' के लिए वक्तव्य जारी किया।

९ सितम्बर: 'हरिजन' में प्रकाशित लेख "क्या उसमें दबाव था?" में गांधीजी ने लिखा कि अनशन "सत्याग्रहके शस्त्रागारका एक बड़ा शस्त्र है, अतः सम्भावित दुरुपयोगके कारण इसे छोड़ा नहीं जा सकता।"

वी० एस० श्रीनिवास शास्त्रीको लिखे पत्रमें कहा: " . . . मैं सत्ता नहीं चाहता। मैं इसे सेवाका विशेषाधिकार मानता हूँ। जैसे ही मुझे ऐसा लगेगा कि कांग्रेसकी भलाईके लिए मैं उससे बाहर आ सकता हूँ वैसा करनेसे मैं पीछे नहीं हटूँगा।"

१० सितम्बर: 'हरिजन' में बीना के हिन्दुओं और हरिजनोंको अपने आपसी मतभेद दूर कर लेनेके लिए बधाई दी।

१०–१४ सितम्बर: जवाहरलाल नेहरूसे बातचीत की।

११ सितम्बरसे पूर्व: 'वर्ल्ड फेलोशिप ऑफ फेथ्स' को तथा गुजरात और भड़ौंचके अखिल भारतीय महिला सम्मेलन द्वारा आयोजित 'स्वदेशी प्रदर्शनी' को सन्देश भेजे।

१३ सितम्बर: गांधीजी को लिखे एक पत्रमें जवाहरलाल नेहरूने कहा कि कराची कांग्रेस द्वारा पारित "मूल अधिकार और आर्थिक नीति" प्रस्ताव "वह दिशा बताता है जिसमें हमें बढ़ना चाहिए।"

१४ सितम्बर: जवाहरलाल नेहरूको लिखे पत्रमें गांधीजी ने कहा: "मैं तुम्हारे साथ आखिरी हदतक जा सकता हूँ और कह सकता हूँ कि 'हमें विश्वकी प्रगतिशील शक्तियोंका पक्ष लेना चाहिए।' लेकिन . . . यद्यपि आदर्शोंके प्रतिपादनमें हम इतने एकमत हैं, फिर भी हमारे मिजाजोंमें अन्तर है।"

१५ सितम्बर: बम्बईके लिए पूनासे प्रस्थान।

शीर्षक-सांकेतिका

विविध

सांकेतिका

आ

इ

ई

उ

घ

च

य

र

ल

व

स

ह